नीलमत पुराण

सांस्कृतिक तथा साहित्यिक अध्ययन,
संस्कृतपाठ एवं हिन्दी अनुवाद

प्रो. वेदकुमारी घई

जे. एण्ड के. अकैडमी ऑफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़
जम्मू

नीलमतपुराण

सांस्कृतिक तथा साहित्यिक अध्ययन, संस्कृतपाठ एवं हिन्दी अनुवाद

प्रो. वेदकुमारी घई

जे. एण्ड के. अकैडमी ऑफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़, जम्मू

NEELMATPURAN

Translated by

Prof. Vedkumari Ghai

प्रकाशन वर्ष : 2016
मूल्य : ₹ 350/-

प्रकाशक : सचिव, जे. एण्ड के. अकैडमी ऑफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़, जम्मू
मुद्रक : क्लासिक प्रिंटर्ज़, बाड़ी ब्राह्मणा, जम्मू
मोब. 94191-49293

गुरुजनों को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हुए
संस्कृतानुरागी शिष्यवर्ग को सस्नेह समर्पित

प्राक्कथन

नीलमतपुराण संस्कृत का एक प्राचीन ग्रंथ है जो कश्मीर के धार्मिक स्थानों, धार्मिक कृत्यों तथा परंपराओं को वर्णित करता है और प्राचीन कश्मीर की सामाजिक परिस्थितियों को उजागर करता है। इसके प्रथम भाग, "नीलमत पुराण-सांस्कृतिक एवं साहित्यिक अध्ययन" को सन् 1968 में (अंग्रेज़ी) तथा द्वितीय भाग "नीलमत पुराण-आलोचनात्मक संस्कृतपाठ" (अंग्रेजी अनुवाद सहित) सन् 1973 में कला, संस्कृति एवं भाषा अकैडमी द्वारा प्रकाशित कराया गया था। प्रथम संस्करण के समाप्त हो जाने पर लोगों की डिमांड पर सन् 1988 में इसे पुन: दो भागों में प्रकाशित करवाया गया जो अब समाप्तप्राय: है। ग्रंथ की सार्थकता एवं लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए सन् 2013 में अकैडमी ने इस संपूर्ण ग्रंथ अर्थात् दोनों भागों का हिन्दी अनुवाद करवाने का निर्णय लिया, जिसका कार्यभार सुविख्यात विदुषी पद्मश्री प्रो० वेद कुमारी घई को सौंपा गया। प्रो० घई इस ग्रंथ पर शोधकार्य कर चुकी हैं। नीलमत पुराण के दोनों खंडों को एक संपूर्ण ग्रंथ का रूप देने से पाठकों को संदर्भ ढूंढने में सुविधा रहेगी।

कला, संस्कृति एवं भाषा अकैडमी जब से अस्तित्व में आई है इसका ध्येय रहा है कि वह अपनी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक धरोहरों का संरक्षण करे। इस प्रयास हेतु अकैडमी सदैव सजग एवं प्रयासरत रहती है। प्रस्तुत दुर्लभ एवं महत्त्वपूर्ण निधि को पाठकों, शोधछात्रों तथा साहित्य जिज्ञासुओं के हाथों में सौंपते हुए अकैडमी अपार हर्ष अनुभव कर रही है।

डॉ० अज़ीज़ हाजनी

(सचिव)

कला, संस्कृति एवं भाषा अकैडमी

प्रस्तावना

यह ग्रन्थ दो भागों में (प्रथम भाग ''नीलमत पुराण--सांस्कृतिक एवं साहित्यिक अध्ययन'' (अंग्रेज़ी) सन् 1968 तथा द्वितीय भाग ''नीलमत पुराण आलोचनात्मक संस्करण तथा अंग्रेजी अनुवाद सन् 1973 में) कला, संस्कृति तथा भाषा अकादमी जम्मू कश्मीर द्वारा प्रकाशित किया गया था। प्रथम संस्करण समाप्त हो जाने पर जनता की माँग को देखते हुए अकादमी ने दूसरा संस्करण पुनः दो भागों में सन् 1988 में प्रकाशित किया जो अब समाप्त प्रायः है। सन् 2013 में अकादमी ने इस सम्पूर्ण ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद करा कर प्रकाशित करने का निर्णय लिया तथा मुझे ही यह कार्य सौंपा। मुझे प्रसन्नता है कि कला, संस्कृति और भाषा अकादमी जम्मू कश्मीर के इस महत्त्वपूर्ण निर्णय से कश्मीर के प्राचीन इतिहास और संस्कृति की यह धरोहर अब हिन्दी के पाठकों तक पहुँच सकेगी।

इस ग्रन्थ के इस हिन्दी संस्करण में नीलमत पुराण का आलोचनात्मक मूल पाठ, हिन्दी अनुवाद तथा नीलमत में उपलब्ध सामग्री का सांस्कृतिक एवं साहित्यिक दृष्टि से विश्लेषण ये दोनों मिलेंगे। पूर्व संस्करणों में सांस्कृतिक एवं साहित्यिक अध्ययन के सन्दर्भ देते हुए व्रीज़ द्वारा सम्पादित नीलमत के रोमन संस्करण की पद्यसंख्या के क्रमांक दिए गए थे जो मेरे द्वारा सम्पादित, अकादमी द्वारा प्रकाशित देवनागरी पाठ से कुछ भिन्न थे। इस संस्करण में उन्हें देवनागरी पाठ के अनुरूप कर दिया गया है। अतः सन्दर्भ ढूँढने में पाठकों को सुविधा रहेगी।

हिन्दी अनुवाद सहित इस ग्रन्थ के मूलपाठ का आलोचनात्मक संस्करण आठ पाण्डुलिपियों की सहायता लेकर तैयार किया गया है जिनका विवरण इस प्रकार है :

A जम्मू कश्मीर सरकार की रिसर्च लाइब्रेरी श्रीनगर में सुरक्षित क्रमांक 1478, लिपि शारदा, पत्र संख्या 143, लम्बाई 6-4'', चौड़ाई 4-4'' प्रत्येक पृष्ठ पर पंक्तियाँ 8, अन्तिम पत्र के थोड़े से भाग को छोड़कर शेष पाठ पूर्णतया सुरक्षित है। तिथि संवत् 99. के. डी. ब्रीज़ द्वारा अपने लीडन संस्करण के लिए प्रयुक्त तथा उल्लिखित C 1600 क्रमांक पाण्डुलिपि इसी परिवार की पाण्डुलिपि प्रतीत होती है।

B वहीं सुरक्षित क्रमांक 714, लिपि देवनागरी, पृष्ठ 180 हैं। 109वें पृष्ठ पर किसी अधिकारी की टिप्पणी है ''नाथ पण्डित ने बताया है कि उसने चिह्न 1 तक नीलमत की प्रतिलिपि बनाई है। मैंने उसे काम जारी रख कर पूरा करने को कहा है। 16.9.19.'' कागज़ बहुत पुराना नहीं है।

F वहीं सुरक्षित क्रमांक 2222, लिपि शारदा, खुले पत्र 55, प्रत्येक पृष्ठ पर पंक्तियाँ 12-17, प्रतिपंक्ति में अक्षर लगभग 30, आंशिक रूप से कीटभक्षित पुराना कागज़।

G वहीं सुरक्षित क्रमांक 1307, लिपि देवनागरी, पत्र संख्या 40, पद्य संख्या 360 तक लघुसंस्करण पाठ तथा आगे विस्तृतसंस्करण पाठ है। प्रतिपृष्ठ 14 पंक्तियाँ। प्रतिपंक्ति में अक्षर लगभग 45.

H वहीं सुरक्षित क्रमांक 1879, लिपि शारदा, पत्र संख्या 60, प्रतिपृष्ठ पंक्तियाँ 20-23, प्रतिपंक्ति में अक्षर लगभग 19, हर पत्र के बायें हाशिये पर नी. म. पु.।

ये पांचों पाण्डुलिपियाँ अब कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर की रिसर्च लाइब्रेरी में स्थानान्तरित की गई हैं और वहाँ सुरक्षित हैं।

C श्रीरघुनाथ मन्दिर जम्मू की रिसर्च लाईब्रेरी में सुरक्षित क्रमांक 455 क, लिपि देवनागरी, पत्रसंख्या 113, प्रतिपृष्ठ पंक्तियां 17, प्रतिपंक्ति अक्षर लगभग 17, कहीं कहीं स्थान छोड़ा है। कुछ अशुद्धियां देवनागरी और शारदा के भ्रम से उत्पन्न हैं।

D वहीं सुरक्षित क्रमांक 3690 ज्ञ, लिपि देवनागरी, पत्र संख्या 54, प्रतिपृष्ठ पंक्तियाँ 24, प्रतिपंक्ति अक्षर लगभग 18-20.

E वहीं सुरक्षित क्रमांक 3830, लिपि देवनागरी, पत्र संख्या 62, प्रतिपृष्ठ पंक्तियाँ 12, प्रतिपंक्ति अक्षर लगभग 35.

केवल B पाण्डुलिपि में ही पद्य संख्या दी गई है, वहां भी निरन्तर नहीं दी गई अतः पद्य संख्या मैंने दी है। इस संस्करण का मुख्य आधार A तथा H पाण्डुलिपियाँ हैं। इनका मिलान अन्य पाण्डुलिपियों से कर के पाठ का निर्धारण किया गया है। ये दोनों पाण्डुलिपियाँ लघुसंस्करण की हैं। इसीलिए पाठ लगभग के. डी. व्रीज़ द्वारा रोमन लिपि में प्रकाशित संस्करण के समान है पर कई स्थानों पर उस संस्करण के पाठ से भिन्न अन्य उचित पाठ को स्वीकार किया है। जैसे लीडन संस्करण पद्य सं. 594 के "मर्त्यलोकस्तथा" के स्थान पर ABCDGH में उपलब्ध "सत्यलोकस्तथा" पाठ को वरीयता दी गई है (पद्य सं. 617)। लीडन संस्करण पद्य सं. 818 के "छत्रस्थानाच्च कन्धरा" के स्थान पर इस संस्करण में BH पाण्डुलिपियों में उपलब्ध "शक्रस्थानाच्च कन्धरा" इस पाठ का चयन किया है (पद्य सं. 851) जो भाव में अन्य पुराणों में उपलब्ध पाठ "इन्द्रालयमृदा ग्रीवां" के निकट है। लीडन संस्करण के पद्य सं. 1086 के "इन्द्र" के स्थान पर "इन्दु" पाठ को (पद्य सं. 1129) स्वीकार किया है क्योंकि शिव की आठ मूर्तियों में सर्वत्र चन्द्र की गणना की गई है इन्द्र की नहीं। इसी प्रकार औचित्य को ध्यान में रखते हुए लीडन संस्करण पद्य 737 के "अपि नः सकुलो जयेद्" के स्थान पर "अपि नः सकुले जायेद्" (पद्य सं. 765) को, लीडन संस्करण के पद्य सं. 1080 के पाठ "त्वं वह्निस्त्वं तथैवात्मा" के स्थान पर ABDEFH के पाठ "बुद्धिस्त्वं तथैवात्मा" को स्वीकार किया है (पद्य सं. 1121), क्योंकि आत्मा के साथ बुद्धि की चर्चा की जाती है वह्नि की नहीं। लीडन संस्करण के पद्य सं. 1205 के पाठ शरीरधारिभिर्वस्त्रैः के स्थान पर C का पाठ "शरीरधारिभिःशस्त्रैः" (पद्य सं. 1252) चुना गया है क्योंकि विष्णु के शस्त्रों का ही शरीरधारी रूप मूर्तिकला में मिलता है वस्त्रों का नहीं।

अकादमी द्वारा प्रकाशित नीलमत के अंग्रेजी में अनुवाद तथा सांस्कृतिक एवं साहित्यिक अध्ययन ने भारत से बाहर के विद्वानों को भी आकृष्ट किया था। जापान के क्योटो विश्वविद्यालय की "इन्स्टीटयूट फार रिसर्च इन ह्यूमैनिटीज़" के निदेशक श्री यासुके इकारी इसी संदर्भ में भारत आये और उन्होंने मुझे बताया था कि उनका इस ग्रन्थ पर और शोध कार्य करने का विचार है। सन् 1987 से ले कर 1991 तक अपने अन्य चौबीस विद्वान् सहयोगियों के साथ उन्होंने नीलमत का पुन: मन्थन किया तथा संगणक की सहायता लेते हुए अनेक संगोष्ठियों और परिचर्चाओं के परिणाम स्वरूप विद्वानों के ग्यारह लेखों के संग्रह को सम्पादित कर "ए स्टडी आफ़ द नीलमत-एस्पैक्ट्स आफ़ हिन्दुइज़्म इन एन्शैन्ट कश्मीर" शीर्षक से क्योटो विश्वविद्यालय जापान से सन् 1994 में प्रकाशित किया। इस हिन्दी संस्करण में आवश्यकतानुसार उन के शोध के परिणामों का उल्लेख किया गया है।

इस अवसर पर मैं अपने स्वर्गीय गुरुजनों प्रो. सूर्यकान्त, प्रो. वासुदेवशरण अग्रवाल, प्रो. जगन्नाथ अग्रवाल तथा प्रो. सिद्धेश्वर वर्मा का श्रद्धापूर्वक स्मरण करती हूं। समय समय पर उपयोगी परामर्श प्रोत्साहन एवं सहायता प्रदान करने के लिए प्रो. रामप्रताप के प्रति धन्यवाद की अभिव्यक्ति शब्दों के द्वारा नहीं की जा सकती। इस संस्करण की पाण्डुलिपि तैयार करने में पूर्ण सहयोग के लिए परमविदुषी, सुयोग्या एवं प्रियशिष्या डॉ. सुनीता सूदन को आशीर्वाद देती हूं। इस पुस्तक को सुन्दर रूप में मुद्रित करने वाले श्री कुलदीप शर्मा मैसर्स क्लासिक प्रिन्टर्स को धन्यवाद देती हूँ। अन्त में इस ग्रन्थ को प्रकाशित करने के लिए मैं कला संस्कृति तथा भाषा अकादमी जम्मू कश्मीर के अधिकारियों के प्रति अपना आभार प्रकट करती हूँ।

वेदकुमारी घई

प्रथम अंग्रेजी संस्करण की भूमिका का अनुवाद

नीलमत पुराण संस्कृत का एक प्राचीन ग्रन्थ है जो कश्मीर के धार्मिक स्थानों, धार्मिक कृत्यों तथा रीतिरिवाजों का वर्णन करता है। प्रसंगवश इस में कश्मीर की उत्पत्ति से सम्बद्ध कथायें भी वर्णित हैं। वहाँ के मूल निवासियों तथा शनैः शनैः अन्य जातियों द्वारा उन के निष्कासन की कथायें भी कही गई हैं। धार्मिक पर्वों तथा देवपूजाप्रक्रियाओं का वर्णन करते हुए नीलमत प्राचीन कश्मीर की सामाजिक परिस्थितियों पर पर्याप्त प्रकाश डालता है।

राजतरंगिणी में नीलमत से दिये उद्धरणों के कारण इस ग्रन्थ के अस्तित्व का ज्ञान तो पहले से था परन्तु ब्यूह्लर की सन् 1877 में छपी "कश्मीर में संस्कृत पाण्डुलिपियों की खोज पर रिपोर्ट" से इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपियों का विवरण प्रकाश में आया। ब्यूह्लर ने इसे कश्मीर के तीर्थस्थानों और उनसे सम्बद्ध कथाओं के विषय में सूचनाओं की वास्तविक खान बताया है। यद्यपि इस का प्रकाशन 1924 में कांजीलाल और ज़ाडू द्वारा तथा 1936 में व्रीज़ द्वारा किया जा चुका है परन्तु अभी तक किसी ने भी इसका आलोचनात्मक ढंग से अध्ययन करने का अथवा इसकी बहुमूल्य सामग्री का ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन के लिए प्रयोग करने का प्रयास नहीं किया है।

नीलमत को उपपुराण की संज्ञा दी गई है और हमारी विदुषी लेखिका की धारणा है कि यह स्थलमाहात्म्य मात्र नहीं है। स्थलमाहात्म्य साहित्य की वह विधा है जिस में तीर्थस्थलों की महत्ता तथा उन स्थानों से सम्बद्ध देवताओं की उन स्थानों के प्रति विशेष अभिरुचि को प्रकट करने वाली कथायें दी गई होती हैं। यद्यपि उन में से बहुत सी कथाओं का उन तीर्थों के विज्ञापन के

सिवाय कोई प्रयोजन नहीं होता परन्तु उनमें से कुछ सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण भी होती हैं। लेखिका की नीलमत को पुराण मानने की धारणा के बावजूद मुझे यह ग्रन्थ पुराण और स्थलमाहात्म्य इन दोनों के बीच का प्रतीत होता है। इस का वर्ण्य विषय पुराण की श्रेणी में रखने योग्य ग्रन्थ जैसा विस्तृत न हो कर स्थानीय है परन्तु स्पष्ट ही यह स्थलमाहात्म्य से अधिक विस्तृत है तथा कई ऐसे विषयों को प्रस्तुत करता है जो स्थलमाहात्म्यों में नहीं होते। इसे माहात्म्य कहें अथवा पुराण, पर कश्मीर के अतीत के अध्ययन की दृष्टि से इस के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। यह राजतरंगिणी के राजवंशीय और राजनैतिक इतिहास को सामाजिक पृष्ठभूमि प्रदान करता है। कश्मीर की धार्मिक जनता इस ग्रन्थ में अपने अपने देवों का पूजन करती हुई, अपनी भूमि की पवित्रता पर विश्वास रखती हुई, अनेक पर्वों, उत्सवों को मनाती हुई और सामान्यतः सुखी जीवन बिताती हुई चित्रित की गई है। नीलमत कश्मीर के सामाजिक जीवन के कई प्रशंसनीय पक्षों पर प्रकाश डालता है। मैं केवल दो बातों की चर्चा यहाँ करूंगा। नीलमत में वर्णित कश्मीर की सामाजिक व्यवस्था में जैसी स्वतन्त्रता नारियों को प्राप्त थी वैसी उत्तर भारत में और कहीं दिखाई नहीं देती। यह ग्रन्थ गृहस्थियों को अपने अपने परिवार की स्त्रियों के संग उपवनों में जाने का निर्देश देता है। स्त्रियों को वहाँ सभी प्रकार के उत्सवों और धार्मिक पर्वों में भाग लेने की अनुमति है। नीलमत कुमारियों के लिए जलक्रीड़ा का विधान भी करता है। वस्तुतः यह प्रतीत होता है कि प्राचीन कश्मीर में स्त्रियों को न केवल पर्याप्त स्वतन्त्रता प्राप्त थी अपितु उन्हें बहुत आदर और सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।

नीलमत से यह भी प्रतीत होता है कि कश्मीर में नाट्योत्सवों का प्रचलन था और वहाँ के लोगों की उन में अभिरुचि थी। विशेष अवसरों पर प्रेक्षादान अर्थात् नाट्यप्रदर्शन कराने का विधान किया गया है। त्रयोदशी के दिन अभिनेताओं को निश्शुल्क नाट्यप्रदर्शन करने को कहा गया है। मुझे विश्वास है कि इस चर्चा से नीलमत का महत्त्व स्पष्ट है। भारत के ऐतिहासिक शोध के लिए नीलमत के अनुवाद की आवश्यकता बहुत समय से थी। डा० वेदकुमारी घई का यह कार्य विद्वानों के लिए दुगुना महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उन्होंने न केवल

इस का संस्कृत से अनुवाद किया है अपितु इस की सामग्री का उत्कृष्ट विश्लेपण भी किया है। शोधग्रन्थ के रूप में यह पूर्णता, निर्दोषता और उत्कृष्टता के लिए प्रशंसा के योग्य है (अंग्रेजी) अनुवाद भी सन्तोषजनक और अच्छा हुआ है। मैं वेदकुमारी घई को उनके इस कार्य की उत्कृष्टता के लिए बधाई देता हूं और उनके लिए सब प्रकार की सफलता की कामना करता हूं।

जम्मू
7 मार्च 1962

हस्ताक्षरांकित
के. एम. पनिकर
कुलपति, जम्मू कश्मीर विश्वविद्यालय

प्रथम खण्ड

द्वितीय खण्ड

विषयानुक्रमणिका

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

विषयावतरणिका

1. अध्येय ग्रन्थ का शीर्षक

नीलमतपुराण की पाण्डुलिपियों की पुष्पिकाओं में इस ग्रन्थ के दो नाम नीलमतम् तथा नीलमतम् पुराणम् दिये गये हैं। पाण्डुलिपियों के किनारों पर संक्षेपाक्षर नील. म.; नी. म.; नी. म. पु.; नी. पु.; नी. तथा काश्मी. माहा. मिलते हैं जिन से इस ग्रन्थ के नीलमत, नीलमतपुराण, नीलपुराण तथा काश्मीरमाहात्म्य नाम सूचित होते हैं। कल्हण ने राजतरंगिणी में इसका उल्लेख दो बार नीलमत, दो बार पुराण तथा एक बार नीलपुराण कह कर किया है।[1] स्पष्ट है कि कल्हण इसे पुराण के रूप में स्वीकार करता है। वह इस ग्रन्थ का विशिष्ट नाम नीलमत, विधा (श्रेणी) का नाम पुराण तथा नीलमत पुराण का संक्षिप्त रूप नीलपुराण देता है। यहाँ मत शब्द का अर्थ सम्मति या उपदेश है। नीलमत का अर्थ है नील के द्वारा दिये गये उपदेश या निर्देश। जिस प्रकार बहुत से अन्य पुराणों के नाम उनके रचयिताओं के नामों के साथ जुड़े हैं (जैसे वायुपुराण, मार्कण्डेयपुराण, गरुडपुराण, ब्रह्मपुराण आदि) उसी प्रकार नीलमतपुराण का नाम भी इस कारण है क्योंकि इसका प्रमुख भाग नीलनाग द्वारा चन्द्रदेव को दिये गये उपदेश के रूप में है।[2]

आर० जी० भण्डारकर एक पाण्डुलिपि के साक्ष्य के आधार पर ही नीलमत को माहात्म्य की श्रेणी में रखते हैं।[3] रामलाल कांजीलाल तथा पं० जगद्धरज़ाडू भी लिखते हैं कि वर्तमान स्वरूप में इसे अठारह पुराणों के समकक्ष नहीं रखा जा सकता। नगरखण्ड तथा दूसरे माहात्म्यों की तरह इसे पुराण का भाग अथवा पुराण का पूरक कह सकते हैं।[4] इन विद्वानों के कथन पर विचार करने से पूर्व हमें पुराण शब्द की परिभाषा तथा उपलब्ध पुराणों की विशेषताओं पर नज़र डालनी चाहिए।

वायुपुराण तथा ब्रह्माण्डपुराण के अनुसार "यस्मात्पुरा ह्यनतीदं पुराणं तेन

चोच्यते" अर्थात् जो प्राचीनकाल से चला आ रहा है वह पुराण कहा जाता है।[5] प्राचीन संस्कृत साहित्य में पुराण शब्द का प्रयोग प्रायः इतिहास शब्द के साथ हुआ है।[6] कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में पुराण और इतिवृत्त को इतिहास के भाग कहा है।[7] अमरकोश में तथा बहुत से पुराणों में पुराण को पंचलक्षण अर्थात् पाँच विशेषताओं- सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर तथा वंशानुचरित से युक्त होना चाहिए ऐसा बताया है।[8] परन्तु बहुत से उपलब्ध महापुराण तथा लगभग सभी उपपुराण इस पंचलक्षण परिभाषा का अनुसरण करते दिखाई नहीं देते। वर्णाश्रम धर्म, आचार, श्राद्ध, प्रायश्चित्त, दान, पूजा, व्रत, तीर्थ, प्रतिष्ठा, दीक्षा, उत्सर्ग आदि विषयों पर अध्यायों को शामिल कर वे हिन्दु संस्कारों तथा रीतिरिवाज़ों के विधिशास्त्र बन गये हैं।[9] उन सब की समान विशेषता यही है कि वे प्राचीन आख्यानों, उपाख्यानों से युक्त हैं।[10]

इस प्रकार बहुत से अन्य पुराणों की तरह जो पंचलक्षण की परिभाषा पर पूरी तरह खरे नहीं उतरते, नीलमत को भी उन्हीं पुराणों की श्रेणी में रखा जा सकता है। नीलमत के कुछ श्लोकों में प्रतिसर्ग, वंशानुचरित वर्णित हैं तथा मन्वन्तरों का भी उल्लेख है।[11] कल्हण लिखता है कि उसने कश्मीर के प्रथम चार राजाओं के नाम नीलमत से लिये हैं।[12] नीलमत की कुछ पाण्डुलिपियों में तीन नाम मिलते हैं जबकि कुछ पाण्डुलिपियों में केवल एक नाम बालगोनन्द ही मिलता है। इस से प्रतीत होता है कि वंशानुचरित के कुछ भागों को छोड़ देने की प्रक्रिया कल्हण के काल के पश्चात् चलती रही थी। सम्भावना है कि यह प्रक्रिया कल्हण से पूर्व भी चली होगी इस कारण नीलमतपुराण के वंशानुचरित का कुछ भाग लुप्त हो गया होगा जो उस के मूल रूप में रहा होगा। पुराणों की शैली की यह विशेषता है कि उनमें कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा पूछे गये प्रश्न के उत्तर में कोई घटना सुनाता है जिस के भीतर पूर्व काल में किन्हीं अन्य व्यक्तियों द्वारा पूछे गये प्रश्नों और उत्तरों की प्रक्रिया चलती जाती है। नीलमत भी इसी शैली में रचा गया है। सम्पूर्ण नीलमत को एक माहात्म्य मानने में यह भी कठिनाई है कि इसके भीतर ही कई और माहात्म्य हैं जैसे कपटेश्वर माहात्म्य, आश्रमस्वामी माहात्म्य तथा वितस्ता माहात्म्य।[13] सबसे महत्त्वपूर्ण युक्ति यह है कि कल्हण ने इस ग्रन्थ

को पुराण की श्रेणी में रखा है। राजतरंगिणी में नीलमत से लिये गये एक पद्य को कल्हण ने पौराणिक श्लोक कहा है।[14] इस प्रकार जिस ग्रन्थ को पिछले सात सौ वर्षों से अधिक समय से पुराण रूप में स्वीकार किया जाता रहा है उसे पुराण मान लेना चाहिए। वस्तुतः नीलमत पुराण एक स्थानीय लघु उपपुराण है जिस में कश्मीर की प्राचीन संस्कृति से सम्बद्ध बड़ी रोचक सामग्री मिलती है।

2. नीलमतपुराण की विषय सामग्री

प्रारम्भ में जनमेजय वैशम्पायन से पूछते हैं कि महाभारत के युद्ध में कश्मीर का राजा क्यों सम्मिलित नहीं हुआ था? वैशम्पायन उत्तर देते हैं कि महाभारत युद्ध से कुछ समय पूर्व राजा जरासन्ध ने अपने सम्बन्धी कश्मीर के राजा गोनन्द को अपनी सहायता के लिए बुलाया था ताकि वह यादवों के विरुद्ध युद्ध में विजय प्राप्त कर सके। गोनन्द ने उस युद्ध में भाग लिया तथा कृष्ण के बड़े भाई बलराम के हाथों मारा गया। गोनन्द का पुत्र अपने पिता की मौत का बदला लेने को गांधार जा पहुंचा जहाँ एक स्वयंवर में भाग लेने को कृष्ण पहुँचे हुए थे। कृष्ण ने दामोदर को तो मौत के घाट उतार दिया परन्तु कश्मीर भूमि के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए उसकी गर्भवती पत्नी यशोवती को कश्मीर की राजगद्दी सौंप दी। महाभारत के युद्ध के समय दामोदर का पुत्र गोनन्द द्वितीय अभी शिशु ही था अतः वह युद्ध में शामिल नहीं हुआ।[15] कश्मीर भूमि की महिमा के बारे में पूछे जाने पर वैशम्पायन इस भूमि को उमा देवी का रूप बताते हैं जो कल्प के आरम्भ से छः मन्वन्तरों तक एक मनोहर सरोवर के रूप में थी। कई श्लोकों में कश्मीर भूमि की प्रशंसा की गई है। जनमेजय पूछते हैं कि वह सरोवर वैवस्वत मन्वन्तर में कश्मीर देश कैसे बन गया? वैशम्पायन उत्तर में कहते हैं कि पूर्व काल में यही प्रश्न गोनन्द ने बृहदश्व से पूछा था। इसके पश्चात् बृहदश्व के उत्तर में भूलोक के पूर्ण विनष्ट हो जाने का वर्णन है जब पूरा भूतल एक विशाल समुद्र हो जाता है। महादेव स्वयं जल रूप में चारों ओर अवस्थित होते हैं तथा सती देवी एक नाव का रूप धारण कर लेती हैं। भावी मनु सब बीजों को उस नाव में सुरक्षित रखते हैं। मत्स्यरूपधारी विष्णु नौका को पर्वतशिखर से बाँध देते हैं। युग बीत जाने पर

नौका रूप सती भूमि का रूप धारण कर लेती हैं। उस भूमि पर छः योजन लम्बा तथा तीन योजन चौड़ा सती सरोवर प्रकट होता है। फिर वर्णन मिलता है कि वैवस्वत मन्वन्तर में देवों, नागों, दैत्यों आदि का जन्म हुआ। दक्ष की तेरह कन्याओं से उत्पन्न कश्यप की अनेक सन्तानों का भी उल्लेख हुआ है। कद्रू की सन्तान नाग हुए तथा विनता के दो पुत्र गरुड तथा अरुण हुए। कद्रू और विनता की कलह के परिणाम स्वरूप उनके पुत्रों में भी शत्रुता हो गई। गरुड नागों का नाश करने लगा। तब नाग अपनी रक्षा के लिये वासुकि के पास गए। विष्णु की सहायता से नागों की रक्षा हुई। विष्णु ने वासुकि की प्रार्थना स्वीकार कर नागों के निवास के लिए सतीसर का सुरक्षित क्षेत्र प्रदान किया तथा वहां उनके राजा के रूप में नीलनाग को अभिपिक्त किया। कुछ समय पश्चात् वहां सतीसर में राक्षससंग्रह का एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उस जलोद्भव नाम राक्षस ने तप कर के ब्रह्मा जी से जल में अमरत्व का वरदान प्राप्त कर लिया था। उद्दण्ड होकर वह मनु की सन्तान को नष्ट करने लगा। कश्मीर तथा उस प्रदेश के आसपास की जनता त्रस्त हो उठी। दार्वाभिसार, गांधार, जुहुण्डर, शक, खश, तंगण, माण्डव, मद्र सभी जातियों को उनके प्रदेशों से भगाकर वह उन सूने प्रदेशों में निश्शंक विचरण करने लगा। एक बार नागों के प्रमुख नील की प्रार्थना पर कश्यप वहां पधारे। वहाँ की शोचनीय स्थिति को देख कर उन्होंने देवों से जलोद्भव राक्षस का नाश करने की प्रार्थना की। विष्णु, शिव तथा ब्रह्मा अन्य देवी देवताओं को साथ लेकर कश्मीर पहुँचे। ब्रह्मा के वरदान से जल में अवध्यताप्राप्त वह राक्षस सरोवर में छिपा हुआ था। विष्णु के आदेश से अनन्त ने अपने हल से हिमालय पर्वत को विदीर्ण कर पानी निकलने का रास्ता बना दिया जिस से शीघ्र ही सरोवर जलरहित हो गया। तब जलोद्भव ने अपनी माया से चारों ओर अन्धकार फैला दिया। तब शिव महादेव ने चन्द्र और सूर्य इन दोनों को हाथों में पकड़ कर प्रकाश कर दिया। विष्णु का जलोद्भव दैत्य के साथ युद्ध हुआ और अन्त में उन्होंने अपने चक्र से उसका सिर काट दिया। जलोद्भव के रक्त से मस्त होकर घूमते हुए चक्र को शिव ने पकड़ लिया तथा परिहास में कहा कि बदले में कुछ भेंट लेकर ही यह चक्र वापिस करूँगा। विष्णु ने यह शर्त स्वीकार कर चक्र ग्रहण किया तथा उसी स्थान पर परिहास की मुद्रा में शम्भु और पार्वती की

प्रतिमाएं स्थापित कर दीं तथा स्वयं को भी जलोद्भव के सिर पर प्रतिष्ठित कर दिया। सतीसर का जल बह जाने के बाद वह स्थान सुन्दर समतल भूमि में परिवर्तित हो गया था। कश्यप मुनि की इच्छा थी कि उस प्रदेश में नाग और मानव मिलकर रहें। नागों ने इस पर आपत्ति प्रकट की तो कश्यप ने उन्हें शाप दे दिया कि यदि तुम्हें मानवों के साथ रहना स्वीकार नहीं है तो पिशाचों के साथ रहना पड़ेगा। नागों के द्वारा बहुत अनुनय विनय की जाने पर कश्यप मुनि ने शाप को इस प्रकार परिवर्तित कर दिया कि चार युगों तक तो नागों को वर्ष में छः मास पिशाचों के साथ तथा छः मास मानवों के साथ रहना होगा। चार युग बीत जाने पर वे केवल मानवों के साथ रह सकेंगे। चार युग बीत गए। सदैव की तरह शीत के छः मास बिताने के लिए मानव नीचे के प्रदेश में चले गए। केवल एक बूढ़ा ब्राह्मण चन्द्रदेव वहाँ रुका रहा। पिशाचों द्वारा सताया जाने पर वह नागराज नील की शरण में गया। पिशाचराज निकुम्भ तथा कई नाग नील की सेवा में लगे थे। चन्द्रदेव ने नीलनाग की स्तुति की और प्रार्थना की कि भविष्य में मानवों को पूरा समय कश्मीर में रहने की आज्ञा मिले तथा उन्हें स्वदेशत्याग या देशान्तरगमन का भय न रहे। नागराज नीलनाग ने प्रसन्न होकर चन्द्रदेव की माँग स्वीकार कर उसे बताया कि अब आगे से मानवों को छः मास के लिए कश्मीर से बाहर जाने की आवश्यकता नहीं होगी। वे शीतकाल में भी यहीं रह सकेंगे परन्तु उन्हें नाग-देवताओं की पूजा करनी होगी तथा कुछ विशेष धार्मिक पर्वों तथा त्यौहारों को मान्यता देनी होगी जिन के विषय में उसे केशव ने बताया था। चन्द्रदेव की विधि पूर्वक पूजा कर नीलनाग ने उसे पूर्व काल में सुने हुए सब विधिविधान तथा आचार सुनाए। राजा गोनन्द ने बृहदश्व से पूछा कि वे सब आचार कौन से थे। तब बृहदश्व ने नीलनाग तथा चन्द्रदेव के मध्य हुआ पूरा संवाद गोनन्द को सुनाया। नीलनाग तथा चन्द्रदेव के इस संवाद में पैंसठ व्रतों, पर्वों, त्यौहारों का वर्णन है जिन में अधिकतर वही हैं जो अन्य पुराणों में वर्णित हैं तथा देश के अन्य भागों में मान्यताप्राप्त हैं। कुछ एक व्रत, पर्व केवल कश्मीर में ही प्रचलित हैं जैसे नवहिमपातोत्सव, पिशाचचतुर्दशी, वितस्ताजन्मोत्सव आदि।[16] संवाद के अन्त में यह भी बताया गया है कि नीलनाग द्वारा वर्णित इन सब आचारों का पालन करने से लोगों को आरोग्य,

आयु, धन आदि की प्राप्ति होती है तथा देहावसान के बाद वे देवलोक को जाते हैं। यदि इनका पालन नहीं होता तो देश में अति वर्षा, बाढ़, दुर्भिक्ष, अकालमरण, दारुण राजदण्ड, असामयिक राजमरण, अत्यधिक हिमपात आदि विपत्तियाँ आती हैं। राजा गोनन्द यह सब जानकर भी उन आचारों का पूरा पालन नहीं कर पाया था इसलिए वह मथुरा में बलभद्र के हाथों मारा गया था। जनमेजय के द्वारा यह पूछे जाने पर कि गोनन्द ने सब आचारों को जान लेने के बाद और क्या पूछा था, वैशम्पायन ने कहा कि उसने कश्मीर में निवास करने वाले नागों के बारे में पूछा था। तब बृहदश्व ने छः सौ नागों के नाम बताने के बाद यह कहा था कि नागों की संख्या इतनी अधिक है कि मैं सौ वर्षों में भी उन सब का उल्लेख नहीं कर सकता। दिक्पालों की चर्चा के प्रसंग में कश्मीर के तीन दिक्पालों–पूर्व में बिन्दुसरनाग, दक्षिण में श्रीमाढकनाग और उत्तर में उत्तरमानसनाग का उल्लेख किया गया है। इस के पश्चात् षडंगुलनाग तथा महापद्मनाग की कथा दी गई है। दुष्ट आचरण के कारण षडंगुलनाग को कश्मीर से निर्वासित कर दिया गया था और उस नाग के स्थान पर चन्द्रपुर नगर बसाया गया था। वहाँ विश्वगश्व का शासन था। दुर्वासा के शाप से अभिशप्त नगर भविष्य में सरोवर बनने वाला था। जब गरुड से सताए हुए महापद्मनाग ने कश्मीर में अपने और अपने परिवार के निवास लिए नीलनाग से प्रार्थना की तो उसने उसे चन्द्रपुर में जाने को आदेश दिया। महापद्म ब्राह्मण का वेश धारण कर राजा विश्वगश्व के पास पहुँचा तथा वहाँ रहने को स्थान माँगा। जब विश्वगश्व ने उसे वचन दे दिया तो महापद्म ने पूरा नगर खाली कर देने को कहा क्योंकि उसके विशाल परिवार के लिए बहुत अधिक स्थान की आवश्यकता थी। धर्मात्मा विश्वगश्व प्रजासहित नगर से बाहर चला गया। तब महपद्म ने चन्द्रपुर को सरोवर में परिवर्तित कर दिया और सपरिवार वहाँ रहने लगा। इसके पश्चात् गोनन्द ने कश्मीर के तीर्थ स्थानों के बारे में जानकारी चाही। बृहदश्व ने कश्मीर के अनेक शैव तीर्थों और वैष्णव तीर्थों का वर्णन किया। भूतेश्वर तथा कपटेश्वर इन दो नामों के विषय में गोनन्द ने उत्सुकता प्रकट की तो बृहदश्व ने ब्राह्मण शिलाद तथा उसके पुत्र नन्दी की कथा से युक्त भूतेश्वरमाहात्म्य को सुनाया तथा काष्ठ के रूप में वासिष्ठ ब्राह्मण तथा अन्य भक्त जनों को दर्शन देने वाले शिवकपटेश्वर के कपटेश्वर तीर्थ का

माहात्म्य भी सुनाया। वैष्णव तीर्थों की चर्चा के प्रसंग में आश्रमस्वामी माहात्म्य का वर्णन है जिस में परशुराम को विष्णु का भक्त बताया है। तत्पश्चात् कश्मीर तथा आस-पास के प्रदेश के तीर्थों की दो सूचियाँ दी गई हैं। अन्त में जनमेजय की प्रार्थना पर वैशम्पायन वितस्ता की स्तुति करते हैं तथा कहते हैं कि यद्यपि सभी नदियों के संगम तथा सभी नागों के जलाशय पवित्र हैं परन्तु वितस्ता का विशेष माहात्म्य है। इसके जलमात्र से देवता ऐसे प्रसन्न हो जाते हैं जैसे विभिन्न यज्ञों और दान दक्षिणा से भी नहीं हो पाते। पितर भी इस के जल मात्र से ही सन्तुष्ट हो जाते हैं। सभी पुण्य तीर्थ, नदियाँ और सरोवर भाद्रपद की त्रयोदशी को वितस्ता में आते हैं। इस वितस्ता स्तुति के साथ ग्रन्थ समाप्त हो जाता है। इसके स्थानीय होने से सर्वत्र इस विषय की उपयोगिता न होने के कारण विस्तार के भय से इसे महाभारत में सम्मिलित नहीं किया गया।

3. नीलमत का काल

कल्हण की राजतरंगिणी में नीलमत का उल्लेख एक प्राचीन पुराण के रूप में होने से यह प्रतीत होता है कि इस की रचना बारहवीं शती से बहुत पहले हो चुकी थी। विष्णु के अवतार के रूप में बुद्ध का वर्णन जिस उदार ढंग से नीलमत में हुआ है वह ईस्वी आठवीं शती के बाद सम्भव प्रतीत नहीं होता।[17] आठवीं शती तक बौद्ध धर्म का प्रभाव इतना महत्त्वपूर्ण नहीं रहा था। निःसन्देह क्षेमेन्द्र, जयरथ और कल्हण ने अपने ग्रन्थों में विष्णु के बुद्ध अवतार का उल्लेख किया है। बहुत से पुराणों में बुद्ध की गिनती विष्णु के दस अवतारों में हुई है। इन में से कुछ पुराणों में तो विष्णु के अवतार के रूप में बुद्ध के नाम का उल्लेख मात्र है या उन्हें नमस्कार मात्र किया गया है। कुछ पुराणों में बुद्ध के विषय में ऐसी कथाएँ मिलती हैं जिन में उन्हें असुरों का उपदेशक कहा गया है। बौद्ध मत के सिद्धान्तों का वर्णन करके उन्हें असुरों की पराजय का कारण बताया गया है। इस प्रकार की कथाओं का उद्देश्य जनमानस में बौद्ध धर्म के प्रभाव को कम करना प्रतीत होता है। इस के विपरीत नीलमत पुराण में महात्मा बुद्ध को जगद्गुरु कहा गया है। स्पष्ट है कि नीलमत के रचना काल में बौद्ध मत इतना प्रभावशाली रहा होगा कि अप्रत्यक्ष रूप में भी उस की अवमानना नहीं की जा सकती थी।[18] नीलमतपुराण में अवतार के स्थान

पर प्रादुर्भाव शब्द का प्रयोग भी उसकी प्राचीनता का द्योतक है।[19] कल्कि अवतार, कृष्ण की प्रिया राधा तथा तुलसी पत्र का उल्लेख न होना भी इस बात की ओर संकेत करता है।[20] स्टाइन का यह कथन कि जयरथ का ग्रन्थ हरचरितचिन्तामणि काल की दृष्टि से नीलमत पुराण के निकटतम है, उचित प्रतीत नहीं होता।[21] दोनों ग्रन्थों में उपलब्ध पारम्परिक कथाओं की तुलना स्पष्ट करती है कि हरचरितचिन्तामणि की कथाएं साम्प्रदायिक कट्टरता से प्रेरित हैं जबकि नीलमत की कथाएं इस विषय में उदारता दिखाती हैं।[22] जयरथ ने शिव का सर्वाधिक महत्त्व स्थापित करने के लिए यह कट्टरता प्रदर्शित की है तथा बौद्धों की भी अप्रत्यक्ष रूप से अवमानना की है।[23] इस विषय में वह कल्हण के निकट है जिसने बौद्धों की तुलना यक्षों से की है तथा नीलमत से सम्बद्ध एक पारम्परिक कथा को परिवर्तित रूप में इस प्रकार रखा है-बोधिसत्त्व नागार्जुन के संरक्षण में बौद्धों ने अपने विरोधियों को पराजित कर बहुत प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। उन्होंने नीलमतपुराण में नील द्वारा निर्दिष्ट आचारों का पालन तथा नागदेवों की पूजा छोड़ दी थी। क्रुद्ध होकर नागों ने कश्मीर में भारी हिमपात किया जिसमें बौद्धों का नाश हो गया। नागपूजा करने वाले ब्राह्मण बच गए थे। तब चन्द्रदेव नामक एक ब्राह्मण ने तपस्या कर के नीलनाग को प्रसन्न किया जिस के फलस्वरूप नील ने स्वयं को चन्द्रदेव में परिवर्तित कर हिमप्रपात को रोक दिया तथा पूर्व काल में अपने द्वारा प्रतिपादित सभी रीतियों को पुनः चालू करवा दिया। कल्हण और जयरथ से कुछ समय पूर्व कश्मीर में बौद्धों के विरोध में वातावरण रहा होगा जिस कारण नीलमत से सम्बद्ध यह नई कथा कहने की आवश्यकता पड़ी।

एक अन्य प्रमाण बारहवीं शती में लक्ष्मीधर द्वारा रचित कृत्यकल्पतरु से उपलब्ध होता है जिस में किसी ब्रह्मपुराण से बहुत से श्लोक उद्धृत किये गए हैं जो प्रकाशित ब्रह्मपुराण में नहीं मिलते परन्तु नीलमतपुराण में मिलते हैं। नरसिंह वाजपेयी ने भी अपने ग्रन्थ नित्याचारप्रदीप में दो ब्रह्मपुराणों की चर्चा की है एक ब्रह्मपुराण वह जिससे कृत्यकल्पतरु में उद्धरण लिए गए हैं और दूसरा ब्रह्मपुराण वह जिसमें पुरुषोत्तममाहात्म्य है और जिस का उल्लेख हेमाद्रि ने किया है। कृत्यकल्पतरु में उद्धृत श्लोकों में देशस्यास्य के स्थान पर देवस्याथ

तथा कश्मीर के लिए देशोऽयं के स्थान पर स देशः प्रयोग मिलते हैं। नवहिमपातोत्सव के प्रसंग में नीलमत के श्लोक देने के पश्चात् ब्रह्मपुराण की यह पंक्ति दी गई है-यस्मिन् देशे हिमं न स्यात्तत्र ब्रूयाद् हिमं हिमम्। जहाँ हिमपात नहीं होता वहाँ नवहिमपातोत्सव की आवश्यकता नहीं होगी, इस बात का ध्यान नहीं रखा गया। स्पष्ट है कि ब्रह्मपुराण ने नवहिमपातोत्सव से सम्बद्ध श्लोक कश्मीर में रचित किसी अन्य ग्रन्थ से लिए होंगे और वह ग्रन्थ नीलमत पुराण हो सकता है।

सम्भवतः नीलमत की रचना पहले स्वतन्त्र रूप में कश्मीर के एक स्थानीय पुराण के रूप में हुई होगी जिसमें वहाँ के रीति-रिवाज़ों, पर्वों, तीर्थों आदि का वर्णन था। क्योंकि नीलमत को महापुराण का दर्जा प्राप्त नहीं था इसलिए इसमें वर्णित विधिविधानों को प्रामाणिकता प्रदान करने के लिए नीलमत के कुछ भागों को किसी ब्रह्मपुराण में सम्मिलित कर दिया गया। यह कार्य लक्ष्मीधर के समय (1104-54 ईस्वी) से बहुत पहले हुआ होगा क्योंकि उसने नीलमत का उल्लेख किए बिना ब्रह्मपुराण से उद्धरण दिए हैं। मेरे द्वारा तब तक अनुपलब्ध उस ब्रह्मपुराण और नीलमत के सम्बन्ध की चर्चा इसी ग्रन्थ (नीलमत पुराण-एक सांस्कृतिक एवं साहित्यिक अध्ययन 1968 ई.) में की गई थी। कुछ वर्ष पश्चात् जापान के क्योटो विश्वविद्यालय के प्रोफैसर यासुके इकारी पाण्डुलिपियों की खोज में भारत आए थे। उन्हें श्रीनगर कश्मीर की रिसर्च लाइब्रेरी में एक अपूर्ण पाण्डुलिपि प्राप्त हुई जिसे आदिपुराण नाम से दर्ज किया गया है। वस्तुतः वह लक्ष्मीधर द्वारा कृत्यकल्पतरु में उद्धृत ब्रह्मपुराण ही है। उन्होंने उस आदिपुराण/ब्रह्मपुराण को रोमन अक्षरों में क्योटो विश्वविद्यालय जापान से 1994 ई. में प्रकाशित किया है। उन्होंने उस पुराण की तुलना नीलमतपुराण से कर के मेरे मत से सहमति प्रकट की है कि नीलमत की रचना पहले कश्मीर में हो चुकी थी और बाद में उस के अंश आदिपुराण/ब्रह्मपुराण में जोड़े गए जिन्हें लक्ष्मीधर ने कृत्यकल्पतरु में उद्धृत किया है।[24]

एक अन्य प्रमाण नीलमत के पाठान्तरों के अध्ययन से मिलता है। नीलमत के पाठों में कुछ परिवर्तन तथा परिवर्धन उन्हें कश्मीर के अद्वैत शैवदर्शन के अनुरूप बनाने के लिए नवमी शती के बाद किए गए थे। यदि नीलमत की रचना नवमी शती के बाद हुई होती तो वैसे परिवर्तनों की आवश्यकता नहीं

होती।[25] इस प्रकार नीलमत के काल की निचली सीमा आठवीं शताब्दी ई० मानी जा सकती है। उपरिसीमा छठी शताब्दी हो सकती है क्योंकि छठी शताब्दी ई० में बुद्ध को विष्णु का अवतार स्वीकार कर लिया गया था।[26]

विष्णुधर्मोत्तर पुराण जिस का समय 400 ई० तथा 550 ई० के मध्य माना जाता है, नीलमत से पूर्व का है। क्योंकि विष्णुधर्मोत्तर के कुछ पद्य किंचित् परिवर्तित रूप में नीलमत में लिए गए हैं।[27] नीलमत में जिस प्रकार की धार्मिक समन्वय की भावना शैव, वैष्णव, बौद्ध आदि मतों के बीच दिखाई देती है वह भी इसी समय को द्योतित करती है। चीनी यात्री ह्यून्त्सांग ने जो सम्भवत: राजा दुर्लभवर्धन के समय में कश्मीर में आया था, वहां के लोगों में फैली बौद्धधर्म विरोधी भावना का उल्लेख किया है।[28] उसका समय सातवीं शती ई. है अत: नीलमत को छठी शती ई. में रखा जा सकता है। नीलमत का पद्य "स्वभेदेनेह नश्यन्ति बद्धमूला नराधिपा:" भी जिस राजनैतिक स्थिति को प्रकट करता है वह राजतरंगिणी के अनुसार छठी शती ई. की प्रतीत होती है।

प्रथम अध्याय की टिपण्णियाँ

1. मतं नीलमुनेरपि। राजत. 1, 14

   तेभ्यो नीलमताद् दृष्टं गोनन्दादिचतुष्टयम्। वही 1.16, 71, 178, 183

2. चतुर्थं वायुना प्रोक्तं वायवीयमिति स्मृतम्। स्कन्द पु. 8.1.33

   मार्कण्डेयेन कथितं तत्सर्वं विस्तरेण तु।

   पुराणं नवसाहस्रं मार्कण्डेयमिहोच्यते।।

   मत्स्य पु. 12.3.26

   ब्रह्मणाभिहितं ब्राह्मं पुराणं परिकीर्त्यते। वही 5.3.12.13

   कानि आचाराणि नीलेन चन्द्रदेवाय भार्गव।

   पुरा प्रोक्तानि चैतानि कथयस्व महाद्युते।। नीलमत पु. 385

3. Bhandarkar, R.G. Report for the year 1883-1884 p.44 Teste Winternitz. a History of Indian Literature vol, 1 p. 584.

4. नीलमत पु. भूमिका पृ. 4, 5

5. यस्मात्पुरा ह्यनतीदं पुराणं तेन हि स्मृतम्। वायु पु. 1.203

यस्मात्पुरा ह्यनतीदं पुराणं तेन चोच्यते। ब्रह्माण्डपु. 4.4.54

6. वाकोवाक्यमितिहासपुराणं गाथा नाराशंस्य:। शतपथ ब्रा. 11.5.6.8. गोपथ ब्रा. 1.10. बृहदारण्यक उप. 2.5.10 आदि

7. पुराणमितिवृत्तमाख्यायिकोदाहरणं धर्मशास्त्रमर्थशास्त्रं चेतिहास:। कौटिल्य अर्थशास्त्र 2.3.

8. सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।

वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्।।

मार्कण्डेय पु. 134.13 अग्नि पु. 1.14

9. Hazra R. C. Puranic. Records on Hindu Rites and Customs P. 6

10. Winternitz, A History of Indian Literature Vol. 1 P. 519

11. नीलमत पु. 6-10, 31-53

12. कल्हण, राजत. 1.16.

13. नीलमत पु. 1171-1191, 1209-1274, 1423-1451

14. कल्हण, राजत. 1.183, 1.71-72.

15. वैशम्पायन के उत्तर का कुछ भाग लघु संस्करण की पाण्डुलिपियों में में नहीं है।

16. देखें अष्टम अध्याय

17. नीलमत पु. 708-715

18. देखें सप्तम अध्याय बौद्ध धर्म

19. नीलमत पु. 530, 709, 743, J U G III p. 58 ; I H Q VII p. 75 ff

20. Hazra, R. C. Puranic Records on Hindu Rites and Customs pp. 90, 114

21. Stein Rajat Trans Vol. II p. 378

22. हरचरितचिन्तामणि, सप्तम अध्याय में चक्रकथा से तुलना करें।

23. वही, सप्तदश अध्याय 8, 9, 32, 33.

24. Yasuke IKARI, A Study of the Nilamata pp. 71 ff

25. देखें नवम अध्याय

26. Hazra, R. C. Op. Cit. p. 41

27. विष्णुधर्मोत्तर पु. की पंक्ति 1.162...35 ''तौषी तत्रार्कनन्दिनी'' की तुलना नीलमत 120 ''तौषी तोषितभास्करा'' से करें।

28. Yasuke IKARI, Op. Cit. p. 369 Article by Toru Funayama

❑❑❑

द्वितीय अध्याय

भूगर्भीयविज्ञान तथा भूगोल

1. कश्मीर की उत्पत्ति

1.1 कश्मीर की उत्पत्ति से सम्बद्ध पौराणिक कथा

नीलमत पुराण के अनुसार कल्प के प्रारम्भ से ले कर छः मन्वन्तरों तक कश्मीर की भूमि पर छः योजन[1] लम्बी और तीन योजन चौड़ी सतीसर नामक विशाल झील थी। सातवें मन्वन्तर में लोगों को पीड़ित करने वाले, जल में छिपे हुए दैत्य जलोद्भव को मारने के लिए अन्य देवी-देवताओं के साथ वहाँ आए भगवान् विष्णु के आदेश पर अनन्त ने अपने हल से रास्ता बना कर झील को जलरहित कर दिया। इसी कथा में आगे चल कर उल्लेख मिलता है कि जलोद्भव की मृत्यु के पश्चात् कश्यप ने वहाँ के मूल निवासी नागों के साथ मानवों और पिशाचों को वहाँ बसाया।[2]

यही कथा कल्हण की राजतरंगिणी में[3] और कुछ परिवर्तन के साथ महावंश में मिलती है।[4] मूलसर्वास्तिवादी बौद्ध सम्प्रदाय के चीनी विनयपिटक में[5] तथा ह्यून्त्सांग की यात्राओं के विवरण में भी यही कथा मिलती है।[6] इस कथा का उद्भव कश्मीर घाटी की चिलमची जैसी आकृति को देख कर हुआ या प्राचीन काल की स्मृतियों ने, जबकि कश्मीर का बहुत बड़ा भाग पानी में था, इस कथा को जन्म दिया, इस विषय में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है। लेकिन यह जानकारी दिलचस्प है कि आधुनिक समय में हुए भूगर्भीय परीक्षणों से प्राप्त तथ्य नीलमत के कथन की पुष्टि करते हैं।

1.2 आधुनिक भूगर्भीय परीक्षणों के परिणाम

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, कश्मीर की घाटी चारों तरफ़ से ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों से घिरी हुई एक चिलमची के समान दीखती है। कश्मीर घाटी का सब से निम्न स्थान समुद्रतल से 5200 फीट की ऊँचाई पर है। इस की

बाहरी सीमा बने हुए पीरपंचाल के सब से निचले दर्रे की सतह घाटी की सतह से 3000 फीट की ऊंचाई पर है।[7] जल के बाहर निकलने का एक ही बारामूला का संकीर्ण चट्टानी रास्ता है। चिलमचीनुमा घाटी का लगभग आधा भाग करेवों से ढका हुआ है जो ऊपर से समतल हैं और मिट्टी, चिकनी मिट्टी और जल से लाई गई रेत से बने हैं। इनकी ऊपर की तह हरी हरी रेत की है। दक्षिण पश्चिम की ओर से इन करेवों की चौड़ाई आठ से सोलह मील के बीच की है तथा शौपैयां से लेकर बारामूला तक लम्बाई पचास मील है। ये करेवे कहीं-कहीं पट्टियों के रूप में कट जाते हैं पर इन के समतल ऊपरी भाग और एक जैसी ऊँचाई से यह प्रकट होता है कि वे पहले एक बड़े पठार के रूप में रहे होंगे जो बाद में पहाड़ों से आने वाली जलधाराओं से कट कर छोटी-छोटी पहाड़ियों में परिवर्तित हो गए। करेवों के इस जमाव की व्याख्या में ड्रियू ने यह समाधान प्रस्तुत किया था कि प्राग् ऐतिहासिक कश्मीर में एक विशाल झील थी जो किसी समय घाटी की वर्तमान सतह से 2000 फीट ऊँची थी।[8] कर्नल गाडविन आस्टिन और ल्यडेकर उनके इस समाधान से सहमत थे।[9] आर. डी. ओल्डहम इन करेवों को नदी प्रवाह से निर्मित मानते हुए प्राग् ऐतिहासिक विशाल झील के अस्तित्व को नकारते हैं। उनका कहना है कि यद्यपि कर्नल गाडविन द्वारा उल्लिखित कुछ समतल चिकने करेवे ठहरे हुए पानी से निर्मित हो सकते हैं लेकिन चिकने गोल कंकड़ों की तह के ऊपर रेत की तह और उस के ऊपर भूरे कोयले जैसी एक से तीन इंच मोटी तह इनकी निर्मिति खुली हवा में होने की ओर संकेत करती हैं। इन्हें झील से निर्मित मान लेने पर भी यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि किसी समय कश्मीर की सम्पूर्ण घाटी झील के रूप में थी।[10] परन्तु ओल्डहम का यह मत सदोष होने के कारण आधुनिक भूगर्भवेत्ताओं को मान्य नहीं है। निचले भागों के करेवों के लिए यह व्याख्या स्वीकार्य हो सकती है कि वितस्ता नदी जो पहले समय में आज की वितस्ता की धारा के निकट ही अन्य रास्ते से प्रवाहित होती थी, वे उस के अवशिष्ट जमाव हों। परन्तु ऊपरी भागों के करेवों के विषय में यह कल्पना करना कठिन है कि चिकनी मिट्टी और रेत की समतल तहों का यह दूर दूर तक फैला हुआ सिलसिला जो घाटी की सतह से 2000 फीट की ऊँचाई तक मिलता है, बिना किसी बाँध की सहायता के बना हो। ऊपरी भाग के करेवों की व्याख्या तो इसी प्रकार की जा सकती है कि किसी

पूर्व काल में कश्मीर घाटी के स्थान पर एक बहुत विशाल झील रही होगी।[11] झील के वर्तमान तल से 1500 फीट की ऊँचाई पर के करेवों में सिंघाड़ों के सही नमूनों की उपस्थिति की व्याख्या इस के बिना नहीं की जा सकती क्योंकि यह पौधा अधिक मात्रा में झीलों में ही उगता है।[12] डी. एन. वाडिया इन करेवों को किसी एक झील या अनेक झीलों के क्रम के जमाव के अवशेष मानते हैं जो कभी सम्पूर्ण घाटी में एक छोर से दूसरे छोर तक भरे हुए थे। हिमयुग में इस करेवा झील का क्षेत्रफल 3000 वर्ग मील से कम नहीं रहा होगा।[13] अपनी पुस्तक ''कश्मीर इट्स जिओलाजी ऐण्ड जिओग्राफी'' में एम. बी. पिथवाला ने[14] तथा ''स्टोन एज इन कश्मीर'' में जी. ई. एल. कार्टर ने भी, प्राग् ऐतिहासिक काल में कश्मीर एक विशाल झील के रूप में रहा होगा, इस मत का समर्थन किया है।[15]

1.3 पौराणिक उपाख्यान का मूल

यद्यपि नीलमत का उपाख्यान कश्मीर की उत्पत्ति के विषय में भूगर्भीयविज्ञान के तथ्यों से मेल खाता है परन्तु यह स्वीकार करना दूर की बात होगी कि इस उपाख्यान के आधार भूगर्भीय परीक्षण थे। घाटी की चिलमची जैसी आकृति देख कर इस स्थान पर एक बहुत बड़ी झील होने की कल्पना सम्भावित प्रतीत होती है। इसके बाद इस तरह के पौराणिक उपाख्यानों का जोड़ा जाना एक क़दम आगे था कि अनन्त देव ने घाटी के पश्चिमी कोने की रेतीली चट्टान को तोड़ कर रास्ता बना कर पानी को बाहर निकाल दिया, यद्यपि सम्भावना यह है कि चट्टान में दरार किसी भूकम्प या भयंकर बाढ़ के कारण आई हो।

2. भौगोलिक सामग्री

2.1 सामान्य भौगोलिक सामग्री

यद्यपि विस्तार से तो नहीं परन्तु अन्य पुराणों की तरह नीलमत में भी विश्व के भूगोल से सम्बद्ध सामग्री उपलब्ध है। विश्व के सात द्वीपों-जम्बु, शाक, कुश, क्रौंच, शाल्मलि, गोमेद और पुष्कर के नामों का उल्लेख है।[16] इन सातों द्वीपों में से जम्बु द्वीप के नौ वर्ष हैं जिन के नाम हैं-उत्तरकुरु, रम्य, हैरण्वत, भद्राश्व, केतुमाल, इलावृत, हरिवर्ष, किम्पुरुष और भारतवर्ष।[17] इन में से जो

अन्तिम भारतवर्ष है वह पुनः नौ भागों में विभक्त है और उस का नौवां भाग भारत का प्रतिनिधित्व करता प्रतीत होता है। उत्तर भारत के पर्वतों तथा सात कुल पर्वतों-मध्य भारत तथा दक्षिण भारत के पर्वतों का भी उल्लेख मिलता है।[18]

नीलमत में दी गई सब से अधिक महत्त्वपूर्ण जानकारी तीर्थों के विषय में है। उस काल की रचना होने के कारण जब दीर्घकालीन खर्चीले यज्ञों का स्थान तीर्थयात्राओं ने ले लिया था, नीलमत भारत के विभिन्न भागों की स्तुति उपस्थित करता है। विशेषतः कश्मीर भूमि का तो प्रत्येक स्थान पवित्र माना गया है और इन पवित्र स्थानों के उल्लेख सम्पूर्ण ग्रन्थ में मिलते हैं।[19] ग्रन्थ के उत्तरार्ध में दी गई चार सूचियाँ कश्मीर के भूगोल की दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। पहली सूची में 603 नागों के नाम दिये गए हैं। दूसरी सूची शिव तथा उन से सम्बद्ध अन्य देवों के तीर्थस्थलों का वर्णन करती है। तीसरी सूची में विष्णु से सम्बद्ध तीर्थ स्थानों का उल्लेख है और चौथी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सूची पूर्व दिशा में नीलनाग से प्रारम्भ करके वितस्ता और उसकी सहायक नदियों का अनुसरण करते हुए वराहमूल के संकीर्ण मार्ग तक मुख्य तीर्थों का वर्णन भौगोलिक क्रम से करती है।[20] इस में तनिक भी सन्देह नहीं कि यह सूचियाँ कश्मीर के तीर्थस्थानों के विषय में सूचना का खजाना हैं।[21] परन्तु यह बात भी विचारणीय है कि इन वर्णनों के अति संक्षिप्त होने से इन तीर्थ स्थानों में से बहुतों की पहचान करना सम्भव नहीं हो पाया है। विशेषतः उन स्थानों को जानना कठिन है जिन का उल्लेख कल्हण की राजतरंगिणी में या भौगोलिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण किसी अन्य ग्रन्थ में नहीं हुआ है। फिर भी जहाँ तक सम्भव हो सका है, नीलमत में उपलब्ध भौगोलिक सामग्री का विवरण व्यवस्थित रूप से देने का प्रयास आगे के पृष्ठों में किया जा रहा है।

2.2 कश्मीर का भूगोल

2.2.1 कश्मीर का नामकरण

नीलमत में इस घाटी का नाम अधिकतर कश्मीरा दिया गया है जो आज भी पूरे भारत में और शेष संसार में कश्मीर नाम से जानी जाती है।[22] कश्मीर

के लोग अपनी भाषा में इसे कशीर कहते हैं जो कश्मीर के ही तद्भव रूप कश्वीर से विकसित हुआ है।[23] कल्हण की राजतरंगिणी में घाटी के दोनों नाम कश्मीरा और कश्मीर मिलते हैं।[24] विष्णुधर्मोत्तरपुराण इसे एक और नाम वैतस्तिक देता है जिसका अर्थ है वितस्ता नदी की भूमि।[25] यह नाम किसी और ग्रन्थ में नहीं मिलता। कश्मीर का नाम पाणिनि की अष्टाध्यायी में मिलता है।[26] महाभारत[27], पुराणों[28] और बृहत्संहिता[29] में भी कश्मीरः शब्द का प्रयोग एक देश के लिए और कश्मीराः का प्रयोग कश्मीर में रहने वाले लोगों के लिए किया गया है।

जहाँ तक इस नाम की व्याख्या का प्रश्न है, यह सुझाव कि इस की उत्पत्ति एक कस नाम की पहाड़ी जाति के नाम से हुई होगी, ठीक प्रतीत नहीं होता क्योंकि जाति का नाम खश मिलता है जिसका कश्मीर से सम्बन्ध नहीं है।[30] यह मत कि एक सैमिटिकजाति कश से यह नाम निकला है जिस ने कश, कशान और काशगर नगरों की स्थापना की थी, अभी शोध का विषय है।[31] हैदर मलिक, बर्नौफ़, विल्सन तथा अन्य कई लेखक कश्मीर को कश्यपमीर अर्थात् कश्यप का पर्वत या समुद्र का संक्षिप्त रूप मानते हैं।[32] कुछ अन्य व्युत्पत्तियाँ हैं-- क का अर्थ है जल और शिमिर का अर्थ है सुखाना। कश्मीर वह भूमि है जो जल के सुखाये जाने के पश्चात् बनी।[33] क = जल + समीर = हवा, कश्मीर वह भूमि है जो हवाओं के द्वारा जल निकाल दिये जाने पर अस्तित्व में आई।[34] कस = दरार + मीर = पर्वत, कश्मीर वह भूमि है जो पर्वतों के बीच का दरार भाग है।[35] नीलमत में भी इसी प्रकार की दो व्युत्पत्तियों का उल्लेख है। कः का अर्थ है प्रजापति, कश्यप भी प्रजापति है। उसके द्वारा निर्मित भूमि कश्मीर है।[36] कम् का अर्थ जल है, विष्णु द्वारा जल को प्रवाहित कर निकाली गई भूमि कश्मीर है।[37] ये व्याख्यायें सुझाव मात्र हैं जो भाषाविज्ञान से प्रमाणित नहीं। इस सूची में मैं एक और सुझाव की वृद्धि करने का साहस कर रही हूँ। नीलमत में कश्मीरा देवी की पूजा का उल्लेख है जो पर्वतीय देवी रही होगी। राजतरंगिणी में भी स्त्रीलिंग रूप कश्मीरा मिलता है।[38] सम्भव है उस देवी के नाम से कश्मीर नाम बना हो। यह भी एक सम्भावना ही है जिस के लिए प्रमाण अपेक्षित है। मैं यह स्वीकार करती हूं कि लिखित इतिहास के ऐसे पक्के सूत्र उपलब्ध नहीं हैं जो मुझे सुदूर अतीत में कश्मीर

नाम की व्युत्पत्ति तक पहुँचा सकें।

2.2.2 पर्वत

कश्मीर की घाटी, जैसा कि विदित है, बर्फ से ढके पर्वतों से घिरी हुई है। नीलमत में इन्हीं पर्वतों की ओर संकेत करते हुए कहा गया है कि इस देश का रूप दुर्ग जैसा होने के कारण इस पर बाहरी आक्रमण का भय नहीं है। कल्हण भी इन पर्वतों की दीवारों की प्रशंसा करते हुए कहता है कि इस देश को पुण्यों के बल से तो जीता जा सकता है, शस्त्रों के प्रयोग से नहीं। विदेशी यात्री ह्यून्त्सांग तथा ओकांग जिन्होंने कश्मीर की यात्राएं की थीं, इस बात का उल्लेख अपने यात्रा विवरणों में करते हैं।[39] निम्न हिमालय और केन्द्रिय महा हिमालय नामों से विख्यात ऊपर की ओर बढ़ती हुई दो समानान्तर पर्वत श्रेणियों का उल्लेख नीलमत में बहिर्गिरि और अन्तर्गिरि नामों से हुआ है।[40] पालि साहित्य में इन्हें चुल्ल हिमवन्त और महा हिमवन्त कहा गया है।[41] महाभारत और अष्टाध्यायी में हिमालय का एक और भाग उपगिरि भी उल्लिखित है जिसे तराई या शिवालिक पर्वतशृंखला कहा जाता है।[42]

जहाँ तक विशेष पर्वतों की बात है, नीलमत के अनुसार उशीरक पर्वत दार्व देश में स्थित है।[43] उस की पहचान कश्मीर के दक्षिण में शिवालिक पर्वतशृंखला के किसी पर्वत से की जा सकती है। विनय ग्रन्थों का उशीरध्वज, दिव्यावदान का उशीरगिरि, पालि साहित्य का उशीनर, तथा कथासरित्सागर का उशीनरगिरि जिन्हें श्री बी. सी. ला एक ही मानते हैं, नीलमत का उशीरक भी हो सकता है।[44] कनखल के उत्तर की ओर की एक पहाड़ी अभी भी उशीरगिरि नाम से जानी जाती है। पंजाब के मैदानी इलाके से उत्तर की ओर बढ़ते हुए पीरपंचाल की पर्वतशृंखला आती है जो कश्मीर घाटी की दक्षिणी और दक्षिण-पश्चिमी सीमा बनाती है। क्षेमेन्द्र द्वारा समयमातृका में उल्लिखित पंचालधारा[45] शब्द नीलमत में उपलब्ध नहीं परन्तु बनिहाल के पश्चिम की ओर ब्रह्मा, विष्णु और शिव के नामों से सम्बद्ध तीन ऊँचे पर्वतशिखरों की प्रशंसा नीलमत में की गई है।[46] इन शिखरों में से सब से ऊँचा पश्चिमी शिखर नौबन्धन कहलाता है जिस का उल्लेख नीलमत तथा अन्य ग्रन्थों में जल-प्रलय की कथा के प्रसंग में हुआ है।[47] यह वही पर्वतशिखर है जिस के साथ विष्णु ने अपने मत्स्यावतार के रूप में सृष्टि के बीजों से भरी नौका को बाँध रखा था।

हरमुकुट या हरमुण्ड की पहचान कश्मीर के उत्तरी भाग में स्थित हरमुख की चोटियों से की गई है।[48] समुद्रतल से लगभग 17000 फुट ऊँची यह चोटियाँ बड़े-बड़े ग्लेशियरों से घिरी हैं। उत्तरमानसझील जिसे कश्मीर की गंगा का उद्गमस्रोत माना गया है, हरमुख के उत्तर-पश्चिमी ग्लेशियर की तलहटी में है। नन्दीक्षेत्र और भूतेश्वर तीर्थ भी इसी के समीप हैं। नन्दीपर्वत की पहचान नीलमत में उल्लिखित कालोदक (आधुनिक नुन्दकोलझील को पूरित करने वाले ग्लेशियर) से की जा सकती है।[49] भरतगिरि वह पर्वत है जो हरमुकुट के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है और अभी भी अपने इसी प्राचीन नाम से जाना जाता है। कालोदक और नन्दीक्षेत्र के तीर्थों को जाने वाले यात्री इसका दर्शन भी करते हैं।[50] अमरेश्वर बर्फीली चोटी पर स्थित अमरनाथ तीर्थ है।[51] महादेवगिरि सिन्धघाटी और पूर्वी पर्वतशृंखला के मध्य की विशाल पर्वतश्रेणी का सब से ऊँचा पश्चिमी पर्वत है।[52] धनद और वैश्रवण की पहचान आधुनिक वस्तर्यन से की गई है।[53] कश्मीर के पश्चिम की ओर की पर्वतशृंखला के पर्वतों की पहचान सम्भव नहीं हो पाई है पर चूंकि मधुमती नदी के तट का दुर्गामन्दिर स्टाइन द्वारा उल्लिखित शारदामन्दिर ही प्रतीत होता है[54] अत: नीलमत में दुर्गामन्दिर के प्रसंग में वर्णित इन्द्रकील और गौरीशिखर को कश्मीर की पश्चिमी पहाड़ियाँ मानना तर्कसंगत लगता है।[55]

2.2.3 नदियाँ

कश्मीर और मद्र प्रदेश की कम से कम साठ नदियों का उल्लेख नीलमत में किया गया है।[56] इन में कुछ की पहचान निश्चित है, कुछ की पहचान संदिग्ध है तथा कुछ की पहचान नहीं हो सकी। यहाँ (अंग्रेज़ी) वर्णक्रमानुसार इन की सूची दी जा रही है।

आपगा-इसका उल्लेख मद्र और हिमवान् के तीर्थों की सूची में किया गया है। इसकी पहचान अयुक् से की जा सकती है जो स्यालकोट के उत्तर पूर्व में जम्मू की पहाड़ियों से निकलती है।[57]

भूर्जला- इसकी पहचान नहीं है। नीलमत में भूर्जला और तेलला के संगम का और इन दोनों के मधुमती के साथ संगम का उल्लेख है।[58]

चन्द्रभागा-इसकी पहचान चिनाब नदी से की गई है जो कश्मीर घाटी

के दक्षिण-पूर्व में बहती हुई दार्वाभिसार की सीमा का कार्य करती है। उत्तर-पश्चिम से किश्तवाड़ पहुँच कर यह दक्षिण की ओर मुड़ती है। जंगलवार से पश्चिम की ओर मुड़ कर फिर अरनास से दक्षिण की ओर बहती हुई रियासी से होकर अखनूर पहुँचती है जहाँ से आगे पाकिस्तान की ओर चली जाती है।[59] कल्हण की राजतरंगिणी (4, 638) में तूलमूल्य के निकट एक चन्द्रभागा का उल्लेख है। स्टाइन ने तूलमूल्य की पहचान तुलमुल से की है जहाँ वितस्ता में मिलने से पूर्व सिन्धनदी गुज़रती है। इस दृष्टि से सिन्धनदी की एक शाखा भी जो प्राचीन काल में तुलमुल के पास से गुज़रती थी, चन्द्रभागा कहलाती रही होगी।[60]

चन्द्रवती-पहचान संदिग्ध। नीलमत में कहा गया है कि दैत्यों की माता दिति ने इस नदी का रूप धारण किया था।[61] कई पद्यों में चन्द्रवती का उल्लेख त्रिकोटि और हर्षपथा के साथ हुआ है। स्टाइन ने हर्षपथा की पहचान आरपथ के रूप में की है।[62] यह नदी की वह धारा है जो अनन्तनाग के पास वितस्ता में मिलती है। चन्द्रवती और त्रिकोटि उन छोटी छोटी धाराओं के नाम हो सकते हैं जो वितस्ता के हर्षपथा के साथ संगम से पूर्व वितस्ता में मिलती हैं।

चतुर्वेदी-यह छोटी सी जलधारा है जो विशोका और वितस्ता के संगम के पश्चात् वितस्ता में मिलती है।[63] जयरथ ने भी इसका उल्लेख किया है।[64]

चित्रपथा-पहचान नहीं। नीलमत में मडवा और चित्रपथा के संगम का उल्लेख है।[65] सन्ध्यामाहात्म्य में मडवातीर का और मडवा और सन्ध्या के संगम का उल्लेख है[66] परन्तु अभी मडवा नदी की भी पहचान नहीं हुई है।

देवह्लदा-पहचान नहीं। नीलमत के अनुसार यह मद्रदेश की एक नदी है जो करवीरपुर के समीप विपाशा नदी में मिलती है।[67]

देवकुल्या-पहचान नहीं। गंगोद्भेदतीर्थ का वर्णन करते हुए इसका उल्लेख वैतरणी और ऋषिकुल्या के साथ हुआ है[68] परन्तु इन तीनों में से एक भी बेडाब्रार, जिसकी पहचान स्टाइन ने गंगोद्भव के साथ की है,[69] के समीप नहीं पाई गई।

देविका-नीलमत में इस नदी को उमा का अवतार कहा है और इसकी स्थिति मद्र देश में रावी और चिनाब के मध्य बताई गई है।[70] इस नदी का उल्लेख महाभारत, पद्मपुराण, कालिकापुराण, मत्स्यपुराण, वामनपुराण, विष्णुधर्मोत्तपुराण, अमरकोश, बृहत्संहिता, अष्टाध्यायी तथा महाभाष्य में भी हुआ है।[71] विष्णुधर्मोत्तरपुराण में इसका जैसा वर्णन है लगभग वैसा ही वर्णन नीलमत में मिलता है।[72] बहुत समय पूर्व पार्जिटर ने इसकी पहचान पंजाब में बहने वाली देघनदी[73] से की थी पर यह पहचान आंशिक रूप से स्वीकृत हुई थी।[74] पंजाब विश्वविद्यालय के प्रो. जे. एन. अग्रवाल ने पार्जिटर द्वारा की गई पहचान की पुष्टि इस आधार पर कर दी है कि देघ के किनारे उत्तम कोटि के चावलों की खेती होती है और यही बात पतंजलि ने देविका के विषय में कही है।[75] जम्मू के उत्तर में ऊधमपुर के पास भी एक देविका है पर वह उत्तम चावलों की खेती के लिए प्रसिद्ध नहीं। जम्मू के पास पुरमण्डल नामक स्थान में एक लुप्त हुई देविका नदी बताई जाती है।

ध्यानधारिणी-पहचान संदिग्ध। वितस्ता के साथ इसके संगम का उल्लेख है तथा कहा गया है कि विशोका नदी ने अपने आप को ध्यानधारिणी में छुपा लिया।[76] राजतरंगिणी में ऐसी किसी नदी का उल्लेख नहीं है परन्तु ध्यानोड्डार नामक स्थान का उल्लेख है।[77] उड्डार शब्द उडर या बाढ़ से लाई मिट्टी से बने समस्थल को द्योतित करता है। विशोका नदी के प्रवाहक्रम का वह निम्नतम भाग जो विशोका और रेम्बयार के संगम और विशोका और वितस्ता के संगम के बीच का है, गम्भीरा कहलाता है। ध्यानोड्डार गाँव गम्भीरा के तट के पास स्थित था। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि ध्यानोड्डार गाँव के पास से प्रवाहित होने वाला विशोका नदी का भाग ध्यानधारिणी कहलाता होगा अर्थात् ध्यान गाँव को टिका कर रखने वाली नदी। इसे ही अधिक गहरी होने के कारण गम्भीरा नाम दे दिया गया होगा। यही वजह है कि माहात्म्य ग्रन्थों में तो गम्भीरा की बहुत प्रशंसा की गई है परन्तु नीलमत में इस का उल्लेख नहीं है।

गंगा-कश्मीर में बहुत-सी नदियों और छोटी-छोटी जलधाराओं को गंगा नाम दिया गया है। नीलमत में यह सिन्ध नदी के लिए प्रयुक्त है जो सिन्धु नहीं अपितु बालटाल के पास दो जलधाराओं से बनकर चट्टानी सतह पर पश्चिम की ओर बहती है।[78] रास्ते में बहुत सी जलधाराएं इस में मिलती हैं जिन में

से प्रमुख कनकवाहिनी है जो जार परगना के किज्पर गाँव के पास इस में मिलती है। आगे जा कर यह उत्तर-पश्चिम की ओर मुड़ जाती है और शादीपुर के समीप वितस्ता में मिलती है।[79] नीलमत में सिन्ध, कनकवाहिनी और वितस्ता के संगम की प्रशंसा की गई है।[80]

गोदावरी-नीलमत के 95वें तथा 162वें पद्यों में उल्लिखित गोदावरी तो दक्षिण की नदी है परन्तु 1303वें श्लोक की गोदावरी कश्मीर की नदी है।[81] स्टाइन ने इसकी पहचान एक छोटी सी जलधारा से की है जिसका सम्बन्ध गोदर पर्वत और एक गोदर नामक गाँव से है। गोदर गाँव के पश्चिमी भाग में विशोका में गोदावरी जलधारा मिलती है और यह संगम एक पवित्र तीर्थ के रूप में जाना जाता है।[82]

गोमती-गोदावरी माहात्म्य के अनुसार गोमती (इसे गोतमी भी कहा है) वाराह पर्वत से निकलती है।[83]

गोत्रनदी-पहचान नहीं। नीलमत में नारायणस्थान के पश्चात् गोत्रनदी और वितस्ता के संगम का उल्लेख है अतः इस नदी की पहचान नारायणस्थान के पास की किसी जलधारा से की जा सकती है।[84]

हर्षपथा-ऐसा कहा गया है कि शक्र की पत्नी शची हर्षपथा नदी के रूप में अवतरित हुई थी।[85] पहचान के लिए देखें ऊपर चन्द्रवती।

हिरण्या-कनकवाहिनी का दूसरा नाम।[86]

इरावती-रावी। यह मद्रदेश की एक प्रसिद्ध नदी है।[87]

कालोदका-हरमुकुट पर्वत की नुन्दकोल और गंगा झीलों (कालोदक) से निकली जलधारा, कनकवाहिनी के साथ संगम से पूर्व, कालोदका कहलाती है।[88]

कनकवाहिनी-नीलमत में कनकवाहिनी और सिन्धु के संगम का उल्लेख है और कनकवाहिनी के सोदर तीर्थ से, जो चीरमोचन तीर्थ के समीप है, दक्षिण की ओर बहने का उल्लेख है।[89] हरमुकुटगंगा माहात्म्य में इसका नाम करंकनदी है।[90] यह निश्चित ही कनकनै जलधारा है जो हरमुकुट पर्वत की पूर्वी ढलान से निकलती है और लार परगना से बहती हुई सिन्ध में अपना

अस्तित्व मिला देती है।[91]

कथा-गंगोद्भेद माहात्म्य के आधार पर स्टाइन ने कथा को अभया कहा है।[92] गंगोद्भेद की पहचान के विषय में वे कहते हैं कि "एक प्राचीन जलाशय जो बेडब्रार के झरने से पूरित होता है उस से गंगोद्भेद की पहचान की जा सकती है और एक छोटा झरना जो इसे पूर्व दिशा की ओर ले जाता है वही पापनाशिनी अभया की जलधारा है।[93]

कौण्डिन्या-ऊपर वर्णित नौबन्धनशिखर के नीचे उत्तर पश्चिम में एक बड़ी झील है जो भगवान् विष्णु के क़दम (क्रम) के कारण क्रमसार तथा कौण्डिन्य नाग का स्थान होने के कारण कौण्डिन्यसर कही जाती है। कौण्डिन्यसर से निकलने वाली जलधारा कौण्डिन्या कही जाती है जो क्षीरनदी से जा मिलती है। आगे जा कर इन दोनों नदियों के जल का संगम विशोका के साथ होता है।[94] नौबन्धनमाहात्म्य में इसका उल्लेख कौलिन्या नाम से किया गया है।[95]

कृष्णा-नीलमत में सरस्वती और मधुमती के साथ कृष्णा के संगम का उल्लेख है।[96] यह निश्चय ही कृष्णगंगा नदी है जिसका उल्लेख कल्हणकृत राजतरंगिणी 7,586 तथा 8,3401 और हरचरितचिन्तामणि 12,44 में इसी संक्षिप्त रूप में हुआ है।

क्षीरनदी-नीलमत में क्षीरनदी और कौण्डिन्या के संगम का तथा फिर कौण्डिन्या और विशोका के संगम का उल्लेख है।[97] स्टाइन ने इसकी पहचान आधुनिक छत्स्कुल (प्राचीन दुग्धगंगा) से की है जो दिद्दामठ के समक्ष वितस्ता से मिलती है।[98] नौबन्धनमाहात्म्य में इसका नाम श्वेतगंगा भी दिया गया है।[99] क्षीरनदी के कौण्डिन्या के साथ (जो तत्पश्चात् विशोका से मिलती है) संगम को ध्यान में रखते हुए मुझे उचित लगता है कि इस नदी की पहचान चिट्टीनदी के रूप में की जानी चाहिए जो पाँचाल पर्वतश्रेणी की उत्तरी ढलान गोगलमर्ग से निकलती है और कंगवत्तन गाँव के समीप विशोका (वेशौ) से मिल जाती है।[100]

कूलारणी-पहचान संदिग्ध। यदि इसकी पहचान हरचरितचिन्तामणि में निर्दिष्ट कुलोद्धरणिका के रूप में करें[101] तो यह विजयेश्वर के उत्तर पश्चिम में लगभग 14 मील की दूरी पर होनी चाहिए।

कुमुनारी-पहचान नहीं। नीलमत में इसे गृध्रकूट के पास बहने वाली नदी कहा है।[102]

मडवा-पहचान नहीं। स्टाइन ने त्रिसन्ध्यामाहात्म्य में उल्लिखित मडवा तीर को मरुवर्धान माना है[103] मैंने उसी माहात्म्य में यह शब्द सन्ध्या और मडवा के संगम के लिए प्रयुक्त पाया है।[104]

मधुमती-नीलमत में इस नाम की दो नदियों का उल्लेख है। एक तो वह है जो कृष्णगंगा से मिलती है तथा जिसके तीर पर भगवती शारदा का मन्दिर है। कश्मीर का यह प्रसिद्ध तीर्थ अब पाकिस्तान के अधिकार में है।[105] अल्बेरूनी द्वारा उल्लिखित पद्मुती यही मधुमती है।[106] वितस्ता से मिलने वाली दूसरी मधुमती नदी की पहचान बन्दपुर नाल से की गई है जो उत्तर की ओर से कुलेस गाँव के निकट वुलर झील में गिरती है। घाटी की ब्राह्मण जनता अभी भी इसे मधुमती नाम से जानती है।[107]

माहुरी-स्टाइन ने इसकी पहचान मछिपुर परगना में बहने वाली मावुर से की है।[108] परन्तु नीलमत के साक्ष्य से इस पहचान का समर्थन नहीं होता। नीलमत के अनुसार त्रिपुरेश माहुरी के किनारे पर स्थित है और माहुरी के समीप महादेवगिरि है।[109] स्टाइन ने त्रिपुरेश की पहचान अर्रहनदी (शर्वावतार की महासरित्) के किनारे स्थित त्रिफर से की है।[110] अर्रहनदी डल में गिरती है तथा अधिक जल को डल से बाहर ले जाने वाली धारा का नाम मार है जो मारी से मिलता है। मेरा सुझाव है कि महासरित् और माहुरी एक ही नदी के नाम हैं जिसकी पहचान अर्रहनदी से की जा सकती है। इस विषय में तिलप्रस्था का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है। यह अर्रहनदी की वह शाखा है जो शालीमार शाखा से थोड़ी दूरी पर अलग होकर तेलबल नाम से डल में मिलती है। नीलमत के 1370वें पद्य में प्रयुक्त तिलप्रस्थ शब्द में श्लेष मान कर यह भी अर्थ निकलता है कि माहुरी में स्नान कर के तिलप्रस्था में स्नान का भी फल मिल जाता है। यह कथन वास्तविक लगता है जब हम माहुरी की पहचान अर्रहनदी से करते हैं क्योंकि तिलप्रस्था अर्रहनदी की शाखा होने से अर्रहनदी में उस स्थान पर स्नान करने से दोनों नदियों में स्नान का फल मिल जाएगा जहाँ तिलप्रस्था उस से अलग नहीं हुई।

मालिनी-पहचान संदिग्ध। शायद इसकी पहचान तिलैलघाटी के अन्तिम भाग में कृष्णगंगा के दाएँ किनारे के मालिन नार से की जा सकती है।[111]

मन्दाकिनी-पहचान नहीं। नौबन्धनमाहात्म्य विशोका से मिलने वाली चार नदियों का उल्लेख करता है जिनमें मन्दाकिनी है।[112]

मृगा तथा मृगनन्दा-पहचान नहीं।[113]

पलाशा तथा परोष्णी-पहचान नहीं।[114]

राहुला-पहचान नहीं।[115]

रामह्रदा-पहचान नहीं।[116]

ऋषिकुल्या-ऊपर देखें देवकुल्या।

शमाला-इस की पहचान हनाल नदी से की गई है जो इसी नाम के परगना में बहती है।[117]

सन्ध्या-अब सुन्दब्रार नाम से ज्ञात झरना देवलगाम गाँव के दक्षिण में है।[118]

समूला तथा सरसा पहचान नहीं।[119]

सरस्वती-नीलमत में देवसर के पूर्वदक्षिण में सरस्वती और शुद्धा के संगम का उल्लेख है।[120] चिलास और कृष्णगंगा घाटी के मध्य के पर्वतों से निकल कर दक्षिण की ओर बहती हुई और शरदी गाँव के निकट कृष्णगंगा में मिलती हुई कनकतोरी नदी को स्थानीय लोग सरस्वती कहते हैं।[121]

शाण्डिली-पहचान नहीं। नीलमत के अनुसार यह नदी, दुर्गा मन्दिर जो मधुमती के तट पर स्थित है, उस के पास बहती है। दुर्गामन्दिर शारदामन्दिर से अभिन्न है अतः शाण्डिली नदी भी तथा शिलामा कहीं पास होनी चाहिए।[122]

शतनीला पहचान नहीं।[123]

सिन्धु-ऊपर देखें गंगा

सुगन्धा-पहचान नहीं।[124]

सुखा-पहचान संदिग्ध। शायद यह बेट्स के गज़ट में उल्लिखित सुक नाग की जलधारा हो सकती है।[125]

तौपी-श्रीब्यूह्लर तौषी शब्द को तोही का प्राचीन रूप मानते हैं जो अनेक पहाड़ी नदियों के लिए प्रयुक्त होता है। ये पीरपंचाल के दक्षिण से निकल कर वितस्ता या चन्द्रभागा में मिलती हैं।[126] राजतरंगिणी की आठवीं तरंग के 53वें पद्य में उल्लिखित तौपी की पहचान पुंछ की तोही के रूप में की गई है।[127] नीलमत में उल्लिखित तौपी जम्मू से सम्बन्धित है। यह शुद्धमहादेव की पहाड़ियों से निकलती है और सियालकोट (पाकिस्तान) के पास चिनाब में विलीन हो जाती है।[128]

तेलला-पहचान अनिश्चित।[129]

तिलप्रस्था-पूर्वनिर्दिष्ट माहुरी देखें।

त्रिकोटि-पहचान नहीं। यह वितस्ता की एक सहायक नदी है।[130]

उद्द-नीलमत में इसे नद कहा है। इसका उल्लेख पाणिनि की अष्टाध्यायी में उद्ध्य रूप में तथा विष्णुधर्मोत्तरपुराण में ऊर्द्ध रूप में हुआ है।[131] इसकी पहचान उज्झ नदी से की गई है जो जसरोटा ज़िले में से बहती हुई रावी में गिरती है।[132]

वैतरणी-गंगोद्भेदमाहात्म्य, वितस्तामाहात्म्य तथा केदारमाहात्म्य वैतरणी का उल्लेख तो करते हैं पर इसकी पहचान में सहायता नहीं करते। सम्भवतः विजयेश्वर के कुछ ऊपर वितस्ता में मिलने वाली नदी के लिए यह नाम प्रयुक्त किया गया होगा। शूरपुर के निकट एक नदी रेम्ब्यार है और विजयेश्वर के पुरोहितों ने शोपियां के समीप के रेम्ब्यार के प्रवाह को ही वैतरणी नाम दिया है।[133]

विशोका-नीलमत में विशोका नदी को लक्ष्मी का अवतार कहा गया है तथा कौण्डिन्या, क्षीरनदी और वितस्ता के साथ इसके संगम का वर्णन है।[134] यह आधुनिक वेशौ नदी है जिसका जलप्रवाह सहसा आवेग के साथ क्रमसार झील के पश्चिमी छोर के अन्तिम ऊँचे बाँध की निचली सतह से निकलता है। इस जलप्रवाह का निकास झील को घेरती चट्टानी दीवार के ऊपर से नहीं

अपितु उसके बीच से है जिस की उपमा चूहे की बिल से दी गई है।[135]

यह नदी पहले उत्तर दिशा की ओर बहती है। कंगवत्तन के उत्तर में एक मील की दूरी पर चिट्टीनदी (क्षीरनदी) इसमें मिलती है। फिर यह बुदिल दर्रे की ओर मुड़कर आरबल पहुँचती है जहाँ से आगे दक्षिण पूर्व की ओर बहती है। फिर उत्तर की ओर मुड़कर नोवन गाँव के पास रेम्ब्यार नदी से मिलती है। तत्पश्चात् यह संयुक्त नदी सदरिन्जी नाल के माध्यम से वितस्ता में मिल जाती है।[136]

विश्वामित्र-पहचान नहीं। यह उद्द (उज्झ) के निकट बसन्तर हो सकती है।[137]

वितस्ता-अब कश्मीरी भाषा में व्यथ नाम से ज्ञात यह कश्मीर की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नदी है जिस ने इस प्रदेश को वैतस्तिक नाम भी दिया है।[138] नीलमत में इसे उमा का अवतार माना गया है जो कश्यप की प्रार्थना पर भगवान् शिव के त्रिशूल से बनाए गए वितस्ति जितने गर्त्त से निकलती है।[139] परम्परा से इस का मूल स्रोत नीलकुण्ड माना गया है जिसे शूलघात और वितस्तात्र भी कहा जाता है। वस्तुतः यह अनन्तनाग के समीप खनाबल गाँव के पास सन्द्रन, ब्रिंग, आरपथ तथा लिद्दर नदियों के संयुक्त प्रवाह से बनती है। खनाबल[140] से आगे इस में लेदारी की कई जलधारायें मिलती हैं। विजयेश्वर और चक्रधर तीर्थों से गुज़रती हुई लगभग तीन मील आगे जा कर इसमें वेशौ और रेम्ब्यार का संयुक्त जलप्रवाह आ मिलता है। इसके बाद प्राचीन होलडाजिले से बहती हुई एक नदी इसमें मिलती है। श्रीनगर पहुँचने से पूर्व इसमें महासरित् (नीलमत में हुई एक उल्लिखित माहुरी) मिलती है। श्रीनगर में तीन मील बहने के बाद यह पहले उत्तर की ओर तथा फिर दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़ कर दुग्धगंगा को अपने भीतर मिला लेती है। वितस्ता और सिन्धु का वर्तमान संगम शादीपुर में होता है परन्तु स्टाइन ने सिद्ध किया है कि यह संगम पहले त्रिगाम गाँव के समीप होता था। वर्तमान संगम के पश्चात् यह नदी सम्बल गाँव से गुज़रती है। फिर एक छोटा जलमार्ग मानस झील को इस से जोड़ता है। उच्छकुण्डल और मरकुण्डल गाँवों के पास से निकलती हुई यह नदी वुलर झील में प्रवेश करती है। वुलर झील के दक्षिण-पश्चिमी कोने से सोपुर नगर से लगभग दो मील ऊपर वुलर के अतिरिक्त जल के रूप में

प्रवाहित होती हुई पोहुर नदी को मिलती है तथा चौदह मील बहने के बाद बारामूला के संकीर्ण द्वार से आगे बढ़ जाती है।[141]

2.2.4 अन्य पवित्र स्थल

इन स्थलनामों की संख्या अधिक होने के कारण और उपलब्ध सामग्री के आधार पर कइयों की पहचान न हो पाने के कारण यहाँ केवल उन स्थलों का वर्णन किया गया है जो पहले उल्लिखित नहीं हैं तथा जिनकी पहचान लगभग निश्चित है।

एलापत्र नाग-सिन्ध घाटी से श्रीनगर को जाने वाले मार्ग पर स्थित विचारनाग नामक गाँव के समीप एक झरना है जिस की पहचान एलापत्र नाग के रूप में हुई है।[142]

अक्षिपाल नाग-इसकी पहचान आधुनिक गाँव अच्छाबल से की गई है।[143]

अनन्त नाग-इसे आजकल अनन्तनाग भी कहा जाता है और इस्लामाबाद भी।[144]

बहुरूप-पीरपांचाल पर्वत की ओर बीरू परगना के बीरू गाँव के साथ इस की पहचान की गई है।[145]

भद्रकाली-क्रमभार से दक्षिण-पूर्व की ओर चार मील की दूरी पर बद्रकल गाँव ही भद्रकाली माता का गाँव है।[146]

भेड़ादेवी-श्रीनगर के पश्चिम में बेड़ाब्रार गाँव के साथ भेड़ादेवी की पहचान की गई है।[147] बेड़ाब्रार के झरने से पूरित प्राचीन जलाशय की पहचान गंगोद्भेद तीर्थ से की जाती है।[148]

भीमादेवी-डलझील के पूर्वी छोर पर फाक परगना में स्थित ब्रान गाँव भीमादेवी का पवित्र स्थान है।[149]

भूतेश्वर-हरमुकुट पर्वत के दक्षिण पूर्व के उभरे भाग पर स्थित है जिसे अब भी बुथसेर कहा जाता है।[150]

चक्रधरतीर्थ-इसकी पहचान त्सकदर उड़र पठार से की गई है।[151]

चन्द्रसर-इसकी पहचान कश्मीर की वादी और सिन्ध नदी के मध्य की ऊँची पर्वतशृंखला पर स्थित चन्द्रसर झील से कर सकते हैं।[152]

चीरमोचन-चीरमोचन या चीरप्रमोचन की पहचान प्रांग गाँव के समीप सिन्ध नदी तथा कनकनै की एक जलधारा के संगम के साथ की गई है।[153]

देवसर--यह उत्तरपरगना के दक्षिण-पूर्वी छोर पर पहाड़ियों के निचले भाग में स्थित एक छोटी सी झील है।[154]

गणेश-लिदरनदी के दायें किनारे पर 30''50' अक्षांश और 75''21' रेखांश पर स्थित गणेशबल से इसकी पहचान की गई है।[155]

गौतम नाग--अनन्तनाग नगर के उत्तर की ओर अनन्त नाम के झरने की ओर जाते हुए रास्ते में है।[156]

हंसद्वार-नीलमत के अनुसार यह स्थान मुण्डपृष्ठगिरि के समीप है। प्रो. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार हंसद्वार शब्द प्राचीन भारतीय साहित्य में उन पर्वतीय दर्रों के लिए प्रयुक्त होता था जिनके ऊपर से उड़ कर राजहंस भारत से तिब्बत और मध्य एशिया में जाया करते थे।[157]

हस्तिकर्ण नाग-मर्‌होम से लगभग दो मील की दूरी पर दक्षिण पूर्व में वागहोम गाँव में एक झरने का नाम है।[158]

इष्टिकापथ-इसकी पहचान लार परगना के एक छोटे से गाँव रामरादन से की गई है।[159]

ज्येष्ठेश-यह स्थान हरमुकुट पर्वत के नीचे नन्दीक्षेत्र में है। राजतरंगिणी में वसिष्ठ द्वारा ज्येष्ठेश्वर की पूजा का उल्लेख है। नीलमत में वसिष्ठ को ज्येष्ठेश्वर के समीप बताया है।[160]

कपटेश्वर-इस की पहचान कुटहार परगना के कोठेर नामक गाँव से की गई है।[161]

कपिलातीर्थ-यह कपटेश्वर के समीप ही प्रतीत होता है।[162]

कालोदक-इसकी पहचान नुन्दकोल झील से की गई है जो हरमुकुट

पर्वत के पूर्वार्ध में स्थित है।[163]

कोटितीर्थ-यह बारामूला के समीप आधुनिक कोटिसर है।[164]

खण्डपुच्छ नाग-यह अनन्तनाग के निकट खनाबल में है।[165]

लोकपुण्य-इसकी पहचान ब्रिंग परगना के लरिकपुर गाँव के निकट एक झरने से की गई है।[166]

लोवार-विजयेश्वर से लगभग दस मील की दूरी पर उत्तर पूर्व में स्थित लिवर से इसकी पहचान हो सकती है।[167]

महापद्म-यह कश्मीर की प्रसिद्ध वुलर झील है।[168]

मानस-यह अहत्युंग पहाड़ी के आश्रय में स्थित आधुनिक मानसबल है।[169]

नन्दन नाग-इसकी पहचान दरहाल दर्रे के निकट रतनपीर पर्वतशृंखला के पार नन्दनसर से की गई है।[170]

नन्दीकुण्ड, नन्दीपर्वत तथा नन्दीश्वर ये हरमुकुट पर्वत के पादतल में नन्दीक्षेत्र में हैं।[171]

नारायणस्थान-इसकी पहचान त्राल घाटी में स्थित नारस्तान से की गई है।[172]

पंचहस्त-इसकी पहचान देवसर परगना में स्थित पांजथ गाँव से की गई है।[173]

पाण्डवतीर्थ-यह श्रीनगर के दक्षिणपूर्व में पाँच मील की दूरी पर स्थित पाण्डचक हो सकता है।[174]

पुष्कर-इसकी पहचान कश्मीर घाटी के पश्चिम में एक गाँव पोष्कर से की गई है।[175]

रामतीर्थ-इसकी पहचान शोपियाँ से श्रीनगर को जाने वाले मार्ग पर स्थित रामुह से की गई है।[176]

स्वयम्भू-यह मछिपुर परगना में स्थित आधुनिक सुयम है।[177]

सोदर नाग-मूल रूप में सोदर नाग की पूजा भूतेश्वर के समीप होती थी। अब उसी के अवतार रूप में डल झील के पास सुदरबल गाँव में इसकी स्थिति मानी गई है।[178]

तक्षकनाग-जयवन जिसे अब ज़ेवन कहा जाता है उसी गाँव के समीप एक झरने के साथ इसकी पहचान की गई है।[179]

तारासर-यह सिन्ध घाटी में एक ऊँचे पर्वत पर स्थित तारसर हो सकता है।[180]

त्रिपुरेश-इसकी पहचान डल से तीन मील की दूरी पर आधुनिक गाँव त्रिफर से हुई है।[181]

वराहमूल-आधुनिक बारामूला नगर।[182]

वसिष्ठाश्रम-आधुनिक गाँव वंगथ।[183]

वासुकि नाग-पंचहस्त के दक्षिण में एक झरने से इसकी पहचान की गई है।[184]

विजयेश्वर-वोलुर परगना में स्थित आधुनिक गाँव विजब्रार।[185]

2.3 भारत के अन्य भागों का भूगोल

नीलमत में कश्मीर और मद्र प्रदेश के तीर्थों का वर्णन तो विस्तार से मिलता है किन्तु भारत के अन्य भागों के पवित्र स्थानों का वर्णन उस प्रकार नहीं किया गया। नीलमत का लेखक कश्यप के द्वारा पवित्र भारतवर्ष की सम्पूर्ण भूमि की तीर्थ यात्रा के प्रसंग का प्रयोग भारत के भूगोल का अपना ज्ञान प्रदर्शित करने हेतु कर सकता था[186] परन्तु उसने केवल अठसठ तीर्थों की भौगोलिक क्रमरहित सूची देकर ही सन्तोष कर लिया है।[187] नीलमत में यह सूचना दी गई है कि कश्यप जब तीर्थयात्रा के प्रसंग में कनखल पहुँचते हैं तो नील उन्हें परामर्श देते हैं कि वे मद्र और हिमवान् के पवित्र स्थानों के दर्शन के लिए उत्तर की ओर बढ़ें क्योंकि वे पहले ही पूर्व, पश्चिम और दक्षिण की यात्राएं कर चुके हैं।[188] चूंकि उस सूची में अधिकतर स्थान उत्तरभारत और

मध्यभारत के हैं अतः नील के इस कथन का तात्पर्य कनखल के पूर्व, पश्चिम और दक्षिण में स्थित तीर्थों से हो सकता है। उस सूची का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है। गंगाद्वार (1), कुशावर्त (2), बिल्वक (3), कुब्जाम्र (4), नीलपर्वत (5), ये कनखल के सामीप्य में हैं। नैमिष (6), हयशीर्ष (7), प्रयाग (8), वाराणसी (9), गंगासागरसंगम (10), वरणा, असी, ब्राह्मणी (11), वैतरणी (12), महानदी (13), तमसा (14), शोण (15), सरयू (16), इक्षुमती (17), शतकुम्भा (18) और वेदस्मृति (19) नदियाँ, केदार (20), बदरी (21) और भृगुतुंग (22), ये कनखल के पूर्व-दक्षिण, पूर्व और उत्तर-पूर्व में हैं। पंचनद (23), कुरुक्षेत्र (24), पृथूदक (25), प्रभास (26), पुष्कर (27), रैवत (28), और सिन्धुसागरसंगम (29) ये कनखल के पश्चिम में हैं। शिप्रा (30), शाकम्भरी (31), विशाल (32), गोकर्ण (33), अगस्त्याश्रम (34), सुवर्ण (35), नर्मदा (36), रुद्रकोटि (37), मृगन्धा (38), गोदावरी (39), उत्पलावती (40), और कावेरी (41), ये कनखल के दक्षिण में हैं।[189] उत्तरप्रदेश, हरियाणा और पंजाब के कुछ स्थानों और नदियों यथा प्रयाग, अयोध्या, नैमिष, गंगाद्वार, कुरुक्षेत्र, शतद्रु, विपाशा और इरावती का उल्लेख शिव की वाराणसी से हरमुकुट की यात्रा के प्रसंग में हुआ है।

2.4 कश्मीर के भूगोल का कश्मीर के इतिहास और संस्कृति पर प्रभाव

फूलों, फलों, हिमपात आदि के सम्मान में समायोजित उत्सवों पर आनन्दमयी कश्मीर घाटी के मौसम की छाप है। नवहिमपातोत्सव के दिन मद्यसेवन की उस परम्परा की व्याख्या, जो मैदानी प्रदेशों में अज्ञात है, यहाँ के अति शीतल जलवायु के प्रसंग में की जा सकती है।

भारत को अपने उत्तर तथा उत्तर-पश्चिम के पड़ोसी देशों से जोड़ने वाले रास्तों पर या उनके निकट स्थित होने के कारण कश्मीर प्रदेश भारत, चीन, अफ़गानिस्तान आदि के उन उत्साही व्यापारियों के लिए प्रमुख बिक्री केन्द्र रहा है जहाँ वे ऊँचे पर्वतीय रास्तों को पार कर पहुँचते रहे हैं।

पर्वतशृङ्खलाओं की घेराबन्दी ने कुछ सीमा तक कश्मीर को राजनैतिक सुरक्षा प्रदान की है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि शकों, कुषाणों और हूणों के

आक्रमणों ने कश्मीर को प्रभावित किया परन्तु भारत के मैदानी इलाकों की तरह यहाँ लगातार हमले नहीं हुए क्योंकि यहाँ के पहाड़ी रास्तों की सुरक्षा सुदृढ़ होने पर कोई बहुत बड़ी हिम्मत वाला शत्रु ही इस प्रदेश पर आक्रमण करने का दुस्साहस कर सकता था।

इस पहाड़ी घेरा बन्दी के कारण ही कश्मीर के लोग भारत के अन्य भागों के तीर्थों की यात्रा बहुधा नहीं कर पाते थे। परन्तु कश्मीर के तीर्थनामों की भारत के अन्य भागों के तीर्थनामों के साथ आश्चर्यजनक समरूपता विशेष ध्यान देने योग्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि जो लोग भारत के अन्य भागों से कश्मीर में रहने के लिए आए उन्होंने जिन तीर्थों से वे परिचित थे, उनके नामों पर ही कश्मीर के कई सुन्दर स्थानों के नाम रखे। जैसे सिन्धु और वितस्ता के संगम को गंगा और यमुना के संगम के रूप में देखते हुए उस स्थान का नाम प्रयाग रखा।[190] वह स्थान जो त्रिकोटिसंगम से रौप्येश्वर हर तक और पावना और रजोबिन्दुविनिर्मला से चीरमोचन तक फैला हुआ है उसको पवित्र वाराणसी के रूप में पहचाना।[191] सरस्वती, ऋषिकुल्या, रामह्रद, भृगुतुंग, मुण्डपृष्ठ, चित्रकूट, भरतगिरि, कामतीर्थ, कोटितीर्थ और चक्रतीर्थ आदि नाम भारत के अन्य भागों के साथ कश्मीर के सुदृढ़ सम्बन्धों को प्रमाणित करते हैं।[192]

द्वितीय अध्याय की टिप्पणियाँ

1. मोनियर विलियम के संस्कृत अंग्रेज़ी कोश में योजन की व्याख्या भिन्न भिन्न प्रकार से चार, पाँच, नौ तथा अठारह मीलों के रूप में की गई है।
2. नीलमत पु. 12, 13. 171-180, 205-221.
3. कल्हण राजत. 1.25-28.
4. महावंश 12.3.9-28
5. J. Przuluski's article in Journal Asiatique 1914 pp. 535 ff. teste. S.C. Ray Early History and Culture of Kashmir p. 141
6. Watters, On Yuan Chwang, I p. 265
7. Lydekker, The Geology of Kashmir and Chamba Districts Teste. Lawrence, W.R. The Valley of Kashmir p. 41

8. Drew, Frederic, The Jummoo And Kashmir Territories, p. 211.

9. Lawrence, W.R. The Valley of Kashmir Cit. p. 50

10. Oldham, R.D. Geology of India 2nd Ed. pp. 421.

11. Lydekker, Op. Cit, Chap on the Alluvial System. Teste. Lawrence, Op. Cit. p. 48.

12. सन् 1885 में कश्मीर में आए भूकम्प में ये झील की अब की सतह से 1500 फीट की ऊँचाई पर मिले थे।

13. Wadia, D.N. Geology of India 3rd Ed. pp. 379-380.

14. Pithawalla, M.B., Kashmir, It's Geology and Geography, p.11

15. Carter, Stone Age in Kashmir, Memoirs of the Archaeological Survey of Kashmir No. 2p. 4

16. नीलमत पु. 609, सात द्वीपों के विषय में देखें Q.J. M.S. XV, XVI, XVII, A.B.O.I. XVIII p. 228

17. नीलमत पु. 611-14

18. वही 319-20

कुलपर्वतों के विषय में देखें Law, B.C. Historical Geography of Ancient India pp. 19-23

19. नीलमत पु. 24-25, 1407-09

20. वही 915-81, 1025-67, 1192-1210, 1275-1334

21. Buhler, Report p. 4

22. नीलमत पु. 12, 24, 30, 244-46, 465, कश्मीरमण्डल (5) या कश्मीर (1192, 1210) का प्रयोग बहुत कम है काश्मीर शब्द (910, 912-13, 960) विशेषण रूप में प्रयुक्त है।

23. Stein, Rajat. Trans. II pp. 252-53

24. कल्हण, राजत. 1, 27, 148

25. विष्णुधर्मोत्तरपुराण 1, 1

26. अप्टाध्यायी गणपाठ 4, 2, 133; 4, 3, 93

27. महाभा. 2, 27, 17; 2, 48, 13; 3, 130, 10; 7, 10,16

28. वायु पु. 45, 120; मत्स्य पु. 13, 47, विष्णु पु. 4, 47; विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 10, 10; 270, 63; 261, 16 तथा 34

29. बृहत्संहिता 5, 70, 77, 78; 9, 18; 10, 12; 11, 57; 15, 29

30. Stein. Rajat. Trans. II p. 387

31. Sufi. G. M. D. Kshir, pp. 12-13

32. Stein, Rajat. Trans. II p. 387A

33. Sufi, Op. Cit. p. 387

34. Kaul, Kashmir through the Ages p.18

35. Sufi, Op. Cit. p. 12

36. नीलमत पु. 226-27

37. वही, 12 क, 870 क

38. कल्हण, राजत. 1, 31, 39

39. Beal, Si Yu Ki pp. 148 ff Stein, Notes on Ou Kong's Account of Kashmir. A Paper in the proceedings of the Imperial Academy Vienna, 1896

40. नीलमत पु. 83

41. Aggarwal, V.S. The Himalayas in Sanskrit Literature; The Himalaya No. 1, p. 85

42. महाभा. सभापर्व 27, 3; अष्टाध्यायी 5, 4, 112

43. नीलमत पु. 1001

44. Law, B.C. Historical Geography of Ancient India p.132

45. क्षेमेन्द्र, समयमातृका 11, 92

46. नीलमत पु. 181-183

47. वही 40-43

48. वही, 1086, 1162, 1290, 1388 Stein Rajat. Trans. II, p. 407

49. वही, 1071. Stein, Rajat. Trans. II, p. 407

50. वही, 1096. Stein, Op. Cit. II p. 409

51. नीलमत पु. 1372

52. वही, 1371 Stein, Op. Cit. II p. 410

53. Stein, Op. Cit. II p. 415

54. देखें आगे सप्तम अध्याय

55. नीलमत पु. 1277

56. वही, 112-14, 120, 1327-1401

57. Cunningham, Ancient Geography of India p.212; Dey N.L. Geographical Dictionary p.9

58. नीलमत पु. 1286-87

59. Bates Charles Ellison, Gazetteer of Kashmir and the adjacent Districts of Kishtwar, Badrawar, Jammu, Naushera, Punch, and Valley of Kishen Ganga p.165 Imperial Gazetteer of India, Kashmir and Jammu, s,.v. Chandrabhaga

60. Stein, Op. Cit. f.n. on IV 636

61. नीलमत पु. 242

62. Stein, Op. Cit. II p. 242

63. नीलमत पु. 1345-46

64. हरचरितचिन्तामणि 12, 36

65. नीलमत पु. 1305

66. गच्छ त्वं मडवातीरं यत्र ब्रह्मा स्वयं स्थितः।
सन्ध्या भगवती यत्र यत्र सप्ततपस्विनः ॥
सन्ध्यामाहात्म्य पाण्डुलिपि सं 3681 श्रीरघुनाथ मन्दिर संस्कृतपुस्तकालय

पत्र सं 128

67. नीलमत पु. 107-8

68. वही 1367

69. Stein. Op. Cit. II pp. 273ff.

70. नीलमत पु. 114-19

71. महाभा. भीष्मपर्व 9, 16: अनुशासनपर्व 25, 21; पद्म पु. 3, 25, 14: मार्कण्डेय पु. 54, 18 ; मत्स्य पु. 114, 21; वामन पु. 81, 5; 89, 7; कालिका पु. 23, 137; बृहत्संहिता 11, 35 अमरकोश 1,10, 36; अष्टाध्यायी 7, 3,1

72. विष्णुधर्मोत्तर पु. 1,167, 15-16

73. Pargiter. Markandeya Pu. Trans. p. 292

74. Agrawal. V.S. J.U.P. Hist Society XVI pp.21-22

75. Agrawal. J.N. J.U.P Hist Society XVII pp.76 ff.

76. नीलमत पु. 1343-44, 1350-57

77. कल्हण, राजत. 8,1508, 1510

78. नीलमत पु. 306

79. Bates. Op. Cit.s.v. Sindhu

80. नीलमत पु. 306-7,1376

81. गोदावरीमाहात्म्य की पाण्डुलिपि सं 3664 श्रीरघुनाथमन्दिर संस्कृत पुस्तकालय जम्मू

82. Stein. Op. Cit. f.n. on VIII 1431

83. गोदावरी तथा गङ्गा गोमती त्रिविधा यतः।
गोदरे बहुरूपे च वाराहे तत्प्रतिष्ठिता॥
गोदावरी माहा. पाण्डुलिपि सं 3664

84. नीलमत पु. 1399

85. वही 241

86. हिरण्यिणी पुण्यजला नाम्ना कनकवाहिनी। वही 1159,1388.

87. वही 110,111, 113, 160, 1095

88. नन्दीक्षेत्रमाहात्म्य Teste Stein Op. Cit. I. 149-50 fn

89. नीलमत पु. 503, 1157-49, 1376, 1382,

90. Stein, Op. Cit. I, 149-50 fn.

91. Bates, Op. Cit.p. 226

92. Stein, Op. Cit.Vol.II p. 274

93. Stein, Op. Cit. Vol. II p. 278

94. नीलमत पु. 1318-20, 1327-30

95. नौबन्धनमाहात्म्य की पाण्डुलिपि सं 3665ज्ञ पत्र सं 42 श्रीरघुनाथ मन्दिर संस्कृतपुस्तकालय जम्मू

96. नीलमत पु. 1278,1447

97. देखें ऊपर टिप्पणी सं 94

98. Stein, Op. Cit. II 418

99. नौबन्धनमाहात्म्य पत्र सं 422

100. Bates, Op. Cit.p. 167

101. हरचरितचिन्तामणि 10, 247

102. नीलमत पु. 1277

103. Stein, Op. Cit. II 435 fn

104. मडवायाः सङ्गमो भूयात्पुण्योत्र तया (सन्ध्यया) समम्......। नौबन्धनमाहात्म्य पत्र सं 125 सन्ध्यामाहात्म्य पत्र सं 128

105. Stein Op. Cit. I ,37 fn.

106. Ayeen Akbery, Gladwin's Trans P. 421

107. Stein Op. Cit. VII, 1171 fn.

108. Stein Op. Cit. II, 425

109. नीलमत पु. 1371

110. Stein, Op. Cit. V, 46 fn.

111. नीलमत पु. 1372, 1374. Bates Op. Cit.p.264

112. नीलमत पु. 1303, नौबन्धनमाहात्म्य पत्र सं 52

113. नीलमत पु. 1303

114. नीलमत पु. 1316, 1394, 1447.

115. वही 1401.

116. वही 1233 , 1374, 1375

117. वही 1400, Stein, Op. Cit. II, p.484

118. Stein, Op. Cit. II, p. 469

119. नीलमत पु. 1401

120. Bates, Op. Cit. s.v. Sarasvati

121. नीलमत पु. 1229, 1333

122. वही 1280-81

123. वही 1394

124. वही 1446

125. Bates, Op. Cit. p. 377

126. Buhler, Report p.3

127. Stein, Op. Cit. VII, 47-69fn.

128. नीलमत पु. 120, विष्णुधर्मोत्तर पु. 1,162, 33-35

129. नीलमत पु. 1286

130. वही 240, 299, 502, 1347-48, 1351,1446

131. वही 113, भिद्योद्ध्यौ नदे। अष्टाध्यायी 3, 1, 115 विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 148

132. Agrawal, V.S. India as known to Panini p.44 : Imperial Gazetteer of India XV. pp. 73, 107

133. Stein, Op. Cit. VII,1355

134. नीलमत पु. 239, 293, 1329--30

135. वही 292, सम्भवत: सिदौ गाँव के पास के झरने आहोबिल्ल का नाम आखोर्विल का तद्भव रूप है।

136. Stein, Op. Cit. Vol. II. 415

137. नीलमत पु. 112

138. विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 164

139. नीलमत पु. 259, 262

140. खण्डपुच्छ के साथ इस की पहचान संदिग्ध है।

141. Stein, Op. Cit. Vol. II p.410 ff.

142. नीलमत पु. 916; Stein, Op. Cit. Vol. II p.457

143. नीलमत पु. 931; Stein, Op. Cit. Vol. II p.468

144. नीलमत पु. 916, 1205, 1235 ; Stein Op. Cit. Vol. II p.466

145. नीलमत पु. 962, 1204, 1390 Stein Op. Cit. Vol. II p.476

146. नीलमत पु. 607, 674, -75, 816; Stein Op. Cit. Vol. II p.485

147. नीलमत पु. 1048, 1359; Stein, Op. Cit. Vol. II, p. 273ff

148. नीलमत पु. 1359; Stein, Op. Cit. Vol. II p. 273 ff.

149. नीलमत पु. 1051; Stein, Op. Cit. Vol. II p. 454

150. नीलमत पु. 1061, 1064-65, 1079, 1182, 1164 आदि; Stein Op. Cit. 1, 107 fn

151. नीलमत पु. 934, 1193, 1368; Stein Op. Cit. I 49 fn.

152. नीलमत पु. 1297; Bates Op. Cit. P. 161

153. नीलमत पु. 1378-81; Stein, Op. Cit. I 38 fn.

154. नीलमत पु. 1332-1333; Bates, Op. Cit. 177

155. नीलमत पु. 1030; Bates Op. Cit p. 189

156. नीलमत पु. 938 ; Stein, Op. Cit. Vol. II p. 467

157. नीलमत पु. 1109, 1219; अग्रवाल वा. श. मेघदूत एक अध्ययन पृ 231-32

158. नीलमत पु. 919; Stein, Op. Cit.Vol.II p.461

159. नीलमत पु. 122, 1100; Stein, Op. Cit. 3, 467

160. नीलमत पु. 1060, 1154-59, 1168; Stein, Op. Cit. I, 113 fn.

161. नीलमत पु. 1043, 1067, 1169-1191; Stein, Op. Cit. Vol. II p.467

162. नीलमत पु. 1110, 1294; हरचरितचिन्तामणि 14, 113

163. नीलमत पु. 1088, 1143, 1294, 1296; Stein, Op.Cit. Vol. II P. 407

164. नीलमत पु. 117; Stein, Op. Cit. Vol. IIp. 483

165. नीलमत पु. 932, 1354; Stein, Op. Cit. Vol. II p.4141; हरचरितचिन्तामणि 10, 151

166. नीलमत पु. 1341; Stein, Op. Cit. 4, 192 fn.

167. नीलमत पु. 1028; Stein, Op. Cit. 1, 87 fn.

168. नीलमत पु. 988-1024; Stein, Op. Cit. Vol. II, p. 423 fn.

169. नीलमत पु 924, 1293, 1296, 1386; Stein, Op. Cit. Voll. II p. 422

170. नीलमत पु. 917

171. नीलमत पु. 1065, 1070, 1294; Stein, Op. Cit. Vol.II p. 407

172. नीलमत पु. 90, 1203, 1363, 1398; Stein, Op. Cit. Vol. II p. 461; Bates, Op. Cit. p. 290

173. नीलमत पु. 264-65, 922, 939, 1340; Stein, Op. Cit. Vol. II p. 412

174. नीलमत पु. 1373; Bates Op. Cit. p 302

175. नीलमत पु. 1037, 1396; Stein, Op. Cit. Vol II p. 476 ; Bates Op. Cit. p. 311

176. नीलमत पु. 1363, 1405; Stein, Op. Cit. Vol. II, pp. 274-75

177. नीलमत पु. 1059, 1265; Stein, I, 34 fn.

178. नीलमत पु. 1382; Stein, Op. Cit. Vol II, p. 475

179. Stein, Op. Cit. I, 220

180. नीलमत पु. 1297 Bates, Op. Cit. p. 383

181. नीलमत पु. 1371 ; Stein, Op. Cit, Vol, II p. 455

182. नीलमत पु. 1203-04, 1254, 1411; Stein, Op. Cit. Vol, II, pp. 482-83

183. नीलमत पु. 1038, 1163; Stein, Op. Cit. I, 170fn.

184. नीलमत पु, 230, 983, 1331; Stein, Op. Cit. Vol. II, P.470

185. नीलमत पु. 1096, 1353; Stein, Op. Cit. Vol, II, pp. 463-64

186. नीलमत पु. 85-86

187. नीलमत पु 86-99

188. नीलमत पु. 105

189. देखें Dey, N.L. Geographical Dictionary; Law, B.C. Historical Geography of Ancient India.

190. गङ्गा सिन्धुस्तु विज्ञेया वितस्ता यमुना तथा।
स प्रयागसमो देशस्तयोर्यत्र तु सङ्गमः ॥ नीलमत पु. 306 ख, 307क

191. त्रिकोटीसङ्गमाद् गृह्य यावद् रौप्येश्वरं हरम्।
तावत् क्षेत्रं समं ज्ञेयं वाराणस्याथवाधिकम्॥ नीलमत पु. 1351

192. नीलमतपुराण में ये नाम कश्मीर के तीर्थस्थानों के लिए प्रयुक्त हुए हैं जबकि भारत के अन्य भागों के तीर्थों के भी ये ही नाम मिलते हैं।

□□□

तृतीय अध्याय

नीलमत में वर्णित जनजातियाँ

नीलमतपुराण में जिन जनजातियों का उल्लेख हुआ है वे हैं–नाग, पिशाच, दार्व, अभिसार, गान्धार, जहुण्डर, शक, खश, तंगण, माण्डव, मद्र, अन्तर्गिरि तथा बहिर्गिरि।[1] इन में से प्रथम दो का निवास़ स्थान तो कश्मीर घाटी ही बताया गया है तथा बाकी जातियाँ आसपास के प्रदेशों में निवास करती थीं। यवन जाति का उल्लेख अप्रत्यक्ष रूप से एक नाग यवनप्रिय के नाम में है।[2] इन जातियों का कुछ विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. नागजातियाँ

नीलमतपुराण से हमें यह तथ्य ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में कश्मीरघाटी में केवल नाग ही निवास करते थे। कुछ समय पश्चात् पिशाच और मनु के वंशज मानव भी उनके साथ वहाँ रहने लगे।[3] नागजातियों के विषय में यह कठिनाई है कि उनकी पहचान अभी तक काल्पनिक तथा पारम्परिक कथाओं के आवरण में छिपी है जिन में वे कभी तो रेंगने वाले सर्प प्रतीत होते हैं और कभी मनुष्य दिखाई देते हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य में उनके विषय में प्रचुर सामग्री मिलती है परन्तु उसमें कहीं उनका उल्लेख जनजातियों के रूप में हुआ है तो क़हीं वे या तो अलौकिक शक्ति से युक्त काल्पनिक जीव हैं या विषैले दाँतों वाले असली साँप। इस स्थिति में नागों की पहचान के विषय में विद्वानों के विचारों में पर्याप्त मतभेद आश्चर्यजनक प्रतीत नहीं होता।

1.1 विभिन्न विद्वानों के मत

फर्गुसन नागों की पहचान उत्तर भारत के निवासी तुरानों से करते हैं जो योद्धा आर्यों के द्वारा हराए गए थे। उनका मत हैं कि आर्य और द्रविड नागपूजक नहीं थे।[4] जनरल कनिंघम उन्हें सीथियन–मेदियन ज़ोहक जाति से

सम्बद्ध सर्पपूजक जाति मानते हैं। उन्हें पश्चिम पंजाब से कुछ सिक्के मिले थे जिन पर सर्प का चित्र तथा ब्राह्मी लिपि में कादस अक्षर खुदे हुए हैं। कनिंघम इन सिक्कों को नागराज तक्षक के वंशजों तखों के मानते हैं जिन्हें उनकी माता कद्रू के कारण काद्रवेय या कुद्रव भी कहा जाता था।[5] कर्नल टाड के मत में नागजाति के लोग शेषनागदेश से आए थे। यह स्थान स्त्रैबो द्वारा उल्लिखित प्राचीन सीथियन तोखारियों, चीनी साहित्य में उल्लिखित तकि-उक्स तथा आज के तुर्किस्तान के ताजुकों का निवास था। इस जाति को वह शकद्वीप या सीथियन के तूर्पकों से अभिन्न मानते हैं।[6] सी. एस. वेक के मत में नाग यहां की आदिम नागपूजक जाति है।[7] हापकिन्स का कहना है कि गरुड और ताक्ष्र्य भी भारत के पश्चिमी घाट के मुखिया रहे होंगे परन्तु उन्हें पारम्परिक कथाओं में वह स्थान नहीं मिल पाया जो उनके दुश्मन नागों को मिला है।[8] पार्जिटर के अनुसार दैत्य, दानव, नाग, राक्षस नामों से यह तात्पर्य नहीं है कि ये जातियाँ मानवों, सौद्युम्नों अथवा चन्द्रवंशी ऐलों से भिन्न हैं अपितु यही तात्पर्य है कि ये क्षत्रिय परम्परा के अन्तर्गत परस्पर विरोध रखने वाली जातियाँ थीं।[9] कार्लेल एक क़दम और आगे बढ़ते हुए मानते हैं कि असुर और नाग हिन्दुओं के प्राचीन पूर्वज आर्यों के ही वंशज प्रतिष्ठित कुलों के थे।[10] ए. बैनर्जी नागों को असुर जाति की ही एक शाखा मानते हैं तथा उन्हें भारत में असुर जाति का मेरुदण्ड अथवा प्रमुख आधार बताते हैं। नाग जातियों के पतन के साथ ही भारत में असुरों की प्रभुता समाप्त हो गई।[11] ग्रियर्सन नागों के विषय में कहते हैं कि वे हुंजा नगर के वासियों के पूर्वज हो सकते हैं जिनकी भाषा बुरुशस्की की पहचान किसी ज्ञात परिवार की भाषा से नहीं हो पाई है।[12] सी. एफ. ओल्डहम के मत में नाग संस्कृत भाषा बोलने वाले सूर्यपूजक लोग थे जिन का निशान सर्प था।[13] अपने लेख "मगध में नाग" में एल. बी. केन्नी ने बहुत से विद्वानों के मत का हवाला देते हुए यह माना है कि नाग उत्तर भारत में रहने वाले द्रविड थे जो भारत में आर्यों के आगमन के बाद दक्षिण की ओर चले गए।[14]

ओल्डनबर्ग, हैन्द्रिक, कर्न, आगस्त, बार्थ तथा फोगल जैसे कई विद्वान् नागों के मनुष्यवत् होने में विश्वास नहीं करते। ओल्डनबर्ग के अनुसार वे भेड़िये का रूप धारण करने वाले जीव हो सकते हैं तथा कर्न उन्हें प्रकृति की शक्ति का शरीरधारी रूप स्वीकार करते हैं।[15] इस प्रकार नागों की पहचान एक

उलझन भरी समस्या है। नीलमत इस उलझन को सुलझाने में क्या योगदान करता है, यह देखकर फिर अन्य स्रोतों की सहायता से किसी निष्कर्ष पर पहुँचना उचित होगा।

1.2 नीलमत में नाग

नीलमतपुराण का दो तिहाई भाग नील नाम के नाग के मुख से कहा गया है जैसा कि इस के शीर्षक नीलमत अर्थात् नील के मत या निर्देश से प्रतीत होता है। नागों को प्रजापति कश्यप तथा उनकी पत्नी दक्षपुत्री कद्रू की सन्तान बताया गया है। इसी तरह देव, दैत्य, दानव, खश, भद्र, गरुड आदि भी कश्यप की सन्तान बताए गए हैं। यह वर्णन मिलता है कि जब नागों और गरुडों के मध्य शत्रुता हुई तो नागों के नेता वासुकि की प्रार्थना पर विष्णु ने उन्हें सतीसर में सुरक्षा दी तथा नीलनाग को उनका राजा नियुक्त किया। जलोद्भव के विनाश के बाद कश्यप की इच्छा थी कि नाग और मानव मिलकर रहें। नागों के द्वारा आपत्ति की जाने पर उन्हें पिशाचों के साथ रहने का शाप मिला और फिर चार युग बीत जाने पर वे मानवों के साथ रह सके।[16] एक नाग षडंगुल मानवों की पत्नियों का अपहरण कर लिया करता था इस कारण नीलनाग ने उसे कश्मीर से निर्वासित कर दार्व प्रदेश में उशीरक पर्वत पर भेज दिया।[17] एक अन्य नाग महापद्म का यह उल्लेख मिलता है कि उसने छल कर के राजा विश्वगश्व से चन्द्रपुर नामक नगर प्राप्त कर लिया था।[18] नीलमत में छः सौ तीन नागों के नामों की सूची मिलती है तथा कई बार नागों की पूजा का उल्लेख हुआ है।[19] नीलमत के अध्ययन से नागों के विषय में निम्न तथ्य दृष्टिगोचर होते हैं।

1. नागों, पिशाचों, दैत्यों, दानवों, गरुड़ों आदि का एक ही सांझा पुरखा कश्यप था।

2. नागों और गरुडों में परस्पर वैमनस्य होने पर पहले तो गरुडों की पराजय हुई और फिर नागों को हार झेलनी पड़ी। विष्णु द्वारा बीच बचाव करने से नागों की रक्षा हुई।

3. कश्मीर के मूल निवासी नागों की इच्छा न तो पिशाचों को अपने साथ वहाँ बसाने की थी और न ही मानवों को। परन्तु जब दोनों में से एक

विकल्प चुनना था तो उन्होंने मानवों के साथ रहना पसन्द किया।

4. नागों के सम्बन्ध बाद में पिशाचों के साथ भी सामान्य हो गये प्रतीत होते हैं। चन्द्रदेव जब नागराज नील से मिलने गए तो उन्होंने महात्मा निकुम्भ पिशाच को नीलनाग की सेवा में देखा। नील ने उन्हें पिशाचों की पूजा करने को भी कहा था।

5. मानवों के साथ नागों के सम्बन्ध अच्छे बन गए थे। उन्हें प्रसन्न करने को नागराज नील ने षडंगुल नाग को कश्मीर से निर्वासित कर दिया था।

6. नीलनाग को सात सौ फणों से सुशोभित कहा गया है। अन्य कोई संकेत उनके सर्प होने के विषय में नहीं है। कहीं उनके विषैले दाँतों का उल्लेख नहीं हुआ है।

7. नागों के नामों की सूची में बहुत से नाम महाभारत के वीरों के समान हैं, कुछ नाम उन के रंग रूप तथा गुणों पर आधारित हैं। कुछ नाम अस्पष्ट हैं।

8. प्रतीत होता है कि नागपूजा कश्मीर के प्राचीन निवासियों के धर्म का मुख्य अंग थी।[20]

ये सब तथ्य नागों को जनजाति के रूप में तथा पूजनीय देवों के रूप में उपस्थित करते हैं।[21] नीलमत से प्राप्त इन तथ्यों की पुष्टि अन्य स्रोतों से भी होती है।

1.3 वैदिक साहित्य तथा अन्य सभ्यताओं में नाग

वेदों में नाग शब्द का प्रयोग नहीं मिलता परन्तु वृत्रों का उल्लेख है जो कुछ विद्वानों के अनुसार सम्भवतः सर्पपूजक लोग थे और दासों तथा दस्युओं की भाति आर्यों के विरोधी थे। कीथ के अनुसार वृत्र शब्द का प्रयोग सर्पदेवों के लिए भी हुआ है तथा सर्पपूजकों के लिए भी।[22] इन्द्रवृत्रयुद्ध से साम्य रखती पौराणिक कथाएँ अन्य देशों में भी मिलती हैं जैसे सुमेर बेबिलोनिया में बेल, मर्दुक तथा तिआमत के युद्ध की, मिस्र देश में रा तथा एपाप की, यूनान में अपालो और पाइथान की और फारस में फेरिदुन तथा अज़िदहक की। यह

सब पौराणिक कथाएँ प्राचीन काल में विश्व के कई भागों में बसी हुई नागपूजक जातियों के अन्य जनजातियों के साथ हुए संघर्षों का स्मरण करातीं हैं।[23] शतपथ ब्राह्मण में वृत्र को अहि तथा दानव कहा है।[24] महाभारत में उसे कालेय दानवों का नेता बताया है।[25] वैदिक साहित्य में वर्णित इन्द्रवृत्रयुद्ध सर्पपूजकों की पराजय की ओर संकेत करता प्रतीत होता है। अथर्ववेद, तैत्तिरीय संहिता, तैत्तिरीय ब्राह्मण, छान्दोग्योपनिषद् तथा गृह्यसूत्रों में सर्पपूजा के उल्लेख[26] विजेता जातियों द्वारा विजित जातियों के साथ धार्मिक समन्वय को प्रकट करते हैं।

1.4 सिन्धु सभ्यता में नाग

मोहंजोदड़ो से प्राप्त कुछ मुद्राओं पर सर्प फणधारी व्यक्ति अंकित हैं जिन से प्रतीत होता है कि सिन्धु सभ्यता में नागों का अस्तित्व था।[27]

1.5 रामायण और महाभारत में नाग

रामायण और महाभारत में वर्णित कुछ घटनाएँ नागों के जनजातीय चरित्र का स्पष्ट प्रमाण हैं। वे घटनाएँ हैं-खाण्डववनदहन, तक्षक द्वारा परीक्षित् की हत्या तथा जनमेजय का नाग यज्ञ। पाण्डववीर अर्जुन ने कृष्ण के निर्देशन में अग्नि देव की सहायता से खाण्डव वन को जला दिया था जहाँ तक्षक के शासन में नाग, दानव तथा असुर रहते थे। तक्षक के मित्र इन्द्र ने वन को बचाने का भरसक यत्न किया परन्तु उसे सफलता नहीं मिली।[28] सर्पराज तक्षक उस समय कुरुक्षेत्र में था इस लिए बच गया।[29] उस के पुत्र अश्वसेन को भी इन्द्र ने बचा लिया।[30] मय असुर ने अर्जुन की शरण माँग ली।[31] यह कथा स्पष्टतः किसी प्रागैतिहासिक जनजातीय संघर्ष की ओर संकेत करती है। प्रतीत होता है कि पाण्डव यह नहीं चाहते थे कि उन की राजधानी के समीप उन का विरोध करने वाली जंगली जनजातियों का निवास हो। अतः उन्होंने वन को जला कर खाली कराने का निर्णय ले लिया। दूसरी घटना में बताया गया है कि तक्षक ने छल से पाण्डवों के महल में प्रवेश कर के अर्जुन के पौत्र परीक्षित् को विषवह्नि से जला दिया।[32] प्रतीत होता है कि तक्षक जो खाण्डववनदहन के बाद तक्षशिला में जा बसा था, पाण्डवों से बदला लेना चाहता था परन्तु बहुत समय तक ऐसा नहीं कर पाया। सम्भवतः वह शक्ति

बटोर कर उचित अवसर की प्रतीक्षा कर रहा था। पाण्डवों के स्वर्ग चले जाने पर परीक्षित् राजसिंहासन पर बैठा तो वीरों की अनुपस्थिति में तक्षक ने बदला लेने की सोची। उस ने कूटनीति से परीक्षित् के महल में प्रवेश पाया तथा विषवह्नि से परीक्षित् समेत महल को भस्मसात् कर तक्षशिला को चला गया। तीसरी कथा परीक्षित् के पुत्र जनमेजय द्वारा तक्षशिला पर आक्रमण कर उस प्रदेश को अपने अधीन करने की है।[33] विजय के पश्चात् जनमेजय ने नागयज्ञ किया जिस में लगभग सभी नाग नष्ट हो जाते यदि एक ब्राह्मण आस्तीक उनकी रक्षा के लिए आगे न आता।[34] स्पष्ट है कि जनमेजय ने अपने पिता की हत्या का बदला तक्षशिला पर आक्रमण कर उस प्रदेश को जीत कर ले लिया।[34] फर्गुसन, ओल्डहम तथा अन्य विद्वानों ने नागयज्ञ की व्याख्या तक्षशिला से हस्तिनापुर लाए गए युद्धबन्दियों को दण्ड देने की प्रक्रिया से की है।[35]

महाभारत में उपलब्ध कई अन्य विवरण भी नागों के मनुष्य रूप को प्रकट करते हैं। अर्जुन का विवाह नागराज कौरव्य की बेटी उलूपी तथा नागराज चित्रवाहन की बेटी चित्रांगदा के साथ हुआ था।[36] नागों की रक्षा के लिए आगे आए ब्राह्मण आस्तीक की माँ तथा जनमेजय के पुरोहित सोमश्रवा की माँ नागकन्याएं थीं।[37] वासुदेव के प्रपितामह आर्यक नागों के मुख्य थे। वासुकि नाग उनके दौहित्र का दौहित्र बताया गया है।[38]

नागों और गरुडों की शत्रुता को भी दो जनजातियों के संघर्ष के रूप में देखा जाना चाहिए। महाभारत में गरुड के छः पुत्रों से उस कुल की उत्पत्ति वर्णित है। उन के अड़तालीस मुख्यपुरुषों का भी उल्लेख है।[39] रामायण में सुन्दर नाग कन्याओं की चर्चा है जिनका रावण ने बलपूर्वक अपहरण किया था। नागों की नगरी पर आक्रमण कर उसने तक्षक की पत्नी का भी अपहरण किया था।[40]

1.6 पुराणों में नाग

विष्णुधर्मोत्तरपुराण में शक, द्रविड आदि जातियों के साथ नागों का उल्लेख है।[41] मत्स्यपुराण ''बहुतरनागजातयः'' कह कर उनकी चर्चा करता है।[42] पद्मपुराण तथा हरिवंश में कहा है कि पृथु से पूर्व धरती को नागों, राक्षसों, असुरों, दानवों और यक्षों ने दुहा था अर्थात् उस पर शासन किया था। धृतराष्ट्र

नाग को धरती का शासक बताया है।[43]

1.7. बौद्धसाहित्य में नाग

जातकों में यद्यपि नागों का चित्रण रेंगने वाले सर्पों या अमानुषी शक्तियों के रूप में हुआ है, फिर भी कुछ एक जातकों में उनका मानुषी रूप भी दिखाई देता है।[44] यह कहा गया है कि शाक्यमुनि ने नागों को बौद्ध दर्शन का ज्ञान अच्छी तरह कराया क्योंकि उस समय मानव उनके दार्शनिक विचारों को समझने में उतने सक्षम नहीं थे।[45] तिब्बत के एक ग्रन्थ में लिखा है कि बुद्ध ने पर्वतवासी नागों को आमन्त्रित कर उन्हें धर्म का उपदेश दिया था। उसी ग्रन्थ में कुछ निर्धन नागों के धनी भूमिपति बन जाने का उल्लेख है।[46]

1.8 निष्कर्ष

ये सभी तथ्य प्रागैतिहासिक भारत में सर्पपूजक जनजातियों के अस्तित्व को प्रमाणित करते हैं। प्रारम्भ में वैदिक आर्यों के साथ उनके सम्बन्ध शत्रुतापूर्ण थे परन्तु बाद में ये सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण हो गए जैसा कि महाभारत में वर्णित तक्षक और इन्द्र की मित्रता तथा अर्जुन के नागकन्याओं के साथ हुए विवाह सम्बन्धों से प्रतीत होता है। नागदेवों के पूजक होने के कारण उन्हें नाग कहा गया होगा जैसे वासुदेव के उपासकों को वासुदेवक कहा जाता है। आजकल भी विष्णु, शिव, शक्ति, सूर्य, गणपति, बुद्ध तथा जिन के उपासक वैष्णव, शैव, शाक्त, सौर, गाणपत्य, बौद्ध, जैन कहे जाते हैं। टाड तथा फर्गुसन के इस मत को स्वीकारना कठिन है कि नाग भारत से बाहर से आए। विश्व में भारत ही ऐसा देश है जहाँ सभी प्रकार के सर्प अपने विभिन्न रूप रंग भेदों के साथ उपलब्ध होते हैं। भारतीयों ने सर्पों के विषय में भय तथा पूजा के भाव कहीं बाहर से प्राप्त किये हों यह मत उचित प्रतीत नहीं होता। हुंजानिवासियों के साथ नागों की पहचान का ग्रियर्सन का सुझाव भी इस कारण स्वीकार्य नहीं क्योंकि उनकी भाषा किस भाषा परिवार से है यह अभी शोध का विषय है।[47] हुंजा निवासियों में नागपूजा के अवशेषों का अभाव भी ग्रियर्सन के मत के विरुद्ध जाता है। कार्लाईल तथा पार्जिटर के "नागों दानवों आदियों का समान पूर्वज कश्यप था" इस कथन की व्याख्या इस प्रकार भी हो सकती है कि यह आर्यों का विजित जनजातियों को आर्य परिवार में सम्मिलित करने का प्रयास था।

ए. सी. दास नागों को आर्यों की एक शाखा मानते हैं[48] परन्तु नागों और आर्यों का संघर्ष तथा कई नाग नाम आर्यभाषापरिवार से भिन्न होने के कारण यह सम्भव नहीं लगता।[49] अधिक सम्भावना यही है कि नाग जनजातियां कश्मीर तथा भारत के अन्य उत्तरी भागों में रहती थीं। वैदिक आर्यों के साथ उनका तथा पिशाचों का संघर्ष हुआ तो वे नाग दक्षिण, पूर्व और पश्चिम की ओर बढ़ गए।

2. पिशाच

नीलमत में पिशाचों का उल्लेख कश्मीर में रहने वाली जनजाति के रूप में हुआ है। आधुनिक भारतीय लोककथाओं में पिशाचों को भूत प्रेतों (अस्वाभाविकमृत्युप्राप्त मृतात्माओं) से जोड़ा गया है। प्राचीन भारतीय साहित्य में इस पिशाच शब्द का सन्दिग्ध एवं मिश्रित अर्थों में प्रयोग हुआ है अतः बहुत से विद्वान् जनजाति के रूप में उनके अस्तित्व के विषय में सन्देह करते हैं।

2.1 विभिन्न विद्वानों के मत

ओल्डनबर्ग, मैक्डानल, कीथ, लाकांटे तथा स्टेनकोनो ने पिशाच शब्द का अर्थ दुष्ट प्रेतात्मा किया है।[50] मैक्डानल तथा कीथ का यह भी कहना है कि बाद में इस शब्द का प्रयोग विरोधी शत्रुओं के लिए भी हुआ होगा।[51] दूसरी ओर हिलब्रैंड का यह विचार है कि पिशाच आर्यविरोधी जनजाति थे जिन्हें बाद में दुष्ट प्रेतात्मा मान लिया गया।[52] पार्जिटर का भी यही मत है। ग्रियर्सन ने यह प्रतिपादित किया है कि पिशाच भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश में रहने वाली जनजाति के लोग थे जिनकी भाषा पैशाची थी।[53]

2.2 नीलमत में पिशाच

नीलमतपुराण श्लोक संख्या 210-218 में कश्यप नागराज नील को पिशाचों के विषय में इस प्रकार बताते हैं-''रेत के समुद्र के मध्य में एक छः योजन लम्बा द्वीप है जिसमें दैत्यों के पक्ष के क्रूर पिशाच रहते हैं। कुबेर ने उनको नियन्त्रण में रखने को पिशाचों के बली राजा धर्मात्मा निकुम्भ को नियुक्त किया है। वह चैत्र मास में अपने अनुयायी पिशाचों को साथ लेकर उन दुष्ट पिशाचों से युद्ध करने जाता है। छः मास तक उनका युद्ध चलता है

जिसमें बहुत से पिशाच मारे जाते हैं। कुबेर देव की कृपा से निकुम्भ आश्विन मास की पूर्णिमा को अपने पाँच कोटि अनुयायियों सहित वापिस आता है और छः मास तक सुख से हिमालय पर रहता है। आज से मैंने उसे यहाँ (कश्मीर में) निवास स्थान प्रदान कर दिया है इसलिए अब से तुम नागों को वर्ष में छः मास पिशाचों के साथ रहना होगा और छः मास मानवों के साथ रह सकोगे।'' चार युग बीत जाने पर पिशाचों का स्थायी रूप से निष्क्रमण हुआ तथा नाग और मानव वर्ष भर वहीं रहने लगे। मानवों के लिए वर्ष में छः मास कश्मीर से बाहर जाने की आवश्यकता नहीं रही।[54] इस विवरण से स्पष्ट है कि पिशाच भी एक मानुषी जनजाति थे। अब यह देखना होगा कि उन के मानुषी चरित्र की पुष्टि अन्य स्रोतों से कहाँ तक होती है।

2.3 वैदिक साहित्य में पिशाच

ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के 133वें सूक्त में रक्तवर्णा, भयंकर ध्वनि करने वाली पिशाचसेना तथा राक्षससेना का नाश करने के लिए इन्द्र की स्तुति की गई है। वैसी एक सौ पचास सेनाओं का नाश वे पहले भी कर चुके थे। यह प्रसंग ऐसा कुछ भी संकेत नहीं देता जिस से पिशाचि शब्द का अर्थ अमानुषी सेना लिया जाए। अथर्ववेद 2.18.4, 4.36.4-8, 6.32.2, 8.2.12, 15.1 40, में भी पिशाच शब्द का प्रयोग मानुषी शत्रुओं के लिए ही प्रयुक्त हुआ प्रतीत होता है। जैसे अथर्ववेद 2.18 के प्रथम तीन मन्त्रों में प्रयुक्त भ्रातृव्य, सपत्न, अराय यह तीनों शब्द मानुषी शत्रुओं के लिए प्रयुक्त हैं फिर चतुर्थ मन्त्र में वैसे ही प्रसंग में प्रयुक्त पिशाच शब्द का अर्थ अमानुषी शत्रु केवल इसलिए मानना, क्योंकि बाद के संस्कृत साहित्य में ऐसा हुआ है, तर्कसंगत नहीं लगता। अथर्ववेद 4.36.4 में कवि का कथन है कि उसने शक्ति से पिशाचों को हरा कर उनका धन प्राप्त कर लिया है। वह पिशाचों के लिए वैसे ही दुखदाई है जैसे पशुपालकों के लिए बाघ। पिशाच उसे देख कर ऐसे भाग जाते हैं जैसे सिंह को देख कर कुत्ते भागते हैं। सातवें पद्य में पिशाचों की चर्चा स्तेनों के साथ हुई है। कवि कहता है कि वह जिस गाँव में प्रवेश करता है वहाँ से पिशाच चले जाते हैं। इन सब प्रसंगों में पिशाचों का मानुषी चरित्र ही प्रकट होता है। अथर्ववेद 4.20. में पिशाचों का उल्लेख यातुधानों के संग हुआ है जो जादू करते थे। शायद इसी कारण बाद में पिशाचों का जादुई व्यक्तित्व

स्वीकार कर लिया गया। तैत्तिरीय संहिता में एक युद्ध का उल्लेख है जिस में एक ओर देव, मनुष्य और पितर थे दूसरी ओर असुर, राक्षस और पिशाच थे।[55] पंचविंश ब्राह्मण, शाट्यायण ब्राह्मण, जैमिनीय ब्राह्मण तथा बृहद्देवता में इक्ष्वाकु राजा त्र्यरुण की कथा है जिस की पत्नी पिशाची थी। राजा के पुरोहित वृष ने उस की हत्या कर दी थी।[56] इस से प्रतीत होता है कि ब्राह्मण युग में इक्ष्वाकुओं और पिशाचों में वैवाहिक सम्बन्ध होने लगे थे, चाहे वे उनके ब्राह्मण पुरोहितों की इच्छा के अनुकूल न रहे हों।

2.4 महाभारत में पिशाच

भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश में रहने वाली एक लड़ाकू जनजाति के रूप में पिशाचों के अस्तित्व की स्मृतियाँ महाभारत में सुरक्षित हैं। डा. ग्रियर्सन ने विस्तार से इस विषय पर लिखा है, इसलिए संक्षेप में उनके मत की चर्चा करना उचित रहेगा।[57] महाभारत के युद्ध में कुछ पिशाच पाण्डवों की सेना की ओर से[58] तथा कुछ दुर्योधन के अधीन कौरवों की सेना की ओर से[59] युद्ध करते दिखाई देते हैं। एक सैन्य व्यूहरचना को पैशाच व्यूहरचना नाम ही दिया गया है।[60] उन की विवाहप्रणाली तथा उन के यज्ञों की निन्दा की गई है जिन में पशु हिंसा की जाती थी।[61] ऐसा भी उल्लेख है कि बहुत से पिशाच हिंसक प्रवृत्तियाँ छोड़कर सरस्वती के तट पर योगसिद्धि में लगे हैं।[62] ये सब सूचनाएं काल्पनिक अमानुषी जीवों से सम्बद्ध प्रतीत नहीं होतीं। पिशाचों के साथ दारद, पुण्ड्र, तङ्गण, परतङ्गण, बाह्लीक, चोल, पाण्ड्य, शक, काम्बोज, यवन, पारद, कुणिन्द, अम्बष्ट आदियों का उल्लेख हुआ है जिन की पहचान विद्वानों ने ऐतिहासिक जनजातियों के साथ की है, इसलिए पिशाचों को भी एक ऐतिहासिक जनजाति स्वीकार करना उचित है।[63] जहाँ तक उनके निवास स्थान का प्रश्न है महाभारत के अनुसार यह स्थान पंजाब तथा उत्तर में हिमालय का प्रदेश हो सकता है।[64] पहाड़ी दशेरकों, काश्मीरकों, औरसिकों के तुरन्त बाद पिशाचों का उल्लेख तथा हिमवान् और उत्तरकुरु के साथ सम्बन्ध इसी ओर संकेत करते हैं।

2.5 गणपाठ में पिशाच

पाणिनि की अष्टाध्यायी के परिशिष्ट गणपाठ में अन्य ग्यारह जनजातियों

के साथ पिशाचों का उल्लेख हुआ है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल का मत है कि ये नाम जनजातियों के हैं। उन्होंने कुछ नामों की पहचान की है जैसे रक्षस् की उत्तरी बलूचिस्तान के चगई ज़िले की रक्षणि जाति से, मरुत् की बन्नू की मरवत् तहसील की मरवत् जाति से तथा अशनि और कर्षापण इन दो नामों की पूर्वी हिन्दुकुश प्रदेश में रहने वाली शिनिवरी तथा करशाबुन जातियों से।[65]

2.6 पुराणसाहित्य में पिशाच

यद्यपि पुराणों में पिशाच अधिकतर काल्पनिक कथाओं के घेरे में दिखाई देते हैं फिर भी कुछ प्रसंग उनके मानुषी रूप की ओर संकेत करते हैं। मत्स्यपुराण में उनकी उत्पत्ति प्रजापति कश्यप तथा दक्षपुत्री क्रोधा से बताई गई है।[66] ब्रह्माण्डपुराण और वायुपुराण में क्रोधा की पुत्री और पुलह की पत्नी कपिशा को उनकी माता बताया है।[67] वायुपुराण में उनके सोलह गणों की चर्चा है[68] यद्यपि उनके नाम काल्पनिक ही प्रतीत होते हैं। उनके विषय में दी गई ''बीभत्स विकृत आचरण वाले'', चर्मवस्त्र पहनने वाले, ''युद्ध में रक्तपान करने वाले'' ''लम्बे केशों वाले'' ''बेघर'' जैसी टिप्पणियाँ उनके पहाड़ी वन्य जनजाति होने की ओर संकेत करती हैं।[69] पुराणों में उनकी चर्चा प्राय: राक्षसों, दैत्यों, गन्धर्वों तथा नागों के साथ की गई है। ऐश्वर्य, रूप और आयु में उन्हें राक्षसों से तीन गुना कम बताया गया है।[70] वायुपुराण में मेरु पर्वत के दक्षिण में पिशाचक पर्वत का उल्लेख है जहाँ यक्षों के राजा कुबेर का महल है।[71] यदि इस पिशाचक पर्वत को पिशाचों का निवास स्थान मान लिया जाए तो इस से कुबेर का पिशाचों के साथ सम्बन्ध द्योतित होता है। मत्स्यपुराण और ब्रह्माण्डपुराण में पिशाचों, रक्षों और यक्षों को हिमवान् पर्वत के निवासी कहा गया है।[72] इस प्रकार हम देखते हैं कि नीलमत पुराण में पिशाचों के बारे में जो जो सूचनाएँ मिलती हैं जैसे हिमाचल, कश्मीर तथा आस-पास के प्रदेश में उनके क्रियाकलाप, उनका उग्र और हिंसक स्वभाव, दैत्यों तथा नागों के साथ सम्बन्ध तथा कुबेर के अधीन होना, इन सब की पुष्टि अन्य पुराणों में उपलब्ध विवरणों से हो जाती है। चूंकि पिशाच पश्चिमोत्तर पर्वतीय प्रदेश के रहने वाले थे इसलिए कश्मीर के पुराण नीलमत में उनके मूल चरित्र

के बारे में सूचनाएँ चिरकाल तक सुरक्षित रह सकी होंगी। यही कारण है कि नीलमत पुराण में यह पिशाच जाति काल्पनिक न होकर एक जीती जागती जनजाति के रूप में वर्णित है।

2.7 पैशाची प्राकृत और पिशाच

इस विषय में कुछ विवादास्पद परन्तु महत्त्वपूर्ण प्रमाण प्राकृतव्याकरणों से उपलब्ध होते हैं। वररुचि, हेमचन्द्र, त्रिविक्रम, लक्ष्मीधर आदि वैयाकरणों ने अपने प्राकृतव्याकरणों में पैशाची प्राकृत की चर्चा की है। इन में से सब से प्राचीन वररुचि ने एक पैशाची प्राकृत की बात की है तो हेमचन्द्र ने एक और चूलिका पैशाची को भी जोड़ दिया है। पुरुषोत्तम केकय, शौरसेन तथा पांचाल तीन प्रकार की पैशाची का उल्लेख करते हैं। रामशर्मा तथा मार्कण्डेय इस के ग्यारह भेदों का उल्लेख करते हैं।[73] मार्कण्डेय तथा लक्ष्मीधर ने उन स्थानों की सूची दी है जहाँ पैशाची बोली जाती है। इन दोनों में केकय प्रदेश समान है।[74] पुरुषोत्तम ने केकय पैशाची का प्रमुखता से वर्णन किया है जो वररुचि तथा हेमचन्द्र के वर्णनों से बहुत मिलता है। इस से प्रतीत होता है कि केकय प्रदेश में बोली जाने वाली पैशाची मानक भाषा थी। पी. सी. बागची चूलिका पैशाची को एक चीनी-संस्कृत कोश के आधार पर सोगडिया के लोगों की बोली मानते हैं।[75] पुराणों में लम्पाक, किरात, काश्मीरक आदि जातियों के साथ चूलिकों का उल्लेख भी पिशाचों को भारत के उत्तर पश्चिमी सीमान्त प्रदेश की जनजाति प्रमाणित करता है। जहाँ तक बाद के वैयाकरणों द्वारा दी गई पैशाची प्रदेशों की लम्बी सूची का प्रश्न है, ऐसा प्रतीत होता है कि यह सूची तब की है जब पिशाच काल्पनिक अमानुषी कोटि में आ गए थे और उनका दुष्प्रभाव कई प्रदेशों में अनुभव किया जा रहा था। पैशाची का सम्बन्ध द्रविड भाषाओं के साथ जोड़ने का कुछ विद्वानों का प्रयास अधिकतर विद्वानों ने स्वीकार नहीं किया है।[76] उत्तर पश्चिमी भारत की सीमावर्ती भाषाओं का विस्तृत अध्ययन कर के डा. ग्रियर्सन ने यह निष्कर्ष निकाला है कि उन भाषाओं में पैशाची प्राकृत की विशेषताएं सुरक्षित हैं।[77] प्राचीन भारतीय साहित्य में उत्तर पश्चिमी भारत में पिशाचों के निवास की चर्चा तथा उन्हें पंजाब के वाहीकों का पूर्वज बताना भी इस मत को पुष्ट करते हैं।[78] पिशेल भी पैशाची का सम्बन्ध किसी जाति या प्रदेश के साथ मानते हैं।[79]

2.8 भौगोलिक नामों का साक्ष्य

डॉ. ग्रियर्सन का सुझाव है कि पुराण में उल्लिखित पिशाचों की माता कपिशा का सम्बन्ध हिन्दुकुश पर्वत के दक्षिण में कपिशा नगर से तथा आधुनिक काफिरिस्तान से जोड़ सकते हैं। एक महत्त्वपूर्ण कफिर जाति पशई के नाम की व्युत्पत्ति पिशाच से की जा सकती है।[80] कल्हण ने एक पिशाचकपुर नगर का उल्लेख किया है।[81] अभी-अभी के मार्गनस्टीर्न द्वारा किए पशई भाषा सम्बन्धी शोध में कुछ गाँवों के नाम पशई या पशईकसन हैं।[82] मिलिन्दपन्ह में एक स्थान निकुम्भ का उल्लेख अलसन्द के साथ हुआ है। हो सकता है कि अलग्जैण्डरिया के पास के प्रदेश को पिशाचों ने जीता हो और उस का नाम अपने नेता निकुम्भ के नाम पर रखा हो।[83]

2.9 पिशाचों की विशेषताओं का साक्ष्य

साहित्य में पिशाचों की दो विशेष बातें-उन का नरभक्षी होना और उन की विशेष विवाह प्रणाली वर्णित हैं। कुछ विद्वानों के मत में ये प्रथाएं भारत के उत्तर पश्चिम की ओर रहने वाली जनजातियों में कभी प्रचलित थीं। पिल्नी ने कहा है कि अत्तकोरि (उत्तरकुरु) के परे थुमी और फोरकरि जातियाँ हैं, फिर एक भारतीय जाति कसिरि है जो नरभक्षी है। ग्रियर्सन ने कसिरि की तुलना आधुनिक काशिरु (कश्मीर का) से की है।[84] डॉ. लाइत्नर कहते हैं कि काफिरिस्तान के दो जनों ने उन्हें उस प्रथा के बारे में बताया था जिस में स्वयं मारे शत्रु का रक्त पिया जाता था। बहुत समय पूर्व के कुछ यूरोपीय यात्रियों ने तिब्बत में भी इस प्रथा की अवशिष्ट स्मृतियों का उल्लेख किया है।[85] जहां तक पैशाची विवाहप्रणाली की बात है, पंजाब में विवाह के समय वधू के पक्ष की स्त्रियाँ वर पक्ष के लोगों को गालियाँ देती हैं। इन गालियों को सिठनियां कहा जाता है। वर पक्ष के लोग वधू के घर के तोरण को तोड़ते हैं। ये प्रथाएं प्राचीन काल में प्रचलित पैशाची विवाह प्रणाली की अवशिष्ट स्मृतियाँ हैं। चित्राल में वधू को भगा कर ले जाने की प्रथा इस कहावत "जो मेरी बेटी को भगा ले जाए वही मेरा जामाता है" से प्रकट होती है।[86] एस. सी. दास ने तिब्बत में प्रचलित इस प्रथा का वर्णन इस प्रकार किया है-"पुरंग में जब कोई युवक किसी लड़की से विवाह करना चाहता है तो उस के आने-जाने पर नज़र रखता है और अवसर पा कर उसका अपहरण कर अपने घर

ले जाता है जहाँ उसे मनाया जाता है और बाद में विवाह की रस्म पूरी की जाती है जिसमें वर को चोर कहा जाता है।[87] पशई भाषा में पुत्रवधू के लिए प्रयुक्त एक शब्द हनेवे है जिसका अर्थ ''पिटने योग्य'' पैशाची विवाह का स्मरण कराता है।[88]

2.10 निष्कर्ष

महाभारत तथा पुराणों में पिशाचों के निवास के रूप में उत्तरकुरु, हिमवान्, कश्मीर तथा पंजाब का उल्लेख, कुछ मिलते जुलते भौगोलिक नामों की काफिरिस्तान में उपलब्धि, पिशाचों से सम्बद्ध कुछ प्रथाओं का तिब्बत और काफिरिस्तान में प्रचलन इन प्रदेशों के साथ पिशाचों का सम्बन्ध प्रकट करते हैं। अब यह प्रश्न उठता है कि मानवजातिविज्ञान की दृष्टि से पिशाच कौन थे और कहाँ से आए थे ? भाषा विज्ञान के आधार पर ग्रियर्सन पैशाचीभाषा को आर्यपरिवार की तथा भारतीय और ईरानी की मध्यवर्ती भाषा मानते हैं। उनके मत में पिशाचों के पूर्वज आर्य परिवार के थे और वे मूल परिवार से तब अलग हुए थे जब भारतीय आर्य भाषा मूल भारोपीय से अलग हो चुकी थी परन्तु ईरानी की निजी विशेषताएँ विकसित नहीं हुई थीं।[89]

यदि मध्य एशिया के मेरु मानसरोवर प्रदेश को आर्यों का मूल निवास स्थान माना जाए तो यह कल्पना की जा सकती है कि उनमें से एक समूह नये निवास स्थान की खोज में पश्चिम की ओर बढ़ा। उनमें से कुछ तो ईरान देश पहुँच गए और कुछ पीछे कश्मीर में ही ठहर गए। यही पिशाच थे जिन्हें पहले वहाँ बसे हुए नागों के साथ संघर्ष करना पड़ा। बाद में भारतीय आर्यों के दबाव में नाग और पिशाच दक्षिण, पूर्व और पश्चिम की ओर बिखर गए। महाभारत के समय पिशाच पंजाब में थे और पाण्डवों के विरुद्ध नागों के सहायक थे।

अन्य जनजातियाँ

3. दार्व

महाभारत तथा पुराणों में दार्वों का उल्लेख दरद, शूर, औदुम्बर, काश्मीर, त्रिगर्त आदि उत्तरी जनजातियों के साथ हुआ है।[90] वे दार्व प्रदेश के निवासी थे जिसकी पहचान जम्मू ज़िले तथा बिलावर से की गई है।[91]

4. अभिसार

सिकन्दर के हमले के समय इन लोगों ने पहले तो सिकन्दर को रोकने में अस्सकेनोई जाति की सहायता की परन्तु बाद में सिकन्दर के साथ सन्धि कर ली।[92] प्रायः दार्वाभिसार का एक प्रदेश के रूप में उल्लेख हुआ है।[93] स्टाइन ने इस की पहचान जम्मू तथा पुँछ से की है।[94]

5. गान्धार

इस प्राचीन जनजाति का उल्लेख ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में हुआ है।[95] महाभारत में इन की चर्चा यवन, काम्बोज, किरात, बर्बर आदि जातियों के साथ हुई है। गान्धार गन्धार के निवासी थे जिस की पहचान पश्चिम पंजाब के पेशावर तथा रावलपिण्डी जिलों से की गई है।[96] जातककथाओं तथा मिलिन्दपन्ह में कश्मीर और गन्धार के परस्पर निकट सम्बन्धों की चर्चा है।[97] कुषाण सम्राट् कनिष्क का शासन गन्धार और कश्मीर दोनों पर था इस कारण दोनों प्रदेशों के निकट सम्बन्ध रहे होंगे।

6. जुहुण्डर[98]

प्रतीत होता है कि ये जुहुण्डर वही हैं जिनका उल्लेख वायुपुराण में जुहुड[99], मत्स्यपुराण में जगुड[100], विष्णुधर्मोत्तरपुराण में जाहुत[101], मार्कण्डेयपुराण और महाभारत में जागुड[102] रूप में हुआ है। जागुड की पहचान दक्षिणी अफ़गानिस्तान से की गई है।[103] इस जाति का उल्लेख भारत के उत्तर पश्चिम में रहने वाली जातियों लम्पाक, शूलिक, अवगान (अफ़गान), गान्धार आदि के साथ हुआ है।

7. शक

आक्सस (वंक्षु) से खदेड़े गए शकों ने दक्षिण की ओर बढ़ते हुए किपिन (कपिशा=काफिरिस्तान) पर अधिकार कर लिया था। वहाँ से उन्होंने सिन्धु समेत कई प्रदेशों पर अधिकार किया। टार्न का मत है कि कुछ समय तक कश्मीर का दक्षिणी भाग देमेत्रियस के अधीन रहा था।[104] टाल्मी ने कस्पेरिया (कश्मीर) को मेनेन्द्र के राज्य का अंग कहा है। मिलिन्दपन्ह में मेनेन्द्र तथा

नागार्जुन के मध्य हुई एक वार्ता का उल्लेख है जो कश्मीर से बारह योजन दूर एक स्थान पर हुई थी।[105]

8. खश

मार्कण्डेयपुराण उन्हें पर्वताश्रयी बताता है और महाभारत में उनका निवास मेरु तथा मन्दर पर्वत के मध्य शैलोद नदी के किनारे कहा गया है।[106] बृहत्संहिता में उनकी चर्चा काश्मीर, कुलूत तथा तंगण जातियों के साथ हुई है।[107] स्टाइन राजतरंगिणी के आधार पर खशों का प्रदेश पीरपंचाल के दक्षिण पश्चिम का समतल प्रदेश बताते हैं जिस के पश्चिम में वितस्ता का मध्यवर्ती प्रवाह है तथा पूर्व में काष्टवाट।[108] राजतरंगिणी में राजपुरी (राजौरी) के राजा को खशाधिपति और वहाँ के सैनिकों को खश कहा गया है।[109]

9. तंगण

पुराणों, महाभारत तथा बृहत्संहिता में खश, किरात, काश्मीर आदि जातियों के साथ उल्लिखित तंगण भी कश्मीर के आसपास के रहने वाले प्रतीत होते हैं।[110] पी. सी. बाग्ची उनका सम्बन्ध डोंकि या तुंगुस के साथ जोड़ते हैं।[111] मोतीचन्द्र का विचार है कि वे मध्य एशिया के काशगर क्षेत्र के निवासी थे।[112] आवश्यकचूर्णी ग्रन्थ में कहा है कि उत्तरापथ के टंकण मलेच्छ दक्षिणापथ के लोगों को सोना, हाथीदाँत आदि बेचते हैं। क्रेताओं की भाषा न जानने के कारण वे अपनी वस्तु को तब तक हाथों से ढके रखते हैं जब तक उनकी माँग पूरी नहीं हो जाती।[113]

10. माण्डव

शतपथ ब्राह्मण, शांखायन आरण्यक, आश्वलायन गृह्यसूत्र, शांखायन गृह्यसूत्र तथा बृहदारण्यक में एक अध्यापक मण्डु की सन्तान माण्डव्य का उल्लेख है।[114] नीलमत के माण्डव भी मण्डु की सन्तान माण्डव्य हो सकते हैं जिनका उल्लेख पश्चिमोत्तर की जाति के रूप में मार्कण्डेयपुराण, अग्निपुराण, विष्णुधर्मोत्तरपुराण तथा बृहत्संहिता में मिलता है।[115]

11. मद्र

वैदिक काल से विख्यात रहे मद्र बृहदारण्यकोपनिषद् के अनुसार यज्ञों में निष्णात थे।[116] वे राजा की उपाधि से युक्त योद्धा थे। महाभारत में वाहीकों के साथ सम्बन्ध रखने के कारण उनकी निन्दा की गई है।[117] अष्टाध्यायी, महाभाष्य और जातकों में वार्णत मद्र की पहचान आधुनिक स्यालकोट के आसपास के रावी और चनाब के बीच पड़ते प्रदेशों जम्मू आदि से की गई है।[118]

12-13 अन्तर्गिरि, बहिर्गिरि

ये हिमालय के मध्यवर्ती और निचले भागों में रहने वाले पर्वतीय लोग थे।

14. यवन

नीलमत में यवनप्रिय नामक नाग का उल्लेख है जो भारतीय साहित्य में बहुत बार वर्णित यूनानियों की ओर संकेत करता है।[119]

तृतीय अध्याय की टिप्पणियाँ

1. नीलमत पु. 83.
2. वही 977
3. वही 68-72, 205-208, 210-218, 221
4. Fergusson, Tree and Serpent Worship pp.60-61
5. Cunningham, A.S.R 1863-64Vol. II.p.10
6. Tod, Annals and Antiquities of Rajasthan, p.45 f.n.6
7. Wake, C.S., Serpent Worship And Other Essays, p.91
8. Hopkins, Epic Mythology, p.23
9. Pargiter, A.I.H.T.p.290
10. Carlleyle, A.S.R. 1871-73 Vol.IV.pp.45ff
11. Banerjee, A.Asura India p.96

12. Grierson, Pais'aci, Pis'aca and Modern Pis'aca in Z.D.M.G., LXVI p.72fn.

13. Oldham, Serpent Worship in India, in J.R.A.S., 1891, p.391

14. J.B.O.R.S., Vol, XXVIII, p.163

15. Vogel, Indian Serpent Lore, pp.2ff.

16. देखें प्रथम अध्याय

17. नीलमत पु. 1000-1004

18. वही 1011-24

19. वही 914-81

20. देखें सप्तम अध्याय नीलमत में नाग

21. वही Ordham Serpent Worship in India

22. Keith, Religion And Philosophy Of The Veda Vol, I p. 129

23. Golden Bough, Vol. IV. p. 105; E.R.E. p. 404

24. शतपथ ब्रा, 1, 6, 3, 9.

25. महाभा, 3, 101, 7

26. अथर्ववेद, 5, 13, 5-6; 6, 56, 15, 13; तैत्तिरीय सं 4, 2, 2. तैत्तिरीय ब्रा, Teste, J.B.B.R.A.S, 1867-70; छान्दोग्योपनिषद्, 7,1-4; आश्वलायन गृह्यसूत्र 2, 1, 3; पारस्कर गृह्यसूत्र, 2, 14

27. Marshall, Mohenjodaro and the Indus Civilization, III, Plates CXVI, CXVIII

28. सगणस्तत्कृते दावं परिरक्षति वज्रभृत्॥ महाभा 225,7

29. तक्षकस्तु न तत्रासीत् सर्पराजो महाबलः।
दह्यमाने वने तस्मिन् कुरुक्षेत्रेऽभवत्तदा।। वही 1, 218, 4

30. वही 1, 218,5; 9

31. वही 1, 220, 37

32. वहीं 1, 42, 22-23,

33. वही 1, 3, 18

34. वही 1, 13, 39-41

35. Fergusson, OpCit. P64; Oldham, Op.Cit. P 378; अग्रवाल, वा.श. भारतसावित्री पृष्ठ 38

36. महाभा. 1, 206, 13-23; 1, 207, 13-23

37. भगवन्नयं तव पुत्रो मम पुरोहितो ऽस्त्विति। स एवमुक्त: प्रत्युवाच। भो जनमेजय पुत्रोऽयं मम सर्प्यां जात: ॥ महाभा 1, 3, 14-15

38. तदा दौहित्रदौहित्र:परिष्वक्त: सुपीडितम्।
सुप्रीतश्चाभवत् तस्य वासुकि: स महायशा:॥ वही 1. 127, 65

39. वहीं 5, 99, 2 ; चम्बा में ब्रह्मोर के पास मिले एक तिब्बती शिलालेख पर "गरुड़ राजा के राजकुमार" का उल्लेख है। Vogel, Antiquities of Chamba State Vol, I pp.252-53

40. रामायण 5,12, 21-22; 3, 32,13-14

41. विष्णुधर्मोत्तर पु 1, 9, 5

42. मत्स्य पु. 154, 462

43. पद्म पु. भूमि खण्ड 28, 44 तथा आगे; हरिवंश 1, 7, 26-27

44. शंखपाल जातक, मणिकण्ठ जातक आदि

45. Teste. Wake, C. S., Serpent Worship and Other Essays p. 911; Fergusson, Tree and Serpent Worship, p.119

46. Hunderttausand Nagas B. Laufer p.p 4, 15

47. हुंजा लोगों की जीवन शैली के विषय में लिखी गई पुस्तकों में नाग पूजा का उल्लेख नहीं मिलता। The Oxus and the Indus, Language Hunting in The Karakoram and On the Science of Language And Ethnography.

48. Das, A.C., Rigvedic Culture, p167

49. Shende, N.J., The Foundations of Atharvanic Religion

B.D.C.R. I. Poona Vol. IX p.200

50. E.R,E, s.v. Pls'aca

51. Vedic Index s.v., Pls'aca

52. Hillebrandt,A,Vedishe Mythologie,III.p.426; Pargiter, J.R.A.S., 1912p. 712.

53. Grierson, Pais'aci, Pis'aca and Modern Pis`aca , Z.D.M.G LXVI, pp 67ff.

54. देखें पीछे प्रथम अध्याय

55. देवा मनुष्याः पितरस्तेऽन्यत आसन् असुरा रक्षांसि पिशाचास्तेऽन्यतः। तैत्तिरीय संहिता, काण्ड 2, प्रपाठक 4, अनुवाक 1

56. पंचविंशब्राह्मण, 13, 3, 12; शाट्यायनब्राह्मण (सायण द्वारा उद्धृत ऋग्वेद 5,2,1 पर) जैमिनीय ब्राह्मण J. A.O.S., XVIII p.23 पर उद्धृत; बृहद्देवता 19, 22

57. Grierson, G. A. Pis' acs in Mahabharata in festschrift for Vilhelm Thomson, Leipzig 1912 p. 138

58. पिशाचा दारदाश्चैव पुण्ड्रा : कुण्डीविपैः सह ॥
मारुता धेनुकाश्चैव तङ्गणाः परतङ्गणाः।
बाह्लिकास्तित्तिराश्चैव चोलाः पाण्ड्याश्च भारत॥
एते जनपदा राजन् दक्षिणं पक्षमाश्रिता :। महाभारत, 6, 50, 50-52

59. त्रीणि सादिसहस्राणि दुर्योधनपुरोगमाः।
शककाम्बोजवाह्लीका यवनाः पारदास्तथा॥
कुणिन्दास्तङ्गणाम्बष्ठाः पैशाचाश्च समन्दराः।
अभ्यद्रवन्त शैनेयं शलभाः पावकं यथा॥ वही, 7,97, 13-14

60. दिवसे दिवसे प्राप्ते भीष्मः शान्तनवो युधि।
आसुरानकरोद् व्यूहान् पैशाचानथ राक्षसान्॥ वही, 6, 104, 16

61. महाभा. (कलकत्ता सं) 13, 2412; 12, 9959-60

62. वही, 9, 2849-50

63. Law B.C. Tribes in Ancient India pp. 70 ff., 86 ff., 153 ff. 277 ff., 364, 388 ff. Bagchi P.C., Proceedings of I.H.C. 1943 p.29; Shafer, R. Ethnography of Ancient India, p. 134

64. महाभा. (कलकत्ता सं) 1, 8293; 8, 1052; 8, 2064-65; 8, 2104

65. Agrawal, V.S. India as known to Panini. pp. 447-48

66. मत्स्य पु. 171, 61

67. ब्रह्माण्ड पु. 3, 7, 3745; वायु पु. 69, 256-57

68. वायु पु. 69, 262-79; ब्रह्माण्ड पु. 3, 7, 382

69. वायु पु. 69, 292-96

70. वही 69, 199-200; ब्रह्माण्ड पु. 3,7,167-68

71. बायु पु. 36, 24-25; 42, 31-32/; 39, 57

72. मत्स्य पु. 114, 82; ब्रह्माण्ड पु. 2,18,33

73. Upadhye, A.N. Pais'aci Language and Literature, A..B.O.R.,I., XXI p.19

74. Teste Pischel, Comparative Grammar of the Prakrit Languages (English Trans) Para 27

75. Bagchi, P.C. S'u'ika, Culika and Culika Pais'aci J.D.I., XXI pp.i.ff.

76. Stenkonow, Hoernley, Coldwell, Row, K.A. "The Dravidian Affinities of the Pis'aca Language of North-Western India" Ashutosh Mukerjee Jubilee Vol.III p.427-32 Contra, Grierson, Z.D.M.G. Vol. LXVI, ; Upadhye, A.N. Op. cit.p.17

77. Grierson, The Pis'aca Languages of North-Western India

78. महाभा. (कलकत्ता सं) 8, 2064-65

79. Pischel, Op.Cit. Paragraph 27

80. Grierson, Z.D.M.G..P.70fn.i

81. राजत. 5, 469 पहचान संदिग्ध

82. Morgenstierne, G., Indo-Iranian Frontier Languages Vol. III pp. 216-17

83. सकयवने पि चीनविलाते पि अलसन्दे पि निकुम्बे पि कासिकोसले पि कस्मीरे पि गन्धारे पि। मिलिन्दपन्ह पृ. 321.

84. Grierson, J.R.A.S., 1905. pp. 285ff.; Z.D.M.G. IXVI.

85. Leitner, G.W.; Languages and Races of Dardistan, Part III. p.9 Statements of Willian of Rubruk and Frior Odoric. Teste. Rockhill, W.W., Notes on the Ethnology of Tibet. pp. 727ff.

86. Kashmir Vol. II, No. 11 p.227

87. Das, S.C., J.A.S.B. Vol, LXII, p.9

88. Morgenstierne, G., Op. Cit., pp.77-78

89. Grierson, The Pais'aca Languages of North Western India PP. 3ff

90. महाभा. सभापर्व, 52, 13-14; मार्कण्डेय पु. 55, 49-51; वायु पु. 46, 136

91. जयचन्द्र, भारतभूमि और उसके निवासी, पृष्ठ 146

92. C.H.I. pp. 316, 421

93. महाभा. 7, 91, 43

94. Stein, Rajat. Trans, 1, 180 fn.

95. ऋग्वेद, 1, 126, 7; अथर्ववेद, 4, 22, 14

96. Law, B.C., Historical Geography of Ancient India, pp. 76-77

97. गन्धार जातक, कुम्भकार जातक Teste Law, B.C. op. Cit. pp. 11, 17

98. लाहौर सं के पाठ ''जालंधर'' की पुष्टि पाण्डुलिपियों से नहीं होती।

99. .... पीडिका जुहुडैः सह। वायु पु. 45, 119

100. दरदाञ्जगुडांश्चैव....। मत्स्य पु. 121, 40

101. मरुगान्धारजाहुताः। विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 10, 9

102. चूलिका जागुडैः सह। मार्कण्डेय पु. 47, 40; जागुडान् रमठान्मुण्डान्....। महाभा, 3, 48, 21

103. I.H.Q., XXIp. 304

104. Tarn, The Greeks in Bactria and India, pp. 15, 238

105. मिलिन्दपन्ह, पृष्ठ 82, 83

106. मार्कण्डेय पु. 57, 56

107. कुलूततङ्गणखसकाश्मीराः। बृहत्संहिता 10, 12

108. Stein, Rajat, Trans, I, 117 fn.

109. राजत, 7, 978-79, 1271, 1276,; 8,887, 1466, 1868, 1895

110. महाभा, 2, 48, 3; 3, 141, 24-25; 6, 46-49; 7, 97, 13-14; वायु पु. 11, 5, 120; मार्कण्डेय पु. 1, 7,41 बृहत् संहिता, 10,12; ब्रह्माण्ड पु. 2, 16, 51

111. Proceedings of Indian History Congress 1943 Presidential Address in Ancient History Section.

112. Moti Chandra, Geographical and Economic Studies in the Mahabharata Upayana Parva, p.79

113. आवश्यकचूर्णी (रतलाम 1928) पृ. 120, Teste Moti Chandra Op. Cit. p. 124

114. Teste, Vedic Index, II, P. 148

115. मार्कण्डेय पु. 18, 38, 46; अग्निपु. 1, 5, 18; विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 10,8; बृहत् संहिता 14, 22,; 14, 27

116. Vedic Index, II. P. 125; बृहदारण्यकोपनिषद् 3, 7, 1

117. महाभा, 7 अध्याय 44,45

118. अष्टाध्यायी 4, 1, 176; 4,2,108, 131; महाभाष्य 1.1, 8 : 1,3,2; 2,1,2; 4,2,108; जातक 4 पृ. 2303

119. Law, B.C., Historical Geography of Ancient India. P.105 (P/J) Teste, I.H.Q., XXI. p302

❒ ❒ ❒

चतुर्थ अध्याय

सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था

1 सामाजिक व्यवस्था

मनुष्य सामाजिक प्राणी है अत: उसे सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता होती है। उसकी इस मूल भूत आवश्यकता की पूर्ति के लिए सर्वत्र सामाजिक संस्थाओं का उदय हुआ। प्राचीन भारत में भी एक ऐसी वर्णाश्रमधर्म व्यवस्था (अर्थात् वर्णों और आश्रमों के कर्तव्य) बनाई गई थी। नीलमत में वर्णाश्रमधर्म की उत्पत्ति के विषय में चर्चा नहीं की गई और न ही विस्तार से इस व्यवस्था का विवरण दिया गया है। प्रसंगवश ही कुछ वर्णों तथा आश्रमों और उनके कर्तव्यों का उल्लेख हुआ है।

1.1 ब्राह्मण वर्ण

नीलमतपुराण में कश्मीर का वर्णन करते हुए कुछ पद्यों में चारों वर्णों के कर्तव्यों की चर्चा की गई है। श्लोक सं. 14-16 में ब्राह्मण शब्द का प्रयोग नहीं है परन्तु प्रथम दो पंक्तियाँ स्पष्ट ही उनसे सम्बद्ध हैं क्योंकि अगली दो पंक्तियों में क्षत्रियों, वैश्यों तथा शूद्रों की चर्चा है। उन्हें स्वाध्याय तथा ध्यान में लगे हुए, यज्ञ करने वाले, तपस्या में संलग्न, धर्मपरायण तथा वेदों वेदांगों में पारंगत बताया गया है।[1]

1.1.1 ब्राह्मण तथा कर्मकाण्ड

नीलमत के बहुत से पद्यों में अग्निहोत्र के साथ ब्राह्मणों को सम्बद्ध बताया है।[2] यज्ञ, हवन के प्रसंग में ब्राह्मणों की पूजा का विधान भी यज्ञों में उनकी निश्चित सहभागिता को प्रकट करता है।[3] राजा के राज्याभिषेक के दिन पुरोहित को राजा की दीर्घ आयु, निर्भीकता तथा समृद्धि के लिए मन्त्रों का उच्चारण

करते हुए विशेष यज्ञ करना होता था।[4] कोटिहोम, लक्षहोम तथा शालिहोत्र का भी उल्लेख हुआ है।[5]

1.1. 2 ब्राह्मण तथा वेदाध्ययन

ब्राह्मणों के लिए प्रयुक्त विशेषण ''वेदवेदांगपारग'' से स्पष्ट है कि समाज की बौद्धिक और आध्यात्मिक संस्कृति की रक्षा करना उनका प्रमुख कर्तव्य था। यह निश्चित रूप से स्थापित करना कठिन है कि इस युग में ब्राह्मण पूर्व काल की तरह पूर्ण निष्काम भाव से छः अंगों सहित वेदों का अध्ययन करते थे या नहीं परन्तु यह निश्चित प्रतीत होता है कि यज्ञों में पौरोहित्य करने के लिए उन्हें वेदों तथा कर्मकाण्ड से सम्बद्ध सूत्रग्रन्थों का अध्ययन करना होता था।[6] कोटिहोम तथा लक्षहोम के प्रसंग में कल्प और आथर्वण का उल्लेख नीलमत में हुआ है।[7] विष्णु, शक्र, सविता, ब्रह्मा, रुद्र तथा वरुण से सम्बद्ध मन्त्रों का उल्लेख किया गया है।[8] अनेक अवसरों पर ब्रह्मघोष सुनाई देता है तथा श्रावणी महोत्सव के प्रसंग में सामध्वनि की चर्चा हुई है। ब्राह्मण गणित ज्योतिष तथा फलित ज्योतिष का अध्ययन करते थे क्योंकि उन्हें इन दोनों विषयों में पारंगत कहा गया है। वे काल को जानने वाले तथा ज्योतिष की रक्षा करने वाले कहे गए हैं।[9]

1.1.3 ब्राह्मण तथा पुराणवाचन

ब्राह्मण वेदार्थविद् होने के साथ साथ इतिहास को जानने वाले तथा (पुराणकथा आदि के) वाचक भी कहे गए हैं। विष्णुप्रबोधन के अवसर पर पुराणों के पाठ और कथाओं के श्रवण की चर्चा हुई है।[10] गुप्त काल के अभिलेखों में कथाविदों का उल्लेख है।[11] बाण ने हर्षचरित में अपनी आत्मकथा में कहा है कि मेरे गाँव में वायुपुराण की कथा होती थी।[12] छठी शताब्दी में कश्मीर में भी यह प्रथा प्रचलित रही होगी। इतिहासविद् विशेषण के विषय में तो इतना कहना पर्याप्त है कि कश्मीर में इतिहास लेखन की समृद्ध परम्परा रही है। भारत के और किसी भाग ने कल्हण उत्पन्न नहीं किया और जैसा कि राजतरंगिणी में वर्णित है कल्हण से पूर्व भी कई इतिहासकार हुए थे जिनके ग्रन्थों से उसने कश्मीर के इतिहास के बारे में सामग्री ली थी।[13]

1.1.4 ब्राह्मण और दान

ब्राह्मणों को दान देने का विधान नीलमत में प्राय: किया गया है तथा उस दान का महत्त्व भी कहा गया है। ब्राह्मणों को दी जाने वाली भेंट के लिए दान, दक्षिणा तथा प्रतिग्रह इन तीन शब्दों का प्रयोग हुआ है।[14] वर्ष में विभिन्न ऋतुओं में की जाने वाली धार्मिक क्रियाओं में दान दी जाने वाली वस्तुएँ भी अलग अलग बताई गई हैं। जैसे कार्त्तिकी अमावस्या तथा शुक्ल द्वादशी पौष की पूर्णिमा तथा चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को वस्त्र दान देने का विधान है। आषाढ मास के अन्त में छाते, जूते, मालादि दान करने, कार्त्तिक शुक्ल द्वादशी को गाय, घोड़े, हाथी देने और कार्त्तिक पूर्णिमा तथा चैत्रशुक्ल प्रतिपदा को अन्न दान का विधान है। उत्तरायण के अवसर पर इन्धन तथा गायों के लिए घास, वैशाख पूर्णिमा पर मधुयुक्त तिल और वैशाख शुक्ल तृतीया पर जौ दान करने का विधान है। पका भोजन तो प्रतिदिन देने को कहा गया है। पौष की कृष्ण चतुर्दशी को खिचड़ी, अष्टमी को चरु तथा पूड़े, नवमी को मधु के साथ पिष्ट भोज्य तथा फाल्गुन की दशमी के दिन कई प्रकार का भात बना कर खिलाने को कहा है। नवान्नविधान के समय गुडधानी देने तथा द्राक्षा फल आने पर पहले ब्राह्मणों को द्राक्षा भेंट करने का विधान है।[15] भूमि दान का उल्लेख केवल एक बार ही महापद्म की कथा में हुआ है।[16] दान देने और लेने की प्रक्रिया का एक बार उल्लेख है। दानदाता दान लेने वाले के हाथ पर जल डालता है जिसे वह ग्रहण कर स्वस्तिवचन कहता है।[17] इतिहासविद्, ज्योतिषविद् तथा पुराणपाठी ब्राह्मणों को दान देने को कहा गया है।[18] नीलमत में कहीं भी अपठित कदाचारी ब्राह्मण को देव समान या दान का पात्र नहीं कहा है। मत्स्य, लिंग, गरुड आदि पुराणों में वर्णित हिरण्यगर्भ, ब्रह्माण्ड, कल्पतरु, जैसे दानों के उल्लेख[19] का नीलमत में न होना यह द्योतित करता है कि उन पुराणों के दान प्रकरण नीलमत के बाद के हैं।

1.1.5 ब्राह्मण और राजा

नीलमत में ब्राह्मण और राजा के परस्पर सम्बन्धों पर भी प्रकाश डाला गया है। यह निर्देश दिया गया है कि राजा अपने सांवत्सर और पुरोहित की सलाह से नित्य कर्मों को तथा दूसरे नैमित्तिक कर्मों को करे।[20] राज्याभिषेक

के दिन पुरोहित उपवास रखकर अग्नि में इन मन्त्राग्नि समूहों प्रतिरथ, शब्द, वर्ष, आयुष्य, अभय, स्वस्त्ययन से आहुतियां दें। राजा के स्नान के लिए चारों वर्णों के प्रतिनिधि मिट्टी, तांबे, चांदी और सोने के जल पूर्ण घड़े लेकर चारों दिशाओं से प्रवेश करें तथा राजा को स्नान करवाएं। गृहपुरोहित ही राजा को सिंहासन पर बिठाए।[22] राजा पर्याप्त धन देकर पुरोहित तथा सांवत्सर को सम्मानित करे।[23] तत्पश्चात सब वर्णों के प्रतिनिधि राजा का अभिषेक करें ऐसा विधान है। राजा को प्रतिदिन देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए।[24]

1.1.6 ब्राह्मणों के प्रति व्यवहार

नीलमत के बहुत से पद्यों में ब्राह्मणों के प्रति आदर भाव दर्शाया गया है। सभी धार्मिक क्रियाओं और अनुष्ठानों में, आनन्द और दुःख के अवसरों पर उन्हें सम्मानित तथा संतुष्ट किया जाता है। देवों के साथ वे भी पूजित होते हैं।[25] इस प्रकार उनकी पूजा देवपूजा का अंग प्रतीत होती है। शिव, ब्रह्मा, महेन्द्र, गृहाधिपति वास्तु, प्रजापति कश्यप देवता तथा वितस्ता, भद्रकाली, श्यामा आदि देवियाँ ब्राह्मणों की पूजा से सन्तुष्ट होती हैं।[26] नागों में तथा ब्राह्मणों में उन का निवास माना गया है।[27] फाल्गुन की अष्टमी और दशमी के[28], आश्विन की अष्टमी के[29], नवान्नविधान तथा इरामंजरीपूजन के[30] अवसरों पर मित्रों और सम्बन्धियों के साथ ब्राह्मणों को भी आमन्त्रित करने का विधान है।

1.2 क्षत्रिय

1.2.1 क्षत्रियों के कर्तव्य तथा समाज में उनका स्थान

क्षत्रियों के सैनिक चरित्र का प्रायः उल्लेख हुआ है। उन्हें सभी प्रकार के शस्त्रास्त्रों के प्रयोग में कुशल बताया गया है।[31] दुर्गापूजा से सम्बद्ध नीराजनापर्व जिस में दुर्गामन्दिर में शस्त्रों की पूजा की जाती है वह क्षत्रियों का ही सैनिक पर्व प्रतीत होता है।[32] जहाँ तक समाज में उनके स्थान का प्रश्न है उनका उल्लेख ब्राह्मणों के बाद किया गया है। पाणिनि की अष्टाध्यायी 2, 2, 34 सूत्र पर वार्तिक के अनुसार वर्णों का उल्लेख सामाजिक स्तर पर क्रमानुसार होता है।[33] राज्याभिषेक के प्रसंग में राजा को स्नान कराते समय

यह क्रम पलट दिया गया है। सम्भवत: वहाँ भी ब्राह्मणों की अधिक पवित्रता को ध्यान में रखा गया है।[34]

1.2.2. ब्राह्मणक्षत्रियसम्बन्ध

राजसभा में ब्राह्मण पुरोहित तथा ब्राह्मण सांवत्सर के महत्त्वपूर्ण स्थान की चर्चा पहले की जा चुकी है। राजा ब्राह्मणों को सम्मान देते थे इसका संकेत नीलराज तथा विश्वगश्व द्वारा चन्द्रदेव और महापद्म को दिए गये आदर से स्पष्ट है।[35] नि:सन्देह परशुराम के द्वारा पृथिवी इक्कीस बार क्षत्रियरहित कर दी गई थी इस का उल्लेख भी हुआ है।[36] परन्तु पार्जिटर के अनुसार इस लोकश्रुति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि नहीं है[37]। नीलमत में इस कथा में यह कहा गया है कि इक्कीसवें घात में कुछ क्षत्रियों ने कश्मीर में गिरिदुर्ग में शरण ली थी। प्राचीन कथा के इस नये परिवर्धन से संकेत मिलता है कि नीलमत के समय में कश्मीर में ब्राह्मणों और क्षत्रियों के बीच संघर्ष नहीं था।[38]

1. 3 वैश्य

नीलमत में वैश्यों को वृत्तिरत कहा है।[39] अमरकोश के अनुसार वृत्ति से तात्पर्य खेती करना, पशुपालन तथा व्यापार करना होता है।[40]

1. 4 शूद्र

शूद्रों का वर्णन द्विजातियों की सेवा करने वालों के रूप में किया गया है।[41] उच्च वर्णों के लोगों का अपने घरों में काम करने वाले भृत्यों के साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार होता था। मित्रों और सम्बन्धियों के साथ स्वामी गृहस्थ के भृत्य भी गाने बजाने, भोजन आदि के कार्यक्रम में शामिल होते थे।[42] शूद्र या तो वेतनभोगी कर्मजीवी थे या स्वतन्त्र शिल्पी। शिल्पियों में जुलाहे, तरखान, सुनार, लुहार, चमार, कुम्हार आदि सम्मिलित थे। महीमान उत्सव में शिल्पी अन्य वर्णों के साथ उपहारों का आदान प्रदान करते थे।[43] वैश्यों के कर्म का अधिकार प्राप्त होने के कारण वे धीरे धीरे वैश्यों का स्थान प्राप्त कर रहे थे।[44] राजा के राज्याभिषेक में उनकी भागीदारी से प्रकट होता है कि उन्हें समाज से अलग नहीं समझा जाता था।[45]

1.5 अन्य जातियाँ तथा वर्णसंकर

यह प्रतीत होता है कि व्यवसाय, निवासस्थान, शिक्षागुरु, वर्णसंकर आदि कई कारणों से विभिन्न जातियों उपजातियों की उत्पत्ति हुई। नीलमत में भेड़ें पालने वाले औरभ्रिकों, कुश्ती करने वाले मल्लों, अभिनय करने वाले नटों तथा नृत्य करने वाले नर्तकों का उल्लेख है।[46] वर्णसंकर शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है परन्तु सूत, वन्दी और मागध का उल्लेख है जिन्हें कई धर्मशास्त्रों में वर्णसंकर कहा है।[47] क्षत्रिय पुरुष और ब्राह्मण पत्नी की सन्तान को सूत तथा वैश्य पुरुष और क्षत्रिया पत्नी की सन्तान को वन्दी कहा गया है। मागध के विषय में विभिन्न मत मिलते हैं। गौतम, कौटिल्य, मनु और याज्ञवल्क्य के अनुसार वह वैश्य पिता और क्षत्रिया माता की सन्तान होता है जबकि बौधायन उसे शूद्र पुरुष तथा वैश्य स्त्री से उत्पन्न मानते हैं। विष्णुधर्मसूत्र में उसे शूद्र पिता और क्षत्रिया माँ की सन्तान कहा गया है।[48]

1.6 आश्रम

1.6.1 ब्रह्मचर्याश्रम

नीलमत में ब्रह्मचर्य तथा ब्रह्मचारी शब्दों का प्रयोग विद्यार्थी जीवन से सम्बद्ध ब्रह्मचर्याश्रम तथा विद्यार्थी के लिए न होकर गृहस्थियों की उस अवस्था के लिए हुआ है जब विशेष धार्मिक दिनों में उनके लिए स्त्रीसंग वर्जित था जो ब्रह्मचर्याश्रम की प्रमुख विशेषता मानी गई है।[49] बालविवाह के उल्लेख का अभाव है।

1.6.2 वानप्रस्थ तथा सन्न्यास

ये दोनों शब्द नीलमत में नहीं मिलते परन्तु ऋषियों के आश्रमों की तथा तत्त्वदर्शी मुनियों की चर्चा हुई है।[50] मुनियों को निर्मलता का प्रतीक माना गया है।[51]

1.6.3 गृहस्थाश्रम/पारिवारिक जीवन

नीलमत में परिवार तथा कुटुम्ब दोनों शब्दों का प्रयोग मिलता है।[52] परिवार के मुखिया को गृहस्थ कहा गया है। कश्मीर के लोगों के लिए जिन

जिन रीतियों तथा कृत्यों को करने का विधान किया गया है उन सब में पत्नी और बच्चों सहित गृहस्थ का उल्लेख मिलता है।[53]

1.6.3.1 सन्तान

परिवार में पुत्र का जन्म हर्ष का अवसर होता था।[54] पिता पुत्र के (जातकर्म आदि) संस्कारों को करता था।[55] ज्योतिर्विद् ब्राह्मण कई बार उस की आयु के विषय में भविष्यवाणी भी कर दिया करते थे।[56] नागों की सूची में एक नाग का नाम बहुपुत्र है।[57] हो सकता है उस नागदेवता की पूजा बहुत पुत्रों को पाने के लिए की जाती हो। पुत्र की मृत्यु पिता के लिए अत्यन्त दुःखद थी।[58] पुत्र पिता के चरणों का स्पर्श कर आदर भाव प्रकट करता था और पिता उसके सिर को सूंघ कर अपना स्नेह जताता था।[59] उत्सवों में बालपूजा का भी उल्लेख है।[60] पुत्र पौत्रों की दीर्घ आयु गृहस्थ को अभीष्ट थी।[61]

1.7 नारियों का स्थान

1.7.1 परिवार में नारी

नीलमत में वर्णित कश्मीर के पारिवारिक जीवन का सर्वाधिक सुखद पक्ष नारी का स्थान है। कहीं भी वह नरक का रास्ता दिखाने वाली या पुरुषों की बुद्धि हरने वाली नहीं कही गई। घूंघट धारण करने की भी चर्चा नहीं है। अपनी धरती के स्वच्छन्द झरनों की तरह वह स्वतन्त्रता से समाज में भ्रमण करती है।[62] कौमुदी महोत्सव के अवसर पर वह अपने पति, बच्चों, सेवकों, मित्रों के संग अग्निपूजा में संलग्न दिखाई देती है। रात भर चलने वाले गीत नृत्य समारोह में उसकी कितनी सक्रिय भागीदारी होती थी यह पूर्णतया स्पष्ट नहीं है। दूसरे दिन भोज्यसमारोह में वह भाग लेती है।[63] बीजारोपण जैसे कृषि उत्सवों में वह घर की चारदीवारी में बन्द नहीं रहती है अपितु खेतों में मनाए जा रहे गीतों नृत्यों रहती। भरे समारोह में सम्मिलित होती है।[64] इरामंजरीपूजन के दिन लाल धागों में पिरोए इरा पुष्पों से वही पूजित होती है। एक अन्य पद्य में महिलाओं के लिए उपवनों में जाकर फलद्रुमों की पूजा करने का विधान किया गया है।[65] झीलों, नदियों, झरनों से सुशोभित कश्मीर घाटी के सामाजिक जीवन का एक आनन्दायक अंग जलक्रीड़ाएं थीं। फिर भला नारियाँ इनसे वंचित क्यों

रहतीं? श्रावणी उत्सव में कुमारियां विशेष रूप से जलक्रीड़ाएं करें ऐसा कहा गया है।[66] महीमान उत्सव के अन्तिम दिन स्त्रियाँ वस्त्राभूषणों से सज धज कर पुरुषों के संग खेलती हैं।[67]

बहुत से अवसरों पर नारियों को विशेष रूप से सम्मानित किया जाता था। नवहिमपातोत्सव के दिन स्त्रियों की पूजा की जाती थी।[68] माघ मास की शुक्लचतुर्थी, आश्विन चतुर्थी तथा ज्येष्ठ चतुर्थी पर बहनों तथा सौभाग्यवती स्त्रियों की पूजा का विधान है।[69] मार्गशीर्ष की पूर्णिमा पर ऐसी ब्राह्मण नारी को लाल वस्त्र देने को कहा है जिसका पति और पुत्र जीवित हों।[70] उस अवसर पर बहन, बुआ तथा मित्र की पत्नी को भी वस्त्र भेंट करने को कहा है। मित्रपत्नी का उल्लेख इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि यह उस खुले समाज में ही सम्भव था जहाँ स्त्रियाँ अपने पति के मित्रों से उपहार स्वीकार करने में स्वतन्त्र थीं। मदनत्रयोदशी के दिन पति स्वयं अपनी पत्नी को पवित्र जल से स्नान कराता था जो उस के प्रति प्रेम का द्योतक था।[71] सुखसुप्तिका (दीपमाला) की रात में अलंकृत शय्या स्थान की शोभा पत्नी से होती थी।[72] नारियों की रूप सज्जा के लिए प्रतिकर्म शब्द प्रयुक्त हुआ है।[73]

1.7.2 धार्मिक क्षेत्र में नारी

धार्मिक क्षेत्रों में नारियों को समुचित स्थान प्राप्त था। वे विभिन्न धार्मिक कृत्यों में तो अपने पतियों के साथ तो रहती ही थीं पर कुछ एक धार्मिक कृत्य अकेले भी करती थीं। छन्दोदेव की पूजा स्त्रियों द्वारा की जाती थी।[74] रजस्वला कश्मीरा देवी (की मूर्ति) का स्नान वे कराती थीं तथा चतुर्थीत्रितय मनाने में उनकी प्रमुखता होती थी।[75]

नीलमत में वर्णित धर्म में देवियों की प्रधानता भी नारियों के महत्त्व का प्रतिपादन करती है। प्रायः सभी देवों के साथ उनकी पत्नियों का उल्लेख है। शक्र के साथ शची, विष्णु के संग लक्ष्मी, शिव के साथ पार्वती वर्णित हैं। श्रीराम के जन्मदिन पर उनकी पत्नी सीता की भी पूजा की जाती थी और कृष्णजन्माष्टमी पर श्रीकृष्ण की पत्नी तथा उनकी माताओं देवकी और यशोदा की भी पूजा का विधान है।[76] नीलमत में अन्य बहुत सी देवियों की चर्चा

भी हुई है। अशोकिका, श्यामा, दुर्गा, श्री, करीषिणी, भद्रकाली, भेडा, कापिंजली, सुरेश्वरी, भद्रेश्वरी, गौतमेशी, कालशिला, उद्योगश्री, गवाक्षी, चण्डिका, गौरी, सुविजया, शकुनी, ब्रह्मचारिणी, चक्रेश्वरी तथा गृहदेवी ये सब देवियां कश्मीर के लोगों की आस्था की पात्र थीं।[77] कश्मीर की नदियाँ भी देवियों का रूप हैं। उमा ने स्वयं को वितस्ता नदी के रूप में रूपान्तरित किया है, अदिति त्रिकोटि नदी बनी है, शची ने हर्षपथा नदी का रूप धारण किया है, दिति ने चन्द्रवती तथा लक्ष्मी ने विशोका नदी का रूप स्वीकार किया है।[78] कश्मीर की धरती भी कश्मीरा देवी है जो उमा का रूप है।[79]

इस प्रकार नीलमतपुराण कश्मीर की नारियों का सुखद चित्र प्रस्तुत करता है। पुत्री के रूप में उसे कलाओं की शिक्षा दी जाती थी और वह समाज में स्वतन्त्रता के साथ घूम फिर सकती थी। उसका विवाह कर पिता कन्यादान का फल प्राप्त करता था।[80] पत्नी के रूप में उसे पति का प्रेम तथा माँ के रूप में पुत्रों से सम्मान प्राप्त था।[81] पुत्ररहित राजा की मृत्यु होने पर उसकी गर्भवती पत्नी को राज्य का अधिकार दिया गया था।[82] अन्य पुराणों में नारियों की इस प्रकार की सन्तोषजनक स्थिति दिखाई नहीं देती। आर. सी. हज़रा के शब्दों में ''वास्तव में पुराणों के अनुसार स्त्रियों को सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं थी। पातिव्रत्य का पालन और पति की सेवा ही उनका प्रमुख कर्तव्य माना गया था।''[83] जैसा कि स्पष्ट है, हज़रा का यह कथन इस नीलमतपुराण पर लागू होता नहीं दीखता जो परम्परा से हट कर नारीजीवन का चित्रण प्रस्तुत करता है। इस चित्रण की यथार्थता की पुष्टि कश्मीर के अन्य प्राचीन ग्रन्थों से भी होती है। बिल्हण कवि ने विक्रमांकदेवचरित में लिखा है कि कश्मीर में घर घर में स्त्रियां मातृभाषा की तरह ही प्राकृत और संस्कृत भाषाओं का प्रयोग करती हैं।[84] दामोदरगुप्त के कुट्टनीमत में कई विषयों की सूची दी गई है जिनमें स्त्रियाँ शिक्षण प्राप्त करती थीं।[85] कल्हण की राजतरंगिणी में उपलब्ध अनेक उदाहरण धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में नारियों का महत्त्वपूर्ण स्थान होने की पुष्टि करते हैं।[86]

1.7.3 परिवार से बाहर स्त्रियाँ

उत्सवों के वर्णन में गणिकाओं का उल्लेख भी नीलमत में मिलता है।

राजा के राज्याभिषेक समारोह में वे भाग लेती थीं।[87] एक पद्य में कश्मीर की उपमा सुकुमारियों से युक्त देवालय से की गई है जो देवदासी प्रथा की ओर संकेत करती प्रतीत होती है।[88] यह उल्लेखनीय है कि नीलमत में गणिकाओं के संगीत तथा नृत्य को महत्त्व दिया है और उनके साथ शारीरिक सम्बन्ध की कोई चर्चा नहीं की गई है जबकि ऐसा कल्हण, क्षेमेन्द्र, सोमदेव के ग्रन्थों में है।[89]

1.8 मित्र तथा अतिथि

परिवार का घेरा प्रायः मित्रों और अतिथियों की आवभगत से बढ़ता रहता था। सभी समारोहों में भाग लेने के लिए मित्रों को आमन्त्रित किया जाता था तथा कुछ अवसरों पर तैयार किया भोजन उनके घरों में भेजा जाता था। मित्रों की पत्नियों को भी उपहार दिये जाते थे।[90] कश्मीर में अतिथि सर्वदा स्वागत योग्य थे। वहाँ के राजा को निर्देश दिया गया है कि वह दूसरे प्रदेशों से आए अतिथियों का सम्मान करे। नागराज नील अभ्यागत चन्द्रदेव को यही कहते हैं कि अतिथि होने के कारण वह पूजनीय है।[91]

2. आर्थिक व्यवस्था

नीलमत में लोगों की आर्थिक व्यवस्था के विषय में बहुत कम सामग्री मिलती है। कृषि की चर्चा है परन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि किसानों का भूमि पर अपना अधिकार था और वे सीधे राजा को कर देते थे या वे जमींदारों के अधीन थे। अधिक सम्भावना यही है कि उस समय या तो कृषक स्वयं भूमिपति थे या फिर जमींदारी प्रथा का वह क्रूर रूप नहीं उभरा था जो नवम शताब्दी के कश्मीर में दिखाई देता है। डामरों के उल्लेख का अभाव तथा कृषि के साथ जुड़े आनन्दोत्सव इसी तथ्य की ओर संकेत करते हैं।[92] राजतरंगिणी की प्रथम तीन तरंगों में भी डामरों का उल्लेख नहीं है।

ऐसा प्रतीत होता है कि कुषाण काल में जब कश्मीर का व्यापार देश के अन्य भागों के साथ तथा मध्य एशिया के साथ पूरे ज़ोरों पर था, तब कश्मीर के अधिकांश लोग व्यापार में लगे थे अतः कृषि का महत्त्व कम हो गया

था। हूणों के उत्थान के बाद अन्य प्रदेशों के साथ व्यापार मार्ग बन्द हो जाने पर कृषि पर निर्भरता बढ़ गई।[93] जनसंख्या की दृष्टि से भूमि कम होने के कारण भूमिपति धनवान् होते गए और भूमिहीनों का आर्थिक स्तर निम्न होता गया। नीलमत में शिल्पियों तथा व्यापारियों का उल्लेख है[94] परन्तु उनके उन निगमों का उल्लेख नहीं है जो देश के अन्य भागों में विद्यमान थे।[95] राजतरंगिणी भी इस विषय में मौन है। प्रति वर्ष मनाए जाने वाले राज्याभिषेक में वणिक् वर्ग की भागीदारी उनके महत्त्व की द्योतक है।[96]

नीलमत समाज की आर्थिक व्यवस्था के बारे में कम जानकारी देता है पर जहाँ तक सामाजिक व्यवस्था का प्रश्न है, बहुत सी सूचनाएँ जैसे चार वर्णों तथा अन्य आधारों पर बनी जातियों का उल्लेख, ब्राह्मण वर्ग का विशेष सम्मान, ब्राह्मण क्षत्रिय संघर्ष का अभाव, नारियों की स्वतन्त्रता तथा समाज में उनका उचित स्थान, पत्नी, बच्चों, सम्बन्धियों, मित्रों और अतिथियों के संग गृहस्थ का सुखी पारिवारिक जीवन आदि उपलब्ध हैं।

चतुर्थ अध्याय की टिप्पणियाँ

1. नीलमत पु, 14-16
2. वही, 397, 444, 489-90 507, 841.
3. वही, 354, 529, 556, 564, 584, 677, 794, 810, 836 आदि
4. वही, 841-43 क
5. देखें अष्टम अध्याय
6. ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेय इति। पतञ्जलि, महाभाष्य पस्पशाह्निक
7. नीलमतपु. 837-38.
8. वही 841-43, 425, 778, 740.
9. ज्योतिषका द्विजाः.... वही, 654.; फलवेदविदः... वही, 655; कालविदे... वही, 492 ज्योतिषां पालकाद्याश्च कल्पेष्वाथर्वणेषु च। वही, 769.

10. वेदार्थविद्भिः.... वही, 3,5,4.; इतिहासविदश्च ये.... वही, 655; वाचकाः पूजनीयाश्च... वही, 656.; पुराणानां च वाचनैः... वही, 426.

11. B.D.C.R.I., Part, 1-2 p. 163

12. बाण, हर्षचरित तृतीय उच्छ्वास

13. कल्हण, राजत, 1, 14.

14. नीलमत पु. 539, 717 (दान); 507, 534 (दक्षिणा); 1015 (प्रतिग्रह)

15. वही, 420, 443-45, 455-56, 491-92, 497, 520, 523, 539, 655, 705, 718, 720, 735-36, 781, 832.

16. वही, 1014

17. वही, 1015; आपस्तम्ब धर्मसूत्र, 16-17 Teste Kane, History of Dharmas' ā stra, Vol II,p.854

18. नीलमत पु. 354-55

19. मत्स्य पु. 82,83; लिङ्ग पु. 2, 29, 1-12; 33, 1-9; हेमाद्रि, चतुर्वर्गचिन्तामणि, दानखण्ड पृ. 166-345.

20. नीलमत पु. 839.; विष्णुधर्मोत्तर पु. 2, 4, 27-46

21. नीलमत पु. 841-43. ये सभी तेदमन्त्रों के समूह हैं।

22. वही, 862

23. वही 860

24. वही, 866, 1020

25. वही, 847-48, 857

26. वही, 584, 731, 824, 832, 866

27. तही, 866

28. वही, 529, 584, 677, 756, 794, 817, 831,

29. वही, 870

30. वही, 522-23, 824, 781, 698

31. वहीं, 15ख

32. वही, 767-68

33. वही, 857.; वर्णानामानुपूर्व्येण, अष्टाध्यायी, 2,2,34 पर वार्तिक

34. नीलमत पु. 848, 1013-14

35. वही, 370-377, 1013-14

36. वही, 1212

37. Pargiter, A.I.H.T.p.73

38. नीलमत पु. 1213

39. वैश्यैर्वृत्तिरतैः। नीलमत पु. 16क

40. आजीवो जीविका वार्त्ता वृत्तिर्वर्तनजीवने॥
स्त्रियां कृषिः पाशुपाल्यं वाणिज्यं चेति वृत्तयः।
अमरकोश, 2, 9, 1-2

41. शूद्रैर्द्विजातिपरिचारकैः। नीलमत 16क

42. वही, 398, 420, 483-84.

43. वही 541

44. Kane, History of Dharmas'āstra, Voll.II. pp.120-21

45. देखें ऊपर टिप्पणी सं 33, 34

46. नीलमत पु. 396, 897, 537, 713, 846 आदि

47. वही 441

48. गौतम 4, 5; बौधा.ध.सू. 1,9,9.; वासि. 18,2.; कौटिल्य 3,7; मनु 10-11; विष्णु ध.सू. 16, 6; याज्ञवल्क्य. 1,93. Teste Kane, History of Dharmas'āstra, Vol.II, pp.90, 94, 98

49. नीलमत पु. 487, 581

50. वही, 17, 1393

51. वही, 1366

52. वही, 1017, 1021, 1023

53. वही, 1340, 398, 407, 568, 695

54. वही, 1082

55. वही, 1082

56. वही, 1083

57. वही, 977

58. वही, 1083-84

59. वही, 101-02

60. वही, 786

61. वही, 902-03

62. वही, 398-99, 568, 698, 829 आदि

63. वही, 398, 401, 407

64. वही, 567-68

65. वही, 698-99, 822

66. वही, 741

67. वही, 543-44

68. वही, 484

69. वही, 513-14

70. वही, 473

71. वही, 682

72. वही, 418-19

73. वही, 475-76, 549, 557

74. वही, 569-70

75. वही, 552, 515

76. वही, 74, 158, 423, 521, 745, 1146

77. वही, 412, 482, 674-75, 787, 830, 877

78. वही, 237-43, 286-87

79. वही, 12

80. वही, 1346

81. वही, 60, 362

82. वही, 9

83. Great Women of India pp.221-22

84. बिल्हण, विक्रमांकदेवचरित 18.6

85. दामोदरगुप्त, कुट्टनीमत पद्य सं 122-24

86. राजत. 3.476; 4.3, 38, 79

87. नीलमत पु. 845, 858 राजत. 8, 82 में कव्या, जयन्ती और सहजा गणिकाओं द्वारा रानियों की पदवी प्राप्त करने का उल्लेख है।

88. नीलमत पु. 20

89. तुलनीय कल्हण, राजत. 4, 36-37; क्षेमेन्द्र, देशोपदेश 3, 4, नर्ममाला 2; सोमदेव, कथासरित्सागर में वर्णित योगानन्द और गुणशर्मा आदि की कथायें।

90. भोजनं प्रेषणीयं च तथा मित्रगृहे द्विज। नीलमत पु. 558

91. आगतश्च जनः सर्वः पूजनीयो दिगन्तरात्। वही 872,
अर्चनीयोऽसि विप्रेन्द्र ह्यतिथिस्त्वं मतो मम॥ वही 370.

92. देखें अष्टम अध्याय

93. Stein, Notes on Oukong's Account of Kashmir.
Alberuni, India (translated by Sachau), 1, p.206

94. नीलमत पु. 820, 848

95. Majumdar R.C., Corporate Life in Ancient India pp.65 ff.

96. नीलमत पु. 858

□□□

पंचम अध्याय

सामाजिक एवं आर्थिक जीवन

यद्यपि नीलमतपुराण में मुख्यतया धार्मिक कृत्यों एवं समारोहों का वर्णन है फिर भी प्रासंगिक रूप से कश्मीर के लोगों के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के विषय में कई संकेत मिलते हैं जिनका विवरण तथा विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. सामाजिक जीवन

1. मनोरंजन के साधन

संगीत, नृत्य, अभिनय तथा मनोरंजन के अन्य साधन ऐसा वह दर्पण है जिसमें कश्मीर का स्वछन्द मन प्रतिबिम्बित होता है। नीलमत के अनुसार कश्मीर की धरती सदैव प्रसन्न रहते हुए, नित्य उत्सव मनाते हुए और खेलों में मस्त रहते हुए लोगों से भरी हुई है। वनों, उपवनों, उद्यानों से सुशोभित घाटी में रहते हुए वे अपने देवों को प्रसन्न करने को, दैत्यों को सन्तुष्ट रखने को, कष्टों को कम करने को तथा आनन्द की अभिव्यक्ति करने को नाचते, गाते, खेलते थे।[1] यह बात ध्यान रखने योग्य है कि भारत में धर्म सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग होने के कारण नीलमत में सभी मनोरंजन के साधनों का वर्णन धार्मिक परिप्रेक्ष्य में हुआ है।

1.1 संगीत

संगीत की दैवी उत्पत्ति के विषय में कोई कथा नीलमत में नहीं मिलती परन्तु सप्त छन्दों की पूजा का विधान किया गया है जो संगीत के दैवी सम्बन्ध की ओर संकेत करता है।[2] यहाँ सामगान का उल्लेख हुआ है तथा एक पद्य में संगीत से सम्बद्ध गन्धर्वों की चर्चा हुई है।[3] प्रत्येक समारोह के अवसर पर, चाहे वह विष्णु देव का प्रस्वापन अथवा प्रबोधन उत्सव हो या पिशाचाधिपति निकुम्भ के आगमन या विदाई का अवसर हो या प्रथम हिमपातोत्सव हो या

कृषि से सम्बद्ध बीजारोपण का समय हो, समारोह का मुख्य आकर्षण संगीत होता है।[4] तन्त्र वाद्य की ध्वनि मधुर तथा मनोहर कही गई है।[5] यद्यपि कण्ठ्यगान के भेदों का उल्लेख नहीं किया गया परन्तु वाचन, प्रकीर्तन, और घोष शब्दों का क्रमशः पुराण, स्तोत्र, तथा ब्रह्म के साथ प्रयोग यह प्रकट करता है कि अलग अलग प्रकार के पाठों का गायन अलग अलग ढंग से होता था।[6]

1. 1. 2. पेशेवर गायक

नीलमत में इन चार प्रकार के पेशेवर गायकों-सूत, मागध, वन्दी और चारण का उल्लेख है जिनकी जीविका दूसरों के गुणगान पर निर्भर थी। इन शब्दों के एक साथ प्रयोग से प्रतीत होता है कि इन गायकों में कुछ न कुछ भेद अवश्य रहा होगा।[7]

1. 1. 3. वाद्ययन्त्र

नीलमत में सामान्य रूप से वाद्ययन्त्र के लिए वाद्य, वादित्र तथा वाद्यभाण्ड शब्दों का प्रयोग हुआ है।[8] विष्णुधर्मोत्तरपुराण तथा कामसूत्र की जयमंगला टीका में वाद्यों के चार प्रकारों-घन (करतालादि), तत (तारों वाले) सुषिर (हवा भरने वाले बाँसुरी आदि) तथा आनद्ध (थपथपाने वाले ढोलक आदि) का उल्लेख है।[9] इन में से दो प्रकार-आनद्धवाद्य तथा तन्त्रीवाद्य का नीलमत में नाम से उल्लेख हैं[10], सुषिर और घन का उल्लेख नहीं परन्तु इन वर्गों के वाद्यों वेणु, घण्टा आदि की चर्चा हुई है।[11] नीलमत में उल्लिखित वाद्यों का ऐतिहासिक विवरण इस प्रकार है।

1. 1. 3. 1 वीणा

ऐतरेय आरण्यक में विस्तार से वीणा के अंगों-शिर, उदर, अम्भण, तन्त्र और वादन का उल्लेख है।[12] रामायण, महाभारत, जातक, संयुत्तनिकाय तथा अर्थशास्त्र इस वाद्य की लोकप्रियता को प्रमाणित करते हैं। संगीतमकरन्द में वीणा उन्नीस प्रकार की बताई गई हैं।[13] नीलमत में वीणा शब्द कई बार आया है[14] पर तन्त्रीवाद्य को भी वीणा मान कर कह सकते हैं कि यह कश्मीर का सर्वाधिक लोकप्रिय वाद्य था। आधुनिक कश्मीर के सौ तन्त्रियों वाले सन्तूर की पहचान तैत्तिरीय संहिता में उल्लिखित शततन्तु वाण से की जा सकती है।[15]

1. 1. 3. 2 वेणु

ऋग्वेद 7, 55.3 में प्रयुक्त वेणु का अर्थ गाथ ने बांसुरी लिया है पर अन्य विद्वान् इस से सहमत नहीं हैं।[16] ए. सी. दास का वेणु को वाण का परिवर्तित रूप मानना भी ठीक नहीं क्योंकि वाण तो तन्त्रीवाद्य है सुषिर वाद्य नहीं है।[17]

1, 3, 3, शंख

ऋग्वेद में शंख का उल्लेख नहीं है। रामायण तथा महाभारत में युद्ध के प्रसंग में अनेक बार शंख का प्रयोग हुआ है।[18] नीलमत में केवल दो बार ही इसका उल्लेख है।[19]

1. 1. 3. 3. पटह

पटह का उल्लेख न वेदों में है न जातककथाओं में। रामायण में इस के उल्लेख मिलते हैं।[20] नीलमत में इस का उल्लेख दो बार हुआ है और दोनों बार यह प्रयोग वीणा के साथ है जिस से प्रतीत होता है कि वीणा के संग पटह भी बजाया जाता था।[21]

1.1. 3.4 मुरज

वैदिक साहित्य में मुरज का उल्लेख नहीं है। भरत के नाट्यशास्त्र में मुरज के तीन प्रकारों-आलिंग्य, ऊर्ध्व, तथा आंकिक की चर्चा हुई है।[22] प्रारम्भ में मुरज मृदंग से अलग वाद्य था परन्तु बाद में मृदंग को मुरज भी कहा जाने लगा।[23]

1.2 नृत्य

नीलमत में अनेक बार गीत और नृत्त इन दोनों शब्दों का इकट्ठा प्रयोग मिलता है। नृत्य और नृत्त का भेद भी दिखाई नहीं देता। विभिन्न प्रकार के नृत्य कश्मीर में प्रचलित रहे होंगे परन्तु नीलमत में उनकी मुद्राओं, गति आदि का विवरण उपलब्ध नहीं है। हम उनका वर्गीकरण विभिन्न अवसरों के आधार पर कर सकते हैं जैसे धार्मिक उत्सवों पर किए जाने वाले नृत्य[24], ऋतुओं के,। आगमन पर किए जाने वाले नृत्य,[25], कृषि सम्बन्धी गतिविधियों से जुड़े नृत्य[26] तथा फलों के वृक्षों के फल पकने पर किए जाने वाले नृत्य।[27]

कश्मीर में संगीत तथा नृत्य की लोकप्रियता के विषय में सर्वप्रथम साक्ष्य पुरातत्त्व से प्राप्त होता है। कश्मीर में हार्वन स्थान से कुछ टाइलें मिली हैं जिन पर चतुर्थ शताब्दी ईस्वी के या उससे पूर्व के खरोष्ठी अक्षर खुदे हैं। एक टाइल पर तीन कलाकार अंकित हैं। बांयीं ओर का व्यक्ति बांसुरी बजा रहा है, बीच वाले के हाथों में करताल है और तीसरा मृदंग बजा रहा है। एक अन्य टाइल पर ढोलक बजाती नारी अंकित है और दूसरी पर नृत्य करती नर्तकी है।[28] कोटिसर मन्दिर के परिसर से भी एक नर्तकी की मूर्ति प्राप्त हुई थी।[29]

साहित्य से उपलब्ध साक्ष्य की बात करें तो कल्हण की राजतरंगिणी में गीतनृत्त सम्बन्धी उद्धरणों की भरमार है। वह एक सुर में गाती हुई दो गायिकाओं का उल्लेख करता है।[30] संगीत की लोकप्रियता इतनी बढ़ गई थी कि यह बौद्ध भिक्षुओं में भी प्रचलित हो गया था।[31] कल्हण मन्दिरों में नर्तकियों के नर्तन की प्रथा का उल्लेख करता है। राजा जलौक ने अपने अन्तःपुर की सौ स्त्रियाँ ज्येष्ठरुद्र के मन्दिर को समर्पित कर दी थीं।[32] राजा ललितादित्य की वन में दो स्त्रियों से भेंट हुई थी जिन्होंने उसे बताया था कि उस स्थान पर नृत्य करना हमारी कुलपरम्परा है जो हमारे घर में प्राचीन काल से चली आ रही है और हम में से कोई इसका कारण नहीं जानता।[33] कल्हण लिखता है कि नर्तकियों के प्रति अभिरुचि रखने वाले राजा कलश ने अन्य देशों में प्रचलित गीत इस देश में प्रारम्भ किए थे।[34] राजा हर्ष स्वयं नर्तकियों को अभिनय की शिक्षा देता था।[35] क्षेमेन्द्र किसी गुरु के ऐसे शिष्य पर व्यंग्य कसता है जो अपने कन्धे पर वीणा टिकाए यज्ञ भूमि में प्रवेश करता है परन्तु देवता के आह्वान के अवसर पर उन के विसर्जन के गीत गाता है।[36] बिल्हण कवि ने भी कश्मीर की नारियों की नृत्य में निपुणता का उल्लेख किया है।[37] वसुगुप्त ने अपने दार्शनिक ग्रन्थ शिवसूत्रविमर्शिनी में नृत्यकला से सम्बद्ध उपमानों का प्रयोग कर आत्मा को नर्तक, अन्तरात्मा को प्रेक्षागृह तथा इन्द्रियों को प्रेक्षक कहा है।[38]

नीलमत में वर्णित संगीत तथा नृत्य प्रकृतिभेद की दृष्टि से मुख्यतया लोकसंगीत तथा लोकनृत्य की श्रेणी में आते हैं जो जनजीवन में स्वतः स्फूर्त होते हैं। विश्व के अन्य देशों की तरह यहाँ भी धार्मिक नृत्य देवकथाओं को

प्रदर्शित करते हैं।[39] राबर्टसन ने कश्मीर के पड़ोस में हिन्दुकुश में प्रचलित वीरों के स्तुतिगान सहित किए जाते नृत्यों का उल्लेख किया है।[40] कश्मीर में शिवरात्रि विसर्जन के अवसर पर नदी के तट पर जा कर हिन्दू स्त्रियों का सिर के ऊपर हाथ उठाकर सात चक्कर काटना किसी धार्मिक नृत्य का अवशेष प्रतीत होता है। कृषिनृत्य भी सभी देशों में प्रचलित रहे हैं। फ्रेज़र ने एशिया और यूरोप के देशों में प्रचलित ऐसे नृत्यों की चर्चा की है जो वसन्त में कृषि की वृद्धि के लिए तथा कृषि को हानि पहुंचाने वाली कुटिल शक्तियों को दूर भगाने को किए जाते थे।[41] श्रीमती लोरिमर ने कश्मीर के निकट हुंजा के नृत्यों में वास्तविक कृषिप्रक्रिया के अनुकरण को सिद्ध किया है।[42] निश्चित रूप से तो नहीं कहा जा सकता परन्तु सम्भवत: नीलमत में भी ऐसे नृत्यों की ओर ही संकेत है।

1.3 नाट्याभिनय

नीलमतपुराण में उल्लिखित प्रेक्षा तथा प्रेक्षणक शब्दों के द्वारा नाट्याभिनय की ओर संकेत है क्योंकि संस्कृतसाहित्य में ये पारिभाषिक शब्द इसी अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं।[43] नीलमत में यथाविधि प्रेक्षादान करने का भी विधान है।[44] यह प्रतीत होता है कि कश्मीर में ऐसी नाटकमण्डलियां रही होंगी जो किसी व्यक्ति या संस्था से प्रबन्धन व्यय प्राप्त कर नाटकों का प्रदर्शन रंगमंच पर करती होंगी। तभी प्रेक्षादान के साथ साथ रंगजीवियों को भी सामर्थ्य के अनुसार धन देने को कहा गया है। इन विविध प्रेक्षादानों की व्याख्या उपलब्ध नहीं होती। कश्मीरी कवि बिल्हण कश्मीर की स्त्रियों के नाट्याभिनय की प्रशंसा करते हुए कहता है कि नाटकों में उनके अभिनयकलाकौशल को देख कर स्वर्ग की अप्सराएँ रम्भा, चित्रलेखा और उर्वशी भी विस्मित तथा लज्जित थीं।[45] नर्तक और नट शब्दों का एक साथ प्रयोग नर्तक और अभिनेता के अन्तर का स्पष्ट संकेत देता है।[46]

नाट्यमंचन के लिए प्रेक्षागृह का वर्णन दामोदरगुप्त के कुट्टनीमत में मिलता है पर वहाँ स्थान वाराणसी है।[47] इस के विपरीत कल्हण युद्ध में भागती हुई सेनाओं की तुलना उन दर्शकों से करता है जो नाट्याभिनय देखते हुए वर्षा की बौछार आने पर भाग जाते हैं।[48] नीलमत में भी ऐसे प्रेक्षणकों के प्रदर्शन का उल्लेख घर के बाहर या खुले खेतों में अग्नि के इर्दगिर्द किया गया है।[49]

इसलिए यही निष्कर्ष निकलता है कि कश्मीर में सामान्य जन ऐसे नाट्यसमारोह प्राय: खुले आकाश के नीचे मनाया करते थे।

1.4 अन्य क्रीड़ायें

कश्मीर के लोगों में मनोरंजन के लिए कई क्रीड़ायें प्रचलित थीं।

1.4.1 उपवनक्रीड़ा

भारत में उपवनक्रीड़ायें प्राचीन काल से ही लोकप्रिय रही हैं। सायंकाल के समय उद्यानों में खेलने के लिए जाती हुई लड़कियों का उल्लेख रामायण में मिलता है।[50] कश्मीर के निकट गन्धार का निवासी पाणिनि इन क्रीड़ाओं से परिचित था।[51] वनों उपवनों से भूषित प्रकृति की सुरम्य स्थली कश्मीरघाटी के लोग वसन्त के आगमन पर अपने प्रकृति प्रेम की अभिव्यक्ति आनन्दमय नृत्यों और क्रीड़ाओं के माध्यम से करते थे।[52] इरामंजरीपूजन के अवसर पर स्त्रियां और पुरुष इरापुष्पों की मालाओं से सजकर इरापुष्पों से पूजन करते थे।[53] अशोकिकाष्टमी के अवसर पर झरनों और वृक्षों से शोभित उद्यानों में जाकर सम्भवत: कुछ क्रीड़ायें की जाती थीं जिनका वर्णन करने वाले श्लोक छूट गए प्रतीत होते हैं।[54] हार्वन से प्राप्त टाइलों पर फूलों की टोकरियां उठाए स्त्रियाँ अंकित हैं। सिद्धार्थ के जन्म को दर्शाती एक मूर्त्ति में रानी माँ ने अशोक वृक्ष की शाखा को उसी प्रकार पकड़ा हुंआ है जैसे वृक्ष से फूल तोड़ती शालभंजिका हो या झूला झूलती नारी।[55] उपवनों में सपरिवार जाकर विशेष भोजन का आनन्द उठाना भी इन क्रीड़ाओं का अंग होता था।[56]

1.4.2 जलक्रीड़ा

नीलमत में श्रावणी उत्सव के अवसर पर कुमारी कन्यायें जलक्रीड़ायें करें, ऐसा विधान किया गया है।[57] वहां इन क्रीड़ाओं का विवरण नहीं दिया गया। इन का विवरण कामसूत्र तथा हरिवंश में उपलब्ध है।[58]

1.4.3 मल्लक्रीड़ा

नीलमत में देवोद्बोधन तथा यात्रा उत्सव के प्रसंग में मल्लों की पूजा करने का विधान किया गया है जिस से कश्मीर में मल्लक्रीड़ाओं के प्रचलन का अनुमान किया जा सकता है।[59]

1.4.4 द्यूतक्रीड़ा

द्यूतक्रीड़ा का प्रथम उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है जहाँ इसका निषेध किया गया है।[60] नीलमत में दीपावली के प्रसंग में इस क्रीड़ा का उल्लेख हुआ है जहाँ कहा गया है कि खिलाड़ी के जीतने या हारने से उसके आने वाले वर्ष के शुभ या अशुभ होने की सूचना मिलती है।[61] कश्मीर में यह प्रथा लुप्त है परन्तु देश के अन्य भागों में अभी भी इसका चलन कइयों के जीवन में तबाही करता है। तिब्बत में यह प्रथा देश का वार्षिक भविष्य जानने को की जाती है। लासा में प्रमुख लामा राक्षस के प्रतीक को द्यूत में पराजित कर आने वाले शुभ वर्ष की घोषणा करता है।[62]

1.4.5 मृगया

नीलमत में इस क्रीड़ा का स्पष्ट उल्लेख तो नहीं मिलता परन्तु धनुर्घोष का उल्लेख है।[63] हार्वन से मिली टाइलों पर धनुर्धारी शिकारियों को दिखाया गया है[64] जिस से प्रतीत होता है कि शिकार करना भी मनोरंजन के साधनों में रहा होगा यद्यपि इस विषय में निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

1.4.6 खिलौनों से खेल

नीलमत में बच्चों के देव स्कन्द की पूजा के सन्दर्भ में क्रीडनक शब्द का प्रयोग हुआ है जिसे इस तथ्य का द्योतक माना जा सकता है कि खिलौने बच्चों के मनोरंजन के साधन थे।[65] एक अन्य पद्य में उपमान के रूप में रज्जु से बंधे पक्षी के साथ खेलते बच्चों का उल्लेख है।[66]

2 आर्थिक जीवन

नीलमत में वास्तुकला, मूर्त्तिकला, चित्रकला, कृषि तथा व्यापार और हस्तकलाओं के विषय में भी सूचना मिलती है।

2.1 वास्तुकला

भवन, गृह, निवेशन, आलय, वेश्म, आयतन, अट्टालक आदि शब्दों का प्रयोग नीलमत में हुआ है परन्तु इन के परस्पर भेद को बताना सम्भव नहीं।[67] बौद्ध पूजा स्थान को चैत्य तथा बौद्ध भिक्षुओं के निवास स्थान को शाक्यावास

कहा गया है।[68] पुरातत्त्व की खोजों से पता चला है कि चैत्य पूजा की वस्तु को धारण किए हुए एक कक्ष होता था जिस के चारों ओर प्रदक्षिणा पथ बनाया जाता था जबकि शाक्यावास में आँगन के इर्दगिर्द बहुत कमरे बने होते थे। नीलमत के समय के बौद्ध भवनों के नमूने नहीं मिले हैं। सैंकड़ों देवमन्दिरों का नामोल्लेख नीलमत में हुआ है परन्तु उनके वास्तु के विषय में विवरण नहीं मिलता। हार्वन में उपलब्ध अर्धवृत्ताकारमन्दिर के अवशेषों से सूचित होता है कि कश्मीर के प्राचीन मन्दिरों में आगे मण्डप और उसके पीछे गर्भगृह बना होता था।[69]

नीलमत में भवन निर्माण की सामग्री के बारे में कोई सूचना नहीं मिलती। घर के दरवाज़ों[70] और खिड़कियों का उल्लेख है।[70] घरों तथा मन्दिरों की सजावट फूलो, पत्तों, मालाओं, चित्रों आदि से की जाती थी। नगरनिर्माण योजना के बारे में नीलमत मौन है परन्तु वह सड़कों, राजमार्गों और चौराहों का उल्लेख करता है।[71] वितस्ता नदी पर बने पुलों की भी चर्चा हुई है।

2.2 मूर्त्तिकला

नीलमत में पत्थर, मिट्टी, सोना, चाँदी, ताँबा, पीतल, लकड़ी, घास, घी से बनाई हुई मूर्त्तियों का उल्लेख है।[72] आषाढ़ मास में विष्णु भगवान् की ऐसी शयनमूर्त्ति बनाई जाती थी जिस में उनके चरण लक्ष्मी की गोद में रखे जाते थे। चार मुखों वाले, चार भुजाओं वाले, चारों वेदों तथा आयुधपुरुषों से युक्त चतुर्मूर्त्ति विष्णु का उल्लेख भी नीलमत में है।[73] विष्णुधर्मोत्तरपुराण में चतुर्मूर्त्ति विष्णु की चर्चा विस्तार से की गई है।[74] जे. एन. बैनर्जी इसे पाँचरात्र के व्यूह सिद्धान्त का उदाहरण मानते हैं।[75]

2.3 चित्रकला

नीलमत में प्राचीन कश्मीर में चित्रकला की लोकप्रियता के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। लोगों को बुद्ध के जन्मोत्सव पर चैत्यों को सुन्दर चित्रों से सजाने का आदेश दिया गया है।[76] चित्र दीवारों, भूमि तथा वस्त्रों पर चित्रित किए जाते थे।[77] अल्पना या भूमिशोभा धार्मिक एवं सामाजिक उत्सवों का प्रमुख अंग थी।[78] आधुनिक समय का वियुग-भूमि पर अंकित एक वृत्ताकार चित्रण जिस पर वर अपने विवाह के लिए वधू के घर में प्रवेश करने से पूर्व खड़ा होता है, नीलमत

में वर्णित भूमिशोभा का ही अवशिष्ट रूप प्रतीत होता है। कुट्टनीमत में दामोदरगुप्त लिखता है कि गणिकायें मनोविनोद के लिए नहीं अपितु अपनी निपुणता की प्रसिद्धि के लिए चित्र बनाती हैं। सोमदेव ऐसे चित्रकारों का उल्लेख करता है जो अपने स्वामियों के गुप्त संदेश पहुँचाने का कार्य करते थे।

2.4 हस्तशिल्पकला

सभी शिल्पकलाओं के प्रवर्तक विश्वकर्मा की पूजा भी कश्मीर में की जाती थी जब शिल्पी अपने अपने औज़ारों की पूजा भी करते थे।[79] जिन उद्योगों में शिल्पी जन लगे थे उनका अनुमान नीलमत में उल्लिखित उन के द्वारा निर्मित वस्तुओं से लगाया जा सकता है। पहनने के वस्त्रों का उल्लेख कताई, बुनाई, रंगाई तथा धुलाई की ओर संकेत करता है। सोने चांदी से निर्मित आभूषणों तथा कलशों और चांदी से बने आसनपीठों की चर्चा स्वर्णकारों के उद्योग को सूचित करती है।[80] इसी प्रकार लोहे तथा अन्य धातुओं से बने शस्त्र, मिट्टी के बर्तन, लकड़ी के भद्रासन और चमड़े के जूते उन उद्योगों की उपस्थिति सिद्ध करते हैं। छत्र, यष्टि, कूटागार, भवन निर्माण आदि में भी काष्ठशिल्प का प्रयोग होता था।[81]

2.5 वस्त्राभूषण

नीलमत में सामान्य रूप से वस्त्रों के लिए वस्त्र, अम्बर, वासस्, वसन तथा संवीत शब्दों का प्रयोग हुआ है।[82] चीन से आयात किए गए रेशमी वस्त्रों को चीनांशुक कहा गया है।[83] नवहिमपातोत्सव के प्रसंग में कम्बल[84] तथा प्रावरण की चर्चा हुई है।[85] प्रावरण की पहचान महाभारत में उल्लिखित प्रावार से की जा सकती है जिसे शीत से रक्षा करने वाला वस्त्र कहा गया है।[86] पाणिनि भी इस से परिचित थे।[87] कौटिल्य ने इसे पशुओं से प्राप्त ऊन से निर्मित प्रावरक कहा है।[88] स्त्रियों तथा पुरुषों के पहनावे में दो प्रमुख वस्त्र रहते थे।[89] नागराज नील के एक वस्त्र की तुलना चमकती हुई विद्युत् से तथा दूसरे की तुलना चन्द्र की किरणों से की गई है।[90] वस्त्र श्वेत तथा रंगीन दोनों प्रकार के थे। नया वस्त्र अहत कहा है।[91] बौद्ध भिक्षुओं के वस्त्र चीवर कहे गए हैं।[92] शय्या के साथ ओढ़ने की चादर उल्लिखित है।[93] आभूषणों में कुण्डल, कंकण, मुकुट और रत्न वर्णित हैं।[94]

2.6 सौन्दर्य प्रसाधन

नीलमत में सौन्दर्य प्रसाधन के लिए पारिभाषिक शब्द प्रतिकर्म प्रयुक्त हुआ है।[95] पुष्पमाला तथा सुगन्धित पदार्थ देवपूजा का आवश्यक अंग थे परन्तु पूजा करने वालों के लिए भी ये उतने ही महत्त्वपूर्ण होते थे। पूजा के समय उन्हें भी सुगन्धित पदार्थों से अनुलिप्त तथा आभूषणों से अलंकृत होने को कहा गया है।[96] कई प्रकार के गन्धों, उबटनों, पुष्पों और मालाओं के उल्लेख मिलते हैं जिनका प्रयोग त्वचा के सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए किया जाता था।[97] अंजन, कंघा, जूते, छड़ी भी प्रसाधन के अंग थे।[98]

2.7 खान पान

नीलमत में खान पान की वस्तुओं का उल्लेख प्रायः देवपूजा के प्रसंग में हुआ है परन्तु उन्हीं से सामान्य लोगों के खानपान के विषय में अनुमान लगाया जा सकता है। क्योंकि मनुष्य जो खाता है उस के देव भी वही खाते हैं।[99] नीलमत में सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों के लिए सामान्य रूप से अन्न शब्द का प्रयोग हुआ है।[100] सभी प्रकार के अनाज और दालों के लिए सस्य[101] तथा सभी प्रकार की सब्ज़ियों के लिए शाक[102] का प्रयोग है। पकाये हुए अन्न, शुष्क अन्न तथा देर तक टिकने वाले भक्ष्य पदार्थों का उल्लेख हुआ है।[103] लड्डू, फल, मूल, औषधि की भी चर्चा हुई है।[104] कश्मीर में मांसभक्षण भी प्रचलित था परन्तु विष्णु से सम्बद्ध देवोत्थापन के पाँच दिनों में मांसभक्षण पूर्णतया वर्जित था।[105] यह भी कहा गया है कि उन पाँच दिनों में माँसभक्षी दैत्य, दानव, यक्ष और पिशाच भी माँस नहीं खाते थे। पिशाचों, छन्दोदेव तथा भद्रकाली की पूजा में माँस का प्रयोग किया जाता था।[106] पेय पदार्थों में मद्य भी प्रयुक्त होता धा। खान पान तथा उबटन आदि के लिए प्रयुक्त निम्न लिखित पदार्थों का उल्लेख नीलमत में हुआ है। आज्य = घी, अलक्तक = पैरों में लगाने का अलता, अंजन = सुरमा, अपूप = मालपुआ, आर्द्रक = अदरक, भल्लातक = भल्ली, चरक तथा सुश्रुत ने इसे फलवर्ग में रखा है। सुश्रुत ने इस के तेल का उल्लेख किया है तथा इस के पत्तों को शाक कहा है। इसको औषधि भी माना है। नीलमत में इसकी चर्चा घोड़ों की पूजा के प्रसंग में की गई है। बीजपूरक = चकोतरा बिजोरा, बिल्वपत्र = बिलपत्ता, चन्दन इसके दो प्रकार रक्तचन्दन तथा सितचन्दन नीलमत में उल्लिखित हैं। (पद्य सं 430),

चरु = उबले चावल आदि से बनाया गया भक्ष्य, दधि = दही, दाडिम = अनार, द्राक्षा = दाख अंगूर, अंगूरों की लता श्यामा के सम्मान में उत्सव भी मनाया जाता था (पद्य सं 830)। अंगूरों के लिए एक अन्य शब्द मृद्वीका भी प्रयुक्त है। (पद्य सं 832), धाना = भूने हुए जौ या चावल, धान्य = चावल कश्मीर के लोगों का मुख्य भोजन है। इसके तीन प्रकार शालि, तण्डुल तथा श्यामाक नीलमत में उल्लिखित हैं। (पद्य सं 555, 760), घृत = घी इस का प्रयोग खाने तथा मालिश के लिए किया जाता था। घृतपायस = घृतमिश्रित खीर, पौष पूर्णिमा पर इसे खाने का विधान है। (पद्य सं 492) गोधूम = गेहूं, गोरस = दूध, गोरोचन = पीले रंग का पदार्थ जिसे स्नान के पश्चात् शरीर पर लगाया जाता था। गुड़, गुग्गुल, इक्षु = ईख, कपित्थ = कैथ, कर्णक = कमलबीज, कोविदार = कचनार, कृशर = खिचड़ी, कुल्माप = कच्चे जौ, कुंकुम = केसर, कूष्माण्ड = पेठा, कुष्ट = कुट्ठ अश्वपूजा के संदर्भ में उल्लिखित। (पद्य सं 811), कुसुम्भ = देवपूजा तथा वस्त्र रंगने में प्रयुक्त (पद्य सं 512, 748), कुठेरक = एक औषधि जिसकी मंजरी का उल्लेख विष्णुपूजन के संदर्भ में हुआ है। (पद्य सं 429), लवण = नमक, लोपिका = रेवड़ी, मधु = शहद इसका दूसरा नाम क्षौद्र भी दिया है। भक्ष्य पदार्थों को मीठा करने तथा श्यामा देवी की पूजा में इसका प्रयोग किया जाता था। (पद्य सं 522, 831), मद्य = मदिरा इसका उल्लेख नवहिमपातोत्सव के प्रसंग में किया गया है। (पद्य सं 481) इरामंजरीपूजन के अवसर पर इरापुष्पों से मिश्रित पान की चर्चा है जो सम्भवतः एक प्रकार की मदिरा है। (पद्य सं 700), मरिच = मिर्च, माष = एक दाल, मसूर = एक दाल, इन दोनों के चूर्ण का उल्लेख उबटनों के प्रसंग में हुआ है। (पद्य सं 435), मोदक = लड्डू, विनायकाष्टमी पर विनायक की पूजा में मोदक भेंट करने का विधान किया गया है। (पद्य सं 724), मुद्ग = मूंग दाल, कश्मीरादेवी की पूजा में मूंग और माष से बनी त्रिकोण मिठाई का उल्लेख है। (पद्य सं 555), ओदन = भात कश्मीर का सामान्य भोजन है। पंचगव्य = गौ से प्राप्त दूध, दही, घी, गोमूत्र तथा गोबर (पद्य सं 434), परमान्न = पायस, खीर, पर्पट = एक प्रकार की औषधि जिसका प्रयोग फाल्गुन पूर्णिमा पर पाँच दिनों तक भोजन में करने का विधान किया गया है। (पद्य सं 548), पिष्टभोज्य = पिसे अनाज से बना भोजन, प्रियंगु = एक लता और उस के पुष्प जिन का उल्लेख सुश्रुत में त्वचा के

रोगों के उपचार में तगर अगुरु आदि के साथ किया गया है। पुष्प = फूल, नीलमत में बक, जाति, इरा, कुन्द तथा कमल (जिसे जलज, पद्म, नीलनलिन, नीलोत्पल भी कहा है) पुष्पों का उल्लेख हुआ है। रोध्र = उबटन के लिए तगर आदि के साथ उल्लिखित (पद्य सं 436), सक्तु = सत्तू, अनाज को भूनकर पीसे हुए रूप वाला भक्ष्य, सर्षप = सरसों, सिद्धार्थक = सफेद सरसों, सोम = देवों का पेय, ताम्बूल = पान का पत्ता, नाट्यप्रदर्शन में दर्शकों को पान भेंट किए जाते थे। तिल = श्वेत तथा काले दोनों प्रकार के तिलों का उल्लेख हुआ है। इन का प्रयोग श्राद्ध, यज्ञ, देवपूजा, ब्राह्मणों को भेंट देने के लिए, कौओं को खिलाने के लिए तथा भोजन के रूप में किया जाता था (पद्य सं 499, 500, 717, 818), यव = जौ, तिलों की तरह ही इस का प्रयोग भी कई अवसरों पर होता था (पद्य सं 706, 722, 723)।

2.8 पशु पक्षी

कश्मीरामण्डल को वन्यपशुओं तथा पालतू पशुओं से परिपूर्ण और दुष्ट सर्पों, चीतों, भैंसों, रीछों से रहित बताया गया है।[107] घोड़ों, बैलों और हाथियों का उल्लेख वाहनों के रूप में हुआ है।[108] हाथी, घोड़े राजा की सेना का महत्त्वपूर्ण अंग होते थे। उनके प्रशिक्षण और रक्षण के लिए विशेष विधि विधान की चर्चा हुई है।[109] घोड़े, बैल, गौ आदि पशुओं का विशेष उपयोग खेती में होने से किसान उन्हें धार्मिक दृष्टि से भी महत्त्व देते थे। कृष्यारम्भ उत्सव में उनकी पूजा का उल्लेख हुआ है। बैल का दान करने वाला उस की सहायता से यम तक पहुँचने के रास्ते को सुगमता से पार कर लेता है तथा बैल के शरीर पर जितने रोम हैं उतने वर्षों तक स्वर्ग में निवास करता है।[110] गोदान का पर्याप्त प्रचलन था। बछड़े सहित रोहिणी गाय की पूजा का विधान है। ब्राह्मणों को गायों के लिए घास दी जाती थी।[111] कौओं और कुत्तों को भी भोजन देने को कहा गया है।[112] ऊन के लिए भेड़ें पालने वालों को वरुण की पूजा करने को कहा गया है।[113] पद्य संख्या 159 से 169 तक में सत्ताईस नदियों के वाहनों के रूप में जिन पशुपक्षियों का उल्लेख हुआ है वे हैं... मकर, कूर्म, वृष, महिष, अश्व, गज, सिंह, व्याघ्र, गवय, मृग, अज, मयूर, सारंग, हंस, मेष, बक, उष्ट्र, नक्र, बलाका, क्रोड (सूअर), कुक्कट, तुरंग, सर्प, जीवजीव (चकोर) तथा शशक। स्कन्द की पूजा के सन्दर्भ में भी अज और कुक्कुट का उल्लेख हुआ है।

2.9. कृषि

नीलमत के कुछ पद्यों में कृषि से सम्बद्ध जानकारी मिलती है। कश्मीर भूमि को अन्न उत्पन्न करने के गुणों से युक्त, शालि की क्यारियों और श्रेष्ठफलों से समन्वित बताया गया है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण में भी हिमवान् प्रदेश को सब प्रकार के अनाज, साग सब्ज़ियों, फलों, फूलों, कन्दमूलों से युक्त बताया गया है।[114] जैसा कि कृष्यारम्भ उत्सव के विधिविधान से सूचित होता है, धान के लिए बीज फाल्गुन में बोये जाते थे। पहले से तैयार भूमि पर हल चला कर जलसिक्त बीज बो दिए जाते थे। भूमि के लिए प्रयुक्त प्राक्प्रवणा विशेषण यह द्योतित करता है कि फसल कटाई के बाद कठोर हुई भूमि या तो प्रकृति द्वारा वर्षा, हिमपात आदि से गीली और नरम बना दी गई होती थी या वर्षा आदि का अभाव होने पर उसे जल की सिंचाई से नरम बनाया जाता था।[115] यद्यपि नीलमत में सिंचाई की व्यवस्था का उल्लेख नहीं है परन्तु कश्मीरामण्डल के लिए ''अदेवमातृक'' विशेषण का प्रयोग इस अर्थ में लिया जा सकता है कि वहाँ के झरनों, झीलों और नदियों का जल कृषि के लिए भी प्रयुक्त होता था। वस्तुतः कश्मीर घाटी की बनावट इस प्रकार की सिंचाई के लिए उपयुक्ततम है। वाल्टर आर. लारैन्स के अनुसार ऊँचाइयों पर जल की सुलभता के कारण कश्मीर घाटी के हर भाग में सिंचाई सम्भव है।[116]

फसलों की कटाई भाद्रपद मास के अन्त में या आश्वयुज् के प्रारम्भ में की जाती थी। धान्य के पक जाने पर दैवज्ञ द्वारा बताए गए शुक्ल पक्ष के दिन पूजा की जाती थी। पिशाचों की कथा के सन्दर्भ में भी कहा है कि आश्वयुज् में धान्य इकट्ठा करने के पश्चात् मानव घाटी से बाहर चले जाते थे।[117] राजतरंगिणी में भाद्रपद मास में पके धान्य से पूर्ण खेतों का उल्लेख प्रायः मिलता है।[118] जौ की फसल वैशाख या ज्येष्ठ मास में तैयार होती थी जैसा कि ज्येष्ठ मास में की जाने वाली यवाग्रायण विधि से प्रतीत होता है।[119] शेष कृषि उत्पादों की चर्चा पहले ही खानपान शीर्षक के अन्तर्गत की जा चुकी है।

नीलमत में कश्मीरामण्डल को दुर्भिक्षातंकवर्जित बताया गया है परन्तु कल्हण की राजतरंगिणी में कई बार कश्मीर के दुर्भिक्षपीड़ित होने के उल्लेख मिलते हैं।[120] नीलमत में बृहदश्व ने कहा है कि यदि कश्मीर के लोग नील के वचनों का पालन नहीं करते तो यहाँ अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भारी हिमपात,

दुर्भिक्ष तथा मरण होता है।[121] एक पद्य में कश्यप द्वारा वितस्ता नदी से प्रार्थना की गई है कि वह अपनी सीमाओं में बहे अन्यथा घाटी में जलप्लावन हो सकता है।[122]

2.10. व्यापार

कार्तिकी अमावस्या के दिन दुकानों को वस्त्रों से सजाने का विधान मण्डियों तथा बाजारों के अस्तित्व को सूचित करता है।[123] लवण का उल्लेख नीलमत में कई बार हुआ है जिस की उत्पत्ति कश्मीर में नहीं होती थी अतः यही प्रतीत होता है कि देश के अन्य भागों से इसका आयात पीरपंचाल मार्ग से किया जाता होगा।[124] क्षेमेन्द्र ने इस मार्ग को लवणसरणि नाम दिया है।[125] नीलमत में चीनांशुक के उल्लेख से प्रतीत होता है कि रेशमी वस्त्रों का आयात चीन से होता था।[126] निर्यात की वस्तुओं में केसर प्रमुख रहा होगा। कश्मीर के केसर की प्रशंसा करते हुए भावप्रकाश के लेखक ने इसे अन्य प्रदेशों के केसर की तुलना में सर्वोत्तम बताया है।[127] प्राचीन भारतीय कोशों में केसर का पर्याय काश्मीरज शब्द यही द्योतित करता है कि भारत के अन्य भागों में केसर कश्मीर से ही जाता था।

यदि महाभारत के सभापर्व में उल्लिखित हैमवत प्रदेशों में कश्मीर को सम्मिलित माना जाए तो कहा जा सकता है कि कश्मीर से केवल चीन के रेशमी वस्त्रों और बाह्लीक प्रदेश में बने वस्त्रों का ही नहीं अपितु कश्मीर में बने ऊनी वस्त्रों तथा चर्म की वस्तुओं का भी निर्यात होता होगा।

2.11 मुद्रा

नीलमत में सौ सुवर्णों के दान का उल्लेख है जो सोने के सिक्कों की ओर संकेत करता है।[128] कौटिल्य के अर्थशास्त्र में सुवर्ण का तोल अस्सी गुंजा या एक सौ चालीस ग्रेन बताया गया है।[129] नीलमत में उल्लिखित सुवर्ण एक सौ चालीस ग्रेन का था या कुषाण कालीन एक सौ बाइस ग्रेन का यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।[130]

इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि नीलमत के समय की कश्मीरी जनता किसी भी दृष्टि से भौतिक सुख सुविधाओं के प्रति उपेक्षा

भाव नहीं रखती थी। व्यक्तिगत मनोरंजनों के अतिरिक्त वहाँ प्रायः धार्मिक तथा सामाजिक समारोह होते थे जिन के प्रमुख अंग नृत्य, संगीत, नाटक, मल्लक्रीड़ा और द्यूतक्रीड़ा, जलक्रीड़ा और उद्यानक्रीड़ा आदि थे। लोग कई प्रकार की कलाओं में निपुण थे। इस आनन्दमय जनजीवन का आधार कृषि और व्यापार पर आधारित आर्थिक समृद्धि थी। भूमि से भोजन, वस्त्र, निवास आदि आवश्यकताओं की पूर्ति होती थी जिन्हें कलाकारों और शिल्पकारों की प्रतिभा सुसंस्कृत रूप प्रदान करती थी। किसानों का शोषण करने वाली कठोर भूमिव्यवस्था का अभी प्रचलन नहीं हुआ था और कश्मीर के व्यापारियों की समृद्धि के लिए अन्य प्रदेशों के व्यापारिक मार्ग खुले थे।

पञ्चम अध्याय की टिप्पणियाँ

1. नीलमत पु. 21, 22
2. वही, 625, अथर्ववेद 8, 9, 17, 19 में सप्तछन्दांस्यनु० सात छन्दों का उल्लेख है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य 16, 1 में इनके निम्न नाम दिये हैं- गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप्, जगती
3. नीलमत पु. 663
4. वही, 421, 729
5. वही, 398-99, 688-90
6. वही, 425-26
7. वही, 23, 441, 547, 849
8. वही, 568, 778, 820, 849 आदि
9. विष्णुधर्मोत्तर पु. 3, 19; यशोधर, कामसूत्र पर जयमङ्गला टीका 1,3
10. गेयमानद्धवाद्यं च तन्त्रीवाद्यं च वादयेत्। नीलमत पु. 688 क
11. वीणावेणुरवेण च। वही, 441; घण्टामजं। वही, 672, 688; वादित्रशङ्ख। वही, 849
12. ऐतरेय आरण्यक, 3, 2, 5 वैदिक इन्डैक्स खण्ड 2 पृष्ठ 316 पर उद्धृत; अर्थशास्त्र पृष्ठ 125; जातक 3, 40

13. संगीतमकरन्द, 4, 6-7

14. नीलमत पु. 22, 441

15. वाण: शततन्तुर्भवति। तैत्तिरीय संहिता, 7, 5, 2, 9

16. St. Petersburg Dictionary s.v. Venu

17. Das, A.C. Rigvedic Culture, p.234

18. Hopkins, J.A.O.S., XIII pp.328-29

19. नीलमत पु. 399, 849

20. Hopkins, J.A.O.S., XIV p.319; रामायण, 5, 10, 39 आदि

21. नीलमत पु. 22, 426

22. देवानां दुन्दुभिं दृष्ट्वा चकार मुरजं ततः।
आलिङ्ग्यमूर्ध्वकं चैव तथैवाङ्किकमेव च।।
भरत, नाट्यशास्त्र, 23, 11

23. मृदपि मुरा ततो जाता मुरजाः मृदङ्गा इत्यर्थः। अभिनवः। भरतकोश, मुरज के अन्तर्गत। नाट्यशास्त्र 13, 21

24. नीलमत पु. 421, 425, 581, 713, 787, 819, 833, 896

25. वही, 484, 699

26. वही, 538, 546, 547, 568

27. वही, 833

28. Kak. R.C., Ancient Monuments of Kashmir PI XVII

29. Buhler, Report, p.12 u

30. कल्हण, राजत. 5, 364

31. वही, 1, 140

32. वही, 151

33. वही, 4, 270-71

34. वही, 7, 606

35. वही, 7, 1140
36. क्षेमेन्द्र, देशोपदेश, 5, 30
37. बिल्हण, विक्रमाङ्कदेवचरित, 18.23, 29
38. नर्तक आत्मा।। रङ्गोऽन्तरात्मा।। प्रेक्षकाणीन्द्रियाणि।। शिवसूत्रविमर्शिनी 3, 9-11
39. Toy, C.H. Introduction to the History of Religion, p.52
40. Robertson, Kafirs of Hindukush Ch.XXXIII
41. Frazer, Golden Bough, Pt. VI, p.251
42. Lorimer, E.O. Language Hunting in the Karakoram, p.230
43. नीलमत पु. 399; हरिवंश, 2, 93, 96; मनुस्मृति 9, 84
44. नीलमत पु. 427, 546, 795, 897, 731, 759, 224
45. रामा रामानुकरणविधौ यत्र नाट्यप्रयोगे
    नूनं नाटये भवति च चिरं नोर्वशी गर्वशीला।।
    विक्रमाङ्कदेवचरित 18, 23; 29
46. नीलमत पु. 546, 795, 446
47. दामोदरगुप्त, कुट्टनीमत, 68
48. कल्हण, राजत. 7, 1606
49. नीलमत पु. 398
50. रामायण, 2, 67, 17
51. पाणिनि अष्टाध्यायी 2, 2, 17; 3, 3, 109; 4, 2, 74 पर काशिका टीका
52. नीलमत पु. 22
53. वही, 698-99
54. वही, 790, ब्रीज़ के अनुसार यहाँ कुछ पद्य लुप्त हैं।
55. Kak R.C. Ancient Monuments of Kashmir PI XXIV, Nos.5,6; PI XXV Nos.7,8

56. नीलमत पु. 567-68

57. वही, 741

58. वात्स्यायन, कामसूत्र, 3, 4, 6; हरिवंश, 2, 88

59. नीलमत पु. 446, 897

60. ऋग्वेद, 10, 34

61. नीलमत पु. 416-17

62. E.R.E.s,v,games

63. नीलमत पु. 21

64. Kak, R.C., OpCit. PI XXIII No.3, PI XXVIII No.14, PI XXIX No.20

65. नीलमत पु. 672

66. वही, 337-38

67. वही, 194, 371, 374, 376, 381, 382, 413, 573, 580 आदि

68. वही, 712-13

69. Kak, R.C. OpCit. pp.50-51

70. नीलमत पु. 573, 691

71. वही, 579-80, 895, 1441

72. वही, 422-23, 454, 550, 685, 495-96

73. वही, 1252

74. विष्णुधर्मोत्तर पु. 3, 85, 43-44

75. Banerjea, J.N., Development of Hindu Iconography p.408

76. नीलमत पु. 713

77. वही, 432, 679, 755 आदि

78. वही, 427, 814

79. वही, 646, 820

80. ततस्तु कलशा देया यथाशक्ति स्वलङ्कृता : वही 440

81. नीलमत पु. 847, 686, 820, 863
82. वही, 584, 816, 844, 492, 1251, 346, 445, 456, 64
83. वही, 346
84. वही, 528
85. वही, 483 कश्मीरी शब्द फिरन सम्भवत: प्रावरण से निकला है। संस्कृत शब्द प्रच्छद का कश्मीरी तद्भव फरदि है
86. महाभा. 3, 3, 51
87. Agrawal, V.S. India as known to Panini, p.128
88. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, पृष्ठ 80
89. नीलमत पु. 64, 346, 473, 802
90. वही, 346
91. वही, 491
92. वही, 714
93. वही, 788
94. वही, 345, 1251, 794, 858, 445, 553
95. वही, 548, 680
96. वही, 427, 449, 471, 529, 537, 400, 407, 544 आदि
97. वही, 435, 488
98. वही, 512, 790, 686
99. यदन्नः पुरुषो भवति तदन्नास्तस्य देवता:॥
    रामायण, 2.120, 30
100. नीलमत पु. 444, 472, 482
101. वही, 19
102. वही, 428, 449, 735
103. वही, 539, 687
104. वही, 724, 472, 773, 794, 439
105. वही, 461-62

106. वही, 571, 578, 817
107. वही, 18, 20, 23
108. वही, 889, 892
109. वही, 378, 809-815, 863
110. वही, 455-57, 560
111. वही, 1245, 1248, 738, 497
112. वही, 582, 516
113. वही 395-96, 672
114. वही, 14, 19; विष्णुधर्मोत्तर पु, 1.151.38-40
115. वही, 566-67; Lawrence, W.R., The Valley of Kashmir pp.38-40
116. वही p.324
117. नीलमत पु. 776, 335
118. कल्हण, राजत. 2.18; 5.270; 8.794
119. नीलमत पु. 722-23
120. कल्हण, राजत. 5.71, 271
121. नीलमत पु. 905-907
122. वही, 311-312
123. वही, 414
124. वही, 429, 472
125. क्षेमेन्द्र, समयमातृका, 2.90
126. नीलमत पु. 346
127. शब्दकल्पद्रुम, कुङ्कुम के अन्तर्गत
128. नीलमत पु. 1408
129. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, पृष्ठ 103
130. Cunnigham, Coins of Indo Scythians, p.280

❑ ❑ ❑

षष्ठ अध्याय

राजनैतिक विचार तथा राजव्यवस्था

नीलमतपुराण में कश्मीर की राजनैतिक व्यवस्था के विषय में विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं है फिर भी कहीं कहीं उल्लिखित उक्तियाँ प्रासंगिक रूप से राजनैतिक विचारों तथा राजनैतिक व्यवस्था पर प्रकाश डालती हैं। प्राचीन भारतीय राजनीतिविशारदों ने राज्य के सात अंग माने हैं।[1] इन में से केवल दो स्वामी और राष्ट्र की ही नीलमत में विस्तार से चर्चा हुई है,[2] अन्य का उल्लेख मात्र ही किया गया है।[3] इन्हीं उक्तियों के आधार पर कुछ निष्कर्ष निकालने का यत्न यहाँ किया जा रहा है।

1. राजा और उसके कार्य

नीलमत के एक पद्य में कहा है कि कश्मीर का राजा शिव के अंश से उत्पन्न हुआ है अतः उसकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। कल्हण ने इसी पद्य को परिवर्तित रूप देते हुए कहा है कि राजा के दुष्ट होने पर भी उसकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। जब इन दोनों पद्यों की तुलना महाभारत में भीष्म के इस वचन से करें कि धर्मात्मा राजा देवता होता है तो नीलमत और राजतरंगिणी के इन पद्यों का यह अन्तर धीरे धीरे निरंकुश राजतन्त्र की ओर बढ़ती राजसत्ता को सूचित करता है।[4] यद्यपि नीलमत में राजा को दैवी शक्ति के रूप में स्वीकारा गया है पर वह राजा निरंकुश शासक नहीं है। उसे राजशास्त्र और धर्मशास्त्रों के अनुसार ही राज्य का संचालन करना है।[5] उसकी शक्ति ब्राह्मणों और मन्त्रियों के प्रभाव से नियन्त्रित है। राज्याभिषेक के समय प्रमुख नागरिकों, व्यापारियों आदि की उपस्थिति भी राजा पर जनता के यत्किंचित् प्रभाव को सूचित करती है।[6]

राजा के कर्तव्यों के विषय में कहा गया है कि उसे सभा में जाकर न्याय सम्बन्धी कार्य (व्यवहार) देखना चाहिए। सभी अपराधियों को अपराध के अनुसार दण्ड देना चाहिए।[7] वह न तो किसी को क्षमा करे और न ही अपराध

की तुलना में अधिक कठोर दण्ड दे।[8] राजा का दूसरा कर्तव्य राज्य में पारस्परिक फूट को नियन्त्रित रखना है क्योंकि कश्मीर में बाहरी आक्रमण के अभाव में राजा (जनता या मन्त्रियों में) पारस्परिक फूट से नष्ट होते हैं।[9] बाहर से आने वाले लोगों को भी सम्मान देना चाहिए। राजा के लिए विभिन्न देवालयों में अलग अलग तिथियों पर जाने का विधान है परन्तु वह अतिथिगृह में अतिथियों से भेंट करने सभी तिथियों में जा सकता है।[10] यह कहना कठिन है कि आगन्तुकों के प्रति यह भाव राजा की विदेश नीति का एक पक्ष था या प्रदेश की जनसंख्या में वृद्धि करने का प्रयास था। परन्तु ह्यूनत्सांग के विवरण से यह स्पष्ट है कि सातवीं शती ईस्वी में कश्मीर के राजा विदेशी अतिथियों को सम्मान देते थे।[11] यह स्थिति दसवीं शती के अन्त तक बदल गई थी जैसा कि अल्बेरूनी के विवरण से ज्ञात होता है। तब कश्मीर में विदेशियों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध था।[12]

2. जनपद

कौटिल्य के अनुसार एक अच्छे जनपद में केन्द्र में तथा सीमावर्ती प्रदेशों में बड़े बड़े नगर होने चाहिएँ। ये नगर ऐसे हों जिन में न केवल अपने नागरिकों के लिए अपितु आपत्ति के समय दूसरों के लिए भी जीवन के साधन उपलब्ध हों। जहाँ शत्रु आने में घबराएं, जो पड़ौसी राजाओं का दमन करने में सक्षम हों, जो रमणीय हों, विषम, पथरीले, रेतीले रास्तों से रहित हों, स्थलमार्गों तथा जलमार्गों से युक्त हों, उपजाऊ भूमियों, खानों, वनों, पशुओं और चरागाहों से युक्त हों। जहाँ सिंचाई के साधन हों। जो वाणिज्य पदार्थों से इतने समृद्ध हों कि करों के भार को तथा सेना के व्यय के भार को सह सकें। वे बुद्धिमान् स्वामियों और सेवकों से युक्त हों।[13] अरस्तू ने भी अपने ग्रन्थ में जनपद की इसी प्रकार की विशेषताओं की चर्चा की है।[14]

नीलमत में प्रत्यक्ष रूप से तो जनपद की इन विशेषताओं का वर्णन नहीं है परन्तु कश्मीरमण्डल का वर्णन करते हुए उसे अनेक विशेषताओं से युक्त बताया है। वहाँ की भूमि सब प्रकार के अन्न उत्पन्न करने वाले गुणों से युक्त है। वह धान की क्यारियों से पूर्ण तथा बढ़िया फलों से लदे वृक्षों से युक्त है। वह नाना फूलों फलों वाले वृक्षों, लताओं, औषधियां से युक्त है। वह कृषि के लिए केवल वर्षा पर आश्रित नहीं है तथा अकाल के भय से मुक्त है। वह गायों, अश्वों तथा हाथियों से युक्त है तथा दुष्ट जानवरों से रहित है। वह अच्छी

जनसंख्या से युक्त है, दूसरे राष्ट्रों से पराजित नहीं होती तथा उनसे उत्पन्न भय से अपरिचित है।[15]

3. मन्त्री

नीलमत में मन्त्रिचय अर्थात् मन्त्रियों के समूह का उल्लेख तो हुआ है परन्तु उन की संख्या, नामों तथा कर्तव्यों की चर्चा नहीं की गई और न ही राजा और उनके परस्पर सम्बन्धों पर प्रकाश डाला गया है।[16] कल्हण की राजतरंगिणी से यह सूचना मिलती है कि अशोक के पुत्र जलौक के समय तक भारत के अन्य राज्यों की तरह कश्मीर में भी राज्य के सात प्रशासनिक अधिकारी धर्माध्यक्ष, धनाध्यक्ष, कोशाध्यक्ष, भूपति, दूत, पुरोधा तथा दैवज्ञ होते थे। जलौक ने युधिष्ठिर की तरह उनकी संख्या बढ़ाकर अठारह कर दी थी।[17] नीलमत में प्रयुक्त ''मन्त्रिचय'' कितनी संख्या को द्योतित करता है यह निश्चित रूप से कहना कठिन है।

4. सेना तथा युद्ध

नीलमत में सेना के चार अंगों पैदलसेना, हस्तिसेना, अश्वसेना और रथसेना का उल्लेख है।[18] युद्धप्रिय होना राजा का विशेष गुण बताया गया है।[19] युद्ध के नियमों के बारे में निम्न सूचनाएँ मिलती हैं।

1. राजा बालावस्था में हो तो युद्ध में भाग नहीं ले सकता था। बाल गोनन्द को इसी कारण महाभारत युद्ध में नहीं बुलाया गया था।[20]

2. डर कर युद्धक्षेत्र से भागते हुए शत्रु की हत्या करना अनुचित माना जाता था। ऐसी स्थिति में शत्रुओं की हत्या के पाप से मुक्त होने के लिए परशुराम को तीर्थयात्रा पर जाना पड़ा था।[21]

3. युद्ध में शत्रुराजा के मारे जाने पर प्रायः राज्य उसी के उत्तराधिकारी को सौंप दिया जाता था। सन्तानरहित रानी यदि गर्भवती हो तो मृत पति के सिंहासन की अधिकारिणी हो सकती थी। वासुदेव कृष्ण ने स्वयं कश्मीर के मृत राजा दामोदर की गर्भवती पत्नी यशोवती का राज्याभिषेक किया था।[22]

5. लोकतान्त्रिक तत्त्व

प्राचीन काल में पंजाब तथा उस के पास के पर्वतीय प्रदेशों में कई गणराज्यों की सत्ता थी परन्तु गुप्त साम्राज्य के अन्तिम प्रहार के पश्चात् पंचम शती ई. के अन्त तक वे लुप्त हो गए थे।[23] नीलमत में उपलब्ध कुछ उक्तियाँ उस समय के बाद भी कश्मीर में कुछ लोकतान्त्रिक तत्त्वों की ओर संकेत करती हैं। यात्रोत्सव के प्रकरण में कहा गया है कि वहाँ का राजा सेनासहित उस में भाग ले पर यदि पुर राजा से रहित हो तो प्रधान भाग ले।[24] राजा के वार्षिक राज्याभिषेक के प्रसंग में प्रधान गणिकाओं, बाह्यों, पौरमुख्यों के साथ साथ गणमुख्यों का भी उल्लेख हुआ है। एक अन्य प्रसंग में चारों वर्णों के गणमुख्यों का उल्लेख हुआ है[25] जबकि विष्णुधर्मोत्तरपुराण और अग्निपुराण में उसी प्रसंग में गणमुख्यों के स्थान पर अमात्यों की चर्चा है।[26] यह भिन्नता कश्मीर में लोकतान्त्रिक तत्त्वों की उपस्थिति की ओर संकेत करती है। कल्हण की राजतरंगिणी में तो गणतंत्र जातियों का नामतः उल्लेख नहीं हुआ परन्तु बृहत्संहिता में यौधेयों और गान्धारों को भारत के सुदूर उत्तरी भाग में बताया है।[27] इस आधार पर मेरा यह अनुमान है कि सम्भवतः कुछ गणतान्त्रिक जातियाँ अपनी लोकतान्त्रिकप्रणाली की रक्षा के लिए कश्मीर के पर्वतीय प्रदेश में बस गई होंगी पर पूर्ण विनाश से बचने को वहाँ भी उन्हें राजा को प्रणाम करना पड़ता होगा।

इस प्रकार प्रतीत होता है कि यद्यपि नीलमत के समय में कश्मीर में राजतन्त्रप्रणाली थी फिर भी कुछ गणतन्त्र वहाँ रहे होंगे जो राजतन्त्र की चपेट में आकर शीघ्र ही लुप्त हो गए होंगे।

षष्ठ अध्याय की टिप्पणियाँ

1. स्वाम्यमात्यजनपददुर्गकोषदण्डमित्राणि सप्त प्रकृतयः। कौटिल्य, अर्थशास्त्र पृष्ठ 257
2. स्वामी के लिए प्रयुक्त शब्द हैं-राजा, जनेश्वर, नृपति, नराधिप, महीपति, महीक्षित्, भूपाल, पार्थिव। नीलमतपु. 3, 4, 28, 74, 834, 996 आदि।
3. जनपद के लिए प्रयुक्त शब्द हैं-देश, मण्डल, विषय, राज्य, राष्ट्र। वही, 5, 9, 13, 18, 658

4. राजा हरांशजः। नीलमत पु. पद्य सं 246 की तुलना राजत, 1.72 से करें।
5. नीलमत पु. 873, 1422
6. वही, 844, 845, 854
7. वही, 867, 872
8. वही, 873
9. वही, 867-69
10. वही, 868, 872, 880
11. Watters, OnYuan Chwang's Travels in India pp.258-59
12. Alberuni, India (Translation by Sachau) 1p.206
13. Kautilya, Arthashastra (Translation by S. Shastry) p.288
14. Ernest, Barkar, The Politics of Aristotle pp.289-311
15. नीलमत पु. 14-23
16. वही, 1015, 1018
17. कल्हण, राजत. 1, 118-20
18. नीलमत पु. 1016, 1018
19. वही, 1422
20. वही, 10
21. वही, 1223-24
22. वही, 9
23. Jayaswal, K.P., Hindu Polity, Chap.19
24. नीलमत पु. 893-94, 845
25. वही, 848
26. अग्नि पु. 218.18-20; विष्णुधर्मोत्तर पु. 2.21.7-10
27. वराहमिहिर, बृहत्संहिता, 14. 24-27

❑❑❑

सप्तम अध्याय

धार्मिक सम्प्रदाय तथा विश्वास

नीलमत से प्राचीन कश्मीर में प्रचलित धार्मिक सम्प्रदायों तथा विश्वासों के विषय में पर्याप्त सूचना मिलती है। इन में से कुछ सम्प्रदाय तो विष्णु, रुद्र आदि वैदिक देवों पर केन्द्रित थे और कुछ अन्य का आधार लोकदेवता थे। बौद्धमत को अलग सम्प्रदाय के रूप में नहीं अपितु वैष्णवसम्प्रदाय से सम्बद्ध दिखाया गया है। विभिन्न धार्मिक विचारधाराओं का सम्मिलन स्पष्ट दिखाई देता है। धर्म का विकासशील रूप प्रकट होता है जिस की विकास यात्रा में अनेक पुराने तत्त्व छूटते जाते हैं तथा नवीन तत्त्व जुड़ते चले जाते हैं। नीलमत में निम्नलिखित धार्मिक सम्प्रदायों का उल्लेख मिलता है।

1. वैष्णव सम्प्रदाय

ऋग्वेद में विष्णु की स्तुति में केवल पाँच सूक्त हैं परन्तु उनका व्यक्तित्व पर्याप्त महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।[1] प्रमुख रूप से वह सौरमण्डल के देव हैं, वह गर्भपालक हैं, इन्द्र के सहायक हैं और सृष्टि के नियमों के आदि बीज हैं।[2] ब्राह्मण ग्रन्थों में उनका महत्त्व बढ़ गया है जहाँ उन्हें अन्य देवों की अपेक्षा अग्रगामी बताया है तथा वामन रूप धारण कर असुरों से सम्पूर्ण पृथिवी का अधिकार प्राप्त करने में समर्थ दिखाया है।[3] नारायण और वासुदेव के साथ विष्णु की अभिन्नता की ओर संकेत तो तैत्तिरीय आरण्यक में मिलता है।[4] जबकि महाभारत में यह पूर्णतया सिद्ध है।[5] ईसापूर्व काल में वासुदेव की, 'लोकप्रियता के प्रमाण पाणिनि की अष्टाध्यायी', मेगस्थनीज़ की उक्तियों[7] तथा घोषुण्डी, नानाघाट,[8] बेसनगर में उपलब्ध अभिलेखों[9] से मिलते हैं। पुराणों में यह लोकप्रियता चरम सीमा तक पहुँची है जहाँ उन्हें सम्पूर्ण सृष्टि में व्यापक परम सत्ता के रूप में वर्णित किया गया है।[10]

1.2 नीलमत में विष्णु

अन्य वैष्णवपुराणों[11] की तरह नीलमत में भी विष्णु को परम, सनातन, और त्रैलोक्यनाथ कहा है जिनका सम्मान और गान ब्रह्मा और शिव भी करते हैं। वे जगत् का मूल कारण हैं तथा समस्त चराचर विश्व में व्याप्त हैं। वे भक्तों को वर प्रदान करते हैं तथा उन्हें सत्पथ दिखाते हैं। लोकहित में लगे हुए वे दानवों का नाश करने वाले हैं।[12] उनका विशेषण उपेन्द्र उनके इन्द्र (महेन्द्र) के सहायक रूप का स्मरण कराता है।[13] उनका विशेषण जनार्दन भी इन्द्र से सम्बद्ध दिखाई देता है।[14] उनका विशेषण त्रिविक्रम तथा बारह आदित्यों में उल्लेख सौरमण्डल के साथ उनका सम्बन्ध प्रकट करते हैं।[15] नीलमत में विष्णु को चतुर्मुख, चतुर्बाहु, पुण्डरीकाक्ष तथा नीलकमल की द्युति से युक्त कहा गया है। उनके वस्त्र श्वेत तथा तपे हुए सोने की तरह पीले रंग के बताए गए हैं। उनके शिर पर रत्नजटित किरीट है तथा कानों में कुण्डल हैं।[16] उनके चार आयुधों शंख, चक्र, गदा तथा पद्म का उल्लेख हुआ है।[17] इन आयुधों को एक पद्य में शरीरधारी बताया गया है।[18] उनकी प्रतिमा के सन्दर्भ में कहा गया है कि उन्हें शेषशायी तथा लक्ष्मी की गोद में चरण रखे हुए दिखाना चाहिए।[19] उनका वाहन नागों का शत्रु गरुड है।[20]

1.3 विष्णु के अवतार

शतपथ ब्राह्मण में चार अवतारों मत्स्य, कूर्म, वराह और वामन का उल्लेख है परन्तु इन में से प्रथम तीन का सम्बन्ध प्रजापति से और केवल अन्तिम वामन का सम्बन्ध विष्णु से बताया गया है।[21] महाभारत के नारायणीय खण्ड में प्रथम बार इनको विष्णुरूप कहा है।[22] पुराणों में अवतार की इस अवधारणा को अनेक कथाओं के माध्यम से पुष्ट किया गया है। पूर्ण विकसित रूप में इस सिद्धान्त ने हिन्दू धर्म को अनेक धार्मिक सम्प्रदायों को अपने भीतर समेटने का सामर्थ्य प्रदान किया है। नीलमत में विष्णु के अवतारों की व्यवस्थित सूची उपलब्ध नहीं होती, केवल बिखरे रूप में अवतारों का नामोल्लेख हुआ है। कहीं कहीं उनके कार्यों का संक्षिप्त विवरण उपलब्ध होता है। जैसे मत्स्य (पद्य सं 41, 1206), कूर्म (पद्य सं 1206), वराह (पद्य सं 1204, 1255), हंस (पद्य सं 1206), अश्वशीर्ष (पद्य सं 1206, 1257), नृसिंह (पद्य सं 1194, 1199, 1204, 1246), त्रिविक्रम (पद्य सं 1257) राम दाशरथि

(पद्य सं 518), मधुसूदन (पद्य सं 743) और बुद्ध (पद्य सं 702)। अन्य पुराणों में उल्लिखित दो अवतारों कल्कि तथा परशुराम की नीलमत में अनुपस्थिति से प्रतीत होता है कि कश्मीर में अवतारवाद की अवधारणा अभी पूर्ण विकसित नहीं हुई थी। ग्यारहवीं शती तक यह पूर्ण विकसित हो चुकी थी जैसा कि क्षेमेन्द्र की कृति दशावतारचरित से प्रतीत होता है। उस में ये दोनों अवतार भी सम्मिलित किए गए हैं। नीलमत में वर्णित विष्णु के अवतारों से सम्बद्ध कथानक इस प्रकार हैं।

1.3.1 मत्स्यावतार

कश्मीर की भूमि की उत्पत्ति के प्रसंग में इस अवतार की चर्चा की गई है। यह कहा है कि मन्वन्तर की समाप्ति पर सम्पूर्ण स्थावर तथा जंगम सृष्टि नष्ट हो गई थी। तब संसार के विनष्ट होने पर स्वयं महादेव जलरूप में चारों ओर अधिष्ठित हुए। देवी सती ने उस समय नौका का रूप धारण कर लिया तथा भावी मनु ने माया से सभी बीजों को नौका में रख दिया। तब जगद्गुरु विष्णु ने मत्स्य का रूप धारण कर अपने सींग से नाव को खींच कर उसे पर्वत की चोटी से बाँध दिया जो नौबन्ध शिखर कहलाती है।[23] शतपथ ब्राह्मण के अनुसार मनु की रक्षा करने वाले वे मत्स्य रूप स्वयं प्रजापति थे।[24] महाभारत में भी उस मत्स्य को ब्रह्मा का रूप बताया गया है।[25] भागवतपुराण में कथा मिलती है कि जलविप्लाव में हयग्रीव असुर ने वेदों का अपहरण कर लिया था जिन्हें बचाने को विष्णु ने शफरी का रूप धारण किया।[26] अग्निपुराण के अनुसार मत्स्यरूप विष्णु ने हयग्रीव का संहार किया था और मनु को आदेश दिया था कि वह अपनी सुरक्षा के लिए उन के द्वारा निर्मित नौका में जा बैठे।[27] कुछ परिवर्तित रूप में यही कथा अन्य पुराणों में मिलती है। नीलमत में कथा का पूर्व भाग नहीं है।

1.3.2 कूर्मावतार

नीलमत में कूर्मावतार का प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं हुआ है। विष्णु से सम्बद्ध तीर्थों की सूची में कूर्म, हंस, तथा अश्वशीर्ष तीर्थों का उल्लेख है जिससे कश्मीर में इन अवतारों का ज्ञान सूचित होता है।[28] मत्स्यावतार की भाँति ही कूर्मावतार भी प्रारम्भ में प्रजापति के साथ सम्बद्ध था, बाद में विष्णु से सम्बद्ध

हुआ। शतपथ ब्राह्मण में कूर्म को जलों का पति और वरुण का सहायक बताया है। सम्भवतः वह एक लोकदेवता था जिसे वैष्णव धर्म में प्रवेश मिला।

1.3.3 वराहावतार

नीलमत के अनुसार विष्णु ने वराह रूप में अपनी दाढ़ से पृथिवी को उठाया था और पर्वतों को संचूर्णित कर दिया था।[29] वराह तीर्थ का उल्लेख कई बार हुआ है और इस तीर्थ की यात्रा का फल राजसूय यज्ञ के फल के समान बताया गया है।[30] शतपथ ब्राह्मण, तैत्तिरीय संहिता, तैत्तिरीय आरण्यक तथा रामायण के प्रमुख भाग में वराह अवतार का सम्बन्ध प्रजापति से बताया गया है।[31] विष्णुपुराण, गरुडपुराण और लिंगपुराण भी ब्रह्मा को पृथिवी का उद्धार करने वाला बताते हैं।[32] भागवतपुराण के अनुसार विष्णु ने धरती को उठाने को वराह रूप धारण किया था जबकि अग्नि, मत्स्य और ब्रह्माण्ड पुराणों के अनुसार विष्णु ने यह रूप हिरण्याक्ष राक्षस को मारने के लिए धारण किया था।[33]

1.3.4 हंसावतार

विष्णु से सम्बद्ध हंसतीर्थ का उल्लेख करते हुए नीलमत में विष्णु के हंसावतार को स्वीकार किया गया है।[34] महाभारत तथा पुराणों में भी इस अवतार का उल्लेख है।[35] नीलमत में शिव को भी हंसरूपधर कहा गया है।[36] इसे शैव और वैष्णव सम्प्रदायों के द्वारा लोकदेवताओं को अपने भीतर लाने के प्रयास के रूप में देखा जा सकता है।

1.3.5 अश्वशीर्षावतार

नीलमत में विष्णु से सम्बद्ध अश्वशीर्ष तीर्थ का उल्लेख कश्मीर में इस अवतार की स्वीकृति की ओर संकेत करता है। ब्राह्मण ग्रन्थों में इस अवतार का उल्लेख नहीं है। महाभारत के अनुसार और्व मुनि की क्रोधाग्नि ने समुद्र में गिरने पर हयशिरस् का रूप धारण किया था।[37] हयग्रीव नरकासुर की सेना का अधिनायक था।[38] भागवतपुराण के अनुसार विष्णु ने हयग्रीव दानव का वध किया था। विष्णुपुराण तथा मार्कण्डेयपुराण में कहा है कि विष्णु भद्राश्व में हयशिरस् के रूप में प्रकट हुए।[39] देवीभागवत के अनुसार विष्णु हयग्रीव ने

दानव हयग्रीव का वध किया जबकि कालिकापुराण के अनुसार वह ज्वरासुर था।[40] असमिया भाषा के एक ग्रन्थ मणिकूट से पता चलता है कि मुनि ऊर्व की प्रार्थना पर विष्णु ने मणिकूट पर्वत पर रहने वाले हयासुर का वध किया। जीवन के अन्तिम क्षणों में उसने माधव की शरण ली और प्रार्थना की कि भगवान् उसी का रूप धारण कर मणिकूट पर्वत पर रहें।[41] इन सब वर्णनों से प्रकट होता है कि हयग्रीव जो प्राय: भारतीय साहित्य में एक दानव के रूप में वर्णित है, मूलत: पर्वतीय जातियों का लोकदेवता था जिसे हिन्दू देवसमूह में सम्मिलित किया गया। बौद्ध धर्म में भी इसे अक्षोभ्य से उत्पन्न नौ देवों में एक देव स्वीकार किया गया है[42] तथा लोकनाथ का सहायक माना गया है। सोलहवीं शती के ग्रन्थ योगिनी तन्त्र में विष्णुहयग्रीव को माँस का नैवेद्य देने का उल्लेख भी इस देव के पर्वतीय रूप को प्रकट करता है।[43]

1.3.6 नरसिंहावतार

नीलमत में विष्णु के नरसिंह रूप की स्तुति करते हुए कहा गया है कि उन्होंने अपने नखाग्रों से हिरण्यकशिपु के वक्ष को विदीर्ण किया था।[44] तैत्तिरीय आरण्यक के अन्तिम भाग में इस का उल्लेख मिलता है।[45] हरिवंशपुराण, कूर्मपुराण तथा सौरपुराण के अनुसार विष्णु ने यह अवतार हिरण्यकशिपु के भाई हिरण्याक्ष का वध करने को लिया था जो ब्रह्मा से वरदान पा कर दुर्दमनीय होकर देवों को पीड़ित कर रहा था।[46] हिरण्यकशिपु के पुत्र प्रह्लाद ने प्रारम्भ में तो अपने पिता और चाचा का साथ दिया पर बाद में विष्णु के रूप को पहचानने पर उन्हें युद्ध करने से रोका। हिरण्यकशिपु नहीं माना और विष्णु के द्वारा मारा गया।[47] विष्णु, भागवत तथा पद्म पुराणों में प्रह्लाद को प्रारम्भ से ही विष्णु का भक्त बताया गया है। वहाँ प्रह्लाद को उस के पिता के अत्याचारों से बचाने को ही विष्णु नरसिंहावतार लेते हैं।[48] नीलमत में हिरण्यकशिपु के वध के कारण के विषय में कुछ नहीं कहा है। वहाँ नरसिंह तीर्थ का भी उल्लेख है।[49] कश्मीर से विष्णु की दो सिंहों के मुखों से युक्त मूर्ति प्राप्त हुई है।[50]

1.3.7 वामनावतार

नीलमत में विष्णु से सम्बद्ध तीर्थों में वामन तीर्थ का उल्लेख है। विष्णु

के वामनावतार से सम्बद्ध त्रिविक्रम विशेषण का प्रयोग भी हुआ है।[51] राजा विश्वगश्व के सम्मुख याचकरूप में उपस्थित हुए महापद्म नाग की तुलना बलि के सम्मुख आए वामन विष्णु से की गई है जिससे वामनावतार की कथा का पूर्ण विकास सूचित होता है।[52] ऋग्वेद में विष्णु के तीन कदमों के उल्लेख को इस कथा के बीज रूप में लिया जा सकता है।[53] यह कथा तैत्तिरीय संहिता, शतपथब्राह्मण तथा ऐतरेयब्राह्मण में भी उल्लिखित है,[54] महाभारत तथा पुराणों में इस का परिवर्तित रूप मिलता है।[55]

8. 1.3.7 रामावतार

नीलमत के अनुसार चौबीसवें त्रेतायुग में विष्णु ने रघुकुल में दशरथपुत्र राम के रूप में जन्म लिया था।[56] एक अन्य पद्य में विष्णु से सम्बद्ध रामस्वामी तीर्थ का भी उल्लेख है। राम के जीवन की घटनाओं की चर्चा तो नीलमत में नहीं हुई है पर राम के सन्दर्भ में सीता, लक्ष्मण और शत्रुघ्न का उल्लेख रामकथा से परिचय प्रकट करता है।[57]

9. 1.3.8 कृष्णावतार

नीलमत में कृष्णजन्माष्टमी के उत्सव के प्रसंग में बताया है कि अठाइसवें द्वापर के अन्त में विष्णु ने पृथिवी का भार कम करने को मनुष्य रूप में जन्म लिया था। उस अवसर पर देवकी और यशोदा की पूजा की चर्चा महाभारत और पुराणों में वर्णित उस कथा की ओर निर्देश करती है जिस के अनुसार देवकीपुत्र कृष्ण को जन्म के पश्चात् कंस से बचाने को यशोदा के पास पहुंचा दिया गया था।[58]

विष्णु के कृष्णावतार के उद्भव के विषय में इतने परस्पर विरोधी मत मिलते हैं कि किसी निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन प्रतीत होता है। हापकिन्स कृष्ण को आदिजातीय देव मानते हैं। बार्थ उन्हें राजपूत कुलों के संगठन का कुलदेव स्वीकार करते हैं जिन्हें बाद में वैदिक देव विष्णु से अभिन्न मान लिया गया।[59] कीथ कृष्ण को वनस्पति जगत् के देव से विकसित मानते हैं।[60] कैनेडी एक कृष्ण को वर्षाकालीन सूर्य से और दूसरे कृष्ण को ईसा से सम्बद्ध मानते हैं।[61] आर. जी. भंडारकर का भी यह विचार है कि आभीरों ने गोपाल कृष्ण की अवधारणा ईसा की कथा से ली होगी।[62] वह छान्दोग्योपनिषद् में उल्लिखित

घोर अंगिरस के शिष्य वासुदेव से कृष्ण को भिन्न मानते हैं। उनके मतानुसार वृष्णियों के नेता वासुदेव अपने कार्षायण गोत्र के कारण कृष्ण कहलाए और बाद में उन्हें घोर अंगिरस के शिष्य प्राचीन कृष्ण से अभिन्न मान लिया गया।

किन्तु इस मत में कोई सार दिखाई नहीं देता कि आभीरों ने ईसा की कथा से गोपाल कृष्ण की अवधारणा ली होगी। ईसा के जन्म से बहुत समय पूर्व कृष्ण देवरूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे और ईसा पूर्व द्वितीय शती में पतंजलि ने अपने ग्रन्थ महाभाष्य में आभीरों का उल्लेख किया है।[64] यह भी सम्भव है कि गोपाल कृष्ण की कथाएँ विष्णु के विशेषण गोपा तथा उन से सम्बद्ध भूरिश्रृंगा गायों से विकसित हुई हों।[65] यह भी सम्भावना है कि वैदिक कृष्ण क्षत्रिय योद्धा होने के साथ साथ कवि और धर्मवेत्ता भी थे। उन्होंने अपने गुरु घोर अंगिरस से यज्ञ और ध्यान के महत्त्व को जाना था।[66] देवकी और वसुदेव के पुत्र होने से वह वासुदेव कहे जाते थे पर यह विशेषण उन्हें वैदिक विष्णु से अभिन्न मानने पर अधिक लोकप्रिय हुआ क्यों कि विष्णुरूप सूर्य के साथ कृष्ण नाम का मेल ठीक नहीं बैठता था। जहाँ तक नीलमत का प्रश्न है, इस में कृष्णावतार के विकास की वह स्थिति दिखाई देती है जिस में कृष्ण, वासुदेव, नारायण और विष्णु सभी नाम एक ऐसे देव के लिए प्रयुक्त हैं जिस का पालन गोपों के मध्य हुआ। कथा में राधा तब तक नहीं थी। एक बात यह भी विचारणीय है कि राम और बुद्ध के जन्मोत्सवों में क्रमशः ब्राह्मणों और शाक्यों की पूजा का विधान है परन्तु कृष्णजन्मोत्सव में ब्राह्मणपूजा की चर्चा नहीं है। क्या यह उस काल की स्मृति का अवशेष तो नहीं जब कृष्ण ब्राह्मणों को स्वीकार्य नहीं थे ? कश्मीर में गोपाल कृष्ण की लोकप्रियता पुरातत्त्व से भी पुष्ट होती है। नवम शती के अवन्तिस्वामी मन्दिर में कृष्ण गोपियों के संग दिखाए गए हैं।[67]

1.3.10 बुद्धावतार

नीलमत में बुद्ध को विष्णु का अवतार बताया गया है। विशेष विवरण आगे यहीं बौद्ध धर्म के प्रसंग में देखें।

1.4 विष्णु के विषय में अन्य कथायें।

1.4.1 मधुकैटभवध

नीलमत में विष्णु को मधुसूदन कहा है।[68] कई पुराणों में यह कथा मिलती है। कुछ के अनुसार ये राक्षस विष्णु के कानों के मैल से उत्पन्न हुए और अन्यों के अनुसार उनका जन्म रजस् और तमस् से हुआ।[69]

1.4.2 नरकासुर से युद्ध

नीलमत में नरकासुर से विष्णु के युद्ध का उल्लेख मात्र है। महाभारत और विष्णुपुराण में यह कथा मिलती है कि नरकासुर अदिति की रत्नजटित अंगूठियों को छीनकर प्राग्ज्योतिषपुर ले गया था और उसने देवों, सिद्धों, गन्धर्वों तथा असुरों की कन्याओं का अपहरण किया था। इन्द्र की प्रार्थना पर कृष्ण ने नरकासुर का वध कर कन्याओं को छुड़ाया तथा रत्न भी पुनः प्राप्त किए।[70]

1.4.3 गजेन्द्रमोक्ष[71]

भागवतपुराण में यह कथा चार अध्यायों में वर्णित है। त्रिकूट पर्वत पर घूमते हुए गजेन्द्र को प्यास लगी तो उस ने एक सरोवर में प्रवेश किया जहां मगरमच्छ ने उसे पकड़ लिया।[72] विष्णुधर्मोत्तरपुराण के अनुसार गजेन्द्र और मगरमच्छ पूर्वजन्म में गन्धर्व गायक हाहा, हूहू थे जिन्हें देवल मुनि ने शाप दिया था।[73]

1.4.4 परशुराम के द्वारा केशव की मूर्ति की स्थापना

नीलमत पद्य सं 1212 से 1274 में परशुराम की कथा है जिसने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियरहित किया था। इक्कीसवें आक्रमण में वह क्षत्रियों का पीछा करते हुए कश्मीर तक पहुँचा। वहाँ उसने मधुमती और रजनिर्मला नदियों के पास क्षत्रियों को मार गिराया और वहाँ केशव की मूर्ति की स्थापना की। रौद्रभाव से युक्त राजावास नाम से विख्यात इस मूर्ति की पूजा भी लोग रौद्र भाव से पशुवध द्वारा करते हैं। पितृपूजा के लिए कुरुक्षेत्र जाने पर परशुराम को आदेश मिला कि भयभीत हो कर भागते हुए शत्रुओं की हत्या का प्रायश्चित करने को वह तीर्थयात्रा करे। कई तीर्थों की यात्रा कर वह गृध्रकूट पर्वत के नीचे पहुँचा जहाँ शुद्धा और सरस्वती के संगम में स्नान करने पर उस के हाथ पवित्र हो गए। गृध्रकूट पर्वत पर स्थित आश्रमस्वामी मन्दिर में गोदान करने

को एक ब्राह्मण गाय ले जा रहा था जो पर्वत की चढ़ाई चढ़ती हुई मर गई। ब्राह्मण की प्रार्थना पर परशुराम ने एक वर्ष तक तप करके विष्णु को प्रसन्न किया और गृध्रकूट से वह प्रतिमा नीचे लाकर अपने आश्रम में प्रतिष्ठित की। नीलमत में परशुराम को विष्णु का अवतार न कह कर उनका भक्त बताया गया है। परशुराम द्वारा स्थापित राजावास मूर्ति की पूजा में पशुबलि के उल्लेख से उनका मूल रूप में शैव होना प्रतीत होता है।

1.4.5 जलोद्भववध

इस कथा का वर्णन प्रथम अध्याय में किया जा चुका है।

1.5 लक्ष्मी

नीलमत में लक्ष्मी को क्षीरसागर से उत्पन्न बताया गया है।[74] श्री, लक्ष्मी और करीषिणी नामों से विख्यात वह देवी कश्यप की प्रार्थना पर कश्मीर के लोगों को पवित्र करने के लिए विशोका नदी का रूप धारण करती है।[75] कई उत्सवों जैसे सुखसुप्तिका, रामजन्मोत्सव, इरामंजरीपूजन पर उसकी पूजा का विधान है।[76] चैत्र की शुक्ल पंचमी श्रीपंचमी कही जाती है और उस दिन लक्ष्मी की ही पूजा होती है।[77] उसे उमा और कश्मीरा से अभिन्न कहा गया है।[78] प्रारम्भ में श्री और लक्ष्मी अलग अलग देवियाँ थीं परन्तु नीलमत में यह भेद नहीं है।[79]

1.6 अन्य वैष्णव सम्प्रदाय

देवप्रबोधन उत्सव के प्रसंग में नीलमत में भागवतों और सात्वतों की विशेष पूजा का विधान किया गया है तथा ब्राह्मणों को अपेक्षाकृत गौण स्थान दिया गया है।[80] विष्णु की पूजा पंचरात्रविधान से की जाए यह निर्देश कश्मीर में पञ्चरात्र सम्प्रदाय की लोकप्रियता की ओर संकेत करता है।[81] प्रारम्भ में भागवत और पञ्चरात्र सम्प्रदायों में यह भेद था कि भागवत वासुदेव नारायण को पूजते थे जबकि पञ्चरात्रों में चार व्यूहों वासुदेव, संकर्षण, अनिरुद्ध, और प्रद्युम्न की पूजा का विधान था। कई पुराणों तथा स्मृतियों में पञ्चरात्रों और ब्राह्मणों में परस्पर विरोध भी दिखाया गया है और पञ्चरात्रों के साथ सम्पर्क रखने पर ब्राह्मणों को रौरव नरक का अधिकारी कहा है।[82] बाद में जब इन

सम्प्रदायों के देवों की वैदिक देव विष्णु के साथ अभिन्नता प्रतिष्ठित हो गई तो काफ़ी सीमा तक यह विरोध समाप्त हो गया। नीलमत के समय तक कश्मीर में इन लोकधर्माधारित सम्प्रदायों का वैदिक वैष्णव सम्प्रदाय के साथ सुखद मिलन हो चुका था।

1.7 प्राचीन कश्मीर में वैष्णव धर्म की लोकप्रियता

नीलमत से इंगित वैष्णव धर्म की लोकप्रियता की पुष्टि विष्णुधर्मोत्तरपुराण से भी होती है जिस में कश्मीर को चक्री अर्थात् चक्रधारी विष्णु का स्थान बताया गया है।[83] कल्हण की राजतरंगिणी से भी सूचित होता है कि कश्मीर के बहुत से राजाओं, उनके सम्बन्धियों तथा मन्त्रियों ने विष्णु मन्दिर बनवाए थे। रणादित्य, प्रवरसेन द्वितीय, दुर्लभवर्धन और उसका पुत्र मल्हण, चन्द्रापीड, उसकी पत्नी, उसका गुरु मिहिरदत्त, चन्द्रापीड का नगरपाल चलितक, ललितादित्य और उसकी रानी, कमलावती तथा कई अन्यों ने विष्णु मन्दिरों का निर्माण करवाया था।[84] राजतरंगिणी में यह भी वर्णित है कि ललितादित्य के समय में खुदाई करते हुए केशव की मूर्तियों सहित दो प्राचीन मन्दिर मिले थे।[85] आधारशिला पर अंकित शिलालेख के आधार पर इन्हें राम और लक्ष्मण द्वारा निर्माण कराए गए मान लिया गया था। स्पष्ट है कि उस समय के पण्डित उस लिपि से परिचित नहीं थे अतः यह प्रतीत होता है कि ये मन्दिर ललितादित्य नृप से कई शताब्दी पूर्व के होंगे।

कश्मीर को विष्णु और उस के व्यूहों से सम्बद्ध पाँचरात्र साहित्य की जन्मभूमि माना गया है।[86] कश्मीर की आम जनता पर वैष्णव साहित्य का प्रभाव इस से भी द्योतित होता है कि महान् शैव दार्शनिक आचार्य अभिनवगुप्त ने शैव सिद्धान्तों को एक वैष्णव कृति के रूप में परमार्थसार में प्रस्तुत किया।[87] पुरातात्त्विक प्रमाणों पर दृष्टि डालें तो छठी शताब्दी ईस्वी से ग्यारहवीं शताब्दी तक कश्मीर के कई भागों से विष्णु मूर्तियां प्राप्त हुई हैं।[88] शैली के आधार पर छठी शताब्दी ईस्वी की मानी गई दो लक्ष्मीमूर्तियां श्रीनगर के श्री प्रताप संग्रहालय में सुरक्षित हैं।[89]

2 शैव सम्प्रदाय

नीलमत पुराण के प्रथम दो तिहाई भाग में शिव का स्थान अपेक्षाकृत गौण

प्रतीत होता है जबकि बाद के एक तिहाई भाग में उनकी सर्वाधिक स्तुति की गई है। शिव की अवधारणा में वैदिक रुद्र देवता तथा कुछ अन्य लोक देवताओं का सम्मिलन दिखाई देता है जिन्हें बाद में वैदिक रुद्र से अभिन्न स्वीकार कर लिया गया।

2.1 प्राचीन साहित्य में रुद्र

ऋग्वेद में रुद्र की स्तुति में तीन सूक्त हैं जिन में वह एक संहारक शक्ति के रूप में प्रकट होते हैं।[90] वाजसनेयिसंहिता में उन का अधिक विकसित रूप दृष्टिगोचर होता है। अथर्ववेद में रुद्र, भव, शर्व, पशुपति, उग्र, महादेव तथा ईशान देवों का वर्णन है परन्तु शतपथ ब्राह्मण में अशनि सहित ये सब नाम प्रजापति द्वारा रुद्र को दिए गए हैं।[91] श्वेताश्वतर उपनिषद् में रुद्र को ब्रह्म से अभिन्न कहा है[92] तथा पुराणों में उनको त्रिदेवों में रखा गया है।

2.2 शिव का अवैदिक रूप

शिश्नपूजा शैवसम्प्रदाय का महत्त्वपूर्ण अंग है तथा ऋग्वेद में शिश्नदेवों की निन्दा की गई है।[93] पुराणों में वर्णित शिव द्वारा दक्ष के यज्ञ के ध्वंस की कथा को भी कुछ विद्वान् इस दृष्टि से लेते हैं कि यह एक अवैदिक देव का वैदिक देवों में बलात् प्रवेश पाने का प्रयास था। महाभारत में शिव की उक्ति है कि पाशुपत धर्म कहीं वर्णाश्रमधर्म के समान है और कहीं उसके विपरीत है। वायुपुराण में शिव को असुर कहा है। यह भी संकेत मिलते हैं कि प्रारम्भ में शिव के लिए यज्ञभाग नहीं रखा जाता था।[94], भूतों, राक्षसों, पिशाचों के साथ उनका साहचर्य और पहाड़ों, जंगलों, श्मशानों में निवास भी उनके वन्य चरित्र को प्रकट करते हैं। फ्रेज़र के अनुसार शिव का योगी रूप भी आदिम जनजातियों की देन है।[95] मोहेंजोदड़ो और हड़प्पा से प्राप्त योगासन में पशुपति शिव की मुद्राएँ इसी ओर संकेत करती हैं।[96]

2.3 नीलमत में शिव

नीलमत में शिव को त्रिदेवों में एक मान कर उन के तीन उत्पादक, पालक और संहारक रूपों का वर्णन किया गया है।[97] प्रजापति ने जो आठ नाम शिव को दिए, उन में से केवल चार नाम रुद्र, शर्व, महादेव और भव

नीलमत में मिलते हैं।[98] वहाँ उपलब्ध अन्य नाम हैं- हर, ईश्वर, महेश्वर, शम्भु, शंकर, शिव, विरूपाक्ष, भीम, भुशुण्ड, क्रथ और क्रथन, शीघ्र, महाहंस, समुद्र और महानदीश्वर। इन में से कुछ नाम जैसे भीम, क्रथ और क्रथन भयंकर रूप के द्योतक हैं जबकि अन्य कई मंगलमय रूप को प्रकट करते हैं। वह कपालों की माला और सर्प रूपी यज्ञोपवीत धारण करते हैं। उन का वाहन वृषभरूपधारी धर्म है। वह मस्तक पर चन्द्रमा की कला तथा गंगा को धारण करते हैं। वह ऊर्ध्वलिंग हैं तथा उनका आधा शरीर नारीरूप है। उन्हें जगत् का स्वामी और देवेश कहा गया है। वह अपने आठ शरीरों-यजमान, पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्र, सूर्य, वायु के माध्यम से पूरे विश्व में व्याप्त हैं।[99] उनके अवतारों की ओर संकेत तो किया गया है परन्तु उन का उल्लेख नहीं है।[100] उन से सम्बद्ध जिन कथाओं के प्रति संकेत मात्र मिलते हैं वे हैं- भगीरथ की प्रार्थना पर गंगा को मस्तक पर धारण करना[101], त्रिपुर दानव का संहार,[102] अन्धक दानव का संहार[103] तथा कामदेव का दहन।[104] भूतेश्वर तथा कपटेश्वर इन दो शैव तीर्थों से जुड़ी कथाएँ विस्तार से दी गई हैं। भूतेश्वर तीर्थ की कथा में कहा है कि पुत्ररहित एक ब्राह्मण शिलाद ने सौ वर्ष तपस्या कर के शिव के गण नन्दी को अयोनिज पुत्र के रूप में प्राप्त किया[105] परन्तु उसकी अल्पायु के विषय में जान कर दुःखी हो गया। पिता के दुःख से दुःखित नन्दी ने कालोदक सरोवर के जल में खड़े होकर सौ वर्ष तक रुद्र जप किया। पार्वती की प्रार्थना पर शिव वाराणसी से कालोदक पहुंचे। नन्दी को दीर्घायु का वरदान दे कर वह उसे हरमुकुट पर्वत पर ले गए जहाँ वे दोनों भूतेश्वर और नन्दीश्वर के रूप में प्रतिष्ठित हुए।[106] कपटेश्वर की कथा में शिव काष्ठ के रूप में प्रकट होते हैं जिन्हें छूकर मुनि रुद्ररूप धारण करते हैं।[107]

2.4 शिव का अवैदिक चरित्र

नीलमत में शिव के अवैदिक स्वरूप की कुछ स्मृतियां बची हैं। पिशाचों और राक्षसों के साथ उनका निकट सम्बन्ध है। शिवचतुर्दशी पर पिशाचाधिपति निकुम्भ शिव की पूजा करते बताए गए हैं तथा यह कहा गया है कि उस दिन निकुम्भ और पिशाचों की भी पूजा करनी चाहिए। उनके लिए मछली और माँस आदि से युक्त बलियाँ वृक्षों के नीचे, गलियों, चौराहों आदि के अतिरिक्त सूने घरों, पर्वतशिखरों पर तथा श्मशानों में रखनी चाहिए। शिव को भूतेश्वर

भी कहा है।[108] इस प्रकार शिव के इस स्वरूप में अवैदिक लोकदेवता की झलक दिखाई देती है जिसे वैदिक रुद्र से अभिन्न मान लिया गया था। रुद्र की तो पहले ही अग्नि, वायु, आदित्य आदि देवों से अभिन्नता स्वीकार की गई थी।

2.5 उमा

नीलमत में शिवपत्नी उमा को शिव से भी बढ़ कर स्थान दिया गया है। कश्मीर की भूमि उमा का ही रूप है और उमा ने ही कश्मीर की विख्यात नदी वितस्ता का रूप धारण किया है।[109] हिमालय पर्वत की वह पुत्री पहले नीलवर्णा थी पर बाद में एक पर्वत शिखर पर तप कर के गौरवर्णा हुई। उस शिखर को ही गौरीशिखर नाम प्राप्त हुआ।[110] उमा के विवाह का भी उल्लेख हुआ है तथा कहा गया है कि हर के साथ सम्बन्ध होने पर उसे पवित्र भाव की प्राप्ति हुई।[111] कई अवसरों पर दुर्गा, श्यामा, सती और भद्रकाली आदि नामों से उमा की पूजा का विधान किया गया है।[112] पूजा में फल, मूल, शाक, माँस, बिल्वपत्र आदि भेंट में दिए जाते थे।[113]

2.5.1 उमा की उत्पत्ति

देवी उमा का प्रथम उल्लेख केन उपनिषद् में मिलता है।[114] तैत्तिरीय आरण्यक में उसे रुद्रपत्नी कहा है। वहाँ वह कन्याकुमारी दुर्गि (दुर्गा) से भिन्न है।[115] महाभारत में उमा और दुर्गा एक रूप हो गई हैं। पुराणों में उल्लिखित उमा के विभिन्न नामों के विषय में डा. भण्डारकर का मत है कि ये विभिन्न ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में उद्भूत अलग अलग देवियाँ थीं जिन्हें बाद में अभिन्न मान लिया गया। डा. आर. सी. हज़रा उमा में पृथ्वी आदि वैदिक देवियों तथा शर्वरों, पुलिन्दों, वर्वरों आदि वन्य जातियों के द्वारा पूजित कुछ अवैदिक देवियों का समन्वय मानते हैं।[116]

2, 5, 2 दुर्गा और शारदा

नीलमत में दुर्गा के मन्दिर में पुस्तकों की पूजा का विधान आश्चर्यजनक है क्योंकि पुस्तकों की पूजा तो विद्या की देवी सरस्वती से सम्बद्ध है जो कश्मीर में शारदा नाम से प्रसिद्ध है।[117] यह और भी आश्चर्यजनक है कि

स्थानीय शारदा माहात्म्य के अनुसार वैष्णव भी शारदा को माँस भेंट चढ़ाते हैं। क्या ये तथ्य अलग अलग देवियों के एकीकरण की ओर संकेत नहीं करते हैं?[118]

2.6 शिव के पुत्र

गणेश शब्द नीलमत में केवल दो बार प्रयुक्त हुआ है, एक बार शिव के गण नन्दी के लिए और दूसरी बार उन अनेक मूर्तियों के लिए जिनके नाम तो अलग हैं पर सब के लिए समान विशेषण गणेश प्रयुक्त हुआ है।[119] दीर्घ संस्करण की कुछ पाण्डुलिपियों में धनद चतुर्थी के प्रसंग में तीसरी बार भी गणेश का प्रयोग हुआ है। विनायक का बहुशः प्रयोग प्राचीन कश्मीर में उसकी लोकप्रियता का प्रमाण है।[120] एक बार विनायक शब्द का प्रयोग बहुवचन में हुआ है जो द्योतित करता है कि बहुत से विनायकों का बाद में एक गणपति विनायक के साथ एकीकरण हुआ था।[121] नीलमत में ज्येष्ठ पूर्णिमा के बाद अष्टमी को गणों सहित विनायक की मोदकों से पूजा करने का विधान है।[122] विनायक मन्दिर की यात्रा चतुर्थी पर की जाती है। गणेश विनायक से सम्बद्ध बहुत से तीर्थों का उल्लेख हुआ है[123]। जहाँ तक शिवपुत्र स्कन्द-कार्त्तिकेय की बात है, नीलमत में कार्त्तिकेय शब्द केवल एक बार आया है जबकि स्कन्द तथा कुमार का प्रयोग अनेक बार हुआ है। कार्त्तिकेय के साथ कृत्तिकाओं की पूजा का उल्लेख उस कथा की ओर संकेत करता है जिस के अनुसार उसका पालन कृत्तिकाओं ने किया था।[124] एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अन्य पुराणों की तरह नीलमत में स्कन्द-कार्त्तिकेय का योद्धा का रूप दिखाई नहीं देता। यहाँ वह बच्चों का रक्षक देव है। कहा गया है कि जिस घर में उस की पूजा होती है वहाँ बच्चे रोगी नहीं होते। स्कन्दपूजा में कुक्कुट, बकरे, घण्टे तथा खिलौने की भेंट भी उसका बच्चों के साथ सम्बन्ध प्रकट करती है।[125] शाख, विशाख तथा नैगमेश का उल्लेख स्कन्द के साथ हुआ है।[126] सुश्रुतसंहिता में इन तीनों की गणना बच्चों को प्रभावित करने वाले नौ ग्रहों में की गई है। नैगमेश को अजानन (बकरे के सिर वाला) तथा बच्चों का रक्षक कहा गया है।[127] बच्चे के जन्म से सम्बद्ध संस्कारों में बकरे की भागिता भारतीय लोकधर्म का अंग रही है।[128] नीलमत में स्कन्द की पूजा से जुड़े दस तीर्थों का उल्लेख है।[129]

2.7 कश्मीर में शैवधर्म की लोकप्रियता

नीलमत में वर्णित शैवधर्म शिव और उमा की पूजा का सीधा सरल प्रकार है। शैवधर्म का वह पूर्ण विकसित रूप जो नवम शती के कश्मीर में दिखाई देता है नीलमत में उपलब्ध नहीं होता। शैवसम्प्रदायों का तो उल्लेख नहीं है पर शिवधर्म नाम से ख्यात ग्रन्थों का उल्लेख है।[130] निःसन्देह कश्मीर में प्राचीन काल से शिव की पूजा प्रचलित थी। महाभारत में विशेष रूप से कहा है कि शिव और उमा को कश्मीर में वातिकषण्ड सरोवर पर सन्तुष्ट करना चाहिए।[131] कल्हण की राजतरंगिणी में अनेक बार शिव पूजा तथा राजाओं और उनके मन्त्रियों द्वारा बनवाए गए शिवमन्दिरों का उल्लेख हुआ है।[132]

3 अन्य हिन्दू देवी देवता

विष्णु और शिव से सम्बद्ध देवी देवताओं के अतिरिक्त बहुत से अन्य देवी देवताओं का उल्लेख भी नीलमत में हुआ है जिन में से कुछ तो वैदिक देवसमूह से हैं तथा कुछ लोकधर्म से लिए गए हैं।

3.1 ब्रह्मा

विष्णु और शिव के साथ ब्रह्मा हिन्दू त्रिदेवों में महत्त्वपूर्ण है। नीलमत में भी इसे विशेष स्थान प्राप्त है पर उस के दार्शनिक स्वरूप के कारण ब्रह्मा तथा ब्रह्म की चर्चा आगे के दर्शन के अध्याय में की जाएगी।[133]

3.2 वरुण

नीलमत में वरुण एक मरुत्, एक आदित्य तथा जलों के अधिपति के रूप में प्रस्तुत हुए हैं।[134] विश्व की नैतिक व्यवस्था के नियामक के रूप में उन के चरित्र का अनुमान उन के नरक के साथ हुए उल्लेख से होता है।[135] बलि द्वारा निर्मित वरुणमन्दिर तथा पुलस्त्य द्वारा प्रतिष्ठापित वरुणमूर्ति का नीलमत में उल्लेख है।[136]

3.3. अग्नि

नीलमत में अग्नि की चर्चा अधिकतर यज्ञ की अग्नि के लिए हुई है[137] परन्तु एक बार उसकी आंगिरसी प्रतिमा का भी उल्लेख हुआ है।[138] वेदों,

महाभारत तथा पुराणों में अग्नि को अज कहा है अतः नीलमत में उल्लिखित छागलेश्वर तीर्थ को अग्नि से सम्बद्ध मानना उचित प्रतीत होता है।

3.4 रेवन्त, सुरभि

नीलमत में वरुण और अग्नि का उल्लेख रेवन्त आदि लोक देवों के साथ भी हुआ है। यह कहा गया है कि अश्वपालकों को रेवन्त की पूजा करनी चाहिए तथा गोपालकों को सुरभि की पूजा करनी चाहिए। जिनके पास बकरियां हैं वे अग्नि को पूजें, भेड़ें पालने वाले वरुण की पूजा करें तथा गजपालकों को गणाधिप की पूजा करनी चाहिए। स्पष्ट ही यहाँ लोकदेवताओं को वैदिक देवों के साथ रख दिया गया है।[139]

3.5 यम

नीलमत में मृतकों के राजा यमराज के सात नाम-यम, धर्मराज, मृत्यु, अन्तक, वैवस्वत, काल तथा सर्वप्राणहर दिए गए हैं।[140] महाभारत तथा विष्णुधर्मोत्तरपुराण में उसकी पत्नी के रूप में वर्णित धूम्रोर्णा का उल्लेख तो नीलमत में हुआ है परन्तु यम के साथ उस के सम्बन्ध की चर्चा नहीं है।[141] यम से सम्बद्ध चार तीर्थों का उल्लेख हुआ है।[142]

3.6 इन्द्र

वैदिक साहित्य में इन्द्र का जो उच्च स्थान था वह यहाँ गौण हो गया है। उस के लिए पुरन्दर, शतक्रतु और वासव विशेषण प्रयुक्त हुए हैं परन्तु उन का मूल महत्त्व नहीं रहा।[143] वह शिव और ब्रह्मा के समक्ष नमन करते हैं।[44] प्रौष्ठपद का शुक्लपक्ष इन्द्रपक्ष कहा गया है तथा उन दिनों में गणों, वाहन और आयुधों सहित इन्द्र की पूजा का विधान है।[145] इन्द्र की पत्नी शची का भी उल्लेख हुआ है।[146] पुलस्त्य, भरद्वाज, कश्यप, कण्व तथा अगस्त्य द्वारा निर्मित इन्द्र की मूर्तियों का उल्लेख भी नीलमत में हुआ है।[147] इन्द्र को वर्षा के देव पर्जन्य से अलग मान लिया गया है, यह नीलमत के पद्य सं 461 से स्पष्ट है जहाँ दोनों का एक साथ उल्लेख है। इन्द्र से सम्बद्ध जिन कथाओं की ओर संकेत मिलते हैं वे हैं-गरुड का इन्द्र से सोम ले जाना, इन्द्र का संग्रह से युद्ध करना तथा इन्द्र का इरा को शाप देना।[148]

3.7 सूर्य, चन्द्र

चन्द्रदिवाकरौ अर्कनिशाकरौ जैसी उक्तियों में एक साथ उल्लिखित इन दोनों देवों की पूजा कई अवसरों पर की जाती है। अर्यमा, अर्क, दिवाकर, सूर्य, सविता और मार्तण्ड आदि नामों से आठ से अधिक तीर्थ स्थान सूर्य की पूजा से सम्बद्ध मिलते हैं। वैसे तो सभी सप्तमी तिथियाँ परन्तु विशेषत: मार्गशीर्ष की सप्तमी तिथियों पर सूर्यपूजा का विधान है। नीलमत में इस विषय में कोई प्रमाण नहीं मिलता कि सूर्यपूजा ईरान से आई थी। सूर्यपूजा के लिए मग पुरोहितों का भी उल्लेख नहीं है। चन्द्रमा का औषधियों से सम्बन्ध नीलमत में औषधीश निशानाथ कह कर प्रकट किया गया है।[146] राजा सुचन्द्र द्वारा निर्मित शशांक की मूर्ति का उल्लेख हुआ है।[150]

3.8 कुबेर

यक्षाधिपति कुबेर के दो अन्य नाम वैश्रवण और धनद नीलमत में मिलते हैं।[151] अगस्त्यादि मुनियों के द्वारा निर्मित कुबेर की छः मूर्तियों की चर्चा है जिनके दर्शन से मनुष्य धनवान् हो जाता है।[152] कुबेर को शिव तथा नागराज नील का मित्र बताया गया है।[153]

3.9 बलदेव

बलदेव के प्रसंग में हल की चर्चा से तथा कृष्यारम्भ पर उसकी पूजा के विधान से वह कृषि का देवता प्रतीत होता है। वह वासुदेव का भक्त और अनन्त से अभिन्न बताया गया है।[154]

3.10 छन्दोदेव

स्त्रियों के द्वारा ही छन्दोदेव की पूजा की जाने का विधान है।[155] विष्णुधर्मोत्तरपुराण में कहा गया है कि उसकी पूजा करने से स्त्री को गुणवान् पुत्र की प्राप्ति होती है।[156] कृत्यकल्पतरु में उपलब्ध ब्रह्मपुराण से उद्धृत कथा के अनुसार छन्दोदेव का जन्म ब्राह्मणी माता और शूद्र पिता से हुआ है।[157] यक्षों और पिशाचों के साथ उस के सम्बन्ध का उल्लेख भी है।

3.11 अन्य देवसमूह

नीलमत में कई अन्य देवसमूहों जैसे आदित्यों, वसुओं, साध्यों, विश्वेदेवों तथा मरुतों का उल्लेख है पर उन के विषय में कुछ विशेष विवरण नहीं है।[158]

3.12 देवियाँ

लक्ष्मी और उमा के अतिरिक्त अन्य कई देवियों का भी उल्लेख नीलमत में है। उनमें से बहुत सी तो देवताओं की पत्नियाँ या माताएं हैं। कश्यप की तेरह पत्नियाँ हैं–अदिति, दिति, दनायुषा, सुरभि, खशा, इरा, प्रवा, मुनि, काला, दनु, क्रोधा, कद्रू तथा विनता (पद्य सं 49–54)। इसी प्रकार इन्द्रपत्नी शची तथा रामपत्नी सीता की पूजा का विधान किया गया है। कृष्ण की दोनों माताओं देवकी और यशोदा की पूजा कृष्णजन्माष्टमी पर की जाती है। कुछ भाव भी देवियों के रूप में वर्णित हैं जैसे अनुमति, आयति, नियति, प्रज्ञा और मति। अन्य कई देवियों का भी उल्लेख हुआ है।[159]

3.13 नदी देवियाँ

नीलमत में पाँच महत्त्वपूर्ण नदियों वितस्ता, विशोका, त्रिकोटि, हर्षपथा तथा चन्द्रवती को क्रमशः उमा, लक्ष्मी, अदिति, शची और दिति से अभिन्न बताया गया है। कहा गया है कि कश्यप की प्रार्थना पर इन सब देवियों ने कश्मीर को पवित्र करने को नदियों का रूप धारण किया था।[160] यहाँ यह भी बताना आवश्यक है कि विश्व की बहुत सी प्राचीन संस्कृतियाँ जलों की रोगनाशक और पापनाशक शक्तियों को स्वीकार करती हैं। जलप्रवाहों की गतिशीलता के कारण भी पवित्र वस्तुओं में उन्हें महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है।[162] ऋग्वेद के अनुसार नदी देवियाँ भक्तों को शारीरिक तथा आध्यात्मिक पवित्रता प्रदान करती हैं। वैसे तो नदियों से सम्बद्ध कथाएँ रामायण, महाभारत तथा सभी पुराणों में मिलती हैं[163] परन्तु नीलमतपुराण और विष्णुधर्मोत्तरपुराण की विशिष्टता यह है कि इन में सत्ताईस नदियों का उनके वाहनों सहित उल्लेख है।[164] इन वाहनों की अवधारणा का वास्तविक प्रयोजन क्या रहा होगा यह जानना कठिन है। यह प्रयोजन किसी नदी विशेष के प्रवाह क्षेत्र में किसी जाति के पशुओं का बाहुल्य बताना हो सकता है या किसी नदी विशेष के मन्द अथवा तीव्र, शान्त अथवा उच्चध्वनि युक्त प्रवाह को प्रकट करना हो सकता है या किसी

धार्मिक चिह्न को द्योतित करना हो सकता है। इतना तो निश्चित है कि वाहनों की इस अवधारणा का मूर्तिकला के क्षेत्र में नदी देवियों की मूर्तियों के विकास में योगदान रहा है। कश्मीर घाटी में अभी तक वाहनों सहित गंगा और यमुना की मूर्तियाँ ही मिली हैं। हिमाचल प्रदेश के चम्बा स्थान से प्राप्त साल्ही शिलालेख जिस पर गंगा, यमुना, सरस्वती, वितस्ता, सिन्धु, विपाशा, शतद्रु और सम्भवत: इरावती तथा चन्द्रभागा की मूर्तियाँ अंकित हैं, किसी कश्मीरी लेखक द्वारा लिखा गया था।[165] हो सकता है शिला पर अंकित नदी मूर्तियाँ भी किसी कश्मीरी कलाकार की रचना हों जो नीलमत की परम्परा से परिचित था। इस में कोई सन्देह नहीं कि नीलमत में वर्णित धार्मिक संस्कृति में पावन नदियों का महत्त्वपूर्ण स्थान था।

4 नीलमत में बौद्धधर्म

नीलमत में बुद्ध को विष्णु के अवतार के रूप में माना गया है तथा वैशाख मास के शुक्ल पक्ष में जब चन्द्र का पुष्य नक्षत्र के साथ मेल हो तब बुद्ध का जन्म दिवस मनाने का विधान किया गया है। यह कहा गया है कि बुद्ध की मूर्ति का स्नान औषधियों, रत्नों और गन्धों से युक्त जलों से शाक्योक्त वचनों से कराना चाहिए। बौद्धों के निवास स्थानों की सफेदी करानी चाहिए तथा चैत्यों की दीवारों पर चित्र अंकित कराने चाहिएँ। शाक्यभिक्षुओं को वस्त्र, भोजन, पुस्तकें देकर सम्मानित करना चाहिए। तीन दिनों तक नटों और नर्तकों के संग उत्सव मनाना चाहिए जिसमें विधिपूर्वक नैवेद्य, फूलों और वस्त्रों से बुद्ध की मूर्त्ति की पूजा हो तथा निर्धनों को दान दिया जाए।[166]

4.1 अन्य पुराणों से तुलना

बहुत से पुराणों में बुद्ध को विष्णु के अवतार के रूप में वर्णित किया गया है परन्तु नीलमत का वर्णन अन्य पुराणों से भिन्न चित्र प्रस्तुत करता है। विष्णुपुराण, अग्निपुराण, भागवतपुराण, मत्स्यपुराण, विष्णुधर्मपुराण तथा विष्णुधर्मोत्तरपुराण में बुद्ध अवतार का प्रयोजन असुरों को बौद्धधर्म के सिद्धान्तों का उपदेश दे कर उन्हें वैदिक मार्ग से भटकाना था ताकि वे निर्बल होकर देवों से पराजित हो सकें।[167] इस प्रकार की कथाओं का उद्देश्य लोगों के हृदयों से बौद्धधर्म के प्रभाव को कम करना प्रतीत होता है। इसके विपरीत नीलमत पुराण

में बुद्ध को असुरों का उपदेशक न बता कर उन्हें जगद्गुरु कहा गया है। बौद्धों के प्रति अप्रत्यक्ष रूप से भी विरोधी भाव न दिखाकर उन्हें वस्त्र, भोजन और पुस्तकें भेंट कर सम्मानित करने को कहा गया है। बाद के कश्मीर के लेखकों की कृतियों में बौद्धधर्म के प्रति यह सद्भाव दिखाई नहीं देता। क्षेमेन्द्र के ग्रन्थ देशोपदेश में कहा है कि यज्ञादि क्रियाओं का नाश करने तथा घोर कलियुग का प्रसार करने को केशव ने बुद्ध का रूप धारण किया था।[168] जयरथ तो आदिबुद्ध को असुर कहते हैं।[169] वरदराज के अनुसार नागबोधि आदि नास्तिकों के प्रभाव को कम करने के लिए ही शैवशास्त्र लिखे गए थे।[170] कल्हण ने राजतरंगिणी की प्रथम तरंग में बौद्धों को आगमद्वेषी कहा है जिन्होंने नीलमतपुराण में प्रतिपादित क्रियाओं को समाप्त करा दिया था।[171] यह प्रश्न स्वाभाविक है कि नीलमत में बौद्धों के प्रति इस पक्षपात का कारण क्या है? निश्चित उत्तर देना तो कठिन है पर फिर भी सम्भावित व्याख्या निम्न प्रकार से की जा सकती है।

नीलमत के समय में कश्मीर में विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों में परस्पर सौहार्द था। बौद्धधर्म और हिन्दूधर्म एक दूसरे से प्रभावित तो हो रहे थे परन्तु अभी उन में विरोध के स्वर नहीं उभरे थे। या फिर उस समय तक कश्मीर में बौद्धधर्म इतना प्रभावशाली था कि उस का विरोध करना कठिन था। भारत के अन्य भागों में कुषाणों के शासन के पश्चात् वाकाटकों, भारशिवों और गुप्तों के शासन में बौद्धधर्म का ह्रास और हिन्दुधर्म का उत्थान प्रारम्भ हो गया था। कश्मीर में आठवीं शती के प्रारम्भ तक कोई ऐसा शैव या वैष्णव नृप नहीं हुआ जो बौद्धधर्म के विरोध में खड़ा हुआ हो। कश्मीर के ब्राह्मणों की बौद्धधर्म से प्रतिद्वन्द्विता अद्वैतशैव दर्शन के प्रसार और शंकर के कश्मीर में आगमन पर हुई जब वह शेष भारत में बौद्धधर्म को निरस्त कर वहाँ पहुँचे थे। यह बात भी ध्यान में रखने योग्य है कि अवन्तिवर्मा के नगर अवन्तिपुर से बुद्ध या बोधिसत्व की एक भी मूर्ति प्राप्त नहीं हुई है। कल्हण के अनुसार क्षेमगुप्त ने जयेन्द्र विहार को जला दिया था।[172] कारण कुछ भी रहें हो, सातवीं शताब्दी ई. के बाद कश्मीर में बौद्धधर्म का ह्रास दिखाई देता है।[173] इस प्रकार क्षेमेन्द्र, वरदराज, कल्हण और जयरथ की उक्तियाँ तो उस विचारधारा को प्रकट करती हैं जिस में बौद्ध धर्म को प्रतिद्वन्द्वी माना गया था जबकि नीलमत उस से पूर्व

की स्थिति का द्योतक है जब बौद्धधर्म आदर की दृष्टि से देखा जाता था।

(2) 4.2 प्राचीन कश्मीर में बौद्धधर्म की लोकप्रियता

सम्राट् अशोक के समय से लेकर ललितादित्य के समय तक बौद्धधर्म कश्मीर में लोकप्रिय था इस की पुष्टि कल्हण की राजतरंगिणी से होती है। उस के अनुसार अशोक ने कश्मीर में बहुत से स्तूप बनवाए थे तथा कुषाण नृपों-हुष्क, जुष्क और कनिष्क ने कई विहारों, मठों तथा चैत्यों का निर्माण कराया था।[174] राजा मेघवाहन, उसकी महारानी अमृतप्रभा तथा अन्य रानियों ने बहुत से विहार बनवाए थे।[175] प्रवरसेन द्वितीय के चाचा ने जयेन्द्रविहार बनवाया था।[176] ललितादित्य और उस के अमात्यों ने भी विहारों का निर्माण करवाया था।[177] कल्हण के इस विवरण की पुष्टि ओकांग और ह्यून्त्सांग के यात्रा विवरणों से भी होती है। ओकांग ने अमृतप्रभा द्वारा बनवाए गये विहार को देखा था। ह्यून्त्सांग ने कश्मीर में सौ बौद्ध मठों का उल्लेख किया है तथा ओकांग ने इनकी संख्या तीन सौ बताई है।[178] पुरातत्त्व के प्रमाणों को देखें तो अभी तक आठवीं शताब्दी ई० के ही बौद्ध विहारों के अवशेष प्राप्त हुए हैं और बुद्ध की मूर्तियाँ इस से पूर्व की उपलब्ध होती है।[179]

5 नागपूजा

नीलमत के शीर्षक (नीलनाग का उपदेश) के अनुरूप नागपूजा पर पर्याप्त सामग्री नीलमत में नहीं मिलती परन्तु कावेल का यह कथन भी ठीक नहीं कि ''वर्ष भर में किए जाने वाले पूजा कार्यक्रमों की लम्बी सूची में नागपूजा का अभाव है।[180] ''नीलमत में नागपूजा के उल्लेख पर्याप्त संख्या में मिलते हैं चाहे उस पूजा में अन्य देवता भी सम्मिलित होते हैं। नागपूजा के इस गौण स्थान का कारण नागदेवताओं का विशाल हिन्दू संस्कृति का अंग बन जाना है। इसलिए यह कहना उचित नहीं होगा कि नीलमत में नागपूजा का अभाव है। वस्तुतः वहाँ यह लोकधर्म एक नये वेश में उपस्थित हुआ है।

5.1 नागपूजा का उद्भव

सृष्टि के प्रारम्भ से ले कर मनुष्य का अन्य जीवों के साथ सम्बन्ध रहा

है जिसे नकारा नहीं जा सकता।[181] हितकर या हानि पहुँचाने वाले इन जीवों के प्रति उस के मन में प्रेम और प्रशंसा के या भय के भाव भर जाते थे जिन के कारण उन प्राणियों के साथ धार्मिक सम्बन्धों का प्रादुर्भाव हुआ। अपनी रमणीय और रहस्यमयी गति, चमकती और चुभती दृष्टि तथा मारक विष के कारण नाग ने धार्मिक पवित्रता पाई होगी। इसलिए यह आश्चर्यजनक नहीं कि विश्व की प्रायः सभी प्राचीन सभ्यताओं में नागपूजा के अवशेष मिलते हैं।

5.2 विश्व के विभिन्न भागों में नागपूजा

प्राचीन ईजिप्ट, यूनान, रोम, चीन, जापान, फिनिशिया, तथा अरब देशों के धार्मिक देवसमूह में सर्पों का विशेष स्थान रहा है।[182] आधुनिक समय में भी आस्ट्रेलिया के लोग एक विशाल धार्मिक नाग प्रतीक वोलुमक्वे की पूजा करते हैं। पश्चिम अफ्रीका, पोलिनेशिया, फिज़ी, सैन्क्रिस्टोवल, बोर्नियो आदि देशों में वर्षा तथा समृद्धि के लिए नागों की स्तुति की जाती है।[183]

5.3 भारत में नागपूजा

साहित्यिक प्रमाणों की बात करें तो ऋग्वेद काल के वृत्र सम्भवतः नागपूजक थे जो आर्यों द्वारा स्वीकार्य नहीं थे। परन्तु धीरे धीरे नागपूजा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण समाप्त होता गया। यजुर्वेदसंहिता में पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोक के सर्पों को नमस्कार किया गया है। अथर्ववेद में कई बार सर्पों का उल्लेख हुआ है तथा एक मन्त्र जिस में छः दिशाओं के रक्षकों के रूप में उनकी चर्चा है, ग्रिफ़्थ के द्वारा सभी लोकों के सर्पों को प्रसन्न करने का मन्त्र माना गया है।[184] फोगल के अनुसार लोकपालों तथा दिशाओं के रक्षक गजराजों की अवधारणा का मूल यही दिग् रक्षक सर्प हैं।[185] एन० जे० शेंडे का यह मत है कि सर्पों से सम्बद्ध मन्त्रों में कुछ शब्द जो नितान्त अस्पष्ट हैं, वे सर्पपूजक जातियों की भाषा के हो सकते हैं।[186] तैत्तिरीयब्राह्मण में द्युलोक के सर्पों के लिए मधुमिश्रित हवि देने का उल्लेख है। शतपथब्राह्मण में तथा छान्दोग्य उपनिषद् में सर्पविद्या की चर्चा है।[187] गृह्यसूत्रों में सर्पबलि क्रिया का विवरण है जिसका प्रारम्भ श्रावण पूर्णिमा को तथा समापन मार्गशीर्ष पूर्णिमा को होता है।[188] इस प्रकार यह स्पष्ट है कि गृह्यसूत्रों के समय तक नागपूजा आर्यों के धर्म का अंग बन चुकी थी। यह वन्य सर्पपूजक जातियों

का ही प्रभाव था या इस प्रक्रिया में वैदिक अहिर्बुध्न्य की अवधारणा का भी योगदान था, कहना कठिन है। अधिक सम्भावना दोनों के प्रभाव की है।

रामायण, महाभारत तथा पुराण नागपूजा की शनैः शनैः बढ़ती लोकप्रियता तथा हिन्दुधर्म में इसके अन्तर्भाव की पुष्टि करते हैं। महाभारत में नागोद्भेद, सर्पदेवी, कुरुक्षेत्र, प्रयागादि नागतीर्थों की यात्रा से प्राप्य पुण्य का उल्लेख है। कपिला और मणि नामक नागतीर्थों की प्रशंसा की गई है।[189] इन ग्रन्थों में शैवधर्म और वैष्णवधर्म के देवसमूहों का नागों से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास भी दृष्टिगोचर होता है।

5.3.1 शैवधर्म और नाग

हरिवंश में शेषनाग को शिवपुत्र कहा है।[190] महाभारत में नाग शिव को प्रणाम करते दिखाए गए है।[191] शिव के वस्त्र और शस्त्र आदि के रूप में शेषनाग, एलापत्र, पुष्पदन्त, तक्षक, वासुकि आदि नागों का उल्लेख है।[192] शिवमूर्तियों में नाग प्रमुखता से दिखाई देते हैं। दक्षिण भारत के कुछ मन्दिरों में शिवलिंग के ऊपर दो नाग पूजा करते दीखते हैं।[193] नीलमत में शिव को व्यालयज्ञोपवीती अर्थात् सर्प का जनेऊ धारण किए हुए कहा गया है।[194] शिव के नाम महादेव, शम्भु और भव नागों के भी नाम हैं।[195]

5.3.2 वैष्णवधर्म और नाग

वैष्णवधर्म नागधर्म को अपने में अन्तर्भूत करने में अधिक सफल रहा है। रामायण, महाभारत तथा पुराणों में शेषशायी विष्णु की चर्चा है तथा इस रूप में उनकी मूर्तियाँ सम्पूर्ण भारत में मिलती हैं। वासुदेव के बड़े भाई बलराम की मूर्तियाँ मिश्रित नाग का प्रतिरूप हैं।[196] उसे शेषनाग का अवतार अनन्त कहा गया है। इस की सम्भव व्याख्या यह दी जाती है कि बलराम मूलतः नाग देवता थे पर भागवतों ने जब उन्हें स्वीकार किया तो उन पर कृष्ण के भ्रातृत्व को आरोपित कर जनता को उन के पुराने नागदेवता की नये वेश में पूजा करते रहने का अवसर प्रदान कर दिया। विष्णुपुराण में विष्णु को नागों का अधिपति कहा गया है और यह भी कहा है कि उन्होंने शेष को नागों का राजा बनाया।[197] नीलमत में वैष्णवधर्म का नागधर्म के साथ यह सम्बन्ध अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। बलराम और अनन्त का तादात्म्य तथा

शेषशायी विष्णु के वर्णन के अतिरिक्त इस सम्बन्ध में बहुत सी अन्य रोचक सामग्री भी नीलमत में मिलती है। यह कहा गया है कि अनन्त विष्णु के आदेश का पालन करते हैं,[198] वासुकि नागों को विनाश से बचाने को विष्णु की शरण में जाते हैं।[199] और विष्णु ही नीलनाग को कश्मीर के नागों का राजा नियुक्त करते हैं।[200] नील तथा वासुकि दोनों विष्णु के प्रियपात्र हैं।[201] धार्मिक व्रतों तथा उत्सवों के विषय में निर्देश करते हुए नील चन्द्रदेव को स्पष्ट रूप से बताते हैं कि यह सब निर्देश उन्हें विष्णु से प्राप्त हुए हैं।[202] सबसे अधिक रोचक सूचना हमें नागों के नामों की लम्बी सूची से प्राप्त होती है। उसमें नारायण तथा उनके चारों व्यूह-वासुदेव, संकर्षण, अनिरुद्ध और प्रद्युम्न नागों के रूप में वर्णित हैं।[203] गोपाल, चक्रधर, शत्रुघ्न, राम, लक्ष्मण, हनुमान्, अंगद, महेन्द्र, इन्द्र, जयन्त, अर्जुन, भीष्म, धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर सब नीलमत पुराण की नागसूची में उल्लिखित हैं। यह स्थिति हिन्दूधर्म और नागधर्म में परस्पर आदान प्रदान को प्रमाणित करती है और दिखाती है कि एक ओर नाग हिन्दूधर्म में प्रवेश कर रहे थे तो दूसरी ओर वैष्णवधर्म के देव भी अपनी उच्चपीठ से नीचे उतर कर कश्मीर के नागदेवों के साथ मिल रहे थे। नीलमत में विष्णु स्वयं कश्मीर के निवासियों को स्थानीय नागों की पूजा करने का आदेश देते हैं।[204]

5.3.3. नागदेवताओं का स्वभाव तथा निवास

नीलमत के नागदेवताओं का वर्षा, आंधी, हिमपात पर नियन्त्रण बताया गया है तथा वे प्रायः झीलों, तालाबों और झरनों में रहते हैं। नीलनाग, जल, हिम तथा बौछारों को लाते हैं।[205] महापद्मनाग ने चन्द्रपुर को महापद्मसरोवर में बदल दिया था।[206] नागों का जलों के साथ सम्बन्ध प्रकट करते हुए अनेक प्रसंग प्राचीन भारतीय साहित्य में उपलब्ध होते हैं। इस सम्बन्ध के पीछे क्या कारण हो सकते हैं ? सर्पों का प्रायः जलों के समीप निवास या फिर उनकी रमणीय वक्र गति की नदियों की गति से और आकाश में बादलों की गति से समानता एक कारण हो सकती है। फोगल का सुझाव अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है जो वर्षा के प्रारम्भ के श्रावण मास से शुरु तथा वर्षा के अन्त के मार्गशीर्ष मास में समाप्त होने वाली सर्पबलि पर आधारित है।[207] वर्षा का

मौसम आते ही सर्प प्रायः अपने बिलों से बाहर निकल कर मनुष्यों की बस्तियों की ओर जाते हैं और वर्षा की समाप्ति पर अपने बिलों में लौटते हैं। किन्हीं दो वस्तुओं के एक साथ प्रकट होने पर लोकमानस एक को दूसरे का उत्पत्तिकारण मान लेता है, इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि वर्षा ऋतु के आगमन पर प्रकट होने वाले सर्पों को वर्षा लाने वाले मान लिया गया हो। जब सर्पों को वर्षा और समृद्धि लाने वाले देवात्मा स्वीकार किया गया तो नागधर्म द्वारा एक कदम आगे बढ़कर अन्य देवों को भी नागों में शामिल कर लिया गया।

5.3.4 नीलमत में नागदेवों की पूजा

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि नीलमत के अनुसार भगवान् विष्णु ने ही लोगों को स्थानीय नागों की पूजा करने का आदेश दिया था। बहुत से पर्वों उत्सवों पर नागों की पूजा होती है। प्रथमहिमपातोत्सव में नील तथा स्थानीयनागों की फलों, पुष्पों, धूपादि से पूजा का विधान है।[208] इरामंजरीपूजन के दिन पूजित अन्य देवियों, देवों में नील और स्थानीय नाग भी सम्मिलित हैं। नीलनाग का कथन है "इरा नागों को प्रिय है और मुझे विशेष प्रिय है। जो कोई इरावाटिका में इरा के पुष्पों से मेरी पूजा करता है मैं उस से अत्यन्त प्रसन्न होता हूँ।"[209] इन्द्र पक्ष की शुक्लपंचमी को भी नागों की पूजा का विधान है।[210] देवगृहों की यात्रा की तिथियों में पंचमी, द्वादशी तथा पूर्णिमा नागों के तीर्थों की यात्रा के लिए गिनी गई हैं।[211] किसी भी यात्रा पर जाने से पूर्व यात्री के द्वारा सप्ताह के अलग अलग दिनों पर अलग अलग देवों की पूजा की जाती है। उस में पंचम दिन में स्थानीय नाग की पूजा का विधान है।[212]

इस प्रकार नीलमत के अध्ययन से प्रतीत होता है कि कश्मीर में शैवधर्म, वैष्णवधर्म, बौद्धधर्म, नागधर्म तथा अन्य लोकधर्म साथ साथ पनप रहे थे। एक सम्प्रदाय पर दूसरे सम्प्रदायों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। बहुत से पद्य धार्मिक क्षेत्र में परस्पर सौहार्द तथा समन्वय की भावना को प्रकट करते हैं। हिन्दू देवता, बुद्ध, नाग, पिशाच सभी को कश्मीर के निवासियों से आदर सहित उनको पूजाभाग मिलता रहा है। भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के अनुयायियों को अपने अपने इष्टदेवों की पूजा करने की स्वतन्त्रता दी गई है[213] परन्तु वे

भिन्न भिन्न देव परस्पर एक दूसरे को सम्मान दे कर ऐसे वातावरण की सृष्टि करते दिखाए गए हैं जिसमें सभी सम्प्रदाय घुलमिल गए हैं।[214]

सप्तम अध्याय की टिप्पणियाँ

1. Keith, Religion and Philosophy of the Veda pp. 108-09
   Macddonell, Vedic Mythology pp.37 ff.
   Bhandarkar, R.G. Vais'navism, S'aivism and Minor Religious systems (contained in Collected Works, Vol. IV) p.47
2. ऋग्वेद 7.36.9; 10.184; 1.22.19; 4.18.11; 8.89.12; 8.12.27; 1.156.2-4
3. शतपथ ब्रा. 19.1.1; 1.2.5
4. तैत्तिरीय आ. 10.1
5. महाभा. शान्ति पर्व, नारायणीय खण्ड, Hopkins, Epic Mythology, p.20
6. अष्टाध्यायी. 4. 3. 98
7. Ray Chaudhary, H.C., Early History of the Vais'nava Sect, p.25
8. Sircar D.C., Select Inscriptions, Vol.1 Book II Ch 1 No. 3
9. A. S. I. Vol. V. p.74
10. Sircar D.C. Op. Cit. Vol 1 Book II p.901
11. विष्णु पु. 1.1 31, 1.2.4 आदि; नारद पु. 1. 46. 22-28.; वामन पु. 19.17.25
12. नीलमत पु. 63, 65, 1253-64
13. वही, 194
14. वही, 61, 196, 201, 355 आदि
    Hopkins, Epic Mythology p.206
15. नीलमत पु. 630

16. वही, 64, 1251-52, 1254
17. वही 62
18. वही 1252
19. वही 65, 66, 422-23
20. वही, 71
21. शतपथ ब्रा, 1. 8. 1. 1-6; 7. 51. 5; 14. 1. 2. 11; 1. 2. 5 .1
22. महाभा, 12.31. 9.37; 399.77-90 ; 399.104
23. नीलमत पु. 35-42; विष्णुधर्मोत्तर पु. 3.121.3
24. शतपथ ब्रा. 1. 8.1.1-6
25. Hopkins, Op.Cit.pp.201,210
26. भागवत पु. 11.4.17-18
27. Teste Rao T.A.G. Hindu Iconography, Vol. 1.part 1, pp.125-126 For details see Suryakanta Shastri, The Flood Legend in Sanskrit Literature
28. नीलमत पु. 1206
29. वही, 1255
30. वही, 1203-4, 1411
31. शतपथ ब्रा. 14.1.2.11.; तैत्तिरीय सं 7.1.5.1.; तैत्तिरीय आ 1.10.8; रामायण 2.110.3-4
32. Rao T.A.G. Op.Cit. p.129
33. ब्रह्माण्ड पु. 2, 19, 13; मत्स्य पु, 47.47
34. नीलमत पु. 1206
35. महाभा. 12, 339, 103; अग्नि पु. अध्याय 2-16; विष्णुधर्मोत्तर पु. 1. 180.8.341; 3.226
36. नीलमत पु, 1108, 1112, 1137, 1141

37. Dowson John, Classical Dictionary of Hindu Mythology s.v हयशीर्ष, महाभा 2.83 पृष्ठ 347

38. भागवत पु. 11.4.17

39. विष्णु पु. 2.2.50.; मार्कण्डेय पु. 55

40. देवी भागवत पु. 1.5.; कालिका पु. 81. 76.

41. Teste. Neog Mehes'vara, J.O.R. Madras, XXII pp.32ff.

42. Bhattacharya, B. The Indian Buddhist Iconography, pp.128, 131, 163

43. Teste Neog Mahevara, OpCit

44. नीलमत पु. 1256

45. तैत्तिरीय आ. 10, 1, 6-7.

46. Hopkins, Epic Mythology, pp. 210-11

47. Taste Rao T.A.G. OpCit., p.p. 131-32, 146

48. विष्णु पु. 1, 2, 32, ; पद्म पु. सृष्टिखण्ड अ42-43 ; भागवत पु. 7. 8. 12.

49. नीलमत पु. 191, 268, 1064, 1194, 1198, 1204, 1256, 1342, 1357.

50. J.A.S. XVII pp. 251-53

51. नीलमत पु. 1368

52. वही, 1012

53. ऋग्वेद, 1. 22,17

54. तैत्तिरीय सं 2, 1, 3, 1 शतपथ ब्रा 1, 2, 5, 1 ff; ऐतरेय ब्रा 2, 1, 3, 1.

55. मत्स्य पु, अ 246; महाभा, (गीताप्रैस) पृष्ठ 789-91

56. नीलमत पु, 518-221

57. वही, 562, 947

58. वही, 743-747

59. Hopkins, The Religions of India, p. 388
Barth, Religions of India, pp. 168, 172-3

60. Keith, teste Ray Chaudhary, H.C., Material for the Study of the Early History of the Vaiṣṇava Sect

61. Kennedy, J.R.A.S. (1907) p. 951, (1908) p. 109, 505

62. Bhandarkar, R.G., OpCit. p. 16, 53

63. Hopkins, Epic Mythology, p. 216 fn.

64. महाभाष्य, 1, 2, 3, पाणिनि अष्टाध्यायी के सूत्र 1, 2, 3 पर

65. ऋग्वेद, 1, 22, 18 ; 3, 55, 10, ; 1, 154, 6

66. छान्दोग्योपनिषद्, 3, 17, 1-6.

67. A.S.I., 1913-14 pl. XXVII

68. नीलमत पु. 169, 199, 494, 743, 799, 1247, 1250, 1253

69. ब्रह्मवैवर्त्त पु. 1, 4, 27 ; देवीभागवत पु. 1, 6, 21, पद्म पु. 5. 37. 19 ; मत्स्य पु, 170, 2 ; वायु पु. 25, 3

70. महाभा, 5, 4, 8; विष्णु पु, 5, 29, 11-22

71. नीलमत, पु. 1203

72. भागवत पु. 8, 2, 3, 4, ; 2, 7, 15-16; 3, 19, 35

73. विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 193.

74. नीलमत पु. 283

75. वही, 668, 677, 239, 276, 278, 280-81, 289, 332, 423 आदि

76. वही, 412, 522, 702

77. वही, 668-69

78. वही, 283-84

79. Gonda, J., Aspects of Early Hinduism, p. 214; Hopkins, Op.Cit., p. 224

80. नीलमत पु. 444, 731

81. वही, 433

82. Teste Das Gupta, S.N., A History of Indian Philosophy, III. pp. 19-20

83. वराहं कन्दमाले च कश्मीरेपु चक्रिणम्। विष्णुधर्मोत्तर पु. 3, 125, 10.

84. कल्हण, राजत. 3, 444-58, 350-55, 4. 4, 6, 78-81, 183, 188, 193, 195-98, 201-2, 208, 275.

85. वही, 4. 272-74

86. Schrader, F.Otto, Introduction to the Pancharatra etc., pp. 16, 96-7

87. Chatterji, J.C., Kashmir Shaivism, p. 14

88. Kak, R.C., Ancient Monuments of Kashmir, p.162

89. Kak, R.C. Handbook, pp. 59, 64

90. Keith, Religion and Philosophy of the Veda, p. 132

91. Bhandarkar, R.G., OpCit. pp. 148-49

92. श्वेताश्वतर पु. 1. 10; 3, 10-11 4, 14-15

93. ऋग्वेद, 7, 21, 5 ; 10. 90. 3

94. वायु पु. 30, 112 कूर्म पु. 15. 8

95. E.R.E., s.v. S'aivism

96. Banerjea, J.N., Development of Hindu Iconography, pp. 159-61.

97. नीलमत पु. 181, 184-85, 194, 1129-32

98. वही, 170, 194, 393, 702, 970, 1089-90, 1147 आदि (रुद्र), 314, 368, (शर्व), 188, 190-91 (महादेव), 1202 (भव)

99. वही, 1129-1138

100. वही, 530

101. वही, 1134

102. वही, 1127, 1135

103. वही, 1135

104. वही, 1185, 1263

105. वामन पु. 68. 40 में शिलाद के पुत्र शैलादि का गण के रूप में उल्लेख है।

106. नीलमत पु. 1070 - 1167

107. वही, 1169 - 1191

108. वही, 575, 577 - 80, 1167

109. वही, 314

110. वही 270, 314, 1283-84

111. वही, 1075, 1307, 270

112. वही, 607, 702, 767, 816-19, 999

113. वही, 816-18

114. केन उपनिषद्, 3. 12

115. तैत्तिरीय आ. 10, 18; 10.7

116. Bhandarkar, R.G., OpCit. pp.158-60; 203-6; Hazra, R.C., Our Heritage, Vol IV pp. 74 ff.

117. नीलमत पु. 819

118. शारदामाहात्म्य, पत्र सं. 5 पद्य सं 39 (राजतरंगिणी 1.37 में उल्लिखित शारदा मन्दिर जिसकी पहचान सन् 1892 में स्टाइन ने कृष्णगंगा और मधुमती के संगम के पास पहाड़ी पर स्थित मन्दिर से की थी। यह वही मन्दिर प्रतीत होता है जिसे नीलमतपुराण 819 में दुर्गागृह कहा है तथा 1279 में शाण्डिल्य द्वारा स्थापित बताया है। शारदामाहात्म्य में भी इसे शाण्डिल्य द्वारा निर्मित बताया है। अबुल फज़ल ने आयने अकबरी पृष्ठ 365 पर इसे शारदा कहा है और दुर्गा को समर्पित बताया है।

119. नीलमत पु, 1072, 1030

120. वही, 626, 724, 726, 876, 1026

121. वही, 626

122. वही, 724-26

123. वही, 896-1026-1030

124. वही, 448-49

125. वही, 671-73

126. वही, 627

127. Agrawal, V.S., A Note on the god Naigamesha, J.U.P. Hist. Society Vol XX pp. 69-70 सुश्रुत संहिता कौमारतन्त्र 34.9

128. बाण, कादम्बरी, पी ए वैद्यसम्पादित पैरा 64

129. नीलमत पु. 1031-33

130. वही, 530; भविष्यत् पु. 1, 4, 87-88

131. महाभा. 3, 130, 13

132. कल्हण, राजत. 1. 105-6, 107, 113, 124, 148, 306, 346-48,; 2.14, 62, 123-35, ; 3. 99, 268-80.
350. 439-63

133. देखें नवम अध्याय

134. नीलमत पु. 642, 630, 396

135. वही, 1437

136. वही, 1040-4

137. वही, 398, 400, 408, 428, 449-50, 472, 490, 507, 564, 812 आदि

138. वही, 1035

139. वही, 395-96

140. वही, 505, 1036

141. वही, 623

142. वही, 1036-38

143. वही, 59-60, 74-78, 155, 489, 1034, 1127-28

144. वही, 1114-1125

145. वही, 757

146. वही, 73, 241, 247, 757 आदि

147. वही, 988

148. वही, 59-60, 74-78, 693

149. वही, 561

150. वही, 1045

151. वही, 368, 784, 878, 1364, 1391

152. वही, 1043-44

153. वही, 368

154. वही, 171-74, 189, 561

155. वही, 569-70

156. विष्णुधर्मोत्तर पु. 2, 33, 16.

157. कृत्यकल्पतरु, पृष्ठ 445-46

158. नीलमत पु. 629-45

159. वही, 49-53, 623-24, 746, 521, 537, 560, 1048-53

160. वही, 237-244

161. वही, 237-243

162. Toy, C.H., Introduction to the History of Religion, para 307

163. Hopkins, Epic Mythology, pp. 3-6

164. नीलमत पु. 159-166

165. Vogel, Antiquities of Chamba State, 1 pp.216-20

166. नीलमत पु. 708-715

167. विष्णु पु. 3,18; अग्नि पु. अ.15; भागवत पु. 1.3.24, 2.7.37. 6.8.19.; मत्स्य पु. 47.247.; विष्णुधर्मोत्तर पु. 3.351.54

168. क्षेमेन्द्र, देशोपदेश, 2.6

169. जयरथ, हरचरितचिन्तामणि, 13. 91-92, 17.8-9

170. वरदराज, शिवसूत्रवार्तिकम्, 1.1

171 कल्हण, राजत. 1,177-78

172. वही, 6.171

173. Mitra, R.C., Decline of Buddhism in India. pp. 20ff.

174. कल्हण, राजत. 1.101-3, 1-170

175. वही, 3.8.14

176. वही, 3.355

177. वही, 4.188, 200, 210, 211,214, 259-69

178. Watters Thomas, On Yuan Chwang's Travels in India, Vol.1.p.259; Stein, Notes on Ou-Kong's Account of Kashmir.

179. A.S.R. 1915-1916, p.52; Kak, Hand Book, pp.11-24, 27-34, 38

180. Abstract of the Nilamata by E.B.Cowell in Fergusson's Tree and Serpent Worship, AppendixB, p.251

181. Toy, C.H., Introduction to History of Religions, pp.107ff.

182. E.R.E., XI.pp.402,404

183. Ibid, XI.pp.400, 401

184. ऋग्वेद, 6,29.6, 7.19.4 आदि; यजुर्वेद, 13.6-8; अथर्ववेद, 5.13. 5-6, 6. 56

185. Vogel. Indian Serpent Lore, pp.9-10

186. Shende, N.J., The Foundations of Atharvanic Religion, B.D.C.R.I., XI. P. 200

187. शतपथ ब्रा. 13.4.3.9.; छान्दोग्योपनिषद्, 7.1.4.

188. आश्वलायन गृ. सू. 2.1.3.; आपस्तम्ब गृ.सू. 2.14

189. महाभा. (चित्रशाला प्रैस) 3.82. 113, 3.83, 14-15, 3.84.78,106

190. हरिवंश, 2.74.34

191. महाभा. 7.57.70

192. वही, 7.202.72, 73, 76

193. Fergusson, Tree and Serpent Worship, p.76

194. नीलमत पु. 1138

195. वही, 947, 922, 934.

196. Banerjea, J.N., Development of Hindu Iconography P. 103, A.S.R. 1908-9, P. 113

197. विष्णु पु. 1.22.19, 1.22.7

198. नीलमत पु., 189

199. वंही, 61

200. वही, 72

201. वही, 367

202. वही, 375, 799

203. वही, 922, 924-25

204. वही, 220-25

205. वही, 363

206. वही, 1020-21

207. Vogel, Indian Serpent Lare, P. 11

208. नीलमत पु. 478-79

209. वही, 703-704

210. वही, 757-759

211. वही, 879

212. वही, 883

213. वही, 494

214. वही, 186-188, 200-202

❑❑❑

अष्टम अध्याय

पर्व, उत्सव तथा अन्य धार्मिककृत्य

नीलमत के एक तिहाई से अधिक भाग में नीलनाग द्वारा दिये गये वे निर्देश हैं जिनका पालन कश्मीर के निवासियों के लिए अनिवार्य बताया गया है। ये निर्देश प्रमुखतया कश्मीर में प्रचलित व्रतों, उत्सवों और अन्य धार्मिक कृत्यों के विषय में हैं।[1] व्रत का तात्पर्य यहाँ भोजन या किसी व्यवहार के विषय में निषेधात्मक नियमपालन है और उत्सव किसी देवता, ऋतु या किसी महत्त्वपूर्ण घटना की स्मृति में मनाया जाता है। उत्सवों में व्रत आदि तथा व्रतों में उत्सव के तत्त्वों का मिश्रण होने से इन दोनों के मध्य विभाजक रेखा खींचना बहुत कठिन है। उद्देश्य की दृष्टि से व्रतों को शुद्धिपरक तथा भक्तिपरक वर्गों में रख सकते हैं तथा किसी देवता के उपलक्ष्य में किये जाने पर उन्हें शैव, वैष्णव, शाक्त, सौर आदि वर्गों में रखा जा सकता है। इसी प्रकार उत्सव भी ऋतुसम्बन्धी, ऐतिहासिक या धार्मिक हो सकते हैं और धार्मिक उत्सवों को भी शैव, वैष्णव आदि कहा जा सकता है पर चूंकि नीलमत में वर्णित इन व्रतों तथा उत्सवों में इन सब तत्त्वों का मिश्रण दिखाई देता है अतः यहाँ वर्गीकरण का मोह त्याग कर प्रत्येक व्रत और उत्सव का विवरण तथा विवेचन दिया जा रहा है।

1. व्रतों और उत्सवों का विवरण

1. आश्वयुजी महः अथवा कौमुदी

यह उत्सव रेत के सागर में जा बसे विरोधी पिशाचों को युद्ध में मारने के बाद निकुम्भ के कश्मीर भूमि में लौटने की स्मृति में तीन दिनों तक मनाया जाता है। निकुम्भ के स्वागत में घरों की सफेदी कर उन्हें सजाया जाता है। प्रथम दिन बच्चों और रोगियों को छोड़ कर सभी उपवास रखते हैं। उसी रात को निकुम्भ और अन्य देवों की पूजा के पश्चात् उपवास तोड़ा जाता है। रात भर अग्नि के इर्द गिर्द संगीत और नृत्य चलता है। दूसरे दिन मित्रों के साथ

प्रीतिभोज तथा क्रीड़ा आदि का कार्यक्रम होता है। तीसरे दिन मित्रों के साथ परस्पर एक-दूसरे पर कीचड़ फैंकने, गाली गलौच करने तथा अश्लील वचन बोलने का विधान है। सायंकाल में वे लोग स्नान कर केशव की पूजा करें, ब्राह्मणों का सम्मान करें तथा मित्रों, सेवकों और सम्बन्धियों के साथ भोजन करें ऐसा कहा गया है। सर्दी के छ: मास तक अग्नि को प्रज्वलित रखना और कार्त्तिक मास में घर के बाहर दीप जला कर रखना भी इस उत्सव के अंग हैं।[2] फोगल के अनुसार यह उत्सव और पिशाचप्रयाण का उत्सव मूलत: शीत और वसन्त के आगमन पर मनाए जाते थे।[3] मैं इस विचार से सहमत नहीं क्यों कि प्रथम तो कश्मीर में सर्दी का आरम्भ आश्विन मास से नहीं होता और इसका आरम्भ मार्गशीर्ष में प्रथम हिमपात से तब होता है जब शिशिर और हेमन्त के सम्मान में उत्सव मनाया जाता है[4] और दूसरी ओर जनजाति के रूप में पिशाचों की सत्ता की ऐतिहासिकता निश्चितप्राय: होने से यह तर्कसंगत प्रतीत होता है कि कश्मीर के प्राचीन इतिहास में महत्त्वपूर्ण पिशाचों का आगमन और निर्गमन स्मरणीय माना गया हो।[5] वस्तुत: ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ नीलमत में केशव के सम्मान में मनाये जाने वाले कौमुदी महोत्सव तथा पिशाचराज के निमित्त की जाने वाली निकुम्भपूजा इन दो उत्सवों का मिश्रण हो गया है। कल्हण के समय में इस उत्सव की लोकप्रियता राजतरंगिणी में प्रयुक्त एक उपमा से सूचित होती है जिस में आश्वयुजी उत्सव में परिहास में दी जाने वाली गालियों का उल्लेख है।[6]

2. सुखसुप्तिका

तीन दिनों तक चलने वाले इस उत्सव के ये अंग हैं :

कार्त्तिकी अमावस्या को रोगियों और बच्चों को छोड़ कर सब के लिए उपवास का विधान, सायंकाल में करीपिणी (लक्ष्मी) का पूजन, देवमन्दिरों, चौराहों, श्मशानभूमियों, नदियों, पर्वतों, गृहों, वृक्षों के नीचे, गोशालाओं, चरागाहों में दीप जलाना, दुकानों की सजावट करना, नये वस्त्र पहन कर मित्रों, सम्बन्धियों, ब्राह्मणों और सेवकों के साथ भोजन करना, दूसरे दिन द्यूतक्रीड़ा करना, प्रीतिभोज, संगीत सुनना, शय्याकक्षों को दीपों, रत्नों तथा सुगन्धित पदार्थों से सजाना तथा अगले दिन ब्राह्मणों, मित्रों, सम्बन्धियों और सेवकों को नये वस्त्र भेंट देना।[7] नीलमत के बृहत् संस्करण की पाण्डुलिपियों में इस

विवरण के अन्त में उत्सव का नाम दीपमाला दिया है। इस उत्सव का सुखसुप्तिका नाम तथा विवरण दोनों दीपावली के इतिहास को जानने के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। वात्स्यायन के कामसूत्र में यक्षरात्रि उत्सव का उल्लेख है जिस की व्याख्या यशोधर ने ''यक्षरात्रीति सुखरात्रि:'' कह कर की है।[8] वर्षक्रियाकौमुदी, कृत्यतत्त्व, तथा धर्मसिन्धु ग्रन्थों में दीपमाला को सुखरात्रि कहा है।[9] हेमचन्द्र ने देशीनाममाला में जखरत्ति का पर्याय दिवाली दिया है।[10] हेमाद्रि ने आदित्यपुराण से कुछ पद्य उद्धृत किये हैं जिन में इसे सुखसुप्तिका कहा है।[11] ये पद्य वस्तुत: आदिपुराण (ब्रह्मपुराण) से हैं जिसे भूल से हेमाद्रि ने आदित्यपुराण कह दिया है। ये प्रमाण सिद्ध करते हैं कि वात्स्यायन के कामसूत्र की यक्षरात्रि तथा हेमचन्द्र की देशीनाममाला की जखरत्ति ही नीलमत की सुखसुप्तिका और दीपमाला है। यह निष्कर्ष निकालना भी अनुपयुक्त नहीं होगा कि यह आनन्दमय उत्सव मूलत: यक्षपूजा से सम्बद्ध रहा होगा जिस के चिह्न कश्मीर में तथा देश के अन्य भागों में भी मिलते हैं।

3. देवोत्थान

आषाढ मास में देवप्रस्वापन होता है जब भगवान् विष्णु को सुलाया जाता है। उसके चार मास पश्चात् कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष में पाँच दिन तक देवोत्थान उत्सव चलता है। एकादशी की रात को जागरण कर के विष्णु को गीत, नृत्य, वाद्य, ब्रह्मघोष, वीणा और पटह की ध्वनियों, पुराणों के पाठ, स्तोत्रों के प्रकीर्तन, नाटकों के आयोजन और भूमि की सजावट आदि से जगाकर और उनकी प्रतिमा की पूजा पुष्प, धूप, विविध प्रकार के नैवेद्य आदि से की जाती है। दूसरे दिन विद्वान् पण्डित द्वारा स्वयं नदी में स्नान कर के प्रतिमा या चित्र को पंचरात्रविधान से विधिपूर्वक माखन, तैल, शहद, दूध, दही आदि पंचगव्यों से स्नान कराने का विधान है। उसके पश्चात् नाना प्रकार के चूर्णों, औषधियों, गन्धों, बीजों, रत्नों तथा नाना स्थानों की मिट्टी से उद्वर्तन दे कर तथा स्नान करा कर अलंकृत कर के गोविन्द की पूजा पुष्पों, दीपों, खीर आदि से करने का विधान है। फिर रत्नों और अन्न से भागवतों की पूजा कर के बाद में अग्निहोत्र कर के ब्राह्मणों की पूजा अपने सामर्थ्य अनुसार वस्त्रों, भूषणों, रत्नों, गायों, अश्वों, हाथियों और धन आदि से करनी चाहिए। त्रयोदशी के दिन अभिनेता, मल्ल तथा स्तुतियां गाने वाले भट्टों को यथाशक्ति

सम्मानित करना चाहिए। चतुर्दशी को उपवास रखने या केवल दूध पर रहने का विधान है। पूर्णिमा को देवों के देव जनार्दन की पूजा होती है। उस दिन उपवास रख कर चन्द्र के उदित होने पर कृत्तिकाओं, कार्त्तिकेय, खड्ग तथा वरुण की पूजा गन्ध, धूप, खाने की विविध वस्तुओं से करने का विधान है। पूरे कार्त्तिक मास में प्रज्वलित करके रखा गया दीपक जल में प्रवाहित कर दिया जाता है। ब्राह्मणों को रत्नजटित नेत्रों वाली रेत की मछली तथा वस्त्रों और अन्न सहित बैल दान में दिया जाता है। इन पांचों दिनों में प्रतिदिन नदी में स्नान करने का तथा शाकाहार भोजन करने का विधान है।[12] कुछ अन्य पुराणों में विष्णु के साथ अन्य देवों का भी आषाढ में प्रस्वापन तथा कार्त्तिक में प्रबोधन वर्णित है जो बाद का विकसित विचार प्रतीत होता है।

4. नवसंवत्सर महोत्सव

कार्त्तिकी पूर्णिमा के दूसरे दिन अर्थात् कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को नवसंवत्सर मनाया जाता है क्योंकि उस दिन कश्यप ने कश्मीर का निर्माण किया था। उस दिन सुगन्धित लेप कर नये वस्त्र पहन कर प्रसन्नता से सब लोगों के साथ संगीत तथा खाने पीने का कार्यक्रम करना चाहिए।[13]

5. सप्तमीत्रय

(मार्गशीर्ष), माघ और आषाढ के शुक्लपक्ष की सप्तमी तिथियों में सूर्य की पूजा का विधान किया है परन्तु पूजा की विधि से सम्बद्ध पंक्तियाँ नीलमत में नहीं मिलतीं। जापान के क्योटो विश्वविद्यालय से 1994 ई. में प्रकाशित आदिपुराण में मार्गशीर्ष के शुक्ल पक्ष की सप्तमी को मित्रसप्तमी कहा है तथा पूजा की विधि भी बताई है जिस में उपवास, मूर्ति का स्नान, गीत नृत्य सहित रात्रिजागरण, होम, जप, ब्राह्मणों, दीनों तथा अनाथों का तर्पण सम्मिलित हैं।[14]

6. मार्गशीर्ष पूर्णिमा

इस दिन रात को श्वेत पुष्पमाला, अन्न, विविध भोज्यपदार्थों से चन्द्र की पूजा करके उपवास तोड़ा जाता है तथा ब्राह्मणों की पूजा की जाती है। अपनी बहन, बुआ, मित्र की पत्नी तथा सुभगा ब्राह्मणी को लालवस्त्रों के जोड़े देकर सम्मानित किया जाता है।[15]

7. नवहिमपातोत्सव

कश्मीर में विशेष रूप से मनाए जाने वाले इस उत्सव के ये अंग हैं- हिमवान्, हेमन्त, शिशिर, स्थानीयनाग, नागराज नील तथा श्यामा देवी की पूजा, उपवास, घी में पकाए कुल्माष का भोजन ब्राह्मणों को देना, संगीत सुनना, गणिकाओं का नृत्य देखना तथा स्त्रियों की पूजा। उस दिन लोग भारी ऊनी वस्त्र पहन कर हिम पर बैठते हैं तथा मद्य पीने के शौकीन नये मद्य का पान करते हैं।[16]

8. अष्टमीत्रय

पौष मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी में शाक से, माघ मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी में माँस से तथा फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष की अष्टमी में पूओं से श्राद्ध करने को कहा गया है। इन्हीं मासों की नवमी तिथियों में स्त्रियों का श्राद्ध करने का विधान है।[17]

9. पौष पौर्णमासी

जब पौष पौर्णमासी पुष्य नक्षत्र से युक्त हो तब नारायण, शक्र, सोम, पुष्य और बृहस्पति की पूजा पुष्पमालाओं तथा भोज्यपदार्थों से की जाती है। इन देवों के मन्त्रों से हवन करके ब्राह्मणों को धन देने तथा पुरोहित को नये रेशमी वस्त्र देने का विधान है। घी मिश्रित खीर इस दिन खाई जाती है। पूजा करने वाले को पूजा से पूर्व अपने शरीर पर सरसों का लेप तथा घी की मालिश कर के औषधियुक्त जल से स्नान करना चाहिए।[18]

10. उत्तरायण

इस कृत्य के भाग हैं-विष्णु अथवा शिव की शैलनिर्मित मूर्ति को घृत से स्नान कराना, वैसी ही घृत की मूर्ति बना कर तीन मास तक उस की पूजा करना, यथाशक्ति ब्राह्मणों को इन्धन का दान देना तथा गायों के लिए घास का दान करना।[19]

11. तिलद्वादशी

माघ मास के कृष्णपक्ष की द्वादशी को किए जाने वाले इस कृत्य में

उपवास के पश्चात् तिलों से स्नान, तिल मिश्रित जल देना, तिलों का नैवेद्य, तिलों का होम तथा ब्राह्मणों को तिलों का दान दिया जाता है।[20]

12. तारारात्रि

माघ मास के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को इस दिन किसी नदी या सरोवर में स्नान करके यम के सात नामों से जलांजलि देनी चाहिए। तत्पश्चात् फूलों, धूप, गन्ध तथा खिचड़ी से धर्मराज की पूजा करने, घृतमिश्रित तिलों से हवन करने तथा ब्राह्मणों को खिचड़ी खिला कर दक्षिणा देने का विधान है।[21]

13. श्रवणामावस्या

श्रवण नक्षत्र से युक्त माघ मास की अमावस्या पर स्नान करना पुण्यप्रद माना गया है।[22]

14. चतुर्थीत्रय

माघ, आश्वयुज् तथा ज्येष्ठ मासों के कृष्णपक्ष की चतुर्थी तिथियों पर उमा का पूजन दीप, धूप, माला, अन्न, अदरक, गुड़ आदि से करने का विधान है। इन तिथियों में सौभाग्यवती स्त्रियों तथा बहनों को कुसुम्भ, लवण, कुंकुम, अंजन, कंघा और कुन्द पुष्पों से सम्मानित किया जाता है।[23]

15. माघपूर्णिमा

इस दिन तिलों से श्राद्ध करने तथा कौओं के लिए प्रभूत मात्रा में अन्नबलि देने का विधान किया गया है।[24]

16. स्वल्पमहीमान

माघ मास की पूर्णिमा के पश्चात् अष्टमी से लेकर तीन दिनों तक स्वल्पमहीमान उत्सव मनाया जाना चाहिए। चौबीसवें त्रेता युग में हरि दशरथपुत्र रघुनन्दन राम के रूप में मनुष्य रूप धारण करेंगे। उस समय स्वल्पमहीमान मनाना चाहिए। अष्टमी के दिन सभी प्रकार के अनाज से चरु बनाकर उस चरु तथा पूओं से ब्राह्मणों, सम्बन्धियों और बान्धवों की पूजा करनी चाहिए। राम की पत्नी सीता की पूजा प्रयत्नपूर्वक करनी चाहिए। नवमी के दिन पिसे हुए अन्न से बना मधुमिश्रित भोजन ब्राह्मणों को कराना चाहिए तथा लक्ष्मी

की पूजा करनी चाहिए। दशमी के दिन बहुत प्रकार का भात तैयार कर उसे ब्राह्मणों, मित्रों और अनुयायियों को खिलाना चाहिए। आत्मपूजा करते हुए स्वयं संगीत सुनना चाहिए।[25] इस महीमान के प्रसंग में विष्णु के रामावतार का उल्लेख है परन्तु राम की प्रतिमा की पूजा का उल्लेख नहीं है।

17. श्रवणद्वादशी

फाल्गुन मास के कृष्णपक्ष की श्रवणनक्षत्रयुक्त द्वादशी में उपवास कर के विष्णु की पूजा तिलों से करने का विधान है।[26]

18. शिवरात्रि

फाल्गुन मास के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को शिवलिंग की पूजा उसी प्रकार की जाती है जैसे देवोत्थान उत्सव में विष्णु की पूजा का विधान है। दिन में उपवास कर के रात्रि में जागरण किया जाता है तथा शिवधर्म और शिव के अवतारों की कथाएँ सुनी जाती हैं। शंकर के नैवेद्य में आटे के पशु बनाए जाते हैं। अमावस्या को भी देवपूजा की जाती है तथा कुल्माष का भोजन किया जाता है।[27]

19. बृहद् महीमान

फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष की अष्टमी, नवमी तथा दशमी तिथियों में यह उत्सव मनाया जाता है। अष्टमी को उपवास रख कर सायंकाल को दीप जलाकर हिम पर रखने का, नवमी को गृहों को धान्यमालाओं से सजाने का तथा सीता की पूजा गन्ध माल्यादि से करने का विधान है। यहाँ सीता कृषि की देवी प्रतीत होती है। इस दिन नित्य दिये जाने वाले पक्वान्न को छोड़ कर अन्य कुछ दान में नहीं दिया जाता। दशमी को स्वयं को अलंकृत करने, मद्य या अन्य पेय पीने का तथा स्त्रियों के संग क्रीड़ा करने का विधान है।[28]

20. फाल्गुनी पूर्णिमा

यह उत्सव फाल्गुनी पूर्णिमा से ले कर चैत्र के कृष्णपक्ष की पंचमी तक चलता है। इस उत्सव के ये मुख्य अंग हैं.. सूर्य और चन्द्र की पूजा, संगीत सुनना, नाटक देखना, स्वयं को अलंकृत करना तथा पर्पट युक्त भोजन

करना।[29] आदिपुराण (ब्रह्मपुराण) में कहा है कि फाल्गुनी पूर्णिमा को ही कश्यप और अदिति से अर्यमा तथा अत्रि और अनसूया से चन्द्र की उत्पत्ति हुई थी।

21. राज्ञीस्नापन

कश्मीर की भूमि का प्रतिनिधित्व करने वाली कश्मीरा देवी चैत्र मास के कृष्णपक्ष की पंचमी से लेकर अष्टमी तक तीन दिन रजस्वला मानी जाती है। अत: इन तीन दिनों में उस को उबटन लगाते समय प्रयुक्त वस्त्र तथा नैवेद्य प्रदान करने चाहिए परन्तु पुष्प धूपादि अलंकार की वस्तुएँ नहीं देनी चाहिएं। नैवेद्य में दूध और दूध से बने पदार्थ भी वर्जित हैं, यह सब वस्तुएँ अष्टमी को स्नान कराने के बाद भेंट की जाती हैं। कश्मीरा देवी की पूजा पुरुषों द्वारा नहीं अपितु स्त्रियों द्वारा की जाने का विधान है। अष्टमी को पहले स्त्रियाँ मूर्ति को स्नान कराती हैं, बाद में ब्राह्मण औषधियों से स्नान कराते हैं। अग्निपूजा, ब्राह्मणपूजा, मित्रों के घर भोजन भेजना, संगीत सुनना आदि इस उत्सव के मुख्य अंग है।[30] आदिपुराण में इस उत्सव के नाम की व्याख्या करते हुए पृथिवी को सूर्य की महिषी बताया गया है।

22. कृष्यारम्भ

चैत्र के कृष्णपक्ष की अष्टमी के पश्चात् किसी भी शुभ दिन कृषि आरम्भ करने का उत्सव मनाया जा सकता है। इस अवसर पर खेत को तैयार कर बीज बोने से पहले पृथिवी देवी, बैलों की जोड़ी, गाय, घोड़े, बलदेव, महादेव, सूर्य, चन्द्र, पर्जन्य, इन्द्र, प्रचेता, राम, लक्ष्मण, सीता, शेषनाग, ब्रह्मा, कश्यप, अग्नि, वायु, आकाश इन सब की पूजा पुष्पमाला, गन्ध, धूप और नैवेद्य से करनी चाहिए। तत्पश्चात् हवन कर के और ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर शुभ लक्षणों से युक्त पुरुष सुवर्ण से पवित्र किये जल से सिक्त बीजों को मंगल ध्वनियों के साथ धरती में डाले। फिर खेत में ही मित्रों, पत्नी और आश्रित जनों के साथ संगीत नृत्य भरा उत्सव मनाना चाहिए।[31]

23. छन्दोदेवपूजा

फाल्गुनी पूर्णिमा के पश्चात् कृष्णपक्ष की एकादशी और द्वादशी को

छन्दोदेव की पूजा स्त्रियाँ मछली आदि जलजीवों के माँस, नानाप्रकार के खाद्य पदार्थों, मालाओं, धूप तथा सुगन्धित केसर से करती हैं। द्वादशी के दिन छन्दोदेव की पूजा कर के उन्हें द्वार से बाहर ले जा कर पुन: गवाक्ष से भीतर ला कर कहीं भी रखा जाता है।[32]

24. पिशाचचतुर्दशी

चैत्र के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन पिशाचों के नेता निकुम्भ अपने अनुयायियों के साथ शंकर की पूजा करते हैं। अत: उस दिन शंकर और निकुम्भ दोनों की पूजा का विधान है। पिशाचों के निमित्त मछली, माँस आदि आमिष भोजन चौराहों पर, नदियों के किनारे, पर्वतशिखरों पर, श्मशान आदि अनेक स्थानों में रखने का विधान है। बालकों की विशेष रक्षा तथा गणिकाओं के साथ गीत नृत्य करते हुए रात भर जागरण भी इस उत्सव की विशेषताएँ है।[33]

25. चैत्री अमावस्या

इस दिन श्राद्ध किया जाता है तथा कुत्तों को भोजन दिया जाता है।[34]

26. नवसंवत्सर

चैत्र मास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा सृष्टि का प्रथम दिवस माना गया है। उस दिन अग्निपूजन और ब्राह्मणपूजा के साथ नाना प्रकार के पुष्पों, गन्ध, धूप, वस्त्रों आभूषणों से ब्रह्मा की पूजा करनी चाहिए। उसी दिन काल की गणना प्रारम्भ हुई थी इस लिए काल की पूजा भी करनी चाहिए। लक्ष्मी की प्राप्ति और रक्षा के लिए महाशान्ति का अनुष्ठान करना चाहिए। जिन की पूजा इस दिन अभीष्ट है, वे हैं-ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, ग्रह, नक्षत्र, संवत्सर आदि काल के सभी अंग, काल, कल्प, चौदह मनु, चौदह देवेन्द्र, ऋषि, दक्ष की पुत्रियाँ तथा अन्य देवियाँ, सात द्वीप, सात समुद्र, भारतवर्ष सहित नौ वर्ष, भारतवर्ष के नौ भेद, सात लोक, सात पाताल, पाँच महाभूत, मन, बुद्धि, आत्मा, अव्यक्त पुरुष, पर्वत, नदियाँ, विनायक, अप्सराएँ, आदित्य, वसु, रुद्र, विश्वेदेव, अश्विनीकुमार, भृगु, अंगिरा, साध्य और मरुत् आदि। इस दिन वर्ष, मास और दिन ज्योतिषी के मुख से सुनना चाहिए तथा

ब्राह्मणों और सम्बन्धियों को भोजन कराना चाहिए।[35]

27. श्रीपंचमी

सभी पंचमी तिथियों पर विशेषत: चैत्र की शुक्लपंचमी पर श्री की पूजा करनी चाहिए। श्रीपूजक जीवन भर समृद्धि से युक्त रहता है तथा मृत्यु के पश्चात् विष्णुलोक को प्राप्त करता है।[36]

28. चैत्रषष्ठी

चैत्रमास के शुक्लपक्ष की षष्ठी स्कन्द की पूजा के लिए निर्धारित है। षष्ठी को स्कन्द की पूजा करने वाले के घर में बच्चे रोगरहित रहते हैं।[37]

29. चैत्रनवमी

चैत्र मास के शुक्लपक्ष की नवमी तिथि में उपवास किया जाता है तथा भद्रकाली की पूजा पुष्प, धूप, अन्न आदि से की जाती है।[38]

30. वास्तुपूजा

चैत्रमास के शुक्लपक्ष की एकादशी को वास्तुकला के अधिपति वास्तुदेव की पूजा पुष्प, धूप, अलंकार और विविध शाकों से की जाती है। इस दिन अग्निपूजन और ब्राह्मणों की पूजा भी करनी चाहिए।[39]

31. चैत्रद्वादशी

चैत्रमास के शुक्लपक्ष की द्वादशी को उपवास कर के विधि पूर्वक वासुदेव की पूजा करनी चाहिए।[40]

32. मदनत्रयोदशी

चैत्रमास के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी को मनाए जाने वाले इस उत्सव के ये अंग हैं– वस्त्र पर अंकित किए गए कामदेव के चित्र की पूजा करना, पुरुषों द्वारा स्वयं को अलंकृत कर घर की स्त्रियों को सम्मानित करना, द्वादशी को कामदेव के समक्ष रखे गए घट के जल से पति द्वारा अपनी पत्नी को स्नान कराना।[41]

33. पिशाचप्रयाण उत्सव

चैत्री पूर्णिमा को पिशाच प्रयाण उत्सव का प्रारम्भ होता है इसमें निकुम्भ रेत के मैदानों में वास कर रहे पिशाचों के साथ युद्ध करने के लिए प्रयाण करता है। हर घर में पिशाच की मिट्टी या घास की मूर्ति बनाकर दुपहर के समय और रात को चन्द्रोदय के समय उसकी पूजा की जाती है। फिर वाद्ययन्त्रों के वादन और गीतों के द्वारा तथा ब्राह्मणों से उच्चरित स्वस्त्ययन के द्वारा उसे विदा किया जाता है। दूसरे दिन लोग निकट के पर्वत पर चढ़कर पिशाचों का अनुसरण करते हैं तथा संगीतोत्सव मनाते हैं।[42]

34. इरामंजरीपूजन :

पिशाचप्रयाण के पश्चात् इरापुष्पों के खिलने पर इरामंजरीपूजन होता है। इरा नाम की अप्सरा इन्द्र के शाप के कारण इन्द्रसभा से निष्कासित होकर हिमाचल पर्वत पर जडत्व को प्राप्त हुई। पिशाच के चले जाने के बाद उसका शरीर अनेक भागों में विभक्त हो गया। इस उत्सव के ये अंग हैं-पत्नी, पुत्रों को साथ लेकर इरा-उद्यानों में जाना, इरादेवी की पुष्पों, दीपों, और अन्न से पूजा करना, इरा वाटिका में मिलकर भोजन करना, स्त्रियों, ब्राह्मणों, मित्रों और बान्धवों को इरा पुष्पों और इरा पुष्पों की मालाओं से सम्मानित करना, इरा पुष्पों से युक्त पेय पीना, इरा पुष्पों के द्वारा केशव, रुद्र, ब्रह्मा, सूर्य, चन्द्र, लक्ष्मी, दुर्गा, नागों तथा नागराज नील की पूजा करना।[43]

35. अक्षयतृतीया

वैशाखमास के शुक्लपक्ष की द्वितीया को उपवास करके तृतीया के दिन यवों से हवन कर के ब्राह्मण को यव देने चाहिएँ। विष्णु का पूजन यवों से करके स्वयं यवों का भोजन करना चाहिए, गंगा का पूजन करना चाहिए।[44] इस दिन जो जप, होम, श्राद्ध, तप, स्नान आदि किया जाता है वह सब अक्षय होता है। इस दिन दिया गया थोड़ा सा दान भी अक्षय होता है।[45]

36. बुद्धजन्ममह

इस का वर्णन पूर्व अध्याय में दिया जा चुका है।[46]

37. वैशाखपूर्णिमा

इस दिन तिलों से स्नान, होम और श्राद्ध किया जाता है। पाँच या सात ब्राह्मणों की मधुयुक्त तिलों से पूजा की जाती है। धर्मराज की पूजा भी की जाती है।[47]

38. यवाग्रायण

औषधियों के राजा माने गये जौ की फसल पकने पर यवाग्रायण उत्सव मनाया जाता है। इस दिन देवताओं और पितरों की पूजा यवान्न से की जाती है। सजधज कर वाद्यवादन और ब्राह्मणों की घोष ध्वनि के साथ जौ से तैयार भोजन किया जाता है।[48]

39. विनायकाष्टमी

वैसे तो सभी अष्टमी तिथियाँ विनायक की पूजा के लिए निर्दिष्ट हैं परन्तु आषाढ़ मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी में गणों सहित विनायक की पूजा लड्डुओं के ढेर से, गन्धों, मालाओं तथा कुल्माषों से करनी चाहिए। गीत वाद्य भी होना चाहिए तथा ब्राह्मणों को प्रसन्न करना चाहिए।[49]

40. स्वातियोग

जब आषाढ़ मास में स्वाति नक्षत्र का योग हो तब वायुदेवता की पूजा विविध पुष्पों, मालाओं, गन्धों, बहुत सी खीर तथा नाना प्रकार के सत्तुओं से करनी चाहिए।[50]

41. देवप्रस्वापन

आषाढ़ मास के शुक्लपक्ष के अन्तिम पाँच दिनों में गीत और वाद्य से युक्त यह उत्सव मनाया जाता है। इस में एकादशी और चतुर्दशी को धनहोत्र किया जाता है तथा दो रात का जागरण होता है। द्वादशी और पंचदशी को ब्राह्मणों और सात्वतों की पूजा की जाती है। त्रयोदशी को नाट्याभिनय करवाया जाता है और रंगजीवियों को सामर्थ्य के अनुसार धन दिया जाता है।[51]

42. वैश्वदेवपूजा

आषाढ़ मास के अन्त में जब वैश्वदेव नक्षत्र का योग हो तब वायु देवता

के विषय में बताई विधि के अनुसार देवों की पूजा करनी चाहिए।[52]

43. दक्षिणायन

सूर्य के दक्षिणायन में प्रवेश करने के दिन ब्राह्मणों को दूधमिश्रित सत्तू, बर्फ, शक्कर, हरी सब्ज़ियाँ, छाता, जूते, माला और शीतल जल से भरे जलपात्र दान में देने चाहिएं।[53]

44. रोहिणीसंयोग

आषाढ़पूर्णिमा के बीत जाने पर जब रोहिणी नक्षत्र का योग हो तब (कश्मीर) देश के प्रवर्तक कश्यप की पूजा गन्ध, माला और नैवेद्य आदि से करनी चाहिए। उस दिन ब्राह्मणों तथा बछड़ों से युक्त गायों की पूजा करनी चाहिए।[54]

45. श्रावणी

इस उत्सव के ये प्रमुख अंग हैं-वितस्ता और सिन्धु के संगम में स्नान कर के देवों के देव विष्णु की पूजा करना, ब्राह्मणों के स्वस्तिवाचन के पश्चात् सुखपूर्वक क्रीड़ा करना तथा विशेष भोजन करना। उस दिन सामगान सुनना चाहिए और कुंआरी कन्यायों को विशेष रूप से जल में क्रीड़ा करनी चाहिए।[55]

46. कृष्णजन्ममह

भाद्रपद मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी में श्रीकृष्ण का जन्मोत्सव मनाया जाता है। इस दिन श्रीकृष्ण, उनकी पत्नी तथा उनकी माताओं-देवकी और यशोदा की गन्ध माल्यादि से पूजा की जाती है। दूसरे दिन प्रातः स्त्रियाँ इन सब की मूर्तियों को नदी या सरोवर के तीर पर संगीत की ध्वनियों के साथ ले जाती हैं। इस दिन घी, मरिच, गुड़ आदि से युक्त यवों का भोजन खाया जाता है।[56]

47. मघामावस्या

तत्पश्चात् अमावस्या का पितृनक्षत्र से योग होने पर पितृतर्पण तथा श्राद्ध का कार्य यत्न पूर्वक करना चाहिए। पितरों के सातों गणों की पूजा पुष्प, धूप, अन्न आदि से करनी चाहिए तथा तिलों से श्राद्ध करना चाहिए।[57]

48. भाद्रपदशुक्लकृत्य

भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष के प्रत्येक दिन महेन्द्र और शची की पूजा का विधान है। दैवज्ञ के निर्देश के अनुसार राजा को वस्त्र पर चित्रित महेन्द्र की पूजा तथा ब्राह्मणों की पूजा अन्न, फल, मूल, धूप, वस्त्रों, रत्नों से करनी चाहिए। महेन्द्र के साथ उन के गणों, आयुधों और वाहनों की भी पूजा की जानी चाहिए। इन्द्रपक्ष की पंचमी को नील नाग और स्थानीय नाग की भी पूजा गन्ध, धूप, अन्न, वस्त्र और माला आदि से करनी चाहिए। इस पक्ष में अग्नितर्पण, ब्राह्मणतर्पण, भूमि पर चित्रांकन तथा नाट्याभिनय भी अभीष्ट हैं।[58]

49. श्राद्धपक्ष

इन्द्रपक्ष के बाद का पूरा पक्ष श्राद्ध के लिए विहित है परन्तु त्रयोदशी पर करना आवश्यक माना गया है। चतुर्दशी को उन का श्राद्ध किया जाता है जिन की मृत्यु शस्त्रों से हुई हो। श्राद्धपक्ष की चतुर्थी को दिक्पालों का पूजन किया जाता है।[59]

50. महानवमी

इस उत्सव के वर्णन के प्रारम्भ के कुछ पद्य लुप्त हैं। शेष बचे पद्यों में रात्रि को दुर्गा के मन्दिर में शस्त्रों की पूजा करने को तथा दूसरे दिन नीराजना शान्ति को शालिहोत्र को जानने वालों द्वारा सम्पन्न कराने को कहा है।[60]

51. अगस्त्यदर्शन

सूर्य के कन्यानक्षत्र से युक्त होने पर यह कृत्य किया जाता है। इस के मुख्य ये अंग हैं- दिन में उपवास करना, रात्रि में विविध प्रकार के अन्नों, घृत, पुष्पों, श्वेतचन्दन, गाय, बैल, वस्त्र, छाता, जूते, चप्पल, दण्ड, रत्न, फल, मूल आदि से अगस्त्य की पूजा करना, अग्नि और ब्राह्मणों की पूजा, वर्ष भर के लिए एक फल का त्याग करना तथा दैवज्ञ की पूजा कर के उस की सहायता से अगस्त्य का दर्शन करना।[61]

52. नवान्नविधान

खेती के तैयार हो जाने पर शुक्लपक्ष में दैवज्ञ के द्वारा बताए गए दिन

में यह उत्सव मनाना चाहिए। देवों, पितरों, ब्राह्मणों, दैवज्ञ, जल और अग्नि की पूजा कर के, नये वस्त्र तथा अलंकार धारण कर के, ब्रह्मघोष के बीच ब्रह्मा, अनन्त और दिक्पालों के चित्र बनाकर उनका पूजन धूप, अनुलेपन, माला, वस्त्र, रत्न आदि से कर के गुड़धानी और अन्य सभी अनाजों से बना भोजन ब्राह्मणों, सम्बन्धियों और सेवकों को देना चाहिए।[62]

53. वरुणपंचमी

इस दिन वरुण, उमा और कुबेर की पूजा की जाती है।[63]

54. अशोकिकाष्टमी

भाद्रपद के शुक्लपक्ष में तीन दिनों तक चलने वाले इस उत्सव में उमा और अशोकिका देवी की पूजा की जाती है। कन्याओं को स्नान कराकर अलंकृत करना, स्त्रियों की, बच्चों की और स्वयं अपनी पूजा करना, संगीत, नृत्य के साथ देवी अशोकिका की पूजा करना, धूप, दीप, अन्न, दधि आदि से उमा की पूजा करना इस उत्सव के अंग है।[64]

55. वितस्तोत्सव

भाद्रपद के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तिथि को वितस्ता नदी का जन्मदिन माना गया है। उस तिथि से तीन दिन पूर्व और तीन दिन बाद तक वितस्तोत्सव मनाया जाता है। सात दिनों तक वितस्ता के जल में स्नान, दीपों, पताकाओं, गन्धों, मालाओं, नैवेद्य आदि से तथा अग्नितर्पण और ब्राह्मणतर्पण द्वारा वितस्ता की पूजा का विधान है। वितस्ता के जन्मदिन के बाद तीन दिन तक नाटकों का मंचन कराना चाहिए तथा नटों को सम्मानित करना चाहिए।[65]

56. महाद्वादशी

वितस्तोत्सव के मध्य आने वाली शुक्ला द्वादशी महाद्वादशी कही जाती है। यदि वह बुध नक्षत्र से युक्त होती है तो उस में किया जप, स्नान, दान, श्राद्ध बारह गुना फल देता है। बुध और श्रवण नक्षत्रों से युक्त होने पर वह अत्यन्त महती होती है और उस में किया धार्मिक कृत्य अक्षय होता है। उस

दिन दो नदियों के संगम में स्नान करने पर वही फल मिलता है जो सूर्यग्रहण के समय संगम में स्नान से मिलता है। द्वादशी के श्रवणनक्षत्रयुक्त होने पर वितस्ता और सिन्धु के संगम से लायी गई मिट्टी से स्नान करने से इन दोनों नदियों के संगम में स्नान का फल प्राप्त हो जाता है।[66]

57. चतुर्थीत्रितय

आश्वयुज्, माघ और ज्येष्ठ की चतुर्थी तिथियों पर नवमी तिथि की तरह देवपूजा होती है। इन तिथियों में सौभाग्यवती पतिव्रता नारियों तथा बहनों आदि की पूजा की जाती है।[67]

58. अश्वदीक्षा

आश्वयुज् मास के शुक्लपक्ष में जब चन्द्र का स्वातिनक्षत्र के साथ योग हो तब उच्चैःश्रवाः की पूजा करनी चाहिए और यदि यह योग नवमी तिथि को हो तो सभी अश्वों की पूजा और उन के निमित्त शान्ति और स्वस्त्ययन कराना चाहिए। पण्डित द्वारा पाँच रंग के धागे में धान्य, कुठ आदि जड़ी बूटियाँ पिरो कर अश्वों को बांधी जानी चाहिए। वायु, वरुण, सूर्य, शक्र, विष्णु, विश्वेदेव और अग्नि के मन्त्रों से हवन करना चाहिए। उस दिन अश्वों की सवारी करना तथा अश्वों को पीटना निषिद्ध है।[68]

59. हस्तिदीक्षा

जब चन्द्र का योग शक्रनक्षत्र से हो तब ऐरावण, पुष्पदन्त आदि उत्तम हाथियों के निमित्त वही विधि करनी चाहिए जैसी अश्वों के विषय में बताई गई है।[69]

60. भद्रकालीपूजा

आश्वयुज् की शुक्ला अष्टमी को शिल्पिजनों द्वारा उपवास कर के विधिपूर्वक भद्रकाली की पूजा धूप, वस्त्र, माला, दीप, रत्न, फल, मूल, माँस, विविध शाक आदि से की जानी चाहिए। अग्नितर्पण तथा ब्राह्मणतर्पण भी करना चाहिए। संगीत नृत्य से युक्त रात्रिजागरण भी इस उत्सव का अंग है।[70] दुर्गा के मन्दिर में पुस्तकों की पूजा तथा शिल्पियों के द्वारा अपने शिल्पभाण्डों की पूजा की जानी चाहिए। कवच, शस्त्र आदि ग्रहण कर ब्राह्मण द्वारा अभिमन्त्रित

दही युक्त भोजन स्वयं खाना चाहिए तथा मित्रों, आश्रितों और ज्योतिषियों को भी खिलाना चाहिए।

61. गृहदेवीपूजा

मार्गशीर्ष मास की कृष्णप्रतिपदा को गृहदेवी की पूजा का विधान है। यह पूजा श्येनपिण्ड को छोड़ कर शेष उसी प्रकार की जाती है जैसे भद्रकाली और दुर्गादेवी की होती है। यह पूजा वृक्ष के नीचे न हो कर घर में होती है।[71]

62. श्यामादेवीपूजा

जब अंगूरों के बाग में अंगूर पक जाएँ तब सज धज कर स्त्रियों, मित्रों और सेवकों के साथ वहाँ जा कर श्यामादेवी की पूजा पुष्प, धूप, अन्न आदि भक्ष्य पदार्थों से करनी चाहिए, गीतनृत्ययुक्त उत्सव मनाना चाहिए तथा सर्वप्रथम ब्राह्मणों को द्राक्षाफल की भेंट दे कर फिर द्राक्षायुक्त भोजन करना चाहिए।[72]

63. यात्रोत्सव

यद्यपि विभिन्न देवस्थानों की यात्राओं के समय किए जाने वाले कृत्य लगभग समान होने के कारण नीलमत में इन सब की चर्चा एक साथ की गई है तथापि यात्राओं की तिथियाँ अलग-अलग दी गई हैं। यह कहा गया है कि पिशाचराज निकुम्भ के चले जाने और वापिस लौटने के बीच के छः महीनों में राजाओं को देवस्थानों की यात्राओं का आयोजन कराना चाहिए। चतुर्थी तिथि विनायक, धनद और महादेव के मन्दिरों की यात्रा के लिए है, पंचमी तिथि श्री और वरुण के स्थानों के लिए, षष्ठी कुमार के लिए, सप्तमी सविता के लिए, अष्टमी महादेव और शक्र के लिए तथा पंचमी, द्वादशी और पौर्णमासी सभी नागस्थानों के लिए उपयुक्त हैं। पौर्णमासी पर सभी देवस्थानों में से किसी की भी यात्रा की जा सकती है। अतिथिगृह की यात्रा हर दिन की जा सकती है। किसी बड़े यात्रोत्सव से पूर्व के सात दिन विनायकपतिपूजा, ग्रहशान्ति, गन्धर्वपूजा, पिशाचपूजा, नागपूजा, ब्राह्मणपूजन तथा दीनों और अनाथों की सेवा के लिए विहित हैं। यात्रा से सम्बद्ध देवालय की पुताई तथा

सजावट भी की जाती है। नागरिकों के द्वारा जुलूस के रूप में जा कर किसी पवित्र स्थान से लाये गए जल से देवमूर्ति का स्नान कराया जाता है। उसके पश्चात् सजाये गए वाहन पर देवमूर्ति को रख कर राजा या प्रधान की अगुवाई में नागरिकों के द्वारा उसे नगर में घुमाया जाता है। नाटकों के प्रदर्शन तथा दर्शकों के सम्मान का प्रबन्ध भी किया जाता है।[73]

2. अन्य धार्मिक कृत्य

यद्यपि पूजा, दान, जप, होम, यात्रा आदि धार्मिक कृत्य ऊपर वर्णित व्रतों, उत्सवों का ही भाग हैं, फिर भी उन के विषय में अलग से चर्चा करना आवश्यक है। वैदिक पूजापद्धति से विकसित हुई तथा आदिम जनजातियों में प्रचलित पूजापद्धति से पर्याप्त प्रभावित हुई देवपूजा पौराणिक हिन्दू धर्म का मुख्य अंग है। नीलमत में वर्णित देवपूजा के ये भाग हैं–सुगन्धित पदार्थ, वस्त्राभूषण, खाद्य, पेय आदि अर्पित करना, धूप, दीप जलाना, रात्रिजागरण तथा देवस्तुतिगान।[74]

केवल फाल्गुन के शुक्लपक्ष के एक दिन को छोड़ कर लगभग सभी धार्मिक अवसरों पर दान देने का विधान है।[75] उस दिन भी पके हुए भोजन के दान पर प्रतिबन्ध नहीं है।[76]

देवों के नामजप की प्रथा का उद्‌गम शब्द में भला या बुरा करने की शक्ति होने की अवधारणा से हुआ होगा।[77] उपनिषदों में भी ओम् ह्रीं आदि कई ध्वनियों के जप का विधान किया गया है।[78] महाभारत के नारायणीय खण्ड में युधिष्ठिर तथा उनके भाई निरन्तर जप करते हुए वर्णित हैं।[79] पुराणों में जप की महत्ता पर विशेष बल दिया गया है तथा नीलमत में भी जप का उल्लेख प्रायः हुआ है।[80]

वैदिक यज्ञों की चर्चा प्राचीन धार्मिक कृत्यों के रूप में हुई है जिन के स्थान पर अन्य बहुत से धार्मिक कृत्यों के विकल्प प्रस्तुत किए गए हैं। कहा गया है कि केशव की मूर्ति के दर्शन से अग्निष्टोम का पुण्य मिलता है।[81] नृसिंह का दर्शन वह्निष्टोम सम्पन्न करने के बराबर होता है।[82] देवदेवेश के दर्शन मात्र से[83] अथवा सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में श्राद्ध करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है।[84] पुष्कर में स्नान करने से अतिरात्र यज्ञ का पुण्य मिल

जाता है।[85] इसी प्रकार वाज़पेय, राजसूय, पुण्डरीक, गोसव तथा देवसत्र यज्ञों का उल्लेख हुआ है। कोटिहोम तथा लक्षहोम यज्ञों को करने की संस्तुति की गई है।[86] वैदिक साहित्य में अनुपलब्ध इन दोनों यज्ञों के प्रचलन का प्रारम्भ पुराणलेखकों ने ही किया है।[87] नरसिंहपुराण में इन यज्ञों को करने की विधि का विस्तार से वर्णन है। इस यज्ञ के लिए आमन्त्रित ब्राह्मणों को ब्रह्मचर्यव्रतपालन, उपवास तथा जप करना होता है। अग्नि में प्रथम आहुति गायत्री मन्त्र से दी जाती है तथा बाद की आहुतियां व्याहृतियों से दी जाती हैं। दीनों को भोजन कराना तथा ब्राह्मणों को दक्षिणा देना यज्ञ की अन्य विशेषताएँ हैं।[88] विष्णुधर्मोत्तरपुराण में कहा है कि वाह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य स्वयं भी यज्ञ कर के पुण्य पा सकते हैं।[89] देव का पूजन करने वाले के लिए हिंसात्मक यज्ञों की कोई उपयोगिता नहीं।[90] केवल पिशाचपूजा, भद्रकालीपूजा तथा परशुराम के द्वारा प्रतिष्ठापित केशवमूर्ति की पूजा में मांस के प्रयोग का उल्लेख है।[91] नीलमत के बहुत से भाग में यज्ञों के स्थान पर तीर्थयात्राओं का वर्णन है। तपस्या के अन्य रूपों में शीतल जल में खड़ा होना तथा उपवास करना वर्णित हैं।

3. व्रतों, उत्सवों तथा अन्य धार्मिक कृत्यों का स्वरूप एवं महत्त्व

इन के स्वरूप तथा महत्त्व के विषय में कुछ चर्चा आवश्यक है। इन में से कुछ व्रतोत्सव जैसे राज्ञीस्नापन, कृष्यारम्भ, यवाग्रायण तथा नवान्नविधान कृषि से जुड़े हैं। इन उत्सवों में बीज बोने के समय देवों की सहायता के लिए उन से प्रार्थना की जाती है तथा फसल के पक जाने पर कटाई के बाद उनका धन्यवाद किया जाता है। इन में से कुछ व्रतोत्सव श्रौतसूत्रों में वर्णित आग्रायण यज्ञों का ही परिवर्तित रूप हैं। इरामंजरीपूजन वसन्त में हरियाली के आगमन की सूचना देता है। अंगूरों के पकने पर किया जाने वाला श्यामादेवीपूजन तथा अशोक वृक्ष के पल्लवित होने पर मनाई जाने वाली अशोकिका अष्टमी उपवनक्रीड़ाओं से जुड़े उत्सव हैं। नवहिमपातोत्सव शीत ऋतु में पहली बर्फ गिरने की खुशी में मनाया जाता है। उत्तरायण तथा दक्षिणायण के व्रत सूर्य का क्रमशः उत्तर तथा दक्षिण दिशा से उदित होना प्रारम्भ होने पर किये जाते हैं। पूर्व काल में इन दोनों अवसरों पर यज्ञ होते थे जिन का स्थान अब व्रतों ने ले लिया है। नये वर्ष का उत्सव नवसंवत्सर कश्मीर में दो बार मनाया जाता था। एक पूर्णिमान्त मास के अनुसार मार्गशीर्ष

की कृष्ण प्रतिपदा को और दूसरा अमान्त मास के अनुसार चैत्रमास की शुक्ल प्रतिपदा को।[92] अश्वदीक्षा, हस्तिदीक्षा तथा वास्तुपूजा जिनमें शीतकाल के छः मास तक अग्नि प्रज्वलित रखी जाती थी वह समाज के लिए आवश्यक तथा हितकारी जीवों और प्रथाओं पर पवित्रता आरोपित करने का प्रयास है।

आश्वयुजी और पिशाचप्रयाण उत्सव कश्मीर के प्राचीन इतिहास की घटनाओं की स्मृति में मनाए जाते हैं। अन्य बहुत से व्रत उत्सव भी किसी न किसी पावनतिथि या देव से सम्बद्ध हैं। इस प्रकार वैदिक यज्ञों का स्थान नीलमत में व्रत, पूजा, जप आदि ने ले लिया हैं। यह सब परिवर्तन धीरे धीरे ही हुआ होगा। बहुत पहले से ही उपनिषदों की दार्शनिक विचारधारा ने लोगों की मानसिकता को प्रभावित करना शुरु कर दिया था। बौद्ध और जैन धर्मों ने भी जटिल तथा खर्चीले यज्ञों के स्थान पर वैसी ही फलप्राप्ति के लिए अन्य पूजा पद्धतियों का प्रचार किया। इस प्रकार धीरे धीरे उपनिषदों के प्रभाव से और बौद्धों और जैनों के तर्कों के समक्ष ब्राह्मणयुग की यज्ञपरम्परा के बादल छंटने लगे। इन बदलती परिस्थितियों में जनता को आकर्षित करने का साधन सरल पूजा पद्धति ही हो सकती थी। समय की आवश्यकता के अनुसार पुराण इस क्षेत्र में आगे आए। नीलमत में भी ब्राह्मणधर्म का यह परिवर्तित रूप दृष्टिगोचर होता है जिस में जटिल श्रौतयज्ञों के स्थान पर कम जटिल यज्ञों कोटिहोम, लक्षहोम, तीर्थयात्राओं, तीर्थस्नानों, देवों और लोकदेवों की पूजा, जप, उपवासादि की प्रधानता है।

अष्टम अध्याय की टिप्पणियाँ

1. नीलमत पु. 387-899
2. वही 388-409
3. Vogel, Indian Serpent Lore, p.223
4. नीलमत पु. 477-84
5. देखें पीछे तृतीय अध्याय
6. कल्हण, राजत. 7,1551
7. नीलमत पु. 410-20

8. वात्स्यायन, कामसूत्र, 1. 4.42. तथा उस पर जयमङ्गला टीका

9. Teste Kane, P.V., History of Dharmasāstra, Vol. V. Part I.p 200

10. हेमचन्द्र, देशीनाममाला, 3. 43

11. हेमाद्रि, चतुर्वर्गचिन्तामणि, व्रतखण्ड, पृष्ठ 348-49

12. नीलमत पु. 421-464

13. वही, 465-67

14. वही, 468-70

15. वही, 471-76

16. वही, 477-84

17. वही, 485-86

18. वही, 487-93

19. वही, 494-98

20. वही, 499-500

21. वही, 501-509

22. वही, 510

23. वही, 511-15

24. वही, 516

25. वही, 517-24 ; राजत, 8.2072 में भी इसका उल्लेख है।

26. नीलमत पु. 525-26

27. वही, 527-33

28. वही, 534-544

29. वही, 545-48

30. वही, 549-58

31. वही, 559-68

वही, 569-73

वही, 574-81

वही, 582

वही, 583-667

वही, 668-70

वही, 671-73

वही, 674-75

वही, 676-77

वही, 678

वही, 679-82

वही, 683-92

वही, 693-94; कई पुराणों में इरा को दक्ष की पुत्री, कश्पय की पत्नी तथा लता, वल्ली और वीरुधा की माँ बताया गया है। वृक्षों और वनस्पतियों के साथ इरा के इस सम्बन्ध को ऋग्वेद 5, 83, 4 में देखा जा सकता है। कश्मीरी भाषा में इरा पुष्प को युरुकम कहते हैं तथा इसे शिवपूजा में प्रयुक्त करते हैं।

नीलमत पु. 306 में सिन्धु नदी को गङ्गा कहा गया है।

नीलमत पु. 705-08

वही, 709-15

वही, 716-18

वही, 722-23

वही, 724-26

वही, 727-28

वही, 729-33

वही, 734

53. वही, 735-36
54. वही, 737-38
55. वही, 739-42
56. वही, 743-50
57. वही, 751-53
58. वही, 754-59
59. वही, 760-66
60. वही, 767-69
61. वही, 770-75
62. वही, 776-83
63. वही, 784
64. वही, 785-90
65. वही, 791-95
66. वही, 796-805
67. वही, 806-808
68. वही, 809-13
69. वही, 814-15
70. वही, 816-18; यहाँ दुर्गाष्टमी का उल्लेख करने वाले कुछ पद्य लुप्त हैं।
71. वही, 827-28
72. वही, 829-33; पद्य सं 834 से 835 तक राजा के संवत्सराभिषेक का वर्णन है।
73. वही, 874-99
74. वही, 422-45
75. वही, 541, 714-15, 781, 832, 1014

76. वही, 539

77. Sen Gupta, N.H., J.U. P.H.S., Vol. XII p. 40

78. छान्दोग्योपनिषद्, 1. 1. 1

79. महाभा, 12. 326. 122

80. नीलमत पु. 707, 1089, 1145, 1148

81. वही, 1196

82. वही, 1197-98

83. वही, 1194

84. वही, 132-33

85. वही, 1396

86. वही, 836

87. मत्स्य पु. 93, 5, ; 84.158, ; 239.1-29; विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 165, 29-53 ; बृहत् संहिता 45-46

88. नरसिंह पु. अ, 35, 11, 19, 21

89. विष्णुधर्मोत्तर पु. 1, 165, 52-53

90. नीलमत पु. 733

91. वही, 577-78, 717, 1219-20

92. वही, 465-66, 583

❑❑❑

नवम अध्याय

दर्शन

1. पुराणों में दार्शनिक विचार

आधुनिक विद्वान् पिछले कई वर्षों में पुराणों की ऐतिहासिक सामग्री के अध्ययन में तो संलग्न रहे हैं परन्तु पुराणों में उपलब्ध दार्शनिक विचारों ने उनका ध्यान आकर्षित नहीं किया। भारत के धार्मिक तथा दार्शनिक चिन्तन के इतिहास में पुराणों की सामग्री का यथोचित उपयोग नहीं किया गया। परन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि पुराणों में दार्शनिक विचारों का अभाव है। रामानुज, माधव, वल्लभ, जीवगोस्वामी, बलदेव आदि आचार्यों के दार्शनिक ग्रन्थों में पुराणों के पर्याप्त उद्धरण दार्शनिक दृष्टि से उनके महत्त्व का प्रतिपादन करते हैं।[1]

यह सत्य है कि पुराणों में न तो उपनिषदों का गम्भीर चिन्तन है और न ही षड् दर्शनों जैसे जटिल और विश्लेषणात्मक सिद्धान्त हैं। पर यदि जीवनमरण, सृष्टि और सृष्टि को संचालित करने वाली शक्तियों से सम्बद्ध प्रश्नों के उत्तर जानने का मानव का प्रयास दर्शन है तो पुराणों में उपलब्ध बहुत सी सामग्री दार्शनिक कही जा सकती है।

पौराणिक दर्शन को लोकविश्वासों से अलग नहीं किया जा सकता। उनमें सामान्य जनों के लिए दार्शनिक विचार होते हैं जिनकी रुचि केवल तर्क में नहीं होती। डा० राधाकृष्णन् के शब्दों में कहें तो "पुराण कथा कहानियों के माध्यम से सामान्य जनता के द्वारा ग्राह्य सत्य को प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार इनके द्वारा भारत में बहुसंख्यक लोगों की दर्शन में अभिरुचि जागृत करने का कठिन कार्य सम्पन्न हुआ है।" (भारतीय दर्शन खण्ड 1 पृ० 25)

कूर्मपुराण की ईश्वरगीता की तरह नीलमत में दर्शन पर विशेष अध्याय नहीं है परन्तु दर्शन सम्बन्धी विचार जहाँ तहाँ बिखरे रूप में मिलते हैं जिनसे

उस समय के कश्मीर में प्रचलित दार्शनिक प्रवृत्तियों का अनुमान लगाया जा सकता है। उन बिखरे विचारों को व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास यहाँ किया गया है।

2. सृष्टि की उत्पत्ति और स्वरूप

अन्य देशों की भाँति भारत में भी सृष्टि की उत्पत्ति एवं उसके स्वरूप को समझने की समस्या ही दार्शनिक चिन्तन का आधार रही है। वेदों के नासदीयसूक्त और पुरुषसूक्त[2] से लेकर रामायण, महाभारत, पुराणों तथा दर्शनग्रन्थों तक सभी में सृष्टि के रहस्यों के उद्‌घाटन का प्रयास है। पुराणों की पंचलक्षणात्मक परिभाषा में सर्ग का प्रथम स्थान है[3] पर बहुत से पुराण इस परिभाषा का अक्षरशः पालन नहीं करते। नीलमत में भी सर्ग का वर्णन नहीं है और प्रतिसर्ग का वर्णन भी केवल बाईस पद्यों में है।[4]

2.1 सृष्टि का स्वरूप

नीलमत में त्रिभुवन, त्रैलोक्य शब्दों का प्रयोग सृष्टि के त्रिविध विभाजन का सूचक है।[5] स्पष्ट है कि यहाँ भूमि को मध्यवर्ती माना है जिसके ऊपर तथा नीचे अन्य लोक हैं। यह विभाजन द्विविध भी कहा जा सकता है क्योंकि भूलोक को ऊपर के सात लोकों में सबसे निचला माना गया है। ये लोक हैं– भू:लोक, भुव:लोक, स्वर्लोक, मह:लोक, जन: लोक, तपोलोक तथा सत्यलोक।[6] नीचे के सात लोक हैं– रुक्मभौम, शिलाभौम, नीलमृत्तिक, रक्तभौम, पीतभौम, श्वेत तथा कृष्णक्षिति[7]। अन्य कई पुराणों में उल्लिखित अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल इन सात नामों में से केवल रसातल और पाताल ही नीलमत में उल्लिखित हैं।[8] ग्रहों नक्षत्रों में नीलमत सूर्य, चन्द्र, पुष्य, मघा, स्वाति, से रोहिणी, वैश्वदेव, बुध, शुक्र, पित्र्यर्क्ष, जन्मर्क्ष तथा रेवती का उल्लेख करता है।[9]

2.2 सृष्टि की उत्पत्ति

इस विषय में नीलमत सांख्य और उपनिषदों के मत का समन्वय उपस्थित करता है। सांख्य में 25 तत्त्व बताए गए हैं जिनमें पुरुष और प्रकृति ये दो तत्त्व सनातन और स्वतन्त्र हैं। प्रकृति जिसे अव्यक्त तथा प्रधान कहा है, प्रारम्भिक

तत्त्व है जिससे ये 23 तत्त्व क्रमशः प्रकट होते हैं– महत्, अहंकार, पाँच तन्मात्रा, दस इन्द्रियाँ, मन तथा पाँच महाभूत। पच्चीसवाँ तत्त्व पुरुष इन तत्त्वों से अलग है तथा प्रकृति के विकास का द्रष्टा मात्र है।[10] सांख्य के इस सिद्धान्त का बीज कठोपनिषद् में है जहाँ अहंकार तथा तन्मात्रा के अतिरिक्त सभी तत्त्व वर्णित हैं तथा जहाँ पुरुष को परा गति माना है।[11] नीलमत में सांख्य के इन सभी तत्त्वों का उल्लेख है परन्तु पुरुष को द्रष्टा मात्र न मानकर सृष्टि को चलाने वाली परम सत्ता के रूप में स्वीकार किया गया है।[12] विष्णु और ब्रह्मा के लिए प्रयुक्त किया ''जगत्कारणकारण'' विशेषण यह सूचित करता है कि जगत् का कारण प्रकृति है पर उस प्रकृति का कारण परमात्मा है।[13] एक स्थान पर शिव के लिए प्रयुक्त विशेषण ''साक्षिवत् स्थितः ''सांख्य के पुरुष की तरह प्रतीत होता है पर वहीं उसे जगत् का कर्ता, पालक तथा संहारक भी कहा है।''[14] रजस्, सत्त्व और तमस् इन तीन गुणों का भी उल्लेख है तथा इनका सम्बन्ध उत्पादक, पालक तथा संहारक शक्तियों के साथ माना गया है।

3. विभिन्न धार्मिक अवधारणायें

भारत में धार्मिक एवं दार्शनिक विचारों का अन्त आसानी से नहीं होता। भारतीयदर्शन चिन्तन के विकास के साथ अपने में नई अवधारणाओं का समावेश करता जाता है। परन्तु प्राचीन अवधारणायें भी साथ साथ चलती रहती हैं। नीलमत में बहुत से दार्शनिक विचारों की उपस्थिति का यही कारण है।

3.1 बहुदेवतावाद

जैसा कि पूर्व अध्याय में बताया जा चुका है नीलमत में बहुत से देवी देवता हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव इन तीन देवों का महत्त्वपूर्ण स्थान है पर अन्य देव जैसे इन्द्र, वरुण, यम, कार्त्तिकेय, बलदेव, अश्विनौ, मरुत्, विश्वेदेव, वसु, यक्ष, नाग, गन्धर्व, पृथिवी, सुरभि, सीता, शची, लक्ष्मी, उमा, श्यामा, भारती, प्रज्ञा, मति आदि की उपस्थिति बहुदेवतावाद को सूचित करती है।

3.2. हीनोथीज़्म

किसी प्रसंग में एक देवता को अन्यों में सर्वोत्तम बताना और दूसरे प्रसंग में वही विशेषण किसी दूसरे देवता के लिए प्रयुक्त कर देने की प्रवृत्ति ब्रह्मा,

विष्णु, शिव, नीलनाग, उमा और लक्ष्मी की स्तुतियों में स्पष्ट दिखाई देती है। कुछ स्थलों पर विष्णु की स्तुति करते हुए उन्हें देवों में श्रेष्ठ, अप्रमेय, परम, सनातन, सभी देवों की परा गति, देवेश, जगत् के कारण, तीनों लोकों के स्वामी, शिव के द्वारा पूजित तथा ब्रह्मा के द्वारा संस्तुत कहा है[15] तो दूसरे स्थलों पर ब्रह्मा को देवदेवेश, जगत्कारणकारण, त्रैलोक्यनाथ, सर्वज्ञ, सर्वेश्वर, जगद्गुरु तथा जगद्भर्ता कहा है।[16] अन्य स्थलों पर शिव को भी जगद्गुरु, जगन्नाथ, देवेश, देवदेवेश तथा महेश्वर कहा है।[17] नीलनाग की स्तुति करते हुए उसे भी देवेश, विधि का विधाता तथा अपने प्रकाश से ब्रह्म को प्रकाशित करने वाला बताया है।[18] उमा देवी को सब देवों की जननी, तथा शर्व से भी उच्चतर कहा है।[19] लक्ष्मी की स्तुति में कहा है कि सभी देवियाँ उसके विविध रूप हैं।[20]

3.3 एकदेववाद1

राधाकृष्णन् का यह कथन सत्य है कि हीनोथीज़्म अनजाने एकदेववाद की ओर ले जाता है।[21] बहुदेवतावाद पुराणों की विशेषता है पर देवियों और देवों की इस विविधता में एकता को खोजने के प्रयास भी मिलते हैं। किसी देवता की स्तुति में उसे सर्वोत्तम बताते हुए उसे अन्य देवों से अभिन्न बता दिया जाता है और यह एकेश्वरवाद की ओर बढ़ता हुआ कदम है। यह सिद्धान्त नीलमत में तब सहज ही दिखाई देता है जब ब्रह्मा, विष्णु और शिव सभी बारी बारी सृष्टि के कर्त्ता, पालक और संहारक बताए गए हैं।[22]

3.4 पशुदेववाद

वेद में अज एकपाद् तथा अहिर्बुध्न्य का उल्लेख है[23] और ये दोनों नीलमत में ग्यारह रुद्रदेवों में गिने गए हैं।[24] विष्णु के तीन पशुरूप अवतार मत्स्य, कूर्म, वराह तथा दो मिश्रित अवतार अश्वशीर्ष और नरसिंह नीलमत में उल्लिखित हैं।[25] शिव को हंसरूपधारी तथा धर्म को शिव के बैल का रूप धारण करने वाला कहा गया है।[26]

3.5 जड़देववाद तथा प्रतीकवाद

इस में जड़ वस्तुओं पर मानवीय चेतनता या अतिमानवीय शक्तियों का आरोप कर उनकी पूजा की जाती है।[27] नीलमत में इस प्रकार के अनेक विश्वास

उपलब्ध हैं। नदियाँ, झीलें, पर्वत तथा बहुत से पवित्र स्थान पापों का नाश करने वाले माने गए हैं।[28] भूमि, जल, वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, ग्रह, दिवस, मास, संवत्सर सभी देववत् पूज्य माने गए हैं।[29] यहाँ तक कि दैनिक उपयोग की वस्तुओं– शस्त्र, वाहन, छत्र, ध्वज, वाद्ययन्त्रों की भी पूजा का उल्लेख है।[30] नीलमत पुराण के पर्याप्त भाग में इन जड़ पदार्थों को सप्राण मान कर इनकी पूजा का विधान किया गया है।

3.6 विश्वदेववाद

यह विचार भी नीलमत में विद्यमान है कि समस्त विश्व ईश्वर का ही रूप है। सारी पृथिवी सती देवी का रूप है।[31] पृथिवी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य, चन्द्र, तथा यजमान ये आठों शिव की ही मूर्तियाँ हैं।[32]

3.7 एकेश्वरवाद

नीलमत में यह अवधारणा भी विद्यमान है कि एक ही परम सत्ता से सब कुछ विकसित हुआ है। वहाँ ब्रह्मा का वर्णन उपनिषदों के ब्रह्म की तरह है जिससे भिन्न कोई अन्य जगत् का कारण नहीं है। वही ज्ञाता और ज्ञेय है, क्षेत्रज्ञ और क्षेत्र है, ध्याता, ध्येय और ध्यान है। वह निष्कल है, अव्यक्तयोनि है और सर्वोच्च है।[33] यह उक्ति कि वह अत्यन्त सूक्ष्म भी है और विशाल भी है, कठोपनिषद् तथा श्वेताश्वतरोपनिषद् के कथन के समान है।[34] एकेश्वरवाद सम्बन्धी इन उक्तियों से कश्मीर के अद्वैतशैवदर्शन का पथ प्रशस्त हुआ है।

3.8 मरणोपरान्त स्थिति

मृत्यु के पश्चात् की स्थिति का उल्लेख नीलमत में बहुत कम हुआ है। एक पद्य में पूर्व जन्म का उल्लेख है।[35] कर्मों के फलस्वरूप दुर्गति तथा सद्गति प्राप्त होने की चर्चा हुई है।[36] दुष्कर्म करने वाले पापियों के घोर नरक में गिरने का तथा यमलोक की घोर यातना का भी उल्लेख हुआ है।[37] कई पुराणों में नरकों की लम्बी सूची मिलती है पर नीलमत में मनुस्मृति की तरह केवल इक्कीस नरक कहे हैं।[38] स्वर्गलोक के अतिरिक्त, जिसे स्वर्लोक, दिव, त्रिदिव तथा देवलोक भी कहा है,[39] विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र, वरुण, शक्र, कुमार, वह्नि, नाग और चन्द्रलोकों का भी उल्लेख है।[40] विभिन्न देवों से सम्बद्ध इन लोकों में विश्वास का बीज शतपथ ब्राह्मण में है जहाँ विशेष यज्ञों से प्राप्त होने वाले

विशेष देवलोकों की चर्चा है।[41] कुछ पद्यों में मोक्ष का उल्लेख है पर उस के स्वरूप की चर्चा नहीं हुई है।[42]

3.9 कर्मकाण्ड एवं भक्तिवाद

बुद्धि से विचारित और मन में अनुभूत धार्मिक भावों के प्रकटीकरण रूप कर्मकाण्ड का धर्म के क्षेत्र में पर्याप्त महत्त्व है। यह प्रकटीकरण यज्ञों, देवमूर्तियों की पूजा, तीर्थस्थानों की यात्रा, तप और जप द्वारा होता है। वैदिक युग का कर्मकाण्ड सरल यज्ञों में देवों के प्रति दी गई आहुतियों से युक्त स्तुतियों से सम्पन्न हो जाता था।[43] तत्पश्चात् जटिल यज्ञव्यवस्था का प्रारम्भ हुआ और कर्मकाण्ड में यज्ञ ही प्रधान हो गए। किस प्रकार इन यज्ञों का विरोध हुआ तथा इनका स्थान अन्य पूजापद्धतियों ने ले लिया, यह विवरण पूर्व अध्याय में दिया जा चुका है।

नीलमत के भक्तिवाद में कई देवों की चर्चा है जो भक्तों की सहायता के लिए सदैव उद्यत रहते हैं। भक्त अपने को देव के समक्ष समर्पित कर देता है जो उसके कष्टों को हर लेते हैं।[44] वासुकि, कश्यप, नील, परशुराम सभी विनम्र भक्तों के रूप में विष्णु के पास अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए जाते हैं।[45] शिव स्वयं नन्दी को वरदान देने के लिए कालोदक तीर्थ पहुंचते हैं।[46] भक्तों पर अनुकम्पा करते हुए नागदेवता नील का वर्णन भी नीलमत में है।[47] सभी भक्तों के साथ शर्त यही है कि वे समर्पणभाव से देव की शरण में जाएँ।[48] यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि नीलमत में वर्णित भक्ति में श्रृंगार रस का रति भाव नहीं है।

3.10 नैतिकता के सिद्धान्त

नीलमत में मनुष्य जीवन के चार पुरुषार्थों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का इकट्ठा वर्णन नहीं है परन्तु बिखरे संकेतों से इन चारों के प्रति समन्वयात्मक दृष्टिकोण प्रमाणित होता है। यह कहा गया है कि अर्थ से युक्त धर्म अधिक प्रभावशाली होता है।[49] एक अन्य पद्य में कामियों और मुमुक्षुओं का एक साथ उल्लेख काम और मोक्ष के समान महत्त्व का प्रतिपादन करता है। विष्णु स्वयं कामरूप कहे गए हैं।[49] सम्भवतः यह दृष्टिकोण बौद्ध धर्म द्वारा निर्वाण को ही सर्वाधिक महत्त्व दिए जाने की प्रतिक्रिया थी। कुछ नैतिक मूल्यों–सत्य, क्षमा,

ज्ञान, वीरता, नम्रता, शील तथा कर्तव्य पालन का उल्लेख हुआ है।[50] बुरे कर्म के लिए पाप, किल्विष, कल्मष, दृष्कृत, अघ तथा पातक शब्द प्रयुक्त हुए हैं।[51] पवित्र नदियों में स्नान से पापों के नाश की चर्चा है पर यह भी कहा गया है कि प्रायश्चित्त किए बिना महापातकों से मुक्ति नहीं मिलती।[52]

3.11 नीलमत में दर्शन, अद्वैतशैवदर्शन तथा पाञ्चरात्रदर्शन

यह विचारणीय है कि नीलमत के दार्शनिक विचारों और भारत के अन्य दर्शनों का परस्पर क्या आदान प्रदान रहा है ? कश्मीर के अद्वैत शैवदर्शन के सिद्धान्तों को नीलमत के कुछ पद्यों में खोजने का प्रयास किया गया है।[53] इस दर्शन के अनुसार परासंवित्, परमेश्वर, शिव, परमशिव कहा गया एक ही तत्त्व है जो ज्ञाता भी है और ज्ञेय का रूप भी धारण करता है। उसका विश्वोत्तीर्ण रूप शिव है और विश्वमय रूप शक्ति है। शक्तिरूप में विश्व को प्रकट कर और विश्व में व्याप्त होकर भी शिव स्वयं विश्वोत्तीर्ण अर्थात् विश्व से अप्रभावित रहता है। अभिव्यक्ति की यह प्रक्रिया आभास कही गई है जो वेदान्त के विवर्त सिद्धान्त से भिन्न है जिसके अनुसार नाम रूप सभी अयथार्थ हैं क्योंकि वे परम सत्ता में नहीं रहते। आभास के अनुसार वे परम सत्ता का ही एक रूप होने के कारण यथार्थ हैं। प्रत्यभिज्ञादर्शन के अनुसार माया तत्त्व ही असीम को सीमित तथा एक को विविध करता है। शिव जीवरूप में अपने असीम कर्तृत्व को भूल जाता है। जीव का अपने वास्तविक रूप को जानना ही प्रत्यभिज्ञादर्शन का लक्ष्य है।[54]

लक्ष्मीधर कल्ला शैवदर्शन के सभी सिद्धान्तों का स्रोत नीलमत में मानते हैं। उनका कथन है ''कश्मीर में शैवदर्शन का मूल कैसा भी रहा हो, इसे नकारा नहीं जा सकता कि प्रारम्भिक सदियों में ही अद्वैत शैवदर्शन कश्मीर में स्थापित हो गया था। क्योंकि प्रत्यभिज्ञा सिद्धान्त को प्रस्तुत करता हुआ अद्वैतशैवदर्शन अपने अधुनातन रूप में नीलमत में विद्यमान है, जिसका समय छठी सातवीं शती ई० है अर्थात् शंकराचार्य द्वारा प्रतिष्ठापित वेदान्त से पूर्व।''[55] ब्रह्मा और इन्द्र द्वारा की गई शिवस्तुतियों को आधार बनाते हुए वह शिव की जगत् रूप में अभिव्यक्ति को इस उक्ति में मानते हैं कि शिव ही सर्वेश्वर है, कारण का कारण है, सर्वकर्ता है और सर्वज्ञ है जिसकी इच्छा से ही यह चराचर जगत् प्रकट होता है। उसी की शक्तिलता से समस्त विश्व भासित है। यजमान, मही,

आकाश, जल, अग्नि, चन्द्र, सूर्य सभी उसके शरीर हैं जिनमें तीनों लोक व्याप्त हैं। वह लोकों का सृजन करता है परन्तु उसमें परिवर्तन नहीं होता। इन्द्र का शिव को पहले न पहचान पाने और बाद में पहचान लेने में भी प्रत्यभिज्ञा का सिद्धान्त है।[56] पद्य सं० 1247 में शासन शब्द का प्रयोग शिवशासन ग्रन्थों के लिए हुआ है।

प्रथमदृष्ट्या यह मत निः सन्देह सम्भव प्रतीत होता है परन्तु इन पद्यों में से बहुत से पद्यों की संक्षिप्त संस्करण की पाण्डुलिपियों में अविद्यमानता उनकी नीलमत के मूलरूप में उपस्थिति को सन्दिग्ध बना देती है। विस्तृत संस्करण की पाण्डुलिपियों में पं० साहिब राम द्वारा परिवर्तन, परिवर्धन किये गए थे।[57] यद्यपि यह एकदम कह देना उचित नहीं होगा कि नीलमत की संक्षिप्त संस्करण की पाण्डुलिपियों में अविद्यमान तथा विस्तृत संस्करण की पाण्डुलिपियों में विद्यमान सभी पद्य पं० साहिबराम द्वारा किये गए प्रक्षेप हैं। हो सकता है कि उसने ये पद्य बहुत सी पाण्डुलिपियों के मिलान से लिए हों जो अलग-अलग स्थलों पर खण्डित रही हों। परन्तु इस बात की भी सम्भावना है कि बहुत से अन्य पुराणों की भाँति, जिनका भिन्न-भिन्न कालों में कुछ पद्यों के परिवर्तन, परिवर्धन द्वारा सम्पादन किया जाता रहा है,[58] नीलमत का भी सम्पादन होता रहा हो। वस्तुस्थिति जो भी रही हो, संक्षिप्त संस्करण की पाण्डुलिपियों में इन पद्यों की अनुपस्थिति इन्हें सन्देह की परिधि में रख रही है। आचार्य अभिनवगुप्त ने परमार्थसार ग्रन्थ को अद्वैत शैवदर्शन के अनुरूप बनाने के लिए आधारकारिका के उन पद्यों में यत्किंचित् परिवर्तन कर दिया था जो सांख्यदर्शनपरक थे।[59] सम्भव है कि इसी प्रकार के कुछ परिवर्तन, परिवर्धन समयानुसार नीलमत में भी हुए हों जो विस्तृत संस्करण की पाण्डुलिपियों में उपलब्ध होते हैं।

नीलमत में पाञ्चरात्र पद्धति से देवमूर्तियों की पूजा वर्णित है परन्तु पाञ्चरात्र दर्शन का वर्णन नहीं है।[60] संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध नाम नागसूची में सम्मिलित हैं परन्तु उन्हें व्यूह रूप में वर्णित नहीं किया गया।

इस अध्ययन से स्पष्ट है कि बहुत से अन्य पुराणों की तरह नीलमत भी दर्शन के क्षेत्र में रामायण महाभारत का अनुसरण करता है। यह सांख्य के तत्त्वों

का वर्णन करता है परन्तु पुरुष को साक्षिमात्र नहीं मानता। बहुदेवतावाद आदि कई विचार इसमें सुरक्षित हैं परन्तु समस्त जगत् को संचालित करने वाली परमसत्ता में विश्वास की ओर बढ़ते पग भी दिखाई देते हैं जो कश्मीर के अद्वैत शैवदर्शन के विकास में सहायक रहे होंगे।

नवम अध्याय की टिप्पणियाँ

1. Das Gupta, History of Indian Philosophy Vol. III. .p. 496
2. ऋग्वेद 10. 129.
3. वायु पु. 4. 10-11 ; मत्स्य, पु. 53, 65
4. नीलमत पु. 30-53
5. वही, 278, 323 आदि
6. वही, 616
7. वही, 614-15
8. वही, 264, 614
9. वही, 31-34, 589, 710, 714, 809, 737, 734, 798, 814, 751, 835, 110
10. सांख्यकारिका, 22
11. कठोपनिषद्, 1.3. 10-11
12. नीलमत पु, 1258-59, 1118-20
13. वही, 1114
14. वही, 1130-32
15. वही, 62, 65, 1258, 1262-64
16. वही, 1114-23
17. वही, 1180, 1185, 1147, 1129-32, 1185-86
18. वही, 353-60
19. वही, 314, 323

20. वही, 284
21. Radhakrishnan, Indian Philosophy, Vol. I. p 91
22. नीलमत पु, 1116, 1131-32, 1259
23. ऋग्वेद, 6.30.14, 7.38.51 10.60.11., 10.64.4., 10.66.11.
24. नीलमत पु 632
25. देखें पीछे अष्टम अध्याय
26. नीलमत, 1108, 1137, 1133
27. Keith, Religion and Philosophy of the Veda, p.65
28. नीलमत पु. 86-90, 92-3, 106-7, 109-10, 112-13.
29. वही 612-14, 617.
30. वही, 646-47.
31. वही, 45.
32. वही, 1129-30
33. वही, 1115, 1121-23, 142,360-61
34. कठोपनिषद्, 1.2.20; श्वेताश्वतर उप, 3.16, 19, 20.
35. नीलमत पु, 1150
36. वही, 1361, 1438
37. वही, 322, 318, 321.
38. वही, 319; मनुस्मृति, 4.88.-90
39. नीलमत पु, 1311, 701, 1036, 1280, 902, 1322, 1348.
40. वही, 670, 1390, 533, 1054, 1041, 1349, 1031, 1332, 1403, 1045.
41. शतपथ ब्रा, 2.4.4.8., 11.4.4.2
42. नीलमत पु, 322, 354, 359, 1418.
43. Radhakrishnan, Indian Philosophy, I, pp. 107-8
44. नीलमत पु, 63, 65.

45. वही, 61-67, 149-51, 1249-68

46. वही, 1091, 1143-53.

47. वही, 367, 355.

48. वही, 65-66, 1105, 1140.

49. वही, 303-4, 359, 1262

50. वही, 303-4, 322, 365.

51. वही, 1277, 1281-82, 1301, 1324-25, 1280, 1438, 1263, 1245, 273-74.

52. वही, 509.

53. Kalla Lacchmidhar, The Birthplace of Kalidasa, p. 27

54. Chatterji, J.C. Kashmir Shaivism, pp. 42-45, 50, 54-55

55. Kalla Lacchmidhar, OpCit. p 27

56. नीलमत पु, 1129-32, 1139-40. तथा कांजीलाल और जाडू द्वारा सम्पादित (1924 लाहौर) संस्करण के पद्य सं 1270-79. जो के. डी. व्रीज़ द्वारा सम्पादित (1936 लीडन) संस्करण के परिशिष्ट में दिये हैं पद्य सं 1243-46.

57. Bühler, Report p. 33

58. Hazra, R.C. Puranic Records on Hindu Rites and Customs, pp. 6-7

59. Chatterji, J.C. OpCit.pp. 10-14 fn.3

    Pandey, K.C. Abhinava Gupta pp. 59-60

60. हीरोमिशी हिकिता ने विष्णुधर्मोत्तर पुराण तथा विश्वामित्र संहिता में वर्णित चातुर्मास्यव्रत की विधि की समानता नीलमत पुराण में वर्णित देवप्रस्वापन तथा देवोत्थान की विधि से बताई है। विस्तृत विवरण के लिए देखें article " Pañcarātra Elements in the Ritual of the Nilamata" in A Study of the Nilamata (1994 Kyoto) edited by Yasuke Ikari

❑❑❑

दशम अध्याय

नीलमत का साहित्यिक मूल्याङ्कन

1. भाषा

नीलमत के रचयिता न तो ऐसे विद्वान् वैयाकरण थे जिनकी विद्वत्ता उनकी भाषा को व्याकरण के दुरूह नियमों का अनुसरण करने को बाध्य करती है और न ही वे ऐसे उच्च कोटि के कवि थे जिनकी कवित्व शक्ति के कारण उनके विचारों की वाहक भाषा की ध्वनियों में ही अर्थों की गूंज सुनाई देती है। नीलमत की भाषा सीधी, सरल, बन्धनमुक्त, पौराणिक भाषा है जिसमें अनेक प्रकार के अपाणिनीय प्रयोग दृष्टिगोचर होते हैं।

कई धातुओं में गण परिवर्तन दीखता है। अदादिगण की अस् धातु के रूप भ्वादिगण की तरह मिलते हैं।[1] कहीं कर्मवाच्य के रूप के स्थान पर कर्तृवाच्यरूप का[2] प्रयोग है और कर्तृवाच्यरूप के स्थान पर कर्मवाच्यरूप मिलता है। इसी प्रकार णिजन्तरूप के स्थान पर अणिजन्त का,[3] परस्मैपद के स्थान पर आत्मनेपद का, आत्मनेपद के स्थान पर परस्मैपद का प्रयोग मिल जाता है।[4] कृदन्तों के क्षेत्र में यह अनियमितता संज्ञा शब्दों के लिंग प्रयोग में[5] तथा विभक्तियों के अपाणिनीय प्रयोगों में[6] दिखाई देती है। छन्द की रक्षा के लिए पादों के मध्य सन्धि का अभाव दिखाई देता है।[7]

2. अलंकार

नीलमत में जटिल अलंकारों का प्रयोग न होकर उपमा, रूपक और विरोधाभास जैसे अलंकारों का प्रयोग हुआ है जो भाषा के सौन्दर्य को बढ़ाते हैं। इनका प्रयोग सायास न होकर स्वाभाविक रूप से हुआ है। ये अलंकार किसी भाव को सशक्त बनाते हैं, किसी अस्पष्ट भाव को स्पष्टता प्रदान करते हैं तथा किसी भाव को अज्ञात की परिधि से बाहर निकाल कर ज्ञात की परिधि में लाते हैं।[8] उपमाओं के लिए उपमान प्रायः प्रकृति से लिए गए हैं।[9] सूर्य, चन्द्र, आकाश, मेघ, विद्युत्, जलतरंग, हिमाचल, शैल, तुषार सभी उपमान बने

हैं। कुछ उपमाएं बहुत सुन्दर बन पड़ी हैं। सतीसर की उपमा आकाशमिव गम्भीरं कहकर आकाश से दी गई है जो उसके जलों की अथाह गहराई को द्योतित करती है (पद्य सं 47)। नदी को तोयशैलोपमा अर्थात् पानी के पहाड़ जैसी कहा है।[10] यह उपमा पर्वतीय प्रदेश की चट्टानों से टकराती, बहुत ऊँची उठती तरंगों वाली नदी का साक्षात् चित्र पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर देती है। कमल से उपमा कोमलता और सुन्दरता की अभिव्यक्ति के लिए,[11] अग्नि से उपमा पवित्रता और चमक की अभिव्यक्ति के लिए[12] तथा तुषार से उपमा श्वेतता की अभिव्यक्ति के लिए दी गई है।[13] इसी प्रकार मधु, दुग्ध, अमृत आदि उपमानों के रूप में प्रयुक्त हुए हैं।[14] कुछ उपमाएं कश्मीर के जनजीवन से ली गई हैं। जैसे मृत्युदण्ड प्राप्त कैदियों को मुक्त करने की तुलना आघातस्थान से छूटे पशुओं से,[15] सुन्दर स्त्रियों से युक्त कश्मीर प्रदेश की तुलना सुन्दर स्त्रियों (देवदासियों) से युक्त देवालय से की गई है।[16] पिशाचों द्वारा गृहीत, इधर उधर भटकते वृद्ध ब्राह्मण चन्द्रदेव की दयनीय दशा की उपमा छोटे छोटे बालकों द्वारा अपने खेल के लिए रस्सी से बांधे गये पक्षी से की गई है (पद्य सं 337-338)। कुछ उपमाएं पुराण इतिहास से ली गई हैं जैसे कद्रू की उपमा अदिति से तथा नागों के रक्षक नीलनाग की उपमा देवों के रक्षक इन्द्र से की गई है।[17]

रूपकों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम संख्या में हुआ है। कश्मीर प्रदेश को उमा बताया गया है।[18] नदियों पर देवियों का आरोप है।[19] नृपपुंगव, भुजंगशार्दूल जैसे प्रयोग छन्द:पूर्त्ति के लिए किये गये हैं।[20] पद्य सं 1428-29 में वितस्ता के महत्त्व का प्रतिपादन है। वहाँ वितस्ता और गंगा की तुलना करते हुए गंगा में मानव अस्थियों की अधिकता बताकर व्यतिरेकालङ्कारध्वनि का प्रयोग किया गया है। पद्य सं 1262 में विरोधाभास है जहाँ विष्णु को सूक्ष्म तथा विशाल कहा है। श्लेष का प्राचीन रूप कुछ नामों की व्युत्पत्ति में दिखाई देता है जैसे यागबहुल प्रयाग, यमपाशघ्नी यमुना, तोषितभास्करा तौषी और चन्द्रांशुशीतलजला चन्द्रभागा।[22] विशोका नदी में स्नान कर के व्यक्ति शोकरहित हो जाता है।[22] अग्नितीर्थ में स्नान करके वह्निलोक प्राप्त कर लेता है।[23] पुण्डरीकतीर्थ में स्नान करके पुण्डरीकयज्ञ का फल पाता है।[24] कामतीर्थ में स्नान करके कामभाग् हो जाता है।[25] ऋषितीर्थ में स्नान करके व्यक्ति ऋषिपद पा लेता है।[26] तिलप्रस्थतीर्थ में स्नान करने पर एक प्रस्थ तिल दान करने का फल मिल जाता है।[27]

अनुप्रास अलंकार का प्रयोग लगभग एक सौ पिचहत्तर बार हुआ है। शब्दालंकार होने पर भी बहुत से स्थलों पर यह अलंकार अर्थाभिव्यक्ति में विशेष सहायता देता हुआ दिखाई देता है। दो या अधिक शब्दों के आदि में एक सी ध्वनि का प्रयोग उन शब्दों के पारस्परिक सम्बन्ध की निकटता और दृढ़ता को सरलता से प्रकट कर देता है। कहीं संज्ञा और क्रिया का निकट सम्बन्ध प्रकट होता है जैसे निम्न उदाहरणों में ....

यस्मादयं जले जातः तस्मादयं जलोद्भवः पद्य सं ८०

वरं वरय, वरयामि वरं देव पद्य सं 371-372

पानं च पानपैः पेयं पद्य सं 467

योद्धुं याति पद्य सं 683 शप्ता शक्रेण काश्यप पद्य सं 693

पुरस्कृत्य पुरोधसम् पद्य सं. 856

निर्याहि नगरादस्मात् पद्य सं 1016

इसी प्रकार संज्ञा शब्दों का संज्ञा शब्दों के साथ, विशेषणों का विशेषणों के साथ, संज्ञाओं का विशेषणों के साथ, क्रियाओं का क्रियाविशेषणों के साथ सम्बन्ध अनुप्रास अलंकार के माध्यम से प्रकट होता है जैसे निम्न उदाहरणों में-

विशोकां विजयेशं च वितस्तासिन्धुसंगमम्। पद्य सं. 1096
दानं दीनजनस्य च। पद्य सं 715
सुवासाः स्वनुलिप्ताङ्गः सुचित्तः सुसमाहितः। पद्य सं 696
परं पुराणं परमं सनातनम्। पद्य सं 65
यामीं तु यातनां घोरां - पद्य सं 321
दिने दैवज्ञनिर्दिष्टे - पद्य सं 560
भ्रमन्त्यौ यत्र स नागराजः।। पद्य सं. 339
स्नातव्यं सततं तया।। पद्य सं. 804

3. छन्द

नीलमत का अधिकतर भाग अनुष्टुप् छन्द में रचा गया है। थोड़े से पद्यों

में त्रिष्टुप् का प्रयोग किया गया है।[28] अनुष्टुप् को श्लोक भी कहा जाता है। इसमें आठ आठ अक्षरों के चार पाद अथवा सोलह अक्षरों की दो पंक्तियाँ होती हैं। त्रिष्टुप् में ग्यारह-ग्यारह अक्षरों के चार पाद होते हैं। कुछ श्लोक एक या तीन पंक्तियों के भी मिलते हैं। श्लोक की पंक्ति के दो पादों के बीच सन्धि के अभाव से बचने के लिए पादादि में हि नु तु आदि निपातों का प्रयोग किया गया है।[29] परन्तु कई श्लोकों में दो पादों के मध्य सन्धि का अभाव दिखाई देता है।[30] यह श्लोक की उस पूर्व अवस्था का द्योतक है जब श्लोक के चारों पादों को स्वतन्त्र माना जाता था। श्लोकों में गुरु लघु अक्षरों के प्रतिबन्ध का पालन पूर्ण रूप से नहीं किया गया है। छन्दपूर्ति के लिए कई बार सम्बोधन, विशेषणों आदि का प्रयोग हुआ है।[31]

लय/अन्त्यानुप्रास

अधिकतर पद्यों की पंक्तियों या पादों में अन्त्यानुप्रास नहीं है परन्तु कुछ एक पद्यों में यह पाद के भीतर भी दिखाई देता है जैसे- अन्तर्वर्त्नी तस्य पत्नी (पद्य सं. 9) विभुश्चापि प्रभुश्चापि (पद्य सं. 639) विश्वाची च घृताची च (पद्य सं. 665)

कुछ पद्यों में पंक्तियाँ अन्त्यानुप्रास से जुड़ी हैं जैसे- सर्वोत्पातप्रशमनी कलिदु:स्वप्ननाशिनी (पद्य सं. 657) आयुष्प्रदा पुष्टिकरी धनसौभाग्यवर्धिनी। व्याधिशत्रुप्रशमनी राज्यराष्ट्रविवर्धिनी (पद्य सं. 658)

कृत्वा पुराणि ग्रामाणि तीर्थान्यायतनानि च।
गृहाणि च विचित्राणि ह्युवास वसतिं जनः।। (पद्य सं. 382)

निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि अपनी इन विशेषताओं के कारण यह नीलमतपुराण कश्मीर की प्राचीनतम साहित्यिक कृति की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

दशम अध्याय की टिप्पणियाँ

1. नीलमत पु, 343-44 उपासन्त, उपासन्ति
2. वही, 235, 1091. उष्यते के स्थान पर वसते, तपते के स्थान पर तप्यते
3. वही, 821, 1058, प्राशयेत के स्थान पर प्राश्नीयात्, आपयति के स्थान

पर आप्नोति

4. वही, 38 विनश्यति के स्थान पर विनश्यते

वही, 722 भवति के स्थान पर भवते

वही, 863 पश्येयु: के स्थान पर पश्येरन्

वही, 1116 स्वपिषि के स्थान पर स्वपिषे

वही, 700 प्रीयन्ते के स्थान पर प्रीयन्ति

वही, 1126 नमस्कृत्वा, 1351 गृह्य

वही, 66 चिन्तयान:

वही, 888 आनीतव्यम्

वही, 1184 ददामि के स्थान पर दद्मि

5. वही, 13 विपय: के स्थान पर विषयम् ; 30, 46, 144 देश: के स्थान पर देशम् वही, 385 आचारा: के स्थान पर आचाराणि; 388 निर्बन्ध: के स्थान पर निर्बन्धम् वही, 911 आतङ्क: के स्थान पर आतङ्कम्; 981 परिवार: स्थान के पर परीवारम् वही, 1123 यज्ञा: के स्थान पर यज्ञानि 829 द्राक्षावट: के स्थान पर द्राक्षावटम् वही 844 मार्ग: के स्थान पर मार्गम्

6. वही, 380, 456 कथ् और दा धातु के साथ सप्तमी विभक्ति का प्रयोग वही, 356, 382 उपसर्ग रहित वस् धातु के साथ षष्ठी और द्वितीया का प्रयोग

7. वही, 137, 145, 247, 157, 163 आदि

8. Gonda, J, Remarks on Similes in Sanskrit Literature, p.11

9. नीलमत पु. 339, 340, 345, 346,355,1251, 1440, 1453 आदि

10. वही, 329

11. वही, 64, 351, 1254, 1284

12. वही, 273, 355

13. वही, 1251

14. वही, 285, 302

15. वही, 861

16. वही, 20

17. वही, 362, 369

18. वही, 12

19. वही, 298

20. वही, 676

21. वही, 87, 94, 120

22. वही, 1329

23. वही, 1332

24. वही, 1355

25. वही, 1365

26. वही, 1366

27. वही, 1370.

28. वही, केवल निम्न 33 पद्य त्रिष्टुप् छन्द में हैं, शेष में अनुष्टुप् का प्रयोग है। 63, 65, 66, 67, 173-80, 194, 270-73, 285, 296, 302-4, 339, 353-54,1445-50, 1452-53

29. वही, 42, 125, 189, 266, 370, 382, 404, 405, 545, 601, 662, 726

30. वही, 137, 145, 192, 210, 247, 621 आदि

31. वही, 17, 20, 33, 41, 71, 72, 74 आदि

❑ ❑ ❑

एकादश अध्याय

उपसंहार

यद्यपि नीलमत का यह अध्ययन स्वयं प्राचीन कश्मीर का सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत नहीं करता तो भी इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि यह राजतरंगिणी के संग पूरक के रूप में बहुमूल्य सामग्री प्रदान करता है। कल्हण, जोनराज, श्रीवर की राजतरंगिणियाँ हमारा परिचय कश्मीर के प्राचीन राजाओं, रानियों उनके मन्त्रियों तथा अधिकारियों से करवाती हैं जबकि नीलमतपुराण हमारा परिचय सामान्य जनता से करवाता है जो राजमहलों में नहीं अपितु साधारण घरों में रहती है, गलियों, बाज़ारों में भ्रमण करती है, उपवनों में आनन्द मनाती है, तीर्थों की यात्राएं करती है तथा मन्दिरों में पूजा करती है। वस्तुतः इतिहास केवल शासकों के जन्ममरण, उनकी विजयों और पराजयों का वर्णन मात्र ही नहीं होता। वह किसी भी देश और काल के समाज का समग्र चित्रण होता है। नगर, ग्राम, तीर्थ कैसे बने ? कौन कौन लोग कब कहाँ कैसे बसे ? वे किस भौगोलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पर्यावरण में रहते थे? उनकी धार्मिक और सामाजिक मान्यतायें क्या थीं? उनकी जीवनशैली में क्या क्या परिवर्तन आए ? इन सब का अध्ययन इतिहास है। इस दृष्टि से नीलमतपुराण के अध्ययन का विशेष महत्त्व है क्योंकि यह प्राचीन कश्मीर के लोकजीवन से जुड़े तथ्यों पर प्रकाश डालता है। कश्मीर की सामान्य जनता का खानपान, उनके मनोरंजन के साधन, उनकी धार्मिक मान्यतायें और उनके पर्व त्यौहार सभी इस पुराण में वर्णित हैं।

इस पुराण का समय छठी या सातवीं शती ई० है जब बौद्धधर्म के प्रसार का स्वर्णयुग कुषाणों का काल अतीत की गोद में समा चुका था। लोकधर्मसंवलित हिन्दूधर्म का पुनर्जागरण हो चुका था। नीलमत के काल निर्णय में एक नयी

खोज नीलमतपुराण और कृत्यकल्पतरु में उद्धृत ब्रह्मपुराण (आदिपुराण) का निकट सम्बन्ध है।

नीलमत में कश्मीर से सम्बद्ध भौगोलिक सामग्री का बाहुल्य है और उसका अध्ययन प्राचीन कश्मीर के लोगों के भारत के अन्य भागों से परिचित होने की भी पुष्टि करता है।

प्राचीन कश्मीर के निवासियों के विषय में नीलमत में पर्याप्त महत्त्वपूर्ण जानकारी सुरक्षित है। यहाँ के मूलनिवासी नाग जाति के लोग थे। फिर यह भूमि पिशाचों और मानवों का निवास बनी। इस विषय में मैंने नीलमत में उपलब्ध सामग्री का अन्य प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध सामग्री के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन प्रस्तुत किया है तथा नागों और पिशाचों को प्राचीन जातियों के रूप में सिद्ध किया है।

प्राचीन कश्मीर के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन के विषय में नीलमत का अध्ययन रोचक सामग्री प्रस्तुत करता है। वहाँ चारों वर्णों और उनके कुछ उपभेदों का अस्तित्व था। कालवेत्ता और इतिहासवेत्ता ब्राह्मणों को विशेष रूप से सम्मान प्राप्त था परन्तु शूद्र भी समाज में उपेक्षित नहीं थे। सामाजिक व्यवस्था में परिवार के सेवकों के प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार तत्कालीन कश्मीर की सामाजिक व्यवस्था का सुखद पक्ष प्रस्तुत करता है। स्त्रियों के लिए अवमानना का भाव कहीं नहीं दीखता और समाज में उनके स्वतन्त्र विचरण पर भी कोई प्रतिबन्ध नहीं था। लोगों की संगीत, नृत्य, नाटकों तथा मनोरंजन के अन्य साधनों में विशेष अभिरुचि थी जो कृषि और व्यापार पर आधारित उनकी समृद्धि को सूचित करती है। राजनैतिक विचारधारा के क्षेत्र में राजा की दैवी शक्ति में लोगों का विश्वास था परन्तु न्यायधर्म को उससे भी ऊपर माना गया था। गणतन्त्र के कुछ अवशेष थे।

धार्मिक जीवन के विषय में जैसा कि सप्तम अध्याय में स्पष्ट किया गया है, विष्णु, ब्रह्मा, शिव, सूर्य, दुर्गा, नाग और बुद्ध आदि सभी की पूजा साथ साथ प्रचलित थी। नीलमत में निःसन्देह वैष्णव धर्म का प्रमुख स्थान है परन्तु अन्य धर्मों के प्रति विरोध या अवमानना का भाव कहीं द्योतित नहीं होता। यदि कृत्यकल्पतरु द्वारा ब्रह्मपुराण से उद्धृत बुद्धजन्ममहोत्सव सम्बन्धी पद्य मूलतः

नीलमतपुराण के ही हैं जैसा कि मेरा दृढ़ मत है तो यह स्वीकार करना होगा कि नीलमत ही एकमात्र ऐसा पुराण है जिसमें बौद्ध भिक्षुओं की पूजा का विधान किया गया है।

कश्मीर में नागपूजा की लोकप्रियता का प्रमाण नीलमत देता है। वस्तुतः भारत देश में नागपूजा की जड़ें इतनी गहरी रही हैं कि सामान्य जनता से जुड़ने के लिए हर किसी भारतीय धर्म ने इसे स्वीकार कर लिया है। नीलमत में उपलब्ध सूचना इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि इसके अनुसार जहाँ दूसरे धर्मों में नागों को देवों के रूप में स्वीकारा गया है, वहाँ नागधर्म में भी हिन्दू देवों को स्थान मिला है। संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, नारायण, वासुदेव, जनार्दन, हरि, हर, भव, महादेव, शम्भु, कपाली, गुह, कुमार, राम, लक्ष्मण सभी नीलमत की नागसूची में सम्मिलित किये गए हैं।

नीलमत में व्रतों उत्सवों का वर्णन भी कश्मीर के धार्मिक जीवन पर प्रकाश डालता है। उन के अध्ययन से विभिन्न सम्प्रदायों के देवी देवताओं तथा लोकधर्म से जुड़ी प्रथाओं की सूचना मिलती है। इसके अतिरिक्त वैष्णव उत्सवों की प्रमुखता, जटिल श्रौतयज्ञों के स्थान पर अपेक्षाकृत सरल कोटिहोम, लक्षहोम यज्ञों का प्रचलन, व्रत, पूजा, जप, दान तथा तीर्थयात्राओं की बढ़ती लोकप्रियता भी सूचित होती है।

दार्शनिक विचारों के क्षेत्र में बहुत से अन्य पुराणों की तरह नीलमतपुराण ईश्वरतत्त्व सहित सांख्यदर्शन के तत्त्वों को प्रस्तुत करता है। बहुदेवतावाद, बारी बारी से कई देवों को सर्वोच्च मानना, पशुपक्षी देवतावाद, विश्वात्मवाद, एकेश्वरवाद आदि बहुत सी दार्शनिक विचारधाराएं नीलमत में विद्यमान हैं। परन्तु अद्वैतवाद की ओर पग बढ़ाते हुए एकेश्वरवाद की प्रवृत्ति प्रमुख है। इससे कश्मीर के अद्वैतशैवदर्शन के विकास में सहायता मिली है परन्तु कश्मीर के अद्वैतशैवदर्शन के विकसित रूप के सभी सिद्धान्तों को नीलमत में ढूँढना दूर की बात है। जैसा कि नवम अध्याय में स्पष्ट किया गया है, श्री कल्ला का मत जिन पद्यों पर आधारित है उनमें से बहुत से पद्यों की मूल नीलमत में उपस्थिति संदिग्ध है।

नीलमतपुराण की भाषा अन्य पुराणों की भाषा की तरह ही सरल है तथा कई प्रकार के अपाणिनीय प्रयोगों से युक्त है। उपमा, रूपक और अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग भी मिलता है। इस प्रकार नीलमतपुराण न केवल कश्मीर के सांस्कृतिक इतिहास का महत्त्वपूर्ण स्रोत है अपितु इस प्रदेश की प्राचीनतम साहित्यिक कृति भी है।

नीलमतपुराण

द्वितीय खण्ड

नीलमतपुराणम्*

ओं स्वस्ति। श्रीगणेशाय नमः। नमो भगवते वासुदेवाय ओम्।

हे रक्षक प्रभो! कल्याण हो। श्रीगणेश को नमस्कार। श्रीवासुदेव को नमस्कार। ओम् को नमस्कार।

श्रीनिवासं हरिं देवं वरदं परमेश्वरम्।
त्रैलोक्यनाथं गोविन्दं प्रणम्याक्षरमव्ययम्[1] ॥ 1 ॥

परिक्षिद्वंशभृच्छ्रीमान्नृपतिर्जनमेजयः।
पप्रच्छ शिष्यं व्यासस्य वैशम्पायनमन्तिकात्[2] ॥ 2 ॥

अनेकदेवपरक अर्थ-लक्ष्मी के आश्रय (स्थान) लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुदेव, वरदान देने वाले, परमैश्वर्यवान् एवं परम शक्तिशाली, महेश्वर (महादेव) तीनों (पाताल, पृथिवी एवं द्युलोक इन) लोकों के स्वामी भगवान् गोपालक (कृष्ण) एवं पृथिवी के अन्वेषक (वराहावतारधारी) भगवान् विष्णु और अविनश्वर एवं अविभाज्य (स्वरूप वाले वेदान्तप्रसिद्ध अक्षर को परम ज्योति और परम ब्रह्म रूप) एक ईश्वर परमेश्वर प्रणाम करके

विष्णुदेवपरक अर्थ-वरदान देने वाले, परम शक्तिशाली, तीनों लोकों के स्वामी, अविनश्वर, अखण्ड और लक्ष्मी के आश्रय (स्थान लक्ष्मीपति) विष्णुदेव को प्रणाम करके परिक्षित् के वंश को धारण करने वाले (परिक्षित् के कुल में उत्पन्न श्रीमान् (यशस्वी) राजा जनमेजय ने व्यास के शिष्य वैशम्पायन के पास (जाकर) यह प्रश्न पूछा[2]।। 1-2।।

श्रीजनमेजयः[3]
महाभारतसङ्ग्रामे नानादेश[4]नराधिपाः।।
महाशूराः समायाताः पितॄणां मे[5] महात्मनाम्॥ 3 ॥

महाभारत के युद्ध में परमपराक्रमी अनेक देशों के राजा (तो) मेरे अत्यन्त आत्मबल वाले (साहसी) पूर्वजों के पास आये।। 3।।

** यह शीर्षक EG पाण्डुलिपि में प्राप्त, यह मंगलाचरण A, ओंश्रीगणेशाय नमः D, ओं नमः शिवाय ओं E, ओं नमो विघ्नहर्त्रे'। ओं श्रीगुरुभ्यो नमः। ओं श्रीवाग्देव्यै नमः ओं F, ओं स्वस्ति श्रीगणेशाय नमः। ओं नमः शिवाय। ओं नमो भगवते वासुदेवाय ओं G, ओं नमः। प्रारभ्य श्रीगुरवे नमः। ओं H*

1. यह BCDEFGH, नमाम्यक्षरमव्ययम् A

2. मन्तिकम् C

3. उवाच अधिक BCDEF, श्री लुप्त BCDEFG

4. नानादेश्या BCDE, नानादेशा FG

5. वै F

कथं काश्मीरको[1] राजा नायातस्तत्र कीर्तय।
पाण्डवैर्धार्तराष्ट्रैर्वा न वृतः स कथं नृपः॥ 4॥
कश्मीरमण्डलं[2] चैव प्रधानं जगति स्थितम्[3] ॥ 5॥

किन्तु आप यह बतायें कि वहाँ कश्मीर का राजा क्यों नहीं पहुँचा और किस कारण पाण्डवों और धृतराष्ट्र के पुत्रों ने उसे (अपने अपने पक्ष के लिए) क्यों नहीं चुना? और यह कश्मीर प्रदेश तो इस संसार में प्रधान होकर अवस्थित है।। 4-5।।

वैशम्पायनः[4]

.................................वासुदेवं स्वयंवरे[5]।
जगाम माधवं[6] योद्धुं चतुरङ्गबलान्वितः॥ 6॥

(महाभारत युद्ध से पूर्व कश्मीर का राजा दामोदर) अपनी चतुरङ्गिणी सेना लेकर वासुदेव के पुत्र माधव से युद्ध करने के लिए किसी स्वयंवर में गया हुआ था।। 6।।

तत्र तस्याभवद् युद्धं वासुदेवेन धीमता[7]।
यादृशं वासुदेवस्य नरकेन सहाभवत्॥ 7॥

वहाँ उसका बुद्धिमान् वासुदेव के साथ वैसा ही युद्ध हुआ जैसा वसुदेव के पुत्र कृष्ण का नरकासुर के साथ हुआ था।। 7।।

---

1. कश्मीरको D, काश्मीरिको F

2. यह ACF, काश्मीरमण्डलं D, काश्मीरामण्डलं E

3. प्रभो H यहां कुछ पद्य लुप्त हैं।

4. लुप्त G

5. इस पंक्ति का पहला आधा भाग किसी अन्य के हाथ से लिखा है। स तु काश्मीरको राजा D, नाको नाम नृपतिर्वासुदेवस्वयंवरे H

6. विनष्ट F

7. शेष विनष्ट F

ततः स वासुदेवेन स्वयं युद्धे विनिपातितः[1] ॥ 8 ॥

अन्तर्वत्नीं तस्य पत्नीं वासुदेवोऽभ्यषेचयत्।
भविष्यत्पुत्रराज्यार्थं तस्य देशस्य गौरवात्॥ 9 ॥

फिर वह (कश्मीरनरेश) वासुदेव द्वारा मार गिराया गया।। 8।।

उस (कश्मीर) प्रदेश के गौरव के कारण वासुदेव ने राजा की गर्भवती पत्नी का राज्याभिषेक किया ताकि भविष्य में उत्पन्न होने वाला उस (राजा) का पुत्र वहाँ राज्य कर सके।। 9।।

ततः सा सुषुवे पुत्रं बालं गोनन्दसंज्ञितम्[2]।
बालभावात्[3] पाण्डुसुतैर्नानीतः कौरवैर्न वा॥ 10 ॥

बाद में उस रानी ने पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम गोनन्द रखा गया। छोटा बालक होने के कारण उसे न तो पाण्डव और न ही कौरव (युद्ध में) लाये।। 10।।

जनमेजयः[4]
देशस्य गौरवं चक्रे किमर्थं द्विजसत्तम।
वासुदेवो महात्मा यदभ्यषिञ्चत् स्वयं स्त्रियम्॥ 11 ॥

जनमेजय ने (पूछा)

हे द्विजों में श्रेष्ठ द्विज! पवित्रात्मा वासुदेव ने स्वयं एक नारी का राज्याभिषेक करके (कश्मीर) प्रदेश को यह सम्मान क्यों प्रदान किया।। 11।।

---

1. स युद्धे विनिपातितः DF, युद्धे तस्मिन्निपातितः C, विनष्ट F, स्वयं युद्धे निपातितः B सुयुद्धं (मूलपाठ)

2. बालगोनन्दसंज्ञितम् BC, बालं गोविन्दसंज्ञकम् DE, गोविन्द के स्थान पर गोनन्द अन्य हाथ से H

3. बालाभावात् D, बालभवात् C.

4. जनमेजय उवाच CE, वैशम्पायन उवाच D

वैशम्पायनः[1]
यैव[2] देवी उमा[3] सैव कश्मीरा[4] नृपसत्तम[5]।
आसीत् सरः पूर्णजलं सुरम्यं सुमनोहरम्॥ 12॥

कल्पारम्भप्रभृति यत्[6] पुरा मन्वन्तराणि षट्।
अस्मिन् मन्वन्तरे जातं विषयं सुमनोहरम्॥ 13॥

वैशम्पायन ने कहा

हे राजाओं में श्रेष्ठ राजन्, जो देवी पार्वती है वही कश्मीरा है। जो पूर्वकाल में कल्प के प्रारम्भ से लेकर छः मन्वन्तरों तक जल से भरी सुन्दर बहुत मनोहर झील थी वही इस मन्वन्तर में एक सुन्दर प्रदेश बन गया है। 12-13॥

शालिमालाकुलं स्फीतं सत्फलाद्यैः समन्वितम्।
स्वाध्यायध्याननिरतैर्यज्ञशीलैर्जनैर्युतम्[7]॥ 14॥

तपस्विभिर्धर्मपरैर्वेदवेदाङ्गपारगैः।
क्षत्रियैः सुमहाभागैः सर्वशस्त्रास्त्रपारगैः[8]॥ 15॥

वैश्यैर्वृत्तिपरैः[9] शूद्रैर्द्विजातिपरिचारकैः।
देवतायतनोपेतं सर्वतीर्थमयं शुभम्[10]॥ 16॥

(यह प्रदेश) धान की क्यारियों से परिपूर्ण है, अच्छे अच्छे फलों से लदे वृक्षों से युक्त है, स्वाध्याय और ध्यान में संलग्न, निरन्तर यज्ञ करने के स्वभाव वाले लोगों से युक्त है। वहाँ वेदवेदांगों में पारंगत तपस्वी, सब प्रकार के शस्त्रों और अस्त्रों में निपुण महाभाग्यशाली क्षत्रिय, अपनी जीविका कमाने में लगे हुए

---

1. वैशम्पापन उवाच CD
2. यैषा C
3. तया G
4. काश्मीर D, काश्मीरा E
5. नृपपुङ्गव DE
6. व : H. प्रथम पंक्ति ऊपर हाशिये पर
7. स्वाध्यायदान-DFH
8. लुप्त D, सर्वशास्त्रास्त्र AGH
9. वृत्तिरतै : BDEFG
10. 16वें पद्य का पहला पाद और 17वें पद्य की पहली पंक्ति लुप्त A

वैश्य तथा द्विजों की सेवा में तत्पर शूद्र हैं। देवमन्दिरों से और सब तीर्थों से युक्त यह शुभ स्थान है।। 14, 15, 16।।

पृथिव्यां यानि तीर्थानि[1] तानि तत्र नराधिप।
ऋष्याश्रमसुसम्बाधं[2] शीतातपसुखं शुभम्[3] ॥ 17 ॥

हे राजन्! इस पृथिवी पर जितने भी तीर्थ स्थान हैं वे सब यहाँ हैं। ऋषियों के आश्रमों से घिरी हुई यह मंगलमय भूमि शीत और ग्रीष्म दोनों कालों में सुखद है।। 17।।

अधृष्यं[4] परराष्ट्राणां तद्भयानामकोविदम्।
गोऽश्वनागादिबहुलं[5] दुर्भिक्षातङ्कवर्जितम् ॥ 18 ॥

यह प्रदेश शत्रु राष्ट्रों द्वारा अजेय तथा उनसे उत्पन्न भयों से अनभिज्ञ है। गायों, घोड़ों तथा हाथियों से समृद्ध है तथा दुर्भिक्ष के भय से मुक्त है।। 18।।

अदेवमातृकं रम्यं पुण्यं प्राणभृतां हितम्।
सर्वसस्यगुणोपेतं ह्यनातङ्कं बहुप्रजम्[6] ॥ 19 ॥

यह प्रदेश केवल वृष्टि पर आश्रित नहीं है। यह सुहावना, पवित्र, प्राणियों के लिए लाभदायक, सभी प्रकार के अनाज को उत्पन्न करने वाले गुणों से युक्त, आतंकरहित तथा बहुत अधिक जनसंख्या से युक्त है।। 19।।

---

1. *तीर्थाणि H*
2. *ऋष्याश्रमसम्बाधं G, मुन्याश्रमैरसम्बाधं C*
3. *शीतातपशुभं सुखम् से परिष्कृत C, शीतातपजलं शुभम् DEFGH*
4. *यह C, अदृश्यं ADEFGH*
5. *गोऽश्वनागाविश्वकुलं G*
6. *अनातङ्क A*

स्त्रीभिश्च सुकुमाराभि[1]र्देवालयसमश्रियम्[2]।
दुष्टैर्भुजङ्गशार्दूल[3]महिषर्क्षै[4]र्विवर्जितम्॥ 20॥

और यह सुन्दर, सुकुमारी स्त्रियों से युक्त होने के कारण देवालय के समान शोभा को धारण करता है और दुष्ट साँपों, चीतों, भैंसों तथा रीछों से रहित है।। 20।।

ब्रह्मघोषधनुर्घोषनित्योत्सवसमाकुलम्।
केलिप्रायजनाकीर्णं नित्यहृष्टैर्जनैर्वृतम्[5]॥ 21॥

वैदिक मन्त्रों के उद्घोष तथा धनुषों की टंकारों से युक्त, नित्य उत्सवों की रौनक से भरा, प्राय: खेलकूद में मस्त तथा सदैव प्रसन्न रहने वाले लोगों से भरा हुआ है।। 21।।

उद्यानारामसम्बाधं वीणापटहनादितम्।
नित्यशौण्डजनोपेतं सतां हृदयवल्लभम्॥ 22॥

यह उपवनों और विश्रामस्थलियों से परिपूर्ण, वीणा तथा ढोलक के नाद से गुंजित, मदिरा के शौकीन लोगों से युक्त तथा साधुजनों के हृदयों को प्रिय लगने वाला है।। 22।।

नानापुष्पफलोपेतं नानाद्रुमलतौषधम्।
नानामृगगणाकीर्णं सिद्धचारणसेवितम्॥ 23॥

यह अनेक प्रकार के फूलों तथा फलों से भरे विभिन्न पेड़ों, लताओं और औषधियों वाला, नाना प्रकार के वन्य पशुओं से भरा हुआ, सिद्धों और चारणों से सेवित है।। 23।।

---

1. *सुकुमारीभि : H*

2. *समाश्रयम् C, —समन्वितम् H*

3. *शार्दूलै : DE*

4. *महिष्यर्क्षै : ed Leiden, महिषाख्यै : H*

5. *नित्यप्रीतैर्जनैर्वृतम् DEF, नित्यहृष्टबुधावृतम् C*

कश्मीरामण्डलं[1] पुण्यं सर्वतीर्थमरिन्दम।
तत्र नागह्रदाः पुण्यास्तत्र पुण्याः शिलोच्चयाः॥ 24॥

तत्र नद्यस्तथा पुण्याः पुण्यानि च सरांस्यपि[2]।
देवालया महापुण्या[3]स्तेषां चैव तथाश्रमाः॥ 25॥

हे रिपुदमन! कश्मीरा देवी के उस पवित्र मण्डल में सभी स्थान तीर्थ हैं। वहाँ पवित्र नाग सरोवर और पवित्र पर्वत हैं। वहाँ पवित्र नदियाँ और पवित्र झीलें हैं, अत्यधिक पवित्र मन्दिर और उनसे सम्बद्ध वैसे ही आश्रम भी हैं।। 24-25।।

तस्य मध्येन[4] निर्याता[5] सीमन्तमिव[6] कुर्वती।
वितस्ता परमा देवी साक्षाद्धिमनगोद्भवा॥ 26॥

(सिर के बालों में) माँग के समान उसके मध्य में विभाजन करती हुई परमदेवी वितस्ता (नदी) बहती है जो साक्षात् हिमालय से उत्पन्न हुई है।। 26।।

जनमेजयः[7]
मन्वन्तरेषु पूर्वेषु[8] यदासीद् विमलं सरः[9]।
कथं वैवस्वते जातं तन्मण्डलमिति[10] द्विज[11]॥ 27॥

जनमेजय (ने पूछा) हे द्विज! पूर्व मन्वन्तरों में जो निर्मल सरोवर था वह वैवस्वत मन्वन्तर में (कश्मीर) मण्डल कैसे बन गया।। 27।।

---

1. *यह CE, कश्मीरमण्डलं ADFH*
2. *पुण्यान्यपि सरांसि च C पुण्यानि च सरांसि च H*
3. *देवालयं च महापुण्यं DF, देवालयं महापुण्यं GH, देवालयाः सुपुण्याश्च C.*
4. *तन्मध्येन च C*
5. *निर्याति H*
6. *सीमान्तम् D*
7. *जनमेजय उवाच C*
8. *सर्वेषु CG*
9. *जलम् D*
10. *निर्जलमिति H*
11. *यह A, प्रभो तथा अन्य H में किसी अन्य के हाथ से बायें हाशिये पर लिखा है। ब्रूहि मे भगवन् किञ्चिन्नास्ति तेऽविदितं खलु। प्रियशिष्योऽसि तस्यर्षे र्व्यासस्यामिततेजसः॥*

वैशम्पायन:[1]
इममर्थं पुरा जातु[2] गोनन्दाख्यो[3] नृपोत्तम:।
तीर्थयात्राप्रसङ्गेन बृहदश्वमुपागतम्[4] ॥ 28 ॥
पूजयित्वा स नृपति: पप्रच्छ नृपसत्तम ॥ 29 ॥

हे श्रेष्ठ नृप! प्राचीन समय में कभी उस गोनन्द नामक राजाओं में उत्तम राजा ने तीर्थ यात्रा के प्रसंग से आए हुए बृहदश्व की पूजा करने के पश्चात् उनसे यही बात पूछी थी।। 28-29।।

गोनन्द:[5]
मन्वन्तरेषु पूर्वेषु नासीद्देश[6]मिदं[7] किल।
कश्मीराख्यं[8] बभूवास्मिन् कथं वैवस्वतान्तरे[9] ॥ 30 ॥

गोनन्द (ने पूछा)-पूर्व मन्वन्तरों में निश्चय ही यह कश्मीर नामक देश नहीं था। फिर इस वैवस्वत मन्वन्तर में कैसे सत्ता में आया।। 30।।

---

1. *श्री वैशम्पायन उवाच C*

2. *वत्स C*

3. *गोविन्दाख्यो DE*

4. *नृपसत्तमम् C*

अन्य हाथ से लिखा है H में बायें हाशिये पर सुखासीनं समादाय पाद्यार्घ्याद्यमनुक्रमात्।

5. *उवाच C*

6. *एतत् C*

7. *पुरं C, इमं D, H*

8. *काश्मीराख्यं D*

9. *वैवस्वतेऽन्तरे C*

बृहदश्वः[1]
राशिभोगो[2] रवेर्मासः[3] सौर इत्यभिधीयते।
ऋतुस्तु[4] मासौ द्वौ[5] ज्ञेयावयनं च[6] ऋतुत्रयम्॥ 31॥

अयने द्वे तथैवाब्दमब्दानां नृप सङ्ख्यया[7]।
द्वात्रिंशच्च सहस्राणि लक्षाणां च चतुष्टयम्[8]॥ 32॥

प्रोक्तं कलियुगं राजन् द्विगुणं द्वापरं स्मृतम्।
त्रिगुणं च तथा त्रेता कृतं ज्ञेयं चतुर्गुणम्॥ 33॥

बृहदश्व ने कहा- हे नराधिप! सूर्य के एक राशि में से गुजरने पर एक सौर मास होता है। दो मासों की एक ऋतु होती है और तीन ऋतुओं का एक अयन होता है। इसी प्रकार दो अयन एक वर्ष बनाते हैं। संख्या में चार लाख बत्तीस हज़ार वर्षों को कलियुग कहा गया है। हे राजन्! इस (कलियुग) से दुगुना द्वापर कहा जाता है, तीन गुना त्रेता तथा चार गुना समय वाला कृतयुग कहा जाता है।। 31-33।।

चतुर्युगै[9] कसप्तत्या मन्वन्तरमिहोच्यते[10]॥ 34॥

यह कहा जाता है कि इकहत्तर चतुर्युगों से एक मन्वन्तर बनता है।। 34।।

---

1. *बृहदश्व उवाच CD*

2. *यह BC, भोगे अन्य*

3. *वरे E*

4. *ऋतौ E, ऋतुश्च H*

5. *मासद्वयौ AF*

6. *तद् C*

7. *नृपैवं वर्षसंख्यया C*

8. *तथा लक्षचतुष्टयम् C*

9. *चातुर्युगैक-A*

10. *उदाहृतम् A, H*

तस्मिन् मन्वन्तरेऽतीते प्रजाः स्थावरजङ्गमाः[1]।
भूर्लोकमाश्रिताः[2] सर्वा नाशमायान्ति सर्वशः ॥ 35 ॥

उस एक मन्वन्तर की समाप्ति पर इस भूमण्डल पर रहने वाली सम्पूर्ण स्थावर तथा जंगम सृष्टि पूर्णतया नष्ट हो जाती है।। 35।।

एकार्णवं जगत्सर्वं तदा भवति भूतले।
हिमवान् हेमकूटश्च निषधो[3] नीलपर्वतः ॥ 36 ॥

श्वेतश्च शृङ्गवान्मेरुर्माल्यवान्[4] गन्धमादनः[5]।
महेन्द्रो मलयः[6] सह्यः शुक्तिमानृक्षवानपि ॥ 37 ॥

विन्ध्यश्च[7] पारियात्रश्च न विनश्यन्ति पर्वताः।
शेषं विनश्यते सर्वं जम्बुद्वीपमशेषतः[8] ॥ 38 ॥

हे भूपति! तव यह समस्त संसार एक समुद्र रूप बन जाता है। हिमवान्, हेमकूट, निषध, नील पर्वत, श्वेत, शृंगवान्, मेरु, माल्यवान्, गन्धमादन, महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, ऋक्षवान्, विन्ध्य और पारियात्र ये पर्वत नष्ट नहीं होते हैं किन्तु शेष सम्पूर्ण जम्बुद्वीप पूर्णतया नष्ट हो जाता है।। 36, 37, 38।।

तदा विनष्टे लोकेऽस्मिन् महादेवः स्वयं प्रभुः।
आपो भूत्वा स्वयं[9] लोके तिष्ठत्यस्मिन् समन्ततः ॥ 39 ॥

इस सृष्टि के नष्ट हो जाने पर तब महादेवप्रभु स्वयं जल बन कर संसार के चारों ओर अधिष्ठित होते हैं।। 39।।

1. *सस्थाणु–ed Leiden, संस्थास्तु–C*
2. *भूलोकम्–D*
3. *छूटा E,*
4. *माल्यावान् D*
5. *गन्धमाधनः A*
6. *महेन्द्रोमालयः D*
7. *विन्ध्यश्च H*
8. *विशेषतः C*
9. *भूत्वेच्छया C*

सती देवी स्वयं[1] काले[2] तस्मिन् नौत्वं करोति वै[3]।
मनुर्भविष्यंस्तस्मिंस्तु[4] सर्वबीजानि मायया॥ 40॥

तदा स्थापयते राजंस्तां च नावं जगद्गुरुः।
मत्स्यरूपधरो विष्णुः शृङ्गे कृत्वापकर्षति॥ 41॥

उस समय सती देवी स्वयं नौका का रूप (धारण) करती हैं तथा भावी मनु तब माया द्वारा सब बीजों को उस नौका में स्थापित करते हैं और तब जगद्गुरु विष्णु मत्स्य का रूप धारण करके उस नौका को अपने सीगों से खींच कर ले जाते हैं।। 40, 41।।

आकृष्य नावं तां देवस्तस्मिन् पर्वतमस्तके[5]
बद्ध्वा व्रजति भूपाल ह्यविज्ञातां तदा गतिम्॥ 42॥

हे राजन्! विष्णु देव उस नाव को खींच कर उसे पर्वत की चोटी के साथ बाँध देते हैं और स्वयं न जानी जा सकने वाली अदृश्यगति को प्राप्त होते हैं।। 42।।

इदं च शिखरं पश्य देशेऽस्मिन् नृप पश्चिमे।
नौबन्धनमिति ख्यातं पुण्यं पापभयापहम्॥ 43॥

हे नरों के पालक! इस स्थान से पश्चिम की ओर देखो। नौबन्धन नामक पर्वत की यह पवित्र चोटी पापों और भयों को नष्ट करने वाली है।। 43।।

---

1. तदा से संशोधित A, स्वयं DEFH, च तत् C

2. कालं C

3. हि C, नावमाश्रिता H में दायें हाशिये पर नौत्वं करोति वै से संशोधित।

4. च F

5. मस्तकपर्वते D

कृततुल्ये[1] तदा काले व्यतीते तु मनुस्तदा।
विदधाति प्रजासर्गं[2] यथापूर्वमरिन्दम॥ 44॥

हे रिपुदमन! कृतयुग के बराबर समय बीत जाने पर मनु फिर पहले की तरह प्रजाओं की सृष्टि करते हैं।। 44।।

नौदेहेन[3] सती देवी भूमिर्भवति पार्थिव।
तस्यां तु भूमौ भवति सरस्तु[4] विमलोदकम्॥ 45॥

षड्योजनायतं रम्यं[5] तदर्धेन च विस्तृतम्।
सतीदेशमिति[6] ख्यातं देवाक्रीडं मनोहरम्[7]॥ 46॥

देवी सती नौका के शरीर से फिर पृथ्वी का रूप धारण करती है। उस भूमि पर निर्मल जल वाला सतीदेश नाम से प्रसिद्ध सरोवर बन जाता है। यह छ:योजन लम्बा और उससे आधा अर्थात् तीन योजन चौड़ा है तथा रम्य, मनोहर और देवताओं का क्रीडास्थल है।। 45-46।।

आकाशमिव[8] गम्भीरं जलजैश्च विराजितम्[9]।
शीतलामलपानीयं सर्वभूमिनोहरम्[10]॥ 47॥

शीतल और निर्मल जल वाला यह (सरोवर झील) आकाश की तरह

---

1. कृततुल्य-A

2. यह DEF, प्रजावर्ग अन्य

3. नौर्देहेन D

4. सरं D

5. तस्य C

6. देश इति C

7. देवक्रीडामनोरमम् H

8. आकाशसमञ्च से संशोधित H

9. यह A, विवर्जितम् अन्य MSS

10. इति श्रीनीलमतपुराणे सतीसरोवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्याय: C, इति श्रीनीलमते H, नीलमते ADEFG; बृहदश्व उवाच; उवाच छूटा ADEFH.

गहरा और कमलों से सुशोभित है और समस्त पृथ्वीमण्डल में यह सब से अधिक मनोहर है।। 47।।

अस्मिन् वैवस्वते[1] प्राप्ते राजन्मन्वन्तरे किल।
मारीचाय ददौ दक्षः कश्यपाय त्रयोदश[2] ॥ 48 ॥

स्वसुताः पार्थिवश्रेष्ठ तासां नामानि मे शृणु।
अदितेस्तनया देवा दिते दैत्यास्तथैव च ॥ 49 ॥

हे राजन्! इस वैवस्वत मन्वन्तर के शुरु होने पर दक्ष ने अपनी (जो) तेरह बेटियाँ मरीच के पुत्र कश्यप को दीं, हे नृपश्रेष्ठ! उनके नाम मुझ से सुनो अदिति के पुत्र देव तथा दिति के पुत्र दैत्य हुए।। 48-49।।

दनायुषाया[3] वृत्रस्तु भद्रास्तु[4] सुरभेः सुताः[5]।
यक्षाश्च राक्षसाश्चैव खशाया[6]स्तनयाः स्मृताः ॥ 50 ॥

दनायुषा का (पुत्र) वृत्र हुआ और सुरभि के पुत्र भद्र हुए। खशा के पुत्र यक्ष और राक्षस कहे गए।। 50।।

---

1. वै भारते G

2. दूसरा पाद छूटा G

3. यह Leiden धनायुषायाः ADFGH, धानापुष्यायाः E गन्धर्व्या वाजिनः पुत्रा C

4. रुद्रास्तु C, भद्रायाः A

5. सुरभीसुता AEFH

6. पशायाः D, खषायाः E, शाखायाः H

ऐरावणस्तु इरापुत्रः[1] प्रवाया[2] दश गायनाः[3]।
मुनेः प्रसवमुक्तं[4] हि दिव्यमप्सरसां गणम्[5]॥ 51॥

ऐरावण इरा का बेटा हुआ, प्रवा के दस पुत्र गायन कहलाये और दिव्य अप्सराओं का समूह मुनि से उत्पन्न हुआ।। 51।।

कालायाः कालकल्पाश्च[6]कालकेयाः सुताः स्मृताः[7]।
दानवाश्च दनोः पुत्राः क्रोधायाः कन्यका[8] दश॥ 52॥

(मृत्यु के सदृश) कालकल्प और कालकेय काला के बेटे कहे गए हैं। दनु के पुत्र दानव हुए तथा क्रोधा की दस बेटियाँ हुईं।। 52।।

कद्रोश्च[9] तनया नागा विनतायास्तथा सुतौ।
गरुडारुणौ[10] विज्ञेयौ[11] पक्षिणां प्रवरौ नृप॥ 53॥

हे राजन्! कद्रू के बेटे नाग हुए तथा पक्षियों में श्रेष्ठ गरुड और अरुण विनता के पुत्र कहे गए।। 53।।

---

1. *यह DEFG, इला-AC, इरा से संशोधित इला H*

2. *स्रवाया G*

3. *धायनाः G*

4. *प्रसव उक्तश्च C*

5. *दिव्यो ह्यप्सरसां गणः C*

6. *कालकम्पा D*

7. *-मताः BDEFG, मताः सुताः C, तथा सुताः H*

8. *-कल्पका G*

9. *स्तु C*

10. *गरुडारुणाश्च D, अरुणो गरुडो E*

11. *यह D च विज्ञेयौ A, ज्ञेयौ E*

कद्रूश्च विनता चैव स्पर्धमाने परस्परम्।
विधानयोगात्सततं चक्रतु वैरमुत्तमम्[1] ॥ 54 ॥

कद्रू और विनता परस्पर होड़ (ईर्ष्या) करती थीं तथा दैवयोग से वे सदैव बहुत झगड़ती थीं।। 54।।

कदाचिदमृतोद्भूतं[2] दृष्ट्वोच्चैःश्रवसं हयम्।
श्वेतं जगाद विनता कद्रूः शाठ्ये तथा स्थिता[3] ॥ 55 ॥

कृष्णबालमहं मन्ये तमश्वं विनते सदा।
इत्याह कद्रू र्विनतां पण[4] आसीत्तयोस्तदा ॥ 56 ॥

अश्वं प्रति महीनाथ दास्यभावे[5]ऽथ सर्वथा[6]।
प्रेरितास्तु[7] ततः[8] पुत्राः कद्र्वा गत्वा तथा व्यधुः ॥ 57 ॥

एक बार की बात है कि जलों से उत्पन्न हुए उच्चैःश्रवा घोड़े को देख कर विनता ने कहा कि वह सफेद है परन्तु कद्रू ने शठता (शरारत) की। हे विनता! मैं मानती हूँ कि वह घोड़ा तो सदैव काले बालों वाला है। इस प्रकार कद्रू ने विनता से कहा। हे राजन् उस घोड़े को लेकर उन कद्रू और विनता के बीच में एक दूसरे की पूरी दासी बनने की शर्त लगी। उसके बाद कद्रू से प्रेरित हुए कद्रू के पुत्रों ने वहाँ जाकर वही किया (अर्थात् उन्होंने घोड़े को काला कर दिया)।। 55, 56, 57।।

---

1. 54वें पद्य के पश्चात् H के बायें हाशिये पर अन्य हाथ से यह लिखा है–

प्रत्यक्षं च परोक्षं च दोषारोपणतत्परे।

छलान्वेषणसक्तत्वादन्योन्यं मानभञ्जने।

विजहतुर्बहिश्चान्तः क्रोधरक्तान्तलोचने ॥

2. यह FH, अमृत्युद्भूत D, अद्भ्यस्तद्भूतं A अप्लुतोद्भूतं G

3. स्थिता तथा C

4. पणम्–DEFH, पणोऽभूच्च C

5. दास्यभावो E, दासीभावश्च C

6. सर्वदा AF H यहां कुछ पद्य लुप्त हैं।

7. तत्प्रेरितास्तु C

8. तया G

ततस्ते कृष्णबालं तं दृष्ट्वा तुरगमुत्तमम्।
कद्रू र्जितास्य[1]वोचत्तां विनतां चारुदर्शनाम्॥ 58 ॥

फिर उस उत्तम घोड़े को उन (कद्रू और विनता) दोनों ने काले बालों वाला देखा और कद्रू ने उस सुन्दरी विनता से कहा-तुम्हें जीत लिया गया है।। 58।।

दास्ये जितां[2] तु विनतां[3] गरुडः सुमहायशाः।
मोक्षयामास चाहृत्य सोमं[4] शक्रान् महाबलः॥ 59 ॥

महान् यशस्वी तथा महाबलशाली गरुड़ ने इन्द्र के पास से सोम (अमृत) रस को लाकर दासी के रूप में जीती जा चुकी विनता को छुड़ा लिया।। 59।।

शक्राच्चैव[5] वरं लेभे पन्नगानां च भक्षणम्।
मातुर्वैरानुबन्धेन भक्षयामास पन्नगान्॥ 60 ॥

उसने इन्द्र से नागों के भक्षण का वरदान भी पा लिया और वह अपनी माँ के साथ वैर होने के कारण नागों को खाने लगा।। 60।।

भक्ष्यमाणेषु नागेषु गरुडेन महात्मना।
वासुकिः शरणं प्रायाद्[6] देवदेवं जनार्दनम्॥ 61 ॥

उस महान् गरुड़ के द्वारा नागों का भक्षण शुरु होने पर वासुकि नाग देवों के देव जनार्दन विष्णु की शरण में गया।। 61।।

वासुकिः
नमोऽस्तु ते देववराप्रमेय

---

1. जिताप्य C जिताम् A कद्रूजिताम् H

2. दास्ये स्थितां DEF

3. भूविनतां DE

4. यह अन्य में, चाहृत्याभृतं A

5. यह BDEFG विष्णोश्चैव A, स शक्राच्च C

6. प्रागात्-H

7. वासुकिः उवाच AC

नमोऽस्तु शाङ्‍र्गगदासिपाणे[1]।
नमोऽस्तु ते दानवनाशनाय
नमोऽस्तु ते पद्मजसंस्तुताय॥ 62॥

वासुकि ने कहा– हे श्रेष्ठ देवताओं के द्वारा (भी) अज्ञेय! आपको मेरा नमस्कार! धनुष, गदा और खड्ग को हाथ में धारण करने वाले! आपको मेरा नमस्कार। दानवों का नाश करने वाले! आपको मेरा नंमस्कार। ब्रह्मा के द्वारा प्रशंसित आपको मेरा नमस्कार।। 62।।

नमोऽस्तु ते लोकहिते रताय
नमोऽस्तु ते वासवनन्दनाय

नमोऽस्तु ते भक्तवरप्रदाय
नमोऽस्तु ते सत्पथदर्शनाय[2]॥ 63॥

संसार का भला करने में लगे हुए आपको मेरा नमस्कार। इन्द्र को प्रसन्न करने वाले आपको मेरा नमस्कार। भक्तों को वर देने वाले आपको मेरा नमस्कार। अच्छा मार्ग दिखाने वाले आपको मेरा नमस्कार।। 63।।

उन्निद्रनीलनलिनद्युतिचारुवर्णं
सन्तप्तहाटकनिभे वसने वसानम्[3]॥ 64॥

क्षीरोदकन्यार्पितपादपद्मं
देवं[4] प्रपन्नोऽस्म्यनघं वरेण्यम्।
परं पुराणं परमं सनातनं
तमादिदेवं प्रणतोऽस्मि भक्त्या॥ 65॥

खिले हुए नीलकमल की चमक के समान सुन्दर रंग वाले, तपे हुए सोने के समान चमकते हुए (पीले) दो वस्त्रों को धारण किए हुए, समुद्र की बेटी

---

1. इस पद्य की प्रथम पंक्ति लुप्त G

2. मत्पथदर्शनाय D

3. इस पद्य की दूसरी पंक्ति छूटी G।

4. भावं ed. Leiden

Ed. Leiden v.v. 60-63

(लक्ष्मी) की गोदी में चरण कमल रखे हुए, पापरहित, वरण करने योग्य देव! आपकी शरण में मैं आया हूँ। सबसे महान्, परम प्राचीन, सनातन आदिदेव! (आप) को मैं भक्तिपूर्वक प्रणाम करता हूँ।। 64-65।।

फणावलीरत्नसहस्रचित्रे
शेषस्य भोगे विमले विशेषे[1]।
लोकस्य सर्वस्य तु[2] चिन्तयानः
शुभाशुभं रक्ष ममाद्यदेव[3] ॥ 66 ॥

शेषनाग के फणावली के हज़ारों रत्नों से चित्रित विमल शीर्षभाग पर (स्थित) आप समस्त विश्व के शुभ और अशुभ का चिन्तन करते हुए शयन करते हो। हे देव आज मेरी रक्षा करो।। 66।।

खगपतिरतिचण्डभीमवेगो
मम कुलमाशु विनाशयत्यनन्त।
कुरु मुनिवरसंस्तुताद्य रक्षां
पवनबलं[4] विनिवारयस्व[5] तार्क्ष्यम् ॥ 67 ॥

हे अनन्त! अति प्रचण्ड तथा भयानक वेग वाला पक्षिराज (गरुड़) तेज़ी से मेरे कुल को नष्ट कर रहा है। मुनिवरों द्वारा प्रशंसित हे देव आप वायु के समान वेग वाले उस तार्क्ष्य को रोको और आज (हमारी) रक्षा करो।। 67।।

---

1. *यह DEFG, शयानं AC, हि शेषे H.*

2. *च F*

3. *मामादिदेव ed Leiden, रक्षणमादिदेव DF.*

4. *प्रवरबलं E*

5. *विनिर्धारयस्व C*

Ed. Leiden v.v. 64-65

बृहदश्वः[1]
तमाह वासुकिं देवो भगवान्[2] **भयविह्वलम् ॥ 68 ॥**

सतीदेशे[3]**ऽत्र पुण्योदे सरस्यम्बरसन्निभे**[4]**।**
धर्मिष्ठैः सहितो नागै र्वसस्वामितविक्रम[5] **॥ 69 ॥**

बृहदश्व ने कहा-भय से व्याकुल हुए उस वासुकि को भगवान् (विष्णु) देव ने कहा- हे असीम बल वाले! तुम धर्मपरायण नागों के साथ इस सतीदेश में पवित्र जल से भरे आकाश जैसे (गम्भीर) सरोवर में रहो।। 68-69।।

तस्मिन् सरसि ये स्थानं करिष्यन्ति भुजङ्गमाः।
तस्य तस्याहिशत्रु र्वै[6] **न हनिष्यति जीवितम् ॥ 70 ॥**

जो जो सर्प उस सरोवर में निवास करेगा उस उसका प्राणहरण अहिशत्रु गरुड़ नहीं करेगा।। 70।।

सतीदेशे कृतस्थानं[7] **तिष्ठन्तमकुतोभयम्।**
न हनिष्यति नागेन्द्र नागारि र्मम वाहनः ॥ 71 ॥

हे नागेन्द्र! सतीदेश में अपना निवास बनाने वाले, सब ओर से भयरहित हुए (व्यक्ति) को मेरा वाहन बना हुआ नागशत्रु (गरुड़) नहीं मारेगा।। 71।।

सतीदेशे च ये नागा वसिष्यन्ति महाबलाः।
राज्ये महाभाग त्वं नीलमभिषेचय[8] **॥ 72 ॥**

हे महाभाग! सतीदेश में जो महाबली नाग रहेंगे उनमें तुम नीलनाग का राज्याभिषेक करो।। 72।।

---

1. *बृहदश्व उवाच G*
2. *तमाह भगवान् देवो वासुकिं G*
3. *सतीदेहे DE*
4. *सरस्यसुरसन्निभे D सरस्यस्मरन्निभे E सरस्यमरभूषिते C*
5. *–विक्रमः A*
6. *श्च G*
7. *सतीदेहकृतस्थानं DFH*
8. *अभिषिञ्चय A*

वासुकिश्च तथा चक्रे देवदेवस्य भाषितम्।
तत्रस्थानां[1] च नागानां नासीद्[2] गरुडतो भयम्॥ 73॥

देवों के देव ने जैसा कहा, वासुकि ने वैसा ही कर दिया। तब उस स्थान पर रहने वाले नागों को गरुड से कोई भय नहीं रहा।। 73।।

कदाचित् सरसस्तस्य तीरेऽम्बुरुहलोचनः।
शक्रश्चिक्रीड सहितः पौलोम्या पार्थिवोत्तम॥ 74॥

क्रीडमानस्य शक्रस्य तं देशं कालचोदितः।
सङ्ग्रहो[3] नाम दैत्येन्द्रः प्राप्तः परमदुर्जयः[4]॥ 75॥

हे नृपश्रेष्ठ! एक बार कमलनेत्र इन्द्र पौलोमी के संग उस सरोवर के किनारे क्रीडा कर रहे थे तब काल से प्रेरित हुआ और कठिनाई से जीता जा सकने वाला सङ्ग्रह नाम का दैत्यराज वहाँ आया।। 74-75।।

तस्य दृष्ट्वा शचीं रेतः प्रस्कन्नं[5] सलिलाशये।
स च[6] कामवशोन्मत्तः[7] शचीहरणलालसः॥ 76॥

शची को देखकर उसका वीर्य उस जलाशय में गिरा। काम के वश में पागल हुआ वह शची के अपहरण की इच्छा करने लगा।। 76।।

---

1. यह C, तत्र स्थानं ADEFG

2. नागानामासीद्-ADFH

3. सङ्ग्रावो C

4. -दुर्जयम् D

5. प्रस्तुतं C प्रच्छन्नं D प्रसन्नं G

6. ततः C

7. कामबलोन्मत्तः C

ततः[1] शक्रेण सङ्ग्रामे पूर्णे[2] संवत्सरं गतम्[3]।
वर्षमासीत्तयोर्युद्धं[4] शक्रसङ्ग्रहयोः पुरा॥ 77॥

फिर इन्द्र के साथ युद्ध पूरा करने में एक वर्ष बीत गया। उस प्राचीन काल में इन्द्र और संग्रह का यह युद्ध वर्ष भर चलता रहा।। 77।।

वत्सरान्ते च[5] तं हत्वा शक्रस्त्रिदशपूजितः।
जगाम त्रिदिवं देवः[6] पूज्यमानो[7] दिवालयैः[8]॥ 78॥

संवत्सर के अन्त में उसको मार कर स्वर्ग में रहने वाले देवों के द्वारा पूजित होकर वे इन्द्र स्वर्ग में चले गए।। 78।।

तस्मिन् सरसि यत्तस्य सङ्ग्रहस्य दुरात्मनः।
प्रस्कन्नं[9] पतितं रेतस्तस्माज्जातो जले शिशुः[10]॥ 79॥

दुष्टात्मा संग्रह का जो वीर्य उस सरोवर में गिरा था उससे जल में एक शिशु उत्पन्न हुआ।। 79।।

---

1. यहां कुछ पाद लुप्त है।

2. वृत्ते C

3. यह C संवत्सरे गते ABDEFGH

4. पूर्णमासीत्तयोर्हन्त C

5. वत्सरान्ते च C संवत्सरान्ते मूलपाठ

6. देवैः C

7. पूज्यमानैर् C

8. यह A तदालयैः अन्य

9. प्रच्छन्नं D

10. शुचिः G

कृपया स शिशु र्नागै र्जले तस्मिन् विवर्धितः।
यस्मादयं जले जातस्तस्मादेष जलोद्भवः॥ 80॥

नागों ने दया करके जल में उसका पालन किया। क्योंकि वह जल में उत्पन्न हुआ था इसलिए उसका नाम जलोद्भव रखा गया।। 80।।

आराध्य तपसा लेभे वरं[1] देवात् पितामहात्।
जलेऽमरत्वं मायां च[2] विक्रमं चातुलं तथा॥ 81॥

उसने अपनी तपस्या से आराधना करके देव ब्रह्मा से जल में न मारे जाने, माया और अतुलनीय बल पाने का वर प्राप्त कर लिया।। 81।।

लब्धमायस्तु[3] दैत्येन्द्रो भक्षयामास मानवान्।
समीपे सरसस्तस्य नानादेशेष्वस्थितान्॥ 82॥

दार्वाभिसारगान्धारजुहुण्डर[4]शकान् खशान्।
तङ्गणान् माण्डवान् मद्रानन्तर्गिरिबहिर्गिरीन्॥ 83॥

माया (जादू की शक्ति) को पाकर वह दैत्यराज (जलोद्भव) उस सरोवर के निकटवर्ती नाना देशों में रहने वाले मानवों और दार्वाभिसार, गान्धार, जुहुण्डर, शक, खश, तंगण, माण्डव, मद्र, अन्तर्गिरि और बहिर्गिरि के निवासियों का भक्षण करने लगा।। 82-83।।

---

1. देवः E

2. जले सद्वरमायाच्च F

3. लब्धायुश्च D

4. यह A, जाहुण्डर D, जहुण्डार E, जहुण्डक H

ते हन्यमानाः पापेन देशात्[1] सम्प्राद्रवन् भयात्।
शून्येषु तेषु देशेषु विचचार स निर्भयः[2] ॥ 84 ॥

उस पापी के द्वारा हत्याएँ की जाने पर वे लोग भय से देश छोड़कर भागने लगे और (उनके चले जाने) वह उन खाली हुए प्रदेशों में निडर होकर विचरण करने लगा।। 84।।

एतस्मिन्नेव[3] काले तु कश्यपो भगवान् मुनिः[4]।
तीर्थयात्राप्रसङ्गेन[5] चचार सकलां महीम्॥ 85 ॥

उसी समय भगवान् कश्यप मुनि ने तीर्थयात्रा करने के प्रसंग से सकल पृथ्वी पर घूमना प्रारम्भ किया।। 85।।

वर्षेऽस्मिन् भारते पुण्ये शुभाशुभफलप्रदे।
पुष्करं दुष्करगमं ब्रह्मलोकप्रदं शिवम्॥ 86 ॥

प्रयागं यागबहुलं सर्वकिल्विषनाशनम्[6]।
धर्मक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं नैमिषं पापनाशनम्॥ 87 ॥

---

1. *संशोधित, देशान् CG, दिशः DE, देशा A*
2. *नीलमते बृहदश्व उवाच अतिरिक्त DE, इति श्रीनीलमते बृहदश्वः H नीलमते बृहदश्वः AF, इति श्रीनीलमतपुराणे जलोद्भवदैत्योत्पत्तिस्तत्कृतोपप्लववर्णनं नाम नवमोऽध्यायः बृहदश्व उवाच C.*
3. *यह BCDEFG एकस्मिन्नेव से संशोधित एतस्मिन्नेव A*
4. *यह A, ऋषिः अन्य*
5. *स चचार E.*
6. *D में इस पद्य की पहली पंक्ति 88वें पद्य के बाद है।*

पितृणामालयं पुण्यं हयशीर्षं महात्मनाम्[1]।
सर्वपापहरं दिव्यं तथा चैव चरङ्कटम्[2] ॥ 88 ॥

वाराहपर्वतं[3] पुण्यं पुण्यं पञ्चनदं तथा।
कालाञ्जनं सगोकर्णं केदारं[4] सहिमालयम् ॥ 89 ॥

नारायणस्य च स्थानं सपुण्यं[5] बदराश्रमम्[6]।
सुगन्धां शतकुम्भां च कालिकाश्रममेव च ॥ 90 ॥

शाकम्भरीं ललितिकां[7] शालिग्रामं[8] पृथूदकम्।
सुवर्णाक्षं[9] रुद्रकोटिं प्रभासं सागरोदकम्[10] ॥ 91 ॥

इन्द्रमार्गं मतङ्गस्य[11] वापीं पापप्रसूदिनीम्[12]।
अगस्त्यस्याश्रमं पुण्यं तथा तण्डुलिकाश्रमम् ॥ 92 ॥

---

1. संशोधित, महात्मना *D*, महात्मन : *ACH*
2. तथा चैव शरत्कटम् *D*-शरट्कटम् *E*, -चरट्कटम् *G* तथा चामरकण्टकम् *C*.
3. वराहपर्वतं *CA*
4. केदानं *D*
5. पुण्यं से संशोधित सपुण्यं *A*
6. यह *DFH*, बधिराश्रमम् *A*, बदिराश्रमम् *C*, बदराश्रमम् *FH*
7. नीलतिकं *C*
8. सालग्रामं *G*
9. सुवर्णाक्षं *GC* सुवर्णाख्यम् मूलपाठ
10. सारकोदकम् *G*
11. सतङ्कस्य *E*, सतङ्गस्य *C*
12. पापनिसूदनीम् *DGH*

जम्बु[1]मार्गं तथा पुण्यं पुण्यां वाराणसीं तथा॥
तथैव जाह्नवीं देवीं गङ्गां[2] गगनमेखलाम्॥ 93॥

यमुनां यमपाशघ्नीं शतद्रुं द्रुतगामिनीम्।
सरयूं यूपसम्पन्नां तथा देवीं सरस्वतीम्॥ 94॥

गोदावरीं वैतरणीं गोमतीं बाहुदामपि।
वेदस्मृतिं[3] सवर्णासीं[4] ताम्रवर्णोत्पलावतीम्[5]॥ 95॥

सिप्रां[6] सनर्मदां शोणां परोष्णीं च महानदीम्।
इक्षुमतीं[7] सरज्वां[8] च दुर्गां शतशिलामपि[9]॥ 96॥

कावेरीं[10] ब्राह्मणीं गौरीं कम्पनां तमसां तथा।
गङ्गासागरसन्धिं[11] च सिन्धुसागरसङ्गमम्॥ 97॥

---

1. *जम्बू-CD*
2. *गङ्गां देवीं C*
3. *यह अन्यों में, देवस्मृतिं A*
4. *सुवर्णाभां A*
5. *ताम्रकर्णोत्पलावतीं D ताम्रकर्णोत्पलापतीं E ताम्रपर्णोत्पलावतीं C.*
6. *सिम्रां C*
7. *इक्षुवतीं H*
8. *सरज्वां C, सरज्वं F, मरज्वां DE सरद्वां A, सज्वरां H*
9. *सताशिलां CFG, मतशिलां E, प्रेतशिलां A*
10. *कौवीरीं CG. कवीरीं H*
11. *गङ्गासागरसिद्धिं च D*

भृगुतुङ्गं विशालां च कुब्जाम्रं[1] रैवतं[2] तथा।
गङ्गाद्वारं[3] कुशावर्तं[4] बिल्वकं[5] नीलपर्वतम्॥ 98॥

तथा कनखलं तीर्थं तीर्थान्यन्यानि पार्थिव॥ 99॥

शुभ और अशुभ (कर्मों) का फल देने वाले और पवित्र इस भारतवर्ष में (उसने निम्नलिखित इन तीर्थों की यात्रा की)। जहाँ कठिनाई से पहुँचा जाता है वह कल्याणकर ब्रह्मलोक को देने वाला पुष्कर, जहाँ सब पापों का नाश हो जाता है वह यज्ञ बहुल प्रयाग, धर्म की भूमि कुरुक्षेत्र, पापों को नष्ट करने वाला नैमिष, महात्मा पितरों का निवास स्थान पवित्र हयशीर्ष, सब पापों को दूर करने वाला दिव्य चरंकट, पवित्र वाराह पर्वत तथा पवित्र पंचनद प्रदेश, गोकर्ण सहित कालांजन, हिमालय सहित केदार, नारायण का पवित्र स्थान बदराश्रम, सुगन्धा, शतकुम्भा, कालिकाश्रम, शाकम्भरी, ललितिका, शालिग्राम, पृथूदक, सुवर्णाक्ष, रुद्रकोटि, प्रभास, सागरोदक, इन्द्रमार्ग, पापों का नाश करने वाली मतंगवापी, अगस्त्य मुनि का पावन आश्रम तथा तण्डुलिकाश्रम, पवित्र जम्बुमार्ग तथा पवित्र वाराणसी, आकाश की मेखला बनी हुई जह्नु की बेटी जाह्नवी गंगा, यम के पाश को नष्ट करने वाली यमुना, बहुत तीव्रता से बहने वाली शतद्रु, यज्ञयूपों से युक्त सरयू देवी, सरस्वती, गोदावरी, वैतरणी, गोमती, बाहुदा, वेदस्मृति, वर्णा सहित असी, ताम्रवर्णा, उत्पलावती, सिप्रा, नर्मदा, शोणा, महानदी परोष्णी, इक्षुमती, सरज्वा, दुर्गा, शतशिला, कावेरी, ब्राह्मणी, गौरी, कम्पना तथा तमसा, गंगासागरसन्धि तथा सिन्धुसागरसंगम, भृगुतुंग, विशाला, कुब्जाम्र तथा रैवत, गंगाद्वार, वह कुशावर्त, बिल्वक, नीलपर्वत, कनखल तीर्थ तथा हे राजन्! कई अन्य तीर्थ (वह इन सबमें गया)।।86-99।।

---

1. कुब्जास्रं E

2. वैवर्तं D,

3. गंगाद्वारं AFH

4. कुशागन्धम् DF

5. विलुकं D

तीर्थयात्रागतं श्रुत्वा कश्यपं पन्नगाधिपः।
नीलो जगाम तं द्रष्टुं[1] तीर्थे कनखले तदा॥ 100॥

स गत्वा पितरं दृष्ट्वा पितुः पादौ निपीड्य[2] च।
निवेद्य नामधेयं स्वं ववन्दे भुजगाधिपः॥ 101॥

जब यह सुना कि कश्यप मुनि तीर्थयात्रा कर रहे हैं, नागों का राजा नील उनको देखने के लिए कनखल तीर्थ में गया। वहाँ जाकर उसने पिता को देख कर, उनके चरण छूकर तथा अपना नाम बता कर उन्हें प्रणाम किया।। 100-101।।

पित्रा मूर्धन्युपाघ्राय पूजितः स[3] यथाविधि।
न्यषीदत्तदा बृस्यां कौश्यां सा तदनुज्ञया॥ 102॥

उपविष्टस्तदा नागो व्यज्ञापयत्स कश्यपम्।
पितरं तपसां स्थानं यत्तच्छृणु नराधिप॥ 103॥

पिता ने माथे पर सूँघ कर विधि के अनुसार उसे सम्मानित किया। वह भी तब उनकी स्वीकृति लेकर कुशा निर्मित चटाई पर बैठा। हे राजन्! बैठे हुए उस नागराज ने जिन जिन तपोभूमियों को पिता को बताया उन उनको तुम मुझसे सुनो।। 102-103।।

तीर्थान्यनुचरन्तं[4] हि श्रुत्वाऽहं धर्मवत्सलम्।
भवन्तं सहसा प्राप्तः[5] शुश्रूषार्थी[6] द्विजोत्तम॥ 104॥

---

1. दृष्ट्वा G

2. निपीत्य च (निपत्य च ?) D

3. च DEFH

4. यह AEH, यत्र चरन्तं DF,

5. प्राप्तं H

6. शुश्रूषार्थं F

पूर्वदेशे त्वया ब्रह्मन् दक्षिणे पश्चिमे तथा।
दृष्टानि सर्वतीर्थानि यास्यामस्तूत्तरां[1] दिशम्॥ 105॥

हे द्विजश्रेष्ठ! यह सुन कर कि धर्मप्रेमी आप तीर्थ यात्रा कर रहे हैं, मैं सहसा आप की सेवा की इच्छा से आपके पास आया हूँ। आपने पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम के सब तीर्थों के दर्शन कर लिए हैं। आइए अब हम उत्तर दिशा की ओर चलें।। 104-105।।

तत्र मद्रेषु तीर्थानि[2] सन्ति पुण्यानि मानद।
तथा च पर्वत[3]श्रेष्ठे हिमवत्यचलोत्तमे॥ 106॥

विपाशा पापशमनी शश्वच्छ्रेय:प्रदा शिवा।
देवलोकप्रदा स्नाने[4] नदी[5] देवह्रदा तथा॥ 107॥

हे मान देने वाले! वहाँ मद्र प्रदेश में तथा पर्वतों में श्रेष्ठ हिमालय पर्वत पर कई पवित्र तीर्थ हैं। (वहाँ) हमेशा शुभ देने वाली, कल्याणकारिणी और पापनाशिनी व्यास नदी तथा स्नान से देवलोक को प्रदान करने वाली देवह्रदा नदी है।। 106-107।।

तथा पापहरो देवो हरश्च हरिरीश्वर:[6]।
तथा च सङ्गमः पुण्यः करवीरपुरं प्रति[7]॥ 108॥

---

1. यास्याम्यद्योत्तरादिशम् D यास्याम्यद्योत्तरां दिशम् F यह पाद लुप्त G.

2. यह पाद लुप्त G

3. पर्वते DF

4. स्नानात् C

5. स्नाने DEF

6. हरिदीश्वर: G

7. करवीरपुरस्मृति: D, करवीरकरं प्रति E

Ed. Leiden v.v. 101-104

तत्र देवह्रदा याति विपाशां[1] निम्नगोत्तमाम्।
विपाशायां तथा पुण्यं सततं[2] कालिकाश्रमम्[3] ॥109॥

वहाँ पापों को दूर करने वाले देव हर हैं तथा ईश्वर (सबके स्वामी) हरि हैं। करवीरपुर के पास पवित्र संगम है वहाँ देवह्रदा नदी नदियों में श्रेष्ठ नदी व्यास में मिलती है। व्यास नदी में निरन्तर पावन कालिकाश्रम है।। 108-109।।

इरावती[4] तथा पुण्या[5] सर्वकल्मषनाशिनी[6]
रेवत्यां च विशेषेण तथाष्टम्यां विशेषतः ॥110॥

षष्टिस्तीर्थसहस्त्राणि वसन्त्येकामिरावतीम् ॥111॥

वहाँ पवित्र रावी नदी है जो रेवती नक्षत्र में तथा अष्टमी तिथि में विशेष रूप से सब पापों का नाश करती है। छः सहस्त्र तीर्थ अकेली इरावती में निवास करते हैं।। 110-111।।

कुम्भावसुन्दः[7] पुण्योदः पुण्योदा देविका नदी[8]
नित्यमेव तथा पुण्यो[9] विश्वामित्रो महानदः[10] ॥112॥

---

1. *विनाशां G*
2. *सङ्गतं C*
3. *कलिकाश्रमम् G*
4. *इरावतीं ACG*
5. *पुण्यां ACG H*
6. *यह अन्य में, नाशिनीम् CG A, प्रणाशिनीम् H*
7. *कुम्भार्धस्यन्दः G*
8. *तथा E*
9. *महापुण्यो C*
10. *महाह्रदः H*

उद्दाख्यस्तु[1] महापुण्यः सङ्गमश्च पृथक् पृथक्।
इरावत्यां तथा पुण्यो देविकायां[2] तथैव च॥113॥

वहाँ पवित्र जल वाला कुम्भावसुन्द है, पवित्र पानी वाली देविका नदी है तथा नित्य पवित्र जल वाला विश्वामित्र नामक महानद है। वहाँ महापुण्य देने वाला उद्द नामक नद है तथा इरावती और देविका के अलग अलग (नदियों के साथ) पवित्र संगम है।। 112-113।।

यैव देवी ह्युमा[3] सैव देविका प्रथिता[4] भुवि[5]।
मद्राणामनुकम्पार्थं भवद्भिरवतारिता॥114॥

यां दृष्ट्वा मानवः पूतो भवतीह न संशयः।
इन्द्रमार्गः[6] सोमतीर्थं[7] पुण्यमम्बुजन[8]स्तथा॥115॥

जो उमादेवी है वही पृथ्वी पर देविका के नाम से विख्यात है। मद्र प्रदेश वासियों पर कृपा करने के लिए आप उसे धरती पर लाए हैं जिसके दर्शन मात्र से निश्चय ही मानव पवित्र हो जाता है। वहाँ इन्द्रमार्ग है, पवित्र सोमतीर्थ है तथा अम्बुजन है।। 114-115।।

सुवर्णबिन्दु[9]स्तत्रैव हरस्यायतनं शुभम्।
स्कन्दस्यायतनं तत्र सर्वपापनिसूदनम्॥116॥

उमापतिस्तथा पुण्यो[10] रुद्रतीर्थं[11] तथैव च।

---

1. *उद्धाख्यस्तु E*
2. *देवकायां A*
3. *यह A*
4. *पूजिता H*
5. *प्रभो DEF*
6. *इन्द्रमार्गं ADFG*
7. *इन्द्रमार्गसमं तीर्थं H*
8. *अम्बुजनं H*
9. *यह G बिन्दु D बिन्दुं AFGH*
10. *महापुण्यो C*
11. *भद्रतीर्थं E , रुद्रतीर्थं F तत्र तीर्थे G रुद्रतीर्थे A*

दुर्गाद्वारं तु पुण्योदं कोटितीर्थं तथैव च[1] ॥117॥

रुद्रस्य तीर्थं कामाख्यं पुष्पन्यासं तथैव च।
पुण्यं हंसपदं प्रोक्तमृषिरूपं[2] च मानद[3] ॥118॥

वहाँ ही हर का शुभ निवास स्थान सुवर्णबिन्दु है तथा सब पापों का नाश करने वाला स्कन्द का निवास स्थान है। और वहाँ पवित्र उमापति है तथा रुद्रतीर्थ है। वहाँ पवित्र जल वाला दुर्गाद्वार है तथा कोटितीर्थ है। रुद्र का तीर्थ कामाख्य है तथा पुष्पन्यास है। हे मानद! वहाँ हंसपद तीर्थ पवित्र कहा गया है और वह ऋषिरूप भी है।। 116-118।।

सर्वत्र[4] देविकातीर्थं क्षेत्रं क्रोशचतुष्टयम्।
यत्र कूपतटाकाख्यं[5] पुण्यं[6] सर्वमशेषतः ॥119॥

आपगा च नदी पुण्या तौषी तोषितभास्करा।
चन्द्रांशुशीतलजला चन्द्रभागा सरिद्वरा ॥120॥

चार कोस तक फैले हुए देविकातीर्थ के क्षेत्र में सब जगह जहाँ जो जो कुआँ या तालाब है और जो उनके नाम पर रखा तीर्थ है। वह सब पूर्णतया पावन है। आपगा नदी पवित्र है, तौषी (तवी नदी) सूर्य को प्रसन्न करने वाली है और नदियों में श्रेष्ठ चन्द्रभागा (चिनाब) चन्द्र की किरणों के समान शीतल जल वाली है।। 119-120।।

---

1. E में ये दो पाद 118 वें पद्य के बाद हैं। H में ये दायें हाशिये पर अन्य हाथ में लिखे हैं।

2. ऋषिकूपं DE

3. मानदं H

4. सर्वतो C

5. कूपतडागाख्यं D, कूपतटाख्यं तु H

6. पुण्यतीर्थम् C

पुण्यं वै[1] चन्द्रभागायास्तीर्थं वैवट्टिलामुखम्[2]।
शङ्खमर्दलनामा[3] च तथा पापनिसूदनः ।।121 ।।

चन्द्रभागा का एक पुण्य तीर्थ वैवट्टिलामुख है और वैसा ही पापनाशक शंखमर्दल नामक तीर्थ है।। 121।।

गुह्येश्वरः[4] शतमुख इष्टिकापथ[5] एव च।
कदम्बेशस्तथा पुण्यं क्षेत्रं चैव समन्ततः ।।122 ।।

यावच्छतमुखं तीर्थं यावत्तीर्थं गुह्येश्वरम्[6]।
तावत्[7] क्षेत्रं समं[8] पुण्यं वाराणस्याथवाधिकम्[9] ।।123 ।।

वहाँ गुह्येश्वर, शतमुख, इष्टिकापथ और कदम्बेश हैं तथा आस पास का पावन क्षेत्र है। शतमुख तीर्थ से लेकर गुह्येश्वर तीर्थ तक का समस्त क्षेत्र वाराणसी के समान या उससे भी अधिक पवित्र है।। 122-123।।

---

1. यह A, च अन्य

2. वैवाट्टिकामुखं CH, वैवांगिलामुखं D, वैवेंगिलामुखं EF

3. शङ्खमर्दननामा C शङ्खमर्दलनामा F

4. यह C गुहेश्वरः अन्य

5. इष्टिकापर्व EH, इष्टिकापथ C

6. यह C, गुहेश्वरम् AH

7. इदं H

8. इदं CG

9. वाराणस्या यवाधिकम् AFH, वाराणस्यां शताधिकम् C

सर्वत्रैव सदा पुण्या चन्द्रभागा[1] महानदी।
माघशुक्लत्रयोदश्यां पुष्ययोगे विशेषत:[2] ॥124॥

पृथिव्यां यानि तीर्थानि[3] ह्यासमुद्रसरांसि[4] च।
चन्द्रभागां गमिष्यन्ति[5] माघशुक्लत्रयोदशीम्[6] ॥125॥

महानदी चन्द्रभागा सदा सर्वत्र पवित्र है परन्तु माघ मास के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी पर पुष्य नक्षत्र का योग होने पर यह विशेष रूप से पुण्य देने वाली होती है क्योंकि झीलों से लेकर समुद्र तक पृथ्वी पर जितने भी तीर्थ हैं वे सब माघ शुक्ल त्रयोदशी को चन्द्रभागा में पहुँचते हैं।। 124-125।।

पुण्यं वस्त्रापथं प्रोक्तं देवश्च[7] छागलेश्वर:[8]।
द्वितीया च तथा भौमी[9] तस्या: प्रभव[10] एव च[11] ॥ 126 ॥

---

1. *F gloss चन्द्रभागाक्षौ (ख्यौ) चन्द्रादित्यकुण्डौ हिमालयगह्वरे तदुभयोत्पन्नत्वात् चन्द्रभागा।*

2. *F gloss माघशुक्लत्रयोदश्यां महापुण्यापि तिष्ययोगे विशेषतोऽतिपुण्यफलदेत्यर्थ: F*

3. *तीर्थाणि H*

4. *छूटा F, चासमुद्रं सरांसि च C,*

5. *समायान्ति C*

6. *माघपुष्यत्रयोदशीम् DF, माघपौष्यत्रयोदशीम् E*

7. *देवं GF*

8. *यह K.D. Vreese ed. Leiden. छगलेश्वर: C, कमलेश्वरं A, भगलेश्वरं DEF, फागलेश्वरम् G देवं च छागलेश्वरम् H*

9. *यह DF, द्वितीया च तथा भौमे EG, द्वितीयायां तथा भौमे AC*

10. *प्रभावम् G*

11. *तस्योत्पत्ति: समीरिता C*

सतीदेहस्य[1] सरसस्तीर्थं विष्णुपदं सरः।
क्रमसारेति विख्यातं सर्वकल्मषनाशनम् ॥127॥

वस्त्रापथ भी पवित्र कहा गया है और देव छागलेश्वर भी। दूसरी भौमी नदी भी (पवित्र) है और उसका उत्पत्ति स्थान भी। सतीदेह सर (अवतार रूप) तीर्थ विष्णुपद सरोवर है। सब पापों का नाश करने वाला वह तीर्थ क्रमसार नाम से विख्यात है।। 126-127।।

एतान्यन्यानि च मुने तीर्थान्यनुसराशु[2] वै[3]।
येषां स्नानेन मुच्यन्ते पापात्मानोऽपि मानवाः[4] ॥128॥

इत्युक्तः स तथेत्युक्त्वा नीलेन सहयायिना।
जगाम तानि तीर्थानि[5] जातेहः[6] पूर्वमेव तु ॥129॥

हे मुनि! आप शीघ्र ही इन तीर्थों और अन्य तीर्थों की यात्रा कर लें जिनमें स्नान करने से पापी मानव भी (पाप) से छूट जाते हैं। ऐसा कहे जाने पर जिनकी इच्छा पहले ही जागृत हो चुकी थी ऐसे वे कश्यप वैसा ही मैं करता हूँ (अर्थात् मैं तीर्थों को देखने के लिए निकलता हूँ) इस प्रकार कहकर अपने सहयात्री नीलनाग के साथ उन तीर्थों में पहुँचे।। 128-129।।

---

1. *सतीदेशस्य A*

2. *यह C अनुसरांसि A अनुसरांसि तीर्थाण्यनुसरस्तथा H*

3. *यह EF, च A, वा G*

4. *इति नीलमते कश्यपनीलसमागमवर्णनम्। बृहदश्वः अतिरिक्त F, इति श्रीनीलमतपुराणे कश्यपनील-समागमवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः। बृहदश्व उवाच C , इति नीलमते। बृहदश्वः। H*

5. *तीर्थाणि H*

6. *ज्ञातेहः G F gloss ज्ञातिर्बन्धुर्नीलस्तस्येहाभिमतं यस्येति अथवा पूर्वमेव जातेह उत्पन्नाभिलाषः नीलेन प्रेरितः*

**उत्तीर्य यमुनां देवीं तथा देवीं सरस्वतीम्।
कुरुक्षेत्रं तथा दृष्ट्वा सन्नीतिर्यत्र विश्रुता॥130॥**

तीर्थसन्नयनश्चैव सन्नीतिर्भुवि कथ्यते॥131॥

**पृथिव्यां यानि तीर्थानि[1]चासमुद्रं सरांसि च[2]।
कृष्णपक्षावसाने वै[3] यत्र यान्ति सदानघ[4]॥132॥**

हे पापरहित, देवी यमुना नदी तथा देवी सरस्वती नदी को पार करके और कुरुक्षेत्र को देखकर वे आगे गये जहाँ सन्नीति प्रसिद्ध तीर्थ है। इस पृथ्वी पर तीर्थों का समूह सन्नीति कहा गया है। इस धरती पर झीलों से लेकर समुद्र तक जितने तीर्थ और तालाब हैं वे सब मास के कृष्ण पक्ष के अन्त में सदा वहाँ पहुँचते हैं।। 130, 131, 132।।

**श्राद्धं यः कुरुते तत्र राहुग्रस्ते दिवाकरे।
अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोत्यनुत्तमम्॥133॥**

**सन्नीतिं तां तथा[5] दृष्ट्वा चक्रतीर्थं[6] तथैव च।
यदर्थं नारदोद्गीता गाथा चरति भूतले॥134॥**

जब राहु के द्वारा सूर्य ग्रस्त होता है, तब जो वहाँ श्राद्ध करता है वह एक हज़ार अश्वमेध यज्ञ करने के उत्तम फल को प्राप्त करता है। उस सन्नीति को देखने के बाद उन कश्यप ने चक्रतीर्थ को भी देखा जिसके विषय में नारद द्वारा गाई गई गाथा पृथ्वी पर प्रचलित है।। 133–134।।

---

1. *तीर्थाणि H*
2. *आसमुद्रसरांसि च ed. Leiden*
3. *तु EFH*
4. *F gloss, तीर्थसन्नयनमेव विशदयति पृथिव्यामिति कृष्णपक्षावसानेऽमायामित्यर्थः।*
5. *तदा C*
6. *शक्रतीर्थं G*

अहो लोकस्य निर्बन्ध[1]आदित्यग्रहणं प्रति।
चक्रतीर्थेन पर्याप्तं[2] ग्रहा[3]द्दशगुणं फलम्॥135॥

तं[4] दृष्ट्वा चक्रतीर्थाख्यं[5] तथा तीर्थं पृथूदकम्[6]।
दृष्ट्वा विष्णुपदं पुण्यं तथा चामरपर्पटम्[7]॥136॥

अहो! संसार का सूर्यग्रहण के प्रति कितना आग्रह है? चक्रतीर्थ से प्राप्त पुण्यफल तो सूर्य ग्रहण से दस गुना अधिक होता है। उस चक्रतीर्थ और पृथूदक तीर्थ को देख कर उन्होंने पवित्र विष्णुपद तथा अमरपर्पट को देखा।। 135-136।।

शतद्रुं तत्र चोत्तीर्य[8] ऋषि[9]र्गङ्गां[10] च निम्नगाम्।
अर्जुनाश्रममासाद्य देवसुन्दं तथैव च॥137॥

उत्तीर्य च महाभागां विपाशां पापनाशिनीम्।
दृष्टवान् सकलं देशं तदा शून्यं स कश्यपः॥138॥

इसके पश्चात् वे मुनि शतद्रू (सतलुज) और गंगा नदियों को पार कर अर्जुनाश्रम तथा देवसुन्द पहुँचे। प्रसिद्ध तथा पापनाशिनी विपाशा नदी को पार कर उन्होंने समस्त प्रदेश को सूना देखा।। 137-138।।

---

1. *निर्बन्धः C निर्बन्धमा मूलपाठ*

2. *पर्याप्तो C*

3. *यतो C*

4. *तद् C*

5. *चक्रतीर्थं च C*

6. *पृथोदकम् G*

7. *चामरकण्टकम् C चामरपम्पटम् D*

8. *यह D, शतद्रुं च ततस्तीर्त्वा G , च तथोत्तीर्य H, च ततोत्तीर्य A तत्रोत्तीर्य शतद्रुं च E;*

9. *मुनिर् C*

10. *शृङ्गां G शृङ्गं H*

दृष्ट्वा स मद्रविषयं शून्यं प्रोवाच पन्नगम्।
किमर्थं नील देशोऽयं मद्राणां शून्यतां गतः ॥139॥

रमणीयः सदैवैष दुर्भिक्षपापवर्जितः।
नित्यं धान्यधनोपेतस्तन्ममाचक्ष्व पृच्छतः[1] ॥140॥

इस प्रकार सूने हुए मद्रप्रदेश को देखकर मुनि ने नाग से पूछा-हे नील! यह मद्रप्रदेश खाली कैसे हो गया है? यह तो सदैव रमणीय, दुर्भिक्ष के कष्ट से रहित, हमेशा धन धान्य से युक्त होता था! मुझे कुछ बताओ।। 139-140।।

नीलः[2]
भगवन् विदितं सर्वं[3] यथा पूर्वं मया शिशुः।
पालितः सङ्ग्रहसुतो दैत्यो नाम[4] जलोद्भवः ॥141॥

सोऽद्य[5] लब्धवरः[6] पापो ब्रह्मणोऽव्यक्तयोनितः[7]।
न मां गणयते धृष्टो[8] न चाहं तस्य निग्रहे ॥142॥

---

1. 141 वें पद्य के प्रथम पाद के बाद में है। E

2. नील उवाच BCDEF

3. यह BCDF, पूर्वं AGH

4. नाम्ना AC

5. सद्यो G

6. यह A, लब्ध्वा वरान् अन्य

7. अव्यक्तजन्मनः G

8. यह A, दुष्टो अन्य

समर्थो वरदानेन त्रैलोक्याधिपतेः प्रभोः ।।143 ।।

नील ने कहा-

हे भगवन्! यह सब आपको विदित है कि पहले संग्रह का पुत्र जलोद्भव नामक राक्षस मेरे द्वारा पाला गया था। अब वह पापी तो अगोचरजन्मा ब्रह्मा से वर प्राप्त करके मुझे कुछ नहीं मानता और उन तीनों लोकों के स्वामी के वरदान के कारण मैं उसे नियन्त्रण में रखने में असमर्थ हूँ।। 141-143 ।।

तेनेदं[1] सकलं[2] शून्यं[3] मद्रदेशं[4] कृतं प्रभो[5]।
खादता नरमांसानि दुष्टेनाकृतबुद्धिना ।।144 ।।

हे प्रभु! उस नरमाँसभक्षी, निर्बुद्धि, दुष्ट के द्वारा यह सम्पूर्ण मद्रप्रदेश जनशून्य कर दिया गया है।। 144 ।।

दार्वाभिसारगान्धारजुहुण्डर[6]शकाः खशाः ।
तङ्गणा[7] माण्डवाश्चैव[8] अन्तर्गिरिबहिर्गिरी[9] ।।145 ।।

एते वै मुख्यतस्तेन देशाः शून्यीकृताः[10] प्रभो।
निग्रहे भगवंस्तस्य कुरु बुद्धिं जगद्धिताम् ।।146 ।।

हे भगवन्! उसने मुख्य रूप से दार्वाभिसार, गान्धार, जुहुण्डर, अन्तर्गिरि, बहिर्गिरि, शक, खश, तंगण और माण्डव ये प्रदेश खाली कर दिए हैं। आप

---

1. *तेनासौ C*
2. *सकलः C*
3. *शून्यो C*
4. *मद्रदेशे C*
5. *विभो कृतः C*
6. *जाहुण्डर D जहुण्डार E*
7. *तंगना G*
8. *यह D, मारुवाश्चैव E, नाडव A*
9. *– गिरीन् AGH*
10. *शून्यकृताः A*

Ed. Leiden v.v. 1376-140

अपनी जगत् कल्याणकारिणी बुद्धि को उसका दमन करने में लगायें।। 145–146।।

बृहदश्वः
एवमुक्त[1]स्तथेत्युक्त्वा स्नात्वा तीर्थेषु कृत्स्नतः[2]।
आजगाम सतीदेशं[3] विमलं तत् सरोत्तमम्[4]॥ 147॥

बृहदश्व ने कहा– हे रिपुदमन! इस प्रकार कहे जाने पर ''ऐसा ही हो'' यह कह कर वे आसपास के सब तीर्थों में स्नान करके सतीदेश में उस उत्तम निर्मल सरोवर पर गए।। 147।।

तत्र स्नात्वा जगामाशु ब्रह्मलोकं सनातनम्।
पद्भ्यां चङ्क्रमणं[5] त्यक्त्वा स्व ऋद्ध्यैव[6] नरोत्तम॥148॥

नीलेन सहितः प्राया[7]न्नागराजेन[8] धीमता[9]।
तौ गत्वा ब्रह्मसदनं ववन्दतुररिन्दम॥149॥

देवं[10] कमलयोनिं च सङ्गत्या तत्र च[11] स्थितौ।
वासुदेवेश्वरौ देवावनन्तं च महामतिम्[12]॥150॥

हे पुरुषोत्तम वहाँ स्नान करके वे शीघ्र चल दिये और पैदल चलना छोड़कर, अपनी ही शक्ति से शीघ्र ही वे नागराज महात्मा नील के साथ सनातन ब्रह्मलोक में गए। हे रिपुदमन! ब्रह्मलोक पहुँच कर उन दोनों ने कमल से

---

1. *उक्ते FG*
2. *संस्तुतः A*
3. *सतीदेशे D*
4. *तत्सरोवरम् C तत्स A*
5. *च क्रामणं G*
6. *स्ववृद्ध्यैव F, स्वशक्त्यैव GC*
7. *प्रागात् C*
8. *नागराजेन C नागराज्ञा मूलपाठ*
9. *धीमता C महात्मना मूलपाठ*
10. *एवं DEF*
11. *तं FH नित्यं E*
12. *महापतिम् G*

उत्पन्न ब्रह्मा और उनके साथ वहाँ बैठे वासुदेव, ईश्वर इन देवताओं और महाबुद्धिमान् अनन्त को नमस्कार किया।। 148–150।।

तै[1]स्तु[2] सम्पूजितौ[3] तत्र जलोद्भवविचेष्टितम्।
कथयामासतुरुभौ ततो देवः पितामहः ।।151।।

अवोचदेनं[4] नागेशमृ[5]षिं चामितविक्रमम्[6]।
नौबन्धनं प्रयास्यामो वयं चैतस्य[7] निग्रहे ।।152।।

वहाँ उन से सम्मानित होकर दोनों ने जलोद्भव की करतूत का ब्योरा दे दिया। तब ब्रह्मा देवता ने नागराज और असीमशक्ति वाले इस मुनि से कहा- उसका दमन करने के लिए हम नौबन्धन जायेंगे।। 151–152।।

तत[8]स्तं केशवो देवो[9] घातयिष्यत्यसंशयम्।
एतच्छ्रुत्वा हरिः प्रायात्तार्क्ष्येण परवीरहा ।।153।।

---

1. यह अन्य, तौ *A*

2. श्चापि *C*

3. पूजितौ *C*

4. यह *A* उवाचैनो *C* उवाच देवो *DFH*

5. तथा नागं *C*, नागं तं *DH*, नागैस्तम् *F*

6. चामिततेजसम् *DEFH*

7. च तस्य *DEG* द्राक् तस्य *C*, तस्य च *H*

8. एष *C*

9. साक्षाद् *C*

Ed. Leiden v.v. 145-147

तमन्वयाद् वृषारूढो हरो देव्या सहानघ[1]।
हंसयानो गतो ब्रह्मा नागौ तौ मेघवाहनौ[2] ॥154॥

ऋद्ध्यैव[3] कश्यपः प्रायाच्छ्रुतवांस्तत् पुरन्दरः[4]।
ततो देवगणैः सार्धं स यातो यत्र केशवः ॥155॥

तब निश्चय ही विष्णु भगवान् उसका वध करेंगे। यह सुनकर बलशाली शत्रुओं का वध करने वाले विष्णु गरुड़ पर सवार होकर चल पड़े। हे निष्पाप! उनके पीछे भगवान् शिव पार्वती के साथ बैल पर आरूढ़ होकर चल दिए। ब्रह्मा हंस पर चढ़ कर गए और दोनों नाग (नीलनाग और अनन्तनाग) मेघ वाहनों से गए। कश्यप मुनि अपनी अलौकिक शक्ति से ही गए। इन्द्र ने सुना तो वह भी देवगणों के साथ वहाँ गए जहाँ केशव जा चुके थे।। 153-155।।

यमोऽग्निर्वरुणो वायुः कुबेरो निर्ऋतिस्तथा[5]।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः ॥156॥

अश्विनौ भृगवः साध्यास्तथैवाङ्गिरसः सुताः।
ऋषयश्च महाभागा गन्धर्वाप्सरसां गणाः ॥157॥

देवपत्न्यस्तथा[6] सर्वा देवानां याश्च मातरः।
विद्याधरगणा यक्षाः सागराः सरितस्तथा ॥158॥

यम, अग्नि, वरुण, वायु, कुबेर, निर्ऋति, आदित्य, वसु, रुद्र, विश्वेदेव, मरुद्गण, अश्विनीकुमार, भृगु, साध्य, अङ्गिरा के पुत्र, महाभाग्यशाली ऋषिगण, गन्धर्वों और अप्सराओं का समुदाय, देवों की पत्नियाँ तथा देवमातायें, विद्याधर-गण, यक्ष, सागर और नदियाँ सभी वहाँ गये।। 156-158।।

---

1. *महानघ CD, सहानघ F*

2. *नागस्तु मेघवाहनः DE*

3. *ततश्च G*

4. *परंधनः G*

5. *यह E नैनृतस्तथा C निर्ऋतिस्तथा D नृपतिस्तथा A*

6. *देवपितृगणाः E*

मकरेण ययौ गङ्गा कूर्मेण यमुना नदी[1]।
वृषारूढा शतद्रूश्च[2] महिषेण[3] सरस्वती॥159॥

अश्वारूढा विपाशा च गजारूढा इरावती[4]।
सिंहेन चन्द्रभागा च सिन्धुर्व्याघ्रेण पार्थिव॥160॥

हे राजन्! गंगा मगरमच्छ पर, यमुना कछुए पर, शतद्रु बैल पर, सरस्वती नदी महिष पर, व्यास नदी घोड़े पर, रावी नदी हाथी पर, चिनाब नदी शेर पर और सिन्धु नदी बाघ पर सवार होकर गई।। 159-160।।

देविका गवयारूढा मृगेण[5] सरयूर्नदी।
मन्दाकिनी मनुष्येण पयोष्णी[6] चाप्यजेन तु॥161॥

नर्मदा च[7] मयूरेण सारङ्गेण च[8] गोमती।
गोदावरी च मेषेण तथा[9] हंसेन कम्पना॥162॥

देविका नदी जंगली बैल पर और सरयू नदी हिरन, मन्दाकिनी मनुष्य और पयोष्णी बकरे के द्वारा गई। हे राजन्! नर्मदा मोर, गोमती सारंग, गोदावरी नदी भेड़ तथा कम्पना हंस के द्वारा गई।। 161-162।।

---

1. यमुनापगा C

2. स्तु H

3. माहिष्येण ed. Leiden

4. शरावती D त्विरावती C चेरावती F

5. मृगेन G

6. परोष्णी D परोस्नी E

7. च AG

8. तु FH

9. तदा H

Ed. Leiden v.v. 153-156

बकेन गण्डकी[1] राजन् कावेरी[2] उष्ट्रगा तथा[3]।
नक्रेणेक्षुमती पुण्या सीता पुण्या बलाकया[4] ॥163॥

चमरेण च लौहित्या वंक्षुः क्रोडेन सत्वरः।
ह्लादिनी[5] जीवजीवेन ह्रादिनी[6] कुक्कुटेन च[7] ॥164॥

हे राजन्! गण्डकी नदी बगुले के द्वारा, कावेरी नदी ऊँट के द्वारा, पवित्र इक्षुमती नदी मगरमच्छ तथा पवित्र नदी सीता बगुली के द्वारा गई। लौहित्य नदी चमर हिरण तथा शीघ्रगामिनी वंक्षु नदी सूअर के द्वारा गई। ह्लादिनी चकोर तथा ह्रादिनी मुर्गे के द्वारा गई।। 163-164।।

पावन्यपि[8] तुरङ्गेण[9] शोणः सर्पगतस्तथा।
मेघेन कृष्णवेणी[10] च भुवेणा शशकेन च॥165॥

---

1. वकेन गंडके D

2. कावीरी AFG कवीरी C, कावेर्युष्ट्रगा H

3. तथा पुनरुक्त A

4. सीता पुण्यबलाकया DE

5. ह्रादिनी CH

6. ह्लादिनी CH

7. तु C

8. पार्वत्यपि G

9. यह CE, तुलिंगेन DFGH

10. कृष्णवेणा च C

एताश्चान्याश्च या नद्यः प्रययुर्वाहनैः स्वकैः।
अनुजग्मु[1] र्जगन्नाथं[2] हरिं[3] युद्धदिदृक्षया[4] ॥166॥

नौबन्धनमथासाद्य केशवो वै व्यवस्थितः ॥167॥

पावनी नदी घोड़े, शोण नदी सर्प, कृष्णवेणी मेघों तथा भूवेणा खरगोश के द्वारा गई। ये तथा अन्य नदियाँ अपने अपने वाहनों पर सवार होकर गईं। युद्ध को देखने की इच्छा से इन सब ने जगत् के स्वामी हरि का अनुसरण किया। हरि नौबन्धन पहुंच कर (युद्ध के लिए) अवस्थित हुए।। 165-167।।

देवानुयात्रानिनदं[5] श्रुत्वा दैत्योऽपि[6] दुर्मतिः।
जले त्ववध्यमात्मानं विदित्वा न विनिर्गतः[7] ॥168॥

अनिर्गतं तं तु तदा विज्ञाय मधुसूदनः।
नौबन्ध एव मुदितो विवेशाथ सुरैः सह॥169॥

देवों के (लश्कर की) यात्रा की आवाज़ सुनकर, अपने को जल में अवध्यताप्राप्त मान कर दुर्बुद्धि राक्षस (सरोवर से) बाहर नहीं निकला। तब उसको बाहर निकला हुआ न देखकर, प्रसन्न हुए मधुसूदन ने देवों के संग नौबन्ध में प्रवेश किया।। 168-169।।

---

1. *अन्तर्जग्मुः G*
2. *जगन्नाथान् C*
3. *यह DEFH, सर्वा ed. Leiden*
4. *यह DEF, हरिदिदृक्षया A, सेशान्दिदृक्षया C*
5. *देवानुयात्रानिनदं C*
6. *सु-C*
7. *बहिर्ययौ C*

नौबन्धशिखरे[1] रुद्रो दक्षिणे शिखरे हरिः।
उत्तरे शिखरे ब्रह्मा तेषामन्वसुराः सुराः[2] ॥170॥

एवं ते विविशुः[3] शैले[4] ततो देवो जनार्दनः।
अनन्तमाह धर्मात्मा वधार्थं[5] दानवस्य तु[6] ॥171॥

नौबन्ध शिखर पर रुद्र, दक्षिण शिखर पर हरि, उत्तर शिखर पर ब्रह्मा (स्थित हुए) तथा उनके पीछे देवता और असुर स्थित हुए। इस प्रकार उन्होंने पर्वत पर डेरा डाल दिया। तब धर्मात्मा देव जनार्दन (विष्णु) ने राक्षस को मारने के लक्ष्य से अनन्त को कहा।। 170-171।।

कुरुष्व लाङ्गलेन त्वं विदार्याद्य हिमालयम्।
इदं[7] सरोवरं दिव्यं निस्तोयं शीघ्रमेव तु॥172॥

आज तुम शीघ्र ही अपने हल से हिमालय को विदीर्ण कर इस दिव्य सरोवर को जलरहित कर दो।। 172।।

बृहदश्वः[8]
ततस्त्वनन्तो गिरिसन्निकाशः
समग्रचन्द्रस्य समानकान्तिः।

---

1. तन्मध्यशिखरे C

2. यह A सुरासुराः अन्य

3. तेषु निविष्टेषु C

4. सर्वे DFH

5. वदार्थं D

6. यह अन्य, च A

7. इत्थं H

8. बृहदश्व उवाच CD इति श्रीनीलमतपुराणेऽनन्तानुशासनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः C नीलमते बृहदश्वः A, इति श्रीनीलमते बृहदश्वः I H

व्यवर्धतावृत्य दिवं महीं च[1]
सन्त्रासयन् दैत्यगणान् समन्तात्[2] ॥173॥

बृहदश्व (ने कहा)

तब पर्वत के समान (विशाल) और चन्द्रमा के समान कान्ति वाले अनन्त ने अपने को फैलाकर पृथ्वी और आकाश को ढक दिया तथा चारों ओर दैत्यगणों को भयभीत कर दिया।। 173।।

नीलाम्बरः काञ्चनबद्धमौलिः
सम्पूज्यमानस्त्रिदशैः समस्तैः[3]।
विदारयामास स लाङ्गलेन
हिमाचलं शैलवरं पृथिव्याम् ॥174॥

नीले वस्त्र तथा स्वर्ण मुकुट धारण किये हुए और सब देवों से पूजित उसने पृथ्वी पर श्रेष्ठ पर्वत हिमालय को अपने हल से काट दिया।। 174।।

विदारिते पर्वतराजराजे
विनिर्ययौ तज्जलमाशु वेगात्।
वेगेन शब्देन च[4] सर्वभूतान्
सन्त्रासयानं[5] कुटिलैस्तरङ्गैः ॥175॥

हिमाचलाभैर्[6]गगनं स्पृशद्भिः
संप्लावयानं[7] गिरिमस्तकानि।

---

1. *यह A, महीं दिवं च अन्य*

2. *समस्तान् DEF*

3. *समग्रैः DEH समन्तात् A*

4. *स G*

5. *यह AGH सन्त्रासमानं अन्य*

6. *हिमाचलाभं DF*

7. *संपावयानं D संप्लावमानं H*

संक्षीयमाणे सरसस्तु तोये
चकार मायां स जलोद्भवाख्यः ॥176॥

अथान्धकारं ससृजे समन्ता[1]-
ददृश्यमासीद् भुवनं[2] नृवीर[3]।
शम्भुस्तदा[4] चन्द्रदिवाकरौ द्वौ
जग्राह देवोऽथ करद्वयेन ॥177॥

प्रकाशमासीज्जगति[5] निमेषा-
द्ध्वस्तं तथा सर्वमथान्धकारम्।
ध्वस्ते[6]ऽन्धकारे हरिरप्रमेयो
योगेन गत्वा[7] ह्य[8]परं शरीरम् ॥178॥

दैत्येन युद्धं च चकार सार्धं
देहेन चान्येन च[9] युद्धमैक्षत्।
विष्णोश्च दैत्येन बभूव युद्धं
घोरं द्रुमैः पर्वतमस्तकैश्च ॥179॥

युद्धं च ते देवगणाः[10] समस्ता[11]
[12]..... चक्रेण देवप्रवरः समान्ते।

---

1. *समग्रम् DEFH*
2. *भुवनं CDEF*
3. *सुवीर DEF*
4. *यह अन्य, तथा AH*
5. *जगति DF*
6. *यह DE, मुक्ते AF स्तब्धे C*
7. *कृत्वा C*
8. *यह A, त्व अन्य*
9. *स C*
10. *देवेन्द्रगणाः A, देवगणाः अन्य*
11. *यह अन्य MSS, समान्ताः A समग्राः H*
12. *यहां एक पद लुप्त है।*

Ed. Leiden v.v. 169b-173a

चिच्छेद दैत्यस्य शिरः प्रसह्य
ब्रह्मा ततस्तोषमुपाजगाम[1] ॥180॥

पर्वतराजाधिपति हिमालय के विदीर्ण होने पर (सरोवर का) वह जल एकदम तेज़ी से बह निकला। उसने अपने तेज़ प्रवाह और कोलाहल से सारे प्राणियों को डरा दिया एवं हिमालय के समान ऊँची आकाश को छूने वाली अपनी तरङ्गों से पर्वतशिखरों को अपने में डुबा लिया। सरोवर के जल के कम हो जाने पर उस जलोद्भव नामक राक्षस ने मायाजाल बिछाया। हे पराक्रमी राजन्! इसके बाद उसने चारों ओर अन्धकार फैला दिया। संसार बिलकुल अदृश्य हो गया। तब भगवान् शिव ने अपने दोनों हाथों में सूर्य और चन्द्र को पकड़ लिया। पल भर में संसार में प्रकाश हो गया और समस्त अन्धकार नष्ट हो गया। अन्धकार के नष्ट हो जाने पर असीम एवं अज्ञेय विष्णु योग के द्वारा दूसरा शरीर धारण कर के राक्षस के साथ युद्ध करने लगे और अन्य शरीर से उस युद्ध को देखने लगे। पर्वतों के शिखरों और वृक्षों से विष्णु तथा दैत्य के मध्य घोर युद्ध हुआ। उस युद्ध को सभी देवगणों ने (देखा)। वर्ष के अन्त में देवों में उत्तम विष्णु ने बलपूर्वक चक्र से राक्षस का सिर काट दिया। तब ब्रह्मा को सन्तोष हुआ।। 175-180।।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च[2] येषु शिखरेष्ववस्थिताः[3]।
तेषां च नामधेयानि ददुः[4] स्वानि महीतले ॥181॥

---

1. यह अन्य, सुखमुपाजगाम A

2. यह A, शम्भुः अन्य

3. शृङ्गेषु H

4. यह C, दधुः अन्य

ऊचुश्च शृङ्गप्रवरान्[1] शैलेन्द्रस्य महात्मनः।
स्नात्वैव क्रमसाराख्ये सरस्यस्मिन् नरोत्तम[2] ॥182॥

द्रष्टा यः खलु युष्माकं[3] दृष्टास्तेन वयं त्रयः।
भविष्यामो ध्रुवं शैले त्रिदिवं च प्रयास्यति[4] ॥183॥

पृथ्वीतल पर जिन चोटियों पर ब्रह्मा विष्णु और शिव प्रतिष्ठित हुए थे उन्होंने उन्हें अपने अपने नाम दे दिए। हे पुरुषोत्तम! और उन्होंने महान् पर्वतराज के उन उत्तम शिखरों को कहा- जो कोई कभी भी क्रमसार नामक इस झील में स्नानकर के आपको देखेगा वह निश्चय ही पर्वत पर हम तीनों के दर्शन कर लेगा और स्वर्ग में जाएगा ॥181-183॥

बृहदश्वः
ताने[5]ता[6]तान् शिखरान् पश्य ब्रह्माविष्णुमहेश्वरान्।
नौबन्धशिखरो[7] यस्तु[8] स एव नृप शङ्करः ॥184॥

दक्षिणे[9]ऽस्य हरिः पार्श्वे वामे[10] ब्रह्मा प्रकीर्तितः।
एतान् हि दृष्ट्वा मुच्यन्ते येऽपि दुष्कृतिनो जनाः[11] ॥185॥

---

1. शृङ्गप्रवराः FH

2. नरोत्तमः AH

3. युष्मांश्च C

4. यह अन्य, प्रदास्यति A

5. तेन F

6. तान् F

7. शिखरे G, शिखरं C

8. यत् C

9. यह ACFG दक्षिणो DE

10. यह ACG, पार्श्वो वामो DE

11. यह A, जनाः अन्य।

बृहदश्व ने कहा- हे राजन्! ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर के नाम की इन चोटियों को देखो। जो नौबन्धशिखर है वही शंकर शिखर है, इसके दक्षिण में हरि शिखर है और बाँयी ओर ब्रह्मा शिखर है। इनके दर्शन करके दुष्टजन भी मुक्त हो जाते हैं।। 184-185।।

योऽसौ विष्णुपदो नाम क्रमसारे प्रकीर्तितः[1]।
तस्योत्तराश्रमं चक्रे ब्रह्मा देववरः[2] स्वयम्[3] ॥186॥

पश्चार्धे चाश्रमं चक्रे[4] कश्यपो भगवानृषिः ॥187॥

क्रमसार में जो वह विष्णु पद प्रसिद्ध है, उसके उत्तर में देवों में उत्तम ब्रह्मा ने स्वयं आश्रम बनाया और उसके पश्चिम के आधे हिस्से में भगवान् कश्यप मुनि ने आश्रम बनाया।। 186-187।।

यस्मिन् देशे स्थितो विष्णुर्विजयं प्राप्तवांस्तदा।
तत्राश्रमपदं चक्रे महादेवः स्वयं प्रभुः ॥188॥

तस्यैव चापरे[5] भागे ह्यनन्तस्त्वाश्रमं[6] महत्।
चकार हलभृच्छ्रीमान् वासुदेवमते स्थितः ॥189॥

---

1. ऽतिकीर्तितः C

2. देवसरः DEFGH

3. 186 वें की दूसरी पंक्ति से पूर्व 185 पुनरुक्त H

4. छूटा है F

5. तस्य देवापरे C

6. स्वाश्रमं C

महादेवाश्रमाद् भागे पश्चिमेऽर्कनिशाकरौ।
चक्रतुस्त्वाश्रमौ[1] पुण्यौ सुरम्यौ देवपूजितौ ॥190॥

तब जिस स्थान पर खड़े होकर विष्णु ने विजय प्राप्त की थी उसी स्थान पर स्वयं सब के स्वामी भगवान् महादेव (शिव) ने आश्रम बनाया। उसी स्थान के दूसरे भाग में वासुदेव की आज्ञा में रहने वाले श्रीमान् हलधारी अनन्त ने एक महान् आश्रम बनाया। महादेव आश्रम के पश्चिम भाग में चन्द्रमा और सूर्य ने पवित्र सुरम्य आश्रम बनाए जो देवों के द्वारा पूजे जाते हैं।। 188, 189, 190।।

पादोनयोजनं[2] गत्वा महादेवाश्रमाद्धरिः।
आत्मनस्त्वाश्रमं[3] चक्रे नरसिंहेति विश्रुतम् ॥191॥

महादेव आश्रम से पौने एक योजन की दूरी पर जाकर हरि ने अपना आश्रम बनाया जो नरसिंह (आश्रम) इस नाम से विख्यात है।। 191।।

अन्ये तु देवाः सरसि वितोयेऽथ पृथक् पृथक्।
ते चक्रुराश्रमां[4]स्तत्र[5] ऋषयश्च[6] तपोधनाः ॥192॥

आश्रमाणि तथा नद्यश्चक्रुस्तीर्थान्यनेकशः[7]।
गन्धर्वाप्सरसो यक्षाः शैलेन्द्राश्च सगुह्यकाः ॥193॥

फिर वहाँ उन अन्य देवताओं ने भी जलरहित हुए सरोवर में अलग अलग अपने आश्रम बनाए एवं तपोधन ऋषियों ने (अपने) आश्रम बनाये और नदियों ने अनेक तीर्थस्थान बनाए। गन्धर्वों, अप्सराओं, यक्षों, शैलेन्द्रों और गुह्यकों ने भी वैसा ही किया।। 192-193।।

---

1. *स्वाश्रमौ C*
2. *पादोने योजने DEF*
3. *चाश्रमं C*
4. *यह AF, चक्रुराश्रमं DEG चक्रुस्वस्वाश्रमां C*
5. *लुप्त AF, तं G*
6. *मुनयः C*
7. *तीर्थण्यनेकशः H*

कृतालयौ[1] तत्र जगत्प्रधाना[2]
वुपेन्द्ररुद्रौ सह पद्मजेन।
कृतालयं तत्र जगत्समग्रं[3]
देशं सपुण्यं[4] परमं पवित्रम्[5] ॥194॥

जगत् में प्रमुख विष्णु और शंकर ने ब्रह्मा के साथ वहाँ अपना निवास स्थान बनाया और सम्पूर्ण जगत् ने भी परमपवित्र और पुण्यशाली उस देश को अपना निवास बनाया।। 194।।

जलोद्भवासृजा मत्त[6]स्तदा चक्रः[7] सुदर्शनः[8]।
बभ्राम देशं शून्यं तं[9] तं च जग्राह शङ्करः ॥195॥

चक्रहस्तो जगामाथ यत्र देवो जनार्दनः।
तमुवाच हरिर्देवं प्रहसन्शंकरं तदा ॥196॥

तब जलोद्भव के रक्त से मत्त हुए, सूने प्रदेश में घूमते हुए, सुदर्शन चक्र को शंकर ने पकड़ लिया। चक्र को हाथ में लेकर वे वहाँ पहुँचे जहाँ जनार्दन (विष्णु) देव विद्यमान थे। तब हंसते हुए हरि ने भगवान् शंकर को कहा।। 195-196।।

---

1. *कृतालया A*
2. *जगत्प्रधाना A*
3. *तीसरा पाद छूटा है D*
4. *देशोऽयमस्ते C*
5. *बृहदश्वः अतिरिक्त AEF, इति श्रीनीलमतपुराणे नौबन्धनदेवायतनवर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः। बृहदश्व उवाच C, इति श्रीनीलमते। बृहदश्वः H*
6. *मत्तं C*
7. *चक्रं C*
8. *सुदर्शनम् C*
9. *देशं तं शून्यं E शून्यं तं देशं C*

चक्रं मे दीयतां[1] देव[2] दैत्यसङ्घविनाशनम्।
प्रहसन्तमुवाचाथ हरिं हासेन[3] शङ्करः ॥197॥

हे देव! राक्षस समूह का नाश करने वाले इस चक्र को मुझे दे दीजिए। हँसते हुए हरि को शंकर ने परिहास में कहा।। 197।।

स्वच्छन्दोऽयं मया प्राप्तो भ्रममाणो[4] यदृच्छया।
प्रतिग्रहेण दास्यामि तव चक्रं जनार्दन॥198॥

हे जनार्दन! मुझे तो यह स्वच्छन्द घूमता हुआ दैवयोग से मिला है अतः बदले में कुछ लेकर मैं चक्र आपको दूँगा।। 198।।

एवमस्त्विति जग्राह तं[5] चक्रं मधुसूदनः[6]।
अस्मिन्[7] प्रदेशे राजेन्द्र[8] यत्र वर्तसि साम्प्रतम्॥199॥

तादृशं परिहासं तु कृत्वा देववरो हरिः।
तादृशीं कारयामास प्रतिमामात्मनस्तथा॥200॥

शम्भोर्देव्याश्च राजेन्द्र यथावृत्तमरिन्दम।
तादृशं स विधानं[9] तु कारयित्वा[10] जनार्दनः॥201॥

---

1. *यह A, मदीयं मे देहि H, अर्पय मे अन्य शेष MSS*
2. *छूटा H*
3. *हास्येन AH*
4. *भ्रममानो H*
5. *तत् C*
6. *देवदेवो जनार्दनः C*
7. *यस्मिन् C*
8. *विनष्ट A*
9. *संविधानं FH*
10. *कथयित्वा H*

अच्छा ऐसा ही हो यह कह कर मधुसूदन ने उस चक्र को पकड़ लिया। हे राजन्! मुझे यह यहीं से मिला हैं जहाँ आप अब खड़े हो वही वह स्थान है। श्रेष्ठ देव हरि ने वैसा परिहास कर वैसी अपनी प्रतिमा बनवा दी। जनार्दन विष्णु ने वैसा ही विधान कर के शिव और पार्वती की भी वैसी ही (प्रतिमायें बनवा दीं)।। 199-201।।

जलोद्भवशिरस्यस्मिस्कृतवानास्पदं हरिः।
इमां मनुजशार्दूल यस्यां सन्निहितावुभौ।।202।।

केशवश्च शिवश्चैव सर्वकल्मषनाशनौ।
कृतदेवप्रतिष्ठानं[1] देवदेवं जनार्दनम्[2]।।203।।

ऋषयो देवता नागा गन्धर्वाप्सरसां गणाः।
द्रष्टुं सर्वे समाजग्मुर्जलोद्भवशिरस्यथ[3]।।204।।

हे मनुष्यों में श्रेष्ठ राजन्! यहीं जलोद्भव के इस सिर पर हरि ने अपना स्थान बनाया जहाँ सब पापों का नाश करने वाले केशव और शिव दोनों पास पास विद्यमान हैं। तत्पश्चात् मुनि, देवता, नाग, गन्धर्व, अप्सराओं के समूह ये सभी देवप्रतिमाओं को स्थापित करने वाले देवों के देव जनार्दन को देखने के लिए वहाँ जलोद्भव के सिर (के गिरने के स्थान) पर आए।। 202-204।।

देवर्षिनागमुख्येष्वधिष्ठितेष्वथ कश्यपः।
उवाच वरदं विष्णुं[4] देशोऽयं देव मानुषैः।।205।।

---

1. प्रतिष्ठां कृतवान् H

2. 202-203 छूटे FG

3. बृहदश्वः H

4. हाशिये में अन्य हाथ से ये अतिरिक्त है।

हस्तौ बद्ध्वा पुरःस्थितः।
भगवन् भूतभव्येश शङ्खचक्रगदाधर।
भवतां सत्प्रसादेन वाञ्छाम्येकं परं वरम्॥
भगवन्तवः प्रसादेन यथाकामं जलोद्भवः।
निःशेषोऽभूद् भयं सर्वं गतमेतन्निवासिनाम्॥
साम्प्रतं चापि भगवन्

Ed. Leiden v.v. 195-198

वसतां रमणीयश्च पुण्यश्च भविता तथा।
कश्यपे ब्रुवति त्वेवं नागा वचनमब्रुवन्[1] ॥ 206 ॥

जब देवों, ऋषियों और नागों के मुख्यों ने अपना अपना स्थान ग्रहण कर लिया तब कश्यप ने वर देने वाले विष्णु से कहा- हे देव! अब यह प्रदेश सुन्दर और पवित्र बने तथा मानव यहाँ रहें। कश्यप के यह कहते ही नागों ने ये वचन कहे।। 205-206 ।।

न वयं मानुषैः सार्धं वसामो मुनिपुङ्गव।
तानुवाच ततः क्रुद्धः कश्यपो वै प्रजापतिः ॥207 ॥

मम वाक्यमनादृत्य यस्माद् धृष्टं[2] प्रभाषथ।
तस्मात् पिशाचैः सहिता वसध्वं नात्र संशयः ॥208 ॥

हे श्रेष्ठ मुनि! हम मनुष्यों के साथ नहीं रह सकते। तब निश्चय ही क्रुद्ध हुए प्रजापति कश्यप ने उनसे कहा–क्योंकि तुम मेरे वचनों का अनादर कर धृष्टता से बोल रहे हो इसलिए अब से आगे निःसन्देह राक्षसों के साथ रहोगे ॥ 207-208 ॥

एवमुक्ते[3] कश्यपेन नीलः प्राञ्जलिरब्रवीत्।
एते क्रोधवशाद् ब्रह्मन् न विजानन्ति किञ्चन ॥209 ॥

कश्यप के ऐसा कहने पर नीलनाग ने हाथ जोड़कर निवेदन किया–हे ब्रह्मन्! क्रोध के वश में हुए ये नाग कुछ भी नहीं जानते।। 209 ।।

---

1. इसके बाद H के हाशिये में अन्य हाथ से यह अतिरिक्त है-

अहो धिक् किमिदं तात वाञ्छस्यस्मदनर्थदम्।
क्व नागवसतिः कुत्र वासश्चापि नृणां खलु ॥
अल्पायुषां सदुःखानां तथा स्वल्पदृशामपि।
कथमेषा मतिर्जाता तवास्मान् प्रति मानद ॥

2. दुष्टं CDEFH

3. यह DEFGH, शप्ते C, उक्तः A

कश्यपस्तमुवाचाथ ऋषिः परमधार्मिकः।
वालुकार्णवमध्ये तु द्वीपः षड्योजनायतः॥ 210॥

तत्र सन्ति पिशाचा ये दैत्यपक्षाः सुदारुणाः।
तेषां तु निग्रहार्थाय पिशाचाधिपतिर्बली॥ 211॥

निकुम्भो[1] नाम धर्मात्मा कुबेरेण तु योजितः।
चैत्र्यां याति सदा योद्धुं पिशाचैर्बहुभिः सह॥ 212॥

परमधार्मिक कश्यप मुनि ने उसको कहा- रेत के समुद्र के बीच में छः योजन लम्बा चौड़ा एक द्वीप है। वहाँ दैत्यों के पक्ष में रहने वाले महाक्रूर पिशाच रहते हैं। कुबेर ने उन पर नियन्त्रण रखने के लिए निकुम्भ नामक बलवान् और धर्मात्मा पिशाचराज को नियुक्त किया है। चैत्र पूर्णिमा को बहुत से पिशाचों के साथ वह सदा वहाँ युद्ध करने को जाता है।। 210-212।।

पञ्चकोट्यः पिशाचानां निकुम्भस्यानुयायिनाम्।
गत्वा निकुम्भस्तैः सार्धं षण्मासान् युद्ध्यते सदा॥213॥

तत्रापि कोटयः पञ्चैव पिशाचानां दुरात्मनाम्॥ 214॥

निकुम्भ का अनुसरण करने वाले पाँच कोटि पिशाच हैं। निकुम्भ उनके साथ जाकर लगातार छह मास तक (दुरात्मा पिशाचों के साथ) युद्ध करता है। वहाँ भी दुष्ट पिशाचों की संख्या पाँच कोटि ही है।। 213-214।।

येऽधिकाः कोटिदशकान्[2] नाशमायान्ति ते सदा।
पक्षयोरुभयोर्नील षड्भिर्मासैः सदैव तु॥ 215॥

हे नील! दोनों पक्षों के (कुल मिला कर) दस करोड़ से अधिक जितने पिशाच होते हैं वे हर बार छह महीनों में युद्ध में नष्ट हो जाते हैं।। 215।।

1. निकुम्भ C

2. यह AC, कोटिदशका अन्य

निकुम्भः पुनरायाति पञ्चकोटिसमो[1] बली[2]।
शुक्लाश्वयुक्पञ्चदश्यां नित्यं देवप्रसादतः ॥ 216 ॥

कुबेरदेव के अनुग्रह से वह बली निकुम्भ अपने पाँच कोटि अनुयायियों के साथ हर बार आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की पंचदशी को पुनः वापिस आता है।। 216।।

हिमाचले तु षण्मासान् स सदा वसते[3] सुखी।
अद्य प्रभृति षण्मासांस्तस्येह वसतिर्मया ॥ 217 ॥

दत्ता तु सहितास्तेन ससैन्येनेह वत्स्यथ।
षण्मासान् मानवैः[4] सार्धं निकुम्भे निर्गते सदा ॥218 ॥

वह छः मास तक सुख से हिमालय पर रहता है। आज से लेकर मैंने उसे छः मास यहाँ रहने की अनुमति दे दी है। तुम्हें सेना सहित उसके साथ छह महीने रहना है और उसके चले जाने पर छह महीने मानवों के साथ रहना होगा।। 217-218।।

एवमुक्तस्तदा नीलः पितरं प्राह[5] धार्मिकः।
नित्यमेव हि वत्स्यामो मानुषैः सहिता वयम्[6] ॥ 219 ॥

न पिशाचैश्च[7] वत्स्यामो दारुणैर्दारुणप्रियैः।
एवं ब्रुवति नागेन्द्रे नीले[8] विष्णुरभाषत ॥ 220 ॥

ऐसा कहे जाने पर धर्मात्मा नील ने पिता से कहा, हम सदा ही मानवों

---

1. पञ्चकोटिवृतो C

2. बले DEF

3. वसति G

4. दानवैः DF

5. चाह G

6. इस श्लोक का चतुर्थ एवं अगले का प्रथम पाद D में छूटा है।

7. यह A, तु अन्य

8. नीलं G

के साथ रहने को तैयार हैं। क्रूर तथा क्रूरों के प्रेमी पिशाचों के साथ नहीं रहेंगे। नागराज नील के ऐसा कहने पर विष्णु ने कहा।। 219-220।।

मुनिवाक्यं तु भविता नील एकं चतुर्युगम्।
ततः परं तु सहिता[1] मनुष्यैरेव[2] वत्स्यथ॥ 221॥

अल्पवीर्याः पिशाचाश्च भविष्यन्तीह सर्वदा।
वीर्योपेता गमिष्यन्ति[3] षण्मासान् वालुकार्णवम्॥ 222॥

हे नील! मुनि का वचन एक चतुर्युग तक लागू रहेगा, उसके बाद तुम सब मानवों के ही साथ रहोगे। यहाँ पिशाच हमेशा कम बल वाले ही रहेंगे, बलशाली होने पर वे छह महीनों के लिए रेत के सागर को चले जायेंगे।। 221-222।।

नागस्य यस्य ये स्थाने निवसिष्यन्ति मानवाः।
ते तं[4] सम्पूजयिष्यन्ति पुष्पधूपानुलेपनैः॥ 223॥

नैवेद्यैर्विविधैर्धूपैः[5] प्रेक्षादानैः सुशोभनैः[6]॥ 224॥

जिस नाग के स्थान पर मानव रहेंगे वे उस नाग की पूजा फूलों, धूप, अनुलेपन, विविध प्रकार के नैवेद्यों और धूप की गन्धों तथा बढ़िया नाट्याभिनयों के आयोजनों से करेंगे।। 223-224।।

---

1. सुखिनो C

2. यह FH. एव G सह अन्य

3. यह अन्य, भविष्यन्ति A

4. यह अन्य, नागं A

5. यह A. धूपैः DEFG -गन्धैः C

6. च शोभनैः C

त्वयोक्तं च सदाचारं पालयिष्यन्ति ये नरा:[1]।
तेऽस्मिन्[2] देशे भविष्यन्ति[3] पशुधान्यसमन्विता:[4]॥ 225॥

वे लोग जो इस देश में आपके बताए हुए सदाचार का अनुसरण करेंगे वे पशुओं और धान्यादि से युक्त होंगे।। 225।।

क: प्रजापतिरुद्दिष्ट: कश्यपश्च प्रजापति:।
तेनेदं[5] निर्मितं[6] देशं[7] कश्मीराख्यं[8] भविष्यति॥ 226॥

कं वारि हलिना[9] यस्माद्देशादस्मादपाकृतम्।
कश्मीराख्यं ततोऽप्यस्य[10] लोके नाम भविष्यति॥ 227॥

यैवोमा सैव कश्मीरा यस्मात्तस्माद् भुजङ्गम॥ 228॥

क: को प्रजापति कहा जाता है तथा कश्यप प्रजापति हैं। उनके द्वारा बनाया गया यह प्रदेश कश्मीर कहलायेगा। क्योंकि हलधारी बलराम ने कम् अर्थात् जल को इस प्रदेश से बाहर प्रवाहित कर दिया था इस लिए भी संसार में इस प्रदेश का नाम कश्मीर होगा। हे नाग! क्योंकि जो उमा देवी है वही कश्मीरा देवी है इसलिए (भी यह नाम कश्मीर है।)।। 226-228।।

विशोकेत्यभिविख्याता बृंहिता च तथा मया।
स्त्रीरूपधारिणी भूत्वा वृद्धतीर्थे निवत्स्यति॥ 229॥

---

1. यह A, जना अन्य

2. यह BDEFG, तस्मिन् AH तेऽत्र C

3. निवत्स्यन्ति EF, पशूंश्चैव H

4. पशुधान्यै र्धनैर्युता: E, पशुधान्यधनैर्युता: F, धान्यपुत्रपशुपात्रसमन्विता: C , धनधान्यसमन्विता: H

5. तेनासौ C

6. निर्मितो C

7. देशो C

8. कश्मीराख्यो C

9. यह ADF, हलिना हरिणा अन्य

10. यह C तथाप्यस्य, BDEFH तथा यस्य A

विशोका नाम से विख्यात (नदी) जो मेरे द्वारा विस्तृत की गई वह स्त्रीरूप धारण करके वृद्धतीर्थ में निवास करेगी।। 229।।

वासुकेर्नागराजस्य तस्मिंस्तीर्थवरे सदा।
वसतिर्भविता नाग[1] तत्रस्थं तं च पूजय॥ 230॥

ममांशः स तु नागेन्द्र नागानामीश्वरेश्वरः।
तस्याज्ञां विफलां कुर्वन् मम हस्ताद् विनश्यति॥ 231॥

हे नाग! उस श्रेष्ठ तीर्थ में नागराज वासुकि का निवास सदा रहेगा। वहाँ स्थित उसकी पूजा करते रहो। हे नागेन्द्र! नागराजों का स्वामी वह (वासुकि) मेरा ही अंश है। उसकी आज्ञा की अवहेलना करने वाला मेरे हाथों के द्वारा नष्ट हो जाता है।। 230-231।।

नागानामालयं नाग नाम्ना भोगवती पुरी[2]।
योगी भूत्वा स नागेन्द्रस्तत्रेहापि कृतालयः॥ 232॥

प्रधानेन शरीरेण भोगवत्यां तु वासुकिः।
पालयन् वत्स्यते[3] नागां[4]स्त्वं वसेह सदानघ॥ 233॥

नागों का निवास स्थान भोगवती नगरी है। योगी होकर वह नागेन्द्र वहाँ भी रहता है और यहाँ भी। परन्तु नागों का पालन करता हुआ वासुकि अपने प्रधान शरीर से भोगवती में ही रहेगा। हे पापरहित! तुम सर्वदा यहाँ रहो।। 232-233।।

एवमुक्त्वा[5] तदा विष्णुः प्रययावीप्सितां गतिम्।
देवर्षिनागगन्धर्वाः प्रययुस्ते यथागताः[6]॥ 234॥

---

1. तत्र E

2. भोगवतीं पुरीम्

3. तस्य तान् H

4. नाग C

5. उक्तास्त D

6. यह A, यथागतम् अन्य

Ed. Leiden v.v. 221-225

ऐसा कह कर विष्णु अपने इच्छित रास्ते पर चले गए। देवता, मुनि, नाग और गन्धर्व भी जैसे आये थे वैसे चले गए।। 234।।

नानादेशसमुत्थैस्तु ततः प्रभृति मानवैः[1]।
षण्मासान् वसते देशः[2] षण्मासान् पिशिताशनैः ।।235।।

तब से लेकर इस देश में छह मास तो नाना देशों से आए हुए मनुष्य रहते हैं और शेष छह मास यहाँ पिशाच रहते हैं।। 235।।

कृत्वा मनुष्या राजेन्द्र धान्यसस्यादि[3]सङ्ग्रहम्।
आदायाज्ञां विनिर्यान्ति चैत्र्यामायान्ति सर्वदा ।।236।।

हे राजन्! धान्य अन्न आदि का संग्रह करके मनुष्य आज्ञा लेकर यहाँ से चले जाते हैं और छह मास बाद चैत्र की पूर्णिमा को वापिस आ जाते हैं।। 236।।

एवं निविष्टां[4] कश्मीरां[5] दृष्ट्वा हृष्टस्तु[6] कश्यपः।
आराध्य शङ्करं देवमुमादेवी[7]मचोदयत् ।।237।।

देशस्य पावनायास्य तोयदानेन पार्थिव।
सा वितस्तेति विख्याता नदी पापप्रणाशिनी ।।238।।

हे राजन्! इस प्रकार पूरी तरह बसे हुए कश्मीर को देख कर प्रसन्न हुए कश्यप ने देव शंकर की आराधना कर के उमा देवी को इस देश को जल के दान से पवित्र करने के लिए प्रेरित किया। वही यहाँ पापनाशिनी वितस्ता नदी के रूप में विख्यात हुई।। 237-238।।

---

1. मानवैः के बाद F में चतुर्वर्णान्वितैः शूरवीरविद्वत्समागतैः जोड़ा हुआ है।

2. देशो वसति षण्मासान् CF

3. यह, सस्याधि F

4. निविष्टान् C

5. काश्मीरान् C

6. प्रीतस्तु F

7. उमां देवीम् C

आराध्य केशवं देवं[1] तथा लक्ष्मीमचोदयत्[2]।
देशस्य पावनायास्य सा विशोकेति कीर्तिता[3] ॥239॥

अदितिर्देवमाता च कश्यपेन प्रचोदिता।
त्रिकोटिर्नामितो भूत्वा नदी देशे[4] प्रसर्पति॥240॥

(उन्होंने) भगवान् केशव की आराधना करके इस देश को पवित्र करने के लिए लक्ष्मी को प्रेरित किया। वही विशोका (नदी नाम से) प्रसिद्ध हुई। कश्यप की प्रार्थना पर देवताओं की माता अदिति भी त्रिकोटि नामक नदी बन कर इस देश में बहती है।। 239-240।।

शक्रपत्नी शची या च सापि[5] कश्यपचोदिता।
नाम्ना[6] हर्षपथा जाता देशेऽस्मिन् पापसूदनी[7] ॥241॥

दितिश्चन्द्रवती जाता ऋषेर्वचनकारिणी[8]।
स्वमंशं यमुनादेवी वितस्तायै समर्पयत्[9] ॥242॥

कश्यप के द्वारा प्रेरित की जाने पर इन्द्र की पत्नी शची भी इस देश में पापों का नाश करने वाली हर्षपथा (नदी) के रूप में है। मुनि के वचनों का अनुसरण करती हुई दिति भी चन्द्रवती (नदी) हुई। देवी यमुना ने स्वयं अपना अंश वितस्ता को समर्पित किया।। 241-242।।

---

1. चापि C

2. अवोचयत् E

3. कथ्यते F

4. देशं D

5. सा च DEFGH

6. नाम A

7. पापसूदिनी C

8. यह DEFH, देशेस्मिन् पापनाशिनी अन्य MSS.

9. समर्पति H

एवं कश्यपवाक्येन देवदानवमातर:[1]।
देवपत्न्यस्तथा पुण्या: सरिद्रूपत्वमागता: ॥243॥

तथा[2] कश्यपवाक्येन तीर्थसागरनिम्नगा:।
कश्मीरायां[3] तदा[4] जग्मु: सान्निध्यं च महीपते[5] ॥244॥

इस प्रकार कश्यप मुनि के आदेश से देवों और दानवों की माताओं तथा पवित्र देवपत्नियों ने नदियों का रूप धारण किया। हे महीपति! तब कश्यप के कहने से पवित्र तीर्थ, सागर तथा नदियाँ कश्मीर तथा उसके पड़ोस में आ गईं।। 243-244।।

एवं नरेन्द्र कश्मीरा[6] प्राप्ते[7] वैवस्वतान्तरे[8]।
समुत्पन्ना महापुण्या हरभार्या सती शुभा ॥245॥

कश्मीरायां[9] तथा राजा त्वया ज्ञेयो हरांशज:।
तस्यावज्ञा न कर्तव्या सततं भूतिमिच्छता[10] ॥246॥

हे नरेन्द्र! इस प्रकार वैवस्वत मन्वन्तर आने पर शिव की महापवित्र कल्याणकारिणी पत्नी सती कश्मीरा के रूप में उत्पन्न हुई। सदैव भला चाहने वाले तुम्हें कश्मीरा के राजा को शिव का अंश जानना चाहिए और उसकी अवज्ञा कभी नहीं करनी चाहिए।। 245-246।।

---

1. *देवमानवमातर: G, देवता नवमातर: H*
2. *यह FE, तत्र C*
3. *काश्मीरेषु C*
4. *यह BCE, सदा ADFGH*
5. *पुण्यवृद्धये C*
6. *कश्मीरा: CH*
7. *प्राप्ता H*
8. *यह A, वैवस्वतेऽन्तरे अन्य MSS.*
9. *कश्मीरेषु C*
10. *नीलमते देशनिवेशो नाम अतिरिक्त ADEFG, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे कश्मीरादेवी-नदीत्ववर्णनं नाम अष्टाविंशोध्याय: C*

गोनन्दः[1]
कथं सती[2] शची गङ्गा अदितिर्यमुना दितिः।
सरित्वमिह सम्प्राप्ता या च देवी करीषिणी॥247॥

गोनन्द ने पूछा-

यहाँ पर सती, शची, गंगा, अदिति, यमुना, दिति और करीषिणी देवी इन सब ने नदियों का रूप कैसे धारण किया?।। 247।।

बृहदश्वः[3]
कदाचित् कश्यपं द्रष्टुं ययुर्देव्यः प्रकीर्तिताः।
तास्तत्र चोदयामास कश्यपो भगवानृषिः॥248॥

बृहदश्व ने कहा

एक बार ये कीर्त्तिप्राप्त देवियाँ भगवान् कश्यप को देखने गईं। तब वहाँ कश्यप मुनि ने उन्हें इस प्रकार प्रेरित किया।। 248।।

कश्मीरा[4] नाम सुभगो देशो वै निर्मितो मया।
तं देशमम्बुदानेन भावयध्वं शुचिस्मिताः॥249॥

अदितिश्च दितिश्चैव शची गङ्गा च निम्नगाः।
एवमस्त्वित्यभाषन्त नोमा न च करीषिणी॥250॥

मैंने इस सुन्दर कश्मीर नामक देश को बनाया है। हे पवित्र मुस्कान युक्त देवियो! आप जल का दान देकर इस देश का सम्मान करो। अदिति, दिति, शची और गंगा नदी ने "ऐसा ही हो" यह कह दिया परन्तु न तो उमा ने कुछ कहा और न ही करीषिणी ने।। 249-250।।

---

1. आह अतिरिक्त DEFG, उवाच C

2. सीता G

3. उवाच अतिरिक्त CDE

4. कश्मीरो G

Ed. Leiden v.v. 238-241

आराधयामास तदा सत्यर्थेन[1] तु[2] शङ्करम्[3]।
अथोवाच[4] हरो भार्यां कुरु कश्यपभाषितम्॥251॥

ततोऽवोच[5]दृषिं देवी स च देशस्तनुर्मम।
यदा तदा पूत[6] एव किं मया तत्र कारणम्॥252॥

तब उसने सती को प्रेरित करने के लिए भगवान् शंकर की आराधना की। तत्पश्चात् हर ने अपनी पत्नी से कहा-वैसा ही करो जैसा कि कश्यप ने कहा है। तब देवी ने मुनि से कहा-वह देश जब मेरा ही शरीर होने के कारण पहले से ही पवित्र है तो मैंने वहाँ और क्या करना है? ॥ 251-252 ॥

कश्यपः[7]
पिशाचैः सह सम्पर्कस्तत्र नित्यं यदा नृणाम्।
तदा तेषां मतिः पापात् सततं नापसर्पति॥253॥

अपूज्याः सर्वदेशेषु दुराचारा मलैर्वृताः[8]॥254॥

---

1. *सत्यर्थं C*
2. *यह D, च EH, व A, परित्यक्त C*
3. *शंकरं विभुम् C*
4. *यह DEF, तदोवाच AH*
5. *अवोचत्तं C*
6. *यह अन्य पूर्वं A*
7. *उवाच अतिरिक्त CDE*
8. *मलावृताः C*

पापं कृतं च यत् क्षेत्रे तन् मे गुरुतरं मतम्।
त्वयैव पापं यत्[1] तेषां शमनीयं वरानने[2] ॥255॥

कश्यप ने कहा

क्योंकि वहाँ मनुष्यों का सम्पर्क हमेशा पिशाचों के साथ होता है इसलिए उनकी बुद्धि निरन्तर पाप से परे नहीं हटती। बुराइयों से घिरे वे दुराचारी सब देशों में निरादृत होते हैं। उस देश में किए पाप को मैं बड़ा पाप मानता हूँ। हे सुन्दर मुख वाली! आप ही उनके पाप को शान्त कर सकती हो।। 253-255।।

बृहदश्वः[3]
इति तथ्यं[4] विदित्वा सा कृपया[5] परया युता।
उवाच देवी भर्तारं[6] चारुचन्द्रनिभानना॥ 256॥

बृहदश्व ने आगे बताया

इस तथ्य को जानकर परम दया से युक्त हुई और चन्द्र के समान सुन्दर मुख वाली देवी ने पति से कहा।। 256।।

रसातले नदीरूपं करिष्यामि जगद्गुरो।
कुरु[7] शूलप्रहारं त्वं नीलवेश्मसमीपतः ॥257॥

यत्रासील्लाङ्गलमुखं प्राक् प्रभो शैलदारणे[8]।
तेन शूलप्रहारेण निष्क्रम्याहं रसातलात् ॥258॥

---

1. तत् F

2. नीलमते अतिरिक्त DEFG, इति श्री- H, इति श्रीनीलमतपुराणे गौरीशिवप्रसादनं नाम एकोनत्रिंशोध्यायः C

3. उवाच अतिरिक्त C

4. परित्यक्त F, तथा A

5. यह DEF, क्षमया CH

6. भवर्ण परित्यक्त A

7. गुरु A

8. शैलधारणे E, शिलाधारणे F, शैलदारणं G

हलमार्गेण[1] यास्यामि यावत् सिन्धुर्महानदः[2]।
तथा[3] चक्रे हरो देव[4]स्तथा चक्रे सती शुभा ।।259 ।।

हे जगद्गुरु! मैं पाताल में नदी का रूप धारण करूँगी। हे प्रभो! आप नील नाग के निवास के समीप वहाँ शूल का प्रहार करें जहाँ पर्वत को विदीर्ण करते हुए हल की नोंक रखी गई थी। उस शूल प्रहार से पाताल लोक से बाहर निकल कर मैं हल के द्वारा बनाये गये रास्ते से महानदी सिन्धु तक पहुँचूंगी। भगवान् हर ने वैसा ही किया और कल्याणकारिणी सती ने भी वैसा ही किया।। 257-259।।

तस्या नाम वितस्तेति कृतवान् शङ्करः स्वयम्।
वितस्तिमात्रं गर्तं तु शूलेन कृतवान् हरः ।।260 ।।

रसातलगता येन निष्क्रान्ता[5] सा[6] सरिद्वरा।
तस्माद् वितस्तेति कृतं[7] नामैतस्याः[8] स्वयम्भुवा ।।261 ।।

भगवान् शंकर ने स्वयं उसका नाम वितस्ता रखा क्योंकि हर ने शूल से एक वितस्तिमात्र (12 अंगुल का माप) गर्त बनाया था जिससे वह रसातल में गई हुई श्रेष्ठ नदी बाहर निकल आई। इसी कारण स्वयम्भू (शङ्कर) ने उसका नाम वितस्ता रखा।। 260-261।।

ततस्तु सर्वदेशेषु जनः शुश्राव पार्थिव।
सती देवी नदी भूत्वा कश्मीराया[9] विनिर्गता ।।262 ।।

---

1. यह AEFH , फलमार्गेण D, शूलमार्गेण C

2. सिन्धुमहानदम् C

3. तत्र ed. Leiden

4. कृते च शर्वेण C

5. विनिष्क्रान्ता H

6. परित्यक्त H

7. यह अन्य, कृते A

8. तस्या नाम C

9. कश्मीरेभ्यो C, कश्मीरायां E

हे राजन्! तब सब देशों के लोगों ने सुन लिया कि देवी सती नदी का रूप धारण करके कश्मीरा से निकली है।। 262।।

महापातकसंयुक्तस्तस्यां स्नातुं तदा जनः।
आजगाम भयात्तेषां शूलखातनियोजनात्[1] ।।263।।

रसातलं जगामाशु पुनस्तामेव[2] कश्यपः।
प्रसाद्योन्मज्जयामास[3] पञ्चहस्तसमीपतः ।।264।।

तब महापापों से युक्त लोग उस में स्नान करने के लिए वहाँ गये। उनसे डर कर वह शीघ्र ही शूल के द्वारा बनाये रास्ते से पाताल में चली गई। पुनः उसकी आराधना करके कश्यप पञ्चहस्त नाग के समीप से उसे बाहर लाये।। 263-264।।

पञ्चहस्तस्य नागस्य भवनात्तां विनिर्गताम्।
गव्यूतिमात्रमायातां[4] कृतघ्नस्तां ददर्श वै[5] ।।265।।

पञ्चहस्त नाग के भवन से प्रकट होकर उसने केवल एक गव्यूति (एक कोस या दो मील की दूरी का माप) का फासला ही तय किया था जब एक कृतघ्न व्यक्ति ने निश्चय ही उसे देख लिया।। 265।।

सा च दृष्टा कृतघ्नेन त्वन्तर्धानं[6] गता पुनः।
भूयः कश्यपवाक्येन चोदिता निम्नगोत्तमा ।।266।।

तच्चक्रात्[7] क्रोशमात्रे तु प्रददौ दर्शनं तदा।
मित्रस्त्रीगामिना दृष्टा ततो[8]ऽदर्शनमागता ।।267।।

---

1. यह AG, शूलख्यातनियोजनात् DE
2. यह, अन्य तामाह A
3. उन्मोचयामास C
4. यह C, आयाता अन्य
5. तं ददर्श वै संशोधित, अन्य निददर्श ह C
6. ह्यन्तर्धानं DEH, तिरोधानं C
7. यच्- G
8. भूयो C

कृतघ्न (व्यक्ति) के द्वारा देखी गई वह पुनः अदृश्य हो गई। तब कश्यप के वचनों से प्रेरित हुई वह उत्तम नदी पुनः चक्र (स्थान) से एक कोस की दूरी पर प्रकट हुई। वह जब अपने मित्र की पत्नी के साथ अनैतिक सम्बन्ध रखने वाले मनुष्य के द्वारा देखी गई तो उसके बाद अदृश्य हो गई।। 266-267।।

भूयः[1] कश्यपवाक्येन नरसिंहाश्रमे शुभा।
उन्ममज्ज[2] नदी[3] विप्रैः स्तूयमाना सहस्त्रशः ॥ 268 ॥

फिर कश्यप के वचनों से तथा ब्राह्मणों द्वारा हज़ार बार स्तुति करने पर वह सुन्दर नदी नरसिंह के आश्रम के समीप प्रकट हुई।। 268।।

क्रोशमात्रे ततो दृष्टा ब्रह्मघ्नेन महानदी।
अन्तर्धानं जगामाशु ततस्तामाह कश्यपः[4] ॥269 ॥

तब एक कोस की दूरी पर ब्राह्मण का वध करने वाले (व्यक्ति) ने महानदी को देखा तो वह शीघ्र ही विलुप्त हो गई। तब कश्यप ने उसको कहा।। 269।।

नमोऽस्तु ते पर्वतराजकन्ये[5]
नमोऽस्तु तुभ्यमृषिवर्यजुष्टे।
नमोऽस्तु तुभ्यं हरसङ्गलब्ध-
पवित्रभावे वरदे वरेण्ये ॥270 ॥

हे पर्वतराज की बेटी! तुम्हें नमस्कार है। श्रेष्ठ ऋषियों की अभीष्ट देवी तुम्हें नमस्कार है। हे श्रेष्ठ और वर देने वाली और हर के संग को प्राप्त करने से पवित्र भाव वाली! तुम्हें नमस्कार है।। 270।।

---

1. ततः C

2. यह G, उदमज्जत AH, उन्ममज्ज DF, उन्मग्नासौ C

3. मती C

4. कश्यपः अतिरिक्त H

5. त परित्यक्त A, पर्वतराजपुत्रि H

सुपुण्यतोये[1] सुरयोषिताभि-
शि्चक्रीडमानाभिरुपेततीरे[2]।
देवद्विजाद्यै[3]रुपगूह्यमाने[4]
सुशीततोये[5] विमले विशोके ।।271 ।।

येषां[6] हि भीत्या[7] प्रपलायसि[8] त्वं
त्वद् दर्शनाद् देवि विमुक्तपापाः।
वृत्ता नरास्ते गतसर्वपापा
स्त्वां भासयन्तः[10] प्रभया महत्या[11] ।। 272 ।।

हे देवी! पाप और शोक से रहित, परम पवित्र और शीतल जल से युक्त तुम्हारे तट पर क्रीडा करती हुई देवपत्नियां आती हैं। देवता और द्विज आदि तुम्हारा आलिङ्गन करते हैं। जिन से डर कर तुम भाग रही हो वे तो तुम्हारे दर्शन से पापमुक्त हो चुके हैं। विनष्ट हुए पापों वाले और महती कान्ति से प्रकाशित हुए वे मनुष्य तुम्हें घेरे हुए हैं।। 271-272 ।।

सप्तार्चि[12]दग्धस्य यथा शुचित्वं
त्वद्दर्शनाद् देवि तथा शुचित्वम्।
सर्वं पवित्रं भवतीह तद्वत्[13]
पापं महेशानि कुरु प्रसादम् ।।273 ।।

1. -तोयं A
2. -तीरं A
3. देवद्विजात्यै G
4. उपगूह्यमाने F, उपगूहमाना G, उपगूह्यमाना A
5. सशीततोये G
6. येभ्यो G
7. यह A, भीता अन्य
8. प्रपलायसे C
9. द्यां A
10. भासयन्ति G, भासयन्ते C
11. तृतीय तथा चतुर्थ पाद परित्यक्त H
12. कृशानु H
13. मातः G

हे देवि! आग से जलने पर जैसे कोई वस्तु पवित्र हो जाती है उसी प्रकार तुम्हारे दर्शन से पवित्रता होती है और इस संसार में सभी पाप धुल जाते हैं। हे महादेवी! तुम कृपा करो।। 273।।

पापानां पावनार्थाय प्रार्थितासि[1] महानदि[2]।
तस्मात् पावय पापानि मा प्रणाशं व्रजाशुगे॥ 274॥

हे महानदि! पापियों को पवित्र करने के लिए तुम से प्रार्थना की गई है। इसलिए हे तीव्र वेग वाली! तुम पापों को पवित्र करो और (दृष्टि से) ओझल मत होओ।। 274।।

एवं प्रसादिता भक्त्या कश्यपेन महात्मना।
उवाच कश्यपं देवी तं तथावादिनं तदा[3]॥275॥

इस प्रकार महात्मा कश्यप के द्वारा की गई भक्ति से प्रसन्न हुई देवी ने तब वैसा कहते हुए कश्यप से कहा।। 275।।

अत्यन्तपापसंयुक्तान् नाहं पवितु[4]मुत्सहे।
तदत्र प्रेरय विभो[5] लक्ष्मीं शाङ्र्गधर[6]प्रियाम्॥276॥

शक्ता हि पावने ब्रह्मंस्त्रैलोक्यस्यापि सा भवेत्।
अदितिश्च दितिश्चैव या च[7] गङ्गा[8] महानदी॥277॥

अन्याश्च सर्वाः सरितस्तस्याः साम्यं न बिभ्रति[9]।
केवलं प्रार्थयस्वाद्य लक्ष्मीं केशववल्लभाम्[10]॥278॥

---

1. यह अन्य MSS, पार्थिवानां G, प्रार्शिता त्वं ed. Leiden.
2. महापगे C
3. तथा G, देवी अतिरिक्त H
4. पावयितुम् C
5. प्रभो DH
6. शार्ङ्गधनुः-D
7. तथा C
8. च तथा गङ्गा के मध्य में गन्ध पद A
9. बिभ्रति न H
10. पावनवल्लभां A

बहुत अधिक पापों से युक्त (लोगों) को पवित्र करने की हिम्मत मुझ में नहीं है। हे प्रभो! इसके लिए आप शाङ्गर्धर विष्णु की प्रिया लक्ष्मी से प्रार्थना करें। वह तीनों लोकों को पवित्र करने में समर्थ है। अदिति, दिति, महानदी, गंगा और सभी अन्य नदियों में कोई भी उसकी समता नहीं कर सकती। आज आप केवल केशव की प्रिया लक्ष्मी से प्रार्थना करें।। 276-278।।

तस्याः स[1] वचनं श्रुत्वा प्रययौ भगवान् किल।
गोविन्दमाराधयितुं श्वेतद्वीपं विहायसा।।279।।

उसकी बात सुनकर वह भगवान् (कश्यप) गोविन्द की आराधना करने के लिए आकाशमार्ग से श्वेतद्वीप गये।। 279।।

गोविन्दस्त्वब्रवील्लक्ष्मीं गच्छ त्वं देवि मा चिरम्।
केशवेनैवमुक्ता तु लक्ष्मीः शोकसमन्विता।।280।।

उवाच वाक्यं प्रथमं गता तत्र[2] सती विभो।
पश्चान्मम गतायाः[3] सा ध्रुवं नाम हरिष्यति।।281।।

एवं सशोकां विज्ञाय कश्यपस्त्वब्रवीत् पुनः।
त्वमेव परमा शक्ति र्बहुभिर्मूर्तिभिः स्थिता।।282।।

गोविन्द ने लक्ष्मी से कहा- हे देवि! तुम जाओ और देर मत करो। केशव के द्वारा इस प्रकार कही गई लक्ष्मी ने शोकयुक्त होकर ये वचन कहे- हे प्रभु! वहां पहले पहुँची सती निश्चय ही मेरे बाद में पहुंचने पर मेरा नाम (श्रेय) हर लेगी। उसे इस प्रकार शोकयुक्त जान कर कश्यप ने पुनः कहा-तुम ही अनेक रूप धारण करने वाली महती शक्ति हो।। 281-282।।

---

1. स तस्या C

2. यस्मात् H

3. मा गताया H

क्षीरोदकन्ये विरजे पवित्रे मङ्गलास्पदे।
त्वमेव देवि कश्मीरा त्वमेवोमा प्रकीर्त्तिता॥ 283॥

त्वमेव सर्वदेवीनां मूर्तिभिर्देवि संस्थिता॥ 284॥

समुद्र की बेटी, धूलिरहित, पवित्र और मंगलों का आश्रय स्थान बनी हे देवि! तुम ही कश्मीरा हो। तुम ही उमा कही जाती हो। हे देवि! तुम ही सभी देवियों के रूप में रहने वाली हो।। 283-284।।

वैतस्तमभ्भस्तव तोयमिश्रं
मध्वमृताढ्यं[1] च[2] यथा तथास्तु।
स्नातास्त्व[3]दम्भस्यपि पापमग्नाः
सद्यो विमुक्ता विमलीभवन्तु[4] ॥285॥

वितस्ता का जल तुम्हारे जल से मिलकर वैसा ही हो जाएगा जैसा शहद और दूध से सम्पन्न मिश्रण होता है। तुम्हारे जल में स्नान करके पापी भी शीघ्र ही पापरहित होकर पवित्र हो जायेंगे।। 285।।

एवं स्तुता कश्यपेन[5] विशोका समपद्यत[6]।
चिन्तयामास च तदा[7] भर्तृवाक्यं ध्रुवं मया[8] ॥286॥

कर्तव्यमृषि[9]वाक्यं च किं विचारेण वै मम[10]।
नदी भूत्वा[11] जगामाशु कश्मीरा[12] वाक्यमब्रवीत् ॥287॥

---

1. *यह, अन्य मध्वमृताद्यं ed. Leiden*
2. *तु H*
3. *तवा AH*
4. *यह DE, भवन्ति AH*
5. *स्तुतासौ मुनिना C*
6. *यह अन्य समपश्यत A*
7. *यह D, सर्वदा EF, वरदा H*
8. *यह अन्य, तथा A*
9. *मुनि–C*
10. *हि वै मम G, मे पुनः C*
11. *भूता A*
12. *यह DEF, कश्मीरां A, मुनिः C*

कश्यप के द्वारा इस प्रकार की स्तुति की जाने पर वह लक्ष्मी शोकरहित हो गई और सोचा- मुझे विचार करने का क्या लाभ? मुझे तो निश्चय ही अपने पति तथा ऋषि के वचनों का पालन करना चाहिए। वह नदी का रूप धारण कर जल्दी ही चल पड़ी। कश्मीरा ने यह वाक्य कहा।। 286-287।।

व्रज शीघ्रं यावदिह त्वत्प्रतीक्षा सती स्थिता।
यावत् सा प्रथमं देशं[1] न पावयति[2] सुन्दरि॥ 288॥

तावत् पावय[3] तोयेन तव नाम भविष्यति।
तस्या[4]स्तद् वचनं श्रुत्वा विशोका समपद्यत॥ 289॥

हे सुन्दरि! यहाँ से तुम जल्दी जाओ। जब तक सती तुम्हारा इन्तज़ार करती हुई वहाँ स्थित है और जब तक वह (तुम से) पहले देश को पवित्र नहीं करती तब तक तुम उसे जल से पवित्र कर दो। तुम्हारा नाम होगा। उसका वह कथन सुनकर (लक्ष्मी) शोकरहित हो गई।। 288-289।।

तस्माद् विशोकेति नदी सततं कथ्यते जनैः।
मनोजवापि[5] कश्मीरा[6] सत्यै देव्यै[7] न्यवेदयत्॥ 290॥

इसी कारण वह नदी लोगों के द्वारा हमेशा विशोका (नदी) कही जाती है। मन के समान वेगवाली कश्मीरा ने भी देवी सती को (यह) निवेदन कर दिया।। 290।।

लक्ष्म्या विचेष्टितं श्रुत्वा सती च श्रुतविस्तरा[8]।
हृष्टा मार्गेण[9] चोत्तस्थौ[10] धौम्याश्रमसमीपतः॥291॥

---

1. देवि H
2. यह C, भावयति ADEF
3. यह C, भावय ADEFG
4..तस्य C
5. यह DEF, मनोरमा AC
6. आगतां तां च कश्मीरान् C
7. दिव्यै A
8. बहुविस्तरम् C
9. दृष्टा मार्गेण A, प्रीतिमार्गेण DEF
10. च तस्थौ DE

लक्ष्मी की चेष्टाओं के विषय में विस्तार से सुनकर सती प्रसन्न हो गई और धौम्य के आश्रम के समीप मार्ग में खड़ी होकर प्रतीक्षा करने लगी।। 291।।

आखोर्बिलेन शून्यत्वाद् विशोका चाप्य[1]नन्तरम्।
आजगाम वितस्तां च ददर्श पुरतः स्थिताम्।।292।।

और इसके बाद विशोका भी खाली जगह होने से आखु के छिद्र से बाहर आई और अपने सामने वितस्ता को खड़े पाया।। 292।।

दृष्ट्वा वितस्तां गतमत्सरा[2] सा
जगाम योगं[3] च[4] तया[5] विशोका।
पूर्वागता तत्र तदा[6] वितस्ता
जग्राह नाम क्षितिपप्रधान[7]।।293।।

हे राजाओं में मुख्य राजन्! वितस्ता को देख कर ईर्ष्यारहित हुई विशोका उसमें मिल गई। चूंकि वितस्ता वहाँ पहले पहुँच चुकी थी। अतः नाम उसका रहा।। 293।।

कश्मीरां[8] तु तदा[9] क्रुद्धा विशोका त्वशपत्[10] प्रभो।।294।।

उपशीर्णा[11] नृतेनाद्य त्वया यस्मादहं खले[12]।
सती च श्राविता यस्मात्त्वया मम विचेष्टितम्।।295।।

---

1. *वाथा A*
2. *गतमत्सरां F*
3. *तोयं A*
4. *सा G*
5. *तथा EDFH*
6. *तथा A*
7. *स्वमतः क्षितीश C*
8. *कश्यपं C*
9. *ततः A*
10. *यह DEF, अपश्यत् AGH*
11. *यह ADGH A, उपचीर्णा ed. Leiden*
12. *जले G, खलु A*

तस्मात्ते प्रायशो भावी जनः खल्वनृते रतः।
अपूजनीयो लोकेषु मलवान् कर्मकृत् तथा॥ 296॥

हे प्रभो! तब क्रोधित हुई विशोका ने कश्मीरा को शाप दिया-हे दुष्टे! क्योंकि आज मैं तुम्हारे झूठे वचन के कारण निर्बल हुई हूँ और क्योंकि मेरी चेष्टाओं के बारे में तुमने सती को सुना दिया था, इसलिए तुम्हारे भावी लोग इस लोक में प्रायः झूठे, अपवित्र, (भृत्य रूप में) काम करने वाले पूजनीय नहीं होंगे।। 294-296।।

यन्मे मानं[1] हृतं सत्या न मे व्रीडात्र[2] जायते।
यैवाहं सैव कश्मीरे[3] सती देवी न संशयः॥ 297॥

सती ने जो मेरे मान का हरण किया है, इसमें मुझे कोई लज्जा नहीं है। हे कश्मीरे! जो मैं हूँ निश्चय ही वही सती देवी है।। 297।।

सती लक्ष्मीसमेता तु पावयन्ती ततो जनम्।
जगाम हलमार्गेण मन्दं मन्दं[4] सरिद्वरा॥ 298॥

फिर लक्ष्मी (विशोका) से मिली हुई श्रेष्ठ नदी सती (वितस्ता) लोगों को पवित्र करती हुई हल के द्वारा बनाये गये रास्ते से मन्द मन्द बहने लगी।। 298।।

अदितिर्देवमाता तु[5] त्रिकोटीत्यभिविश्रुता[6]।
संयोगं सहिता[7] देव्या तया[8] प्राप्ता[9] वितस्तया॥ 299॥

---

1. *यह ADEFH, नाम C*
2. *च H*
3. *कश्मीरा C*
4. *यह A, मन्दमन्दं अन्य*
5. *यह DE, C*
6. *अपि विश्रुता F*
7. *यह C, सहिते G, सहितो ADEF*
8. *तया C ततः मूल पाठ*
9. *प्राप्तो AG*

Ed. Leiden v.v. 285-288

फिर देवों की माता अदिति जो त्रिकोटि नाम से प्रसिद्ध (नदी) है वह भी उस वितस्ता देवी के साथ मिलकर संगम को प्राप्त हुई।। 299।।

ततः शची शक्रपत्नी नाम्ना शक्रपथा नदी।
ततश्चन्द्रवती नाम दितिर्दैत्यारक्षा नृप[1] ॥ 300 ॥

हे राजन्! तत्पश्चात् इन्द्र की पत्नी शची जो शक्रपथा नाम वाली नदी है और दैत्यों की रक्षिका (माता) दिति जो चन्द्रवती नाम वाली है (वितस्ता में जा मिलीं)।। 300।।

एवं क्रमेण सा देवी गृह्णन्त्[2]यथ सरिद्वराः।
जगाम गङ्गया सार्धं संयोगं[3] सिन्धुना सह ॥ 301 ॥

और इसके बाद क्रमशः उत्तम नदियों को ग्रहण करती हुई उस (सती देवी) ने गङ्गा के साथ और सिन्धु के साथ नदियों के सङ्गम को प्राप्त किया।। 301।।

वैतस्तमम्भःसह सैन्धवेन
युक्तं यथा क्षीरमिवामृतेन।
लावण्ययुक्तं च यथैव[4] रूपं
शीलेन युक्तं च यथा श्रुतं स्यात् ॥ 302 ॥

सिन्धु नदी के जल से युक्त होकर वितस्ता का जल वैसा ही हो गया था जैसा अमृत से मिला दूध, जैसा ही सौन्दर्य से मिला रूप एवं जैसा सदाचार से मिश्रित ज्ञान होता है।। 302।।

शौर्यं यथा स्याद् विनयेन युक्तं
धर्मं यथा स्याद् द्रविणेन युक्तम्।।॥

---

1. यह पङ्क्तिपरित्यक्त F

2. गृह्णाति C

3. सङ्गमं C

4. तथैव FG

मृत्सा युता वा मृजयैव[1] राजन्
काम[2] यथा स्यान् मनसोपपन्नम्[3] ॥303॥

हे राजन्! (वह सङ्गम ऐसा था) जैसा नम्रता से युक्त पराक्रम होता है, धन से संयुक्त जैसा धर्म होता है शुद्धता और पवित्रता से युक्त जैसी (स्वच्छ) मिट्टी होती है और जैसा पवित्र मन के साथ काम हुआ करता है।। 303।।

रत्नं यथा स्यात् कनकेन युक्तं
आयु[4]र्यथा स्वास्थ्ययुतं[5] नृवीर।
सम्मानयुक्तं[6] च यथैव लाभं[7]
तथा तु[8] सा तत्र तदा[9] बभूव॥ 304॥

हे बहादुर पुरुष! जैसा सुवर्ण से युक्त रत्न होता है, जैसी (मनुष्य की) आयु स्वास्थ्य से जुड़ी होती है, जैसा लाभ सम्मान से युक्त होता है वैसी ही उस समय वह सती (अन्य नदियों से मिलकर) बन गई।। 304।।

तपनस्य सुता देवी गङ्गा स्नेहेन यन्त्रिता।
बहुमानान्मुनेर्भक्त्या स्वेनांशेन व्यवर्धयत्[10] ॥ 305॥

वितस्तां तु सरिच्छ्रेष्ठां सर्वकल्मषनाशिनीम्।
गङ्गा सिन्धुस्तु[11] विज्ञेया वितस्ता यमुना तथा॥ 306॥

स्नेह से बँधी (अनुरागवती) एवं मुनि (कश्यप) के प्रति बहुत सम्मान और भक्ति रखने के कारण सूर्य की पुत्री गङ्गा ने नदियों में श्रेष्ठ और सारे पापों को नष्ट करने वाली उस वितस्ता नदी को अपने अंश (जल) से पुष्ट किया। सिन्धु को गङ्गा और वितस्ता को यमुना जानना चाहिए।। 305-306।।

---

1. *मृतायुतानां FH, मृत्सा युता स्यान्मृजयापि C*
2. *कामो C*
3. *मनसोपपन्नः C*
4. *यह ADEF, साधुः ed. Leiden*
5. *यह F, स्वास्थ्ययुतं D, स्वस्तियुतं AC, स्वस्त्या युतं ed Leiden*
6. *समायुक्तं A, सम्मानयुक्तः C*
7. *लाभः ~~C~~*
8. *तथैव C*
9. *तथा C*
10. *व्यवर्धयत् F, विवर्धयत् H*
11. *सङ्गस्तु G, सिन्धुश्च AH*

Ed. Leiden v.v. 292b-295

स प्रयागसमो देशस्तयोर्यत्र तु[1] सङ्गमः।
गङ्गातोयमथादाय गङ्गां तु यमुनाब्रवीत्॥ 307॥

जहाँ इन दोनों नदियों का सङ्गम हो गया है वह स्थान प्रयाग के समान है। इसके बाद गङ्गा के जल को लेकर यमुना ने गङ्गा को कहा।। 307।।

प्रयागे[2]ऽपहृतं नाम त्वया मे वरवर्णिनि।
कश्मीरायां[3] तथा नाम मया चापहृतं तव॥ 308॥

हे सुन्दर रंग वाली नदी! प्रयाग में तो तुमने जैसे मेरा नाम ग्रहण कर (आत्मसात् कर) लिया है वैसे ही कश्मीरा देश में मैंने तुम्हारा नाम ले लिया है।। 308।।

तामब्रवीत्ततो[4] गङ्गा भूय एव मया तव।
हर्तव्यं[5] नाम सुभगे यदाहं सिन्धुसंज्ञिता॥ 309॥

इसके बाद गङ्गा ने उससे कहा- हे सौभाग्यवती! मैं तुम्हारे नाम का फिर से तब अपहरण कर लूँगी जब मैं सिन्धु नाम वाली बनूँगी।। 309।।

बृहदश्वः[6]
इति तथ्यं सती ज्ञात्वा हलमार्गात्तु[7] सिन्धुगा[8]।
हिमालयान्न[9] प्रययौ पाटितात्मा[10] परं[11] नदी॥ 310॥

---

1. तत्र च A
2. यह अन्य, प्रयागो A
3. कश्मीरेषु C
4. तत्र H
5. हन्तव्यं AG
6. उवाच अतिरिक्त D
7. च A
8. सिन्धुतः C
9. हिमाचलान्न E
10. पावितात्मा ed. Lahore
11. पुरं G

बृहदश्व ने कहा–इस तथ्य को जानकर हल के द्वारा खोदे गये मार्ग से जाने वाली सती नदी अपने को (धाराओं के टुकड़ों में) बाँटने वाली होती हुई हिमालय से आगे बाहर की ओर नहीं गई (उसने सिन्धु में मिलने का अपना विचार छोड़ दिया)।। 310।।

पुनस्तां तु महाभागामृषिः प्रोवाच कश्यपः।
अवश्यं हलमार्गेण गन्तव्यं सुभगे त्वया।।311।।

(इसके बाद) पुनः ऋषि कश्यप ने उस महासौभाग्यशालिनी को कहा-हे सौभाग्यवती! तुम्हें इस हल (के द्वारा बनाये गए) मार्ग से अवश्य ही (आगे की ओर) जाना है।। 311।।

अन्यथा देश एवा[1]यं सरस्त्वमुपयास्यति।
भूयो भूयश्चोद्यमाना कश्यपेन सरिद्वरा।। 312।।

क्रोधात्ततो विनिष्क्रान्ता हलमार्गेण तेन सा।
तस्मिन् देशे प्रसन्नापि दृश्यते[2] कलुषा नदी।। 313।।

नहीं तो यह देश ही झील (बड़े तालाब) के रूप को प्राप्त कर लेगा (और उसमें डूब जायेगा)। (इस प्रकार) इसके बाद कश्यप के द्वारा बार बार प्रेरित की गई वह उत्तम नदी कुपित होकर उस हल मार्ग से (हिमालय से) बाहर की ओर निकल गई। वह निर्मल होती हुई भी उस देश (स्थान) में मलिन (जल वाली) दिखाई देती है।। 312-313।।

कश्यप उवाच
वितस्ताख्या सरिद्रूपा देवि त्वं पर्वतात्मजे।
तपस्विनी परा[3] शर्वा[4]च्छर्वपत्न्यसि[5] नो नदी।।314।।

कश्यप ने कहा–हे पर्वतपुत्री देवी! तुम नदी का रूप धारण करने वाली वितस्ता नामक नदी हो। तुम शिव की पत्नी हो (फिर भी) तुम शिव से अधिक बड़ी हो और (अधिक) तपस्या करने वाली हो। तुम नदी (मात्र) नहीं हो।।। 314।।

---

1. चैव G
2. दृश्यति H
3. पुरा G
4. सिद्धिः C
5. अपि A

अद्रिवत्सासि भद्रं ते तद्देहाच्छृङ्गिणी[1] नदी।
शम्भुनोढासि रुद्राणी स्रवन्त्यसि मयार्थिता[2] ॥315॥

(हे वितस्ता नदी) तुम्हारा कल्याण हो। तुम पर्वत की बेटी हो। उसके शरीर (शिखर) से उत्पन्न होने से तुम शृङ्गिणी नदी हो। तुम शम्भु के द्वारा धारण की जाती हो और रुद्र की पत्नी हो। मेरे द्वारा बहने के लिए प्रार्थना करने पर तुम बह रही हो।। 315।।

त्वय्यर्पितशरीरा ये पापिष्ठाः स्वर्गता अपि[3]।
दृष्ट्वा रमन्ते स्वं देहमुह्यमानं[4] तवोर्मिभिः[5] ॥316॥

तुम्हारे जल में शरीर छोड़ने वाले स्वर्ग में गये हुए भी परम पापी पुरुष तुम्हारी लहरों से बहाये गये अपने शरीर को देखकर प्रसन्न होते हैं।। 316।।

विस्मयं[6] ते नरा जग्मु[7] र्दृष्ट्वा तं देहमात्मनः।
स्वर्गताः स्मोऽथ चोमायां क्रीडामो जलमध्यगाः॥ 317॥

अपनी अपनी उस देह को (तुम्हारे भीतर पड़ी हुई) देखकर वे लोग इस बात से आश्चर्य को प्राप्त अर्थात् आश्चर्यचकित हो रहे हैं कि हम (यद्यपि) स्वर्ग में पहुँचे हुए हैं (तथापि) उमा (वितस्ता) के भीतर जलमग्न होकर खेल रहे हैं।। 317।।

तवोद्गारै[8]स्तरङ्गाख्यै र्देवि मारुतचोदितैः।
शीतैः[9] शीकरजैर्नृणां नारकोऽग्निः प्रशाम्यति[10] ॥318॥

---

1. देहासङ्गिनी AH

2. यह ACH, च यार्थिता अन्य MSS.

3. अपि सुताः A

4. चोह्यमानं A

5. यह H, तथोर्मिषु A, तथोर्मिभिः G, तथोर्मिभिः अन्य MSS

6. विस्मयं A

7. गता नरा विस्मयन्ते C

8. तवोद्भागैः A

9. शीतः

10. प्रथम तथा द्वितीय पाद परित्यक्त H

हे देवी! हवाओं के द्वारा प्रेरित शीतल जलकणों से उत्पन्न तरङ्ग नामक तुम्हारे जलप्रवाहों से मनुष्यों की नरक की अग्नि शान्त हो जाती है।। 318।।

प्रदीपादीपिभिर्देवि तथा ऽऽवर्तिभिरूर्मिभिः[1]।
त्रिःसप्तनारकं[2] वह्निं नृणां शमयसेऽद्रिजे।।319।।

हे पर्वत से उत्पन्न पर्वतपुत्री देवी! तुम मिट्टी के दियों की दीप्तियों, भँवरों तथा तरङ्गों से मनुष्यों की 21 प्रकार की नारकीय अग्नियों को शान्त कर देती हो।। 319।।

स्नानं ये तु करिष्यन्ति तव पुण्ये नरा जले[3]।
ब्रह्मलोकं गमिष्यन्ति महापातकिनोऽपि ते।। 320।।

जो लोग तो तुम्हारे पवित्र जल में स्नान करेंगे वे महापातकी होते हुए भी ब्रह्मलोक में जायेंगे।। 320।।

यामीं तु यातनां घोरां भ्रूकुटिभङ्गचोदिताम्[4]।
स्वप्नेऽपि[5] न ते पश्यन्ति ये स्नाताप्सु[6] सकृत्तव।। 321।।

जो तुम्हारे जलों में एक बार भी स्नान कर लेते हैं वे चढ़ी हुई भौंहों के द्वारा प्रेरित (क्रोधपूर्वक दी गई दण्डाज्ञा से) यमराज की घोर यातना (पीड़ा) को सपने में भी नहीं देखते हैं।। 321।।

तव भक्तस्य विप्रस्य नित्यं कर्मानुतिष्ठतः।
मोक्षदं मुनयः स्नानं गङ्गायां स्वर्गदं विदुः।।322।।

मुनिगण यह जानते हैं कि प्रतिदिन धर्म कर्म करने वाले तुम्हारे भक्त ब्राह्मण के लिए तुम्हारे भीतर स्नान करना गङ्गास्नान की तरह मोक्षदायी होता है।। 322।।

---

1. कूर्मिभिः E

2. नार D

3. जले सुराः A, जले नराः F

4. यामीश्च यातना घोरा भ्रुकुटीभङ्गचोदिताः A, भ्रुकुटीतटचोदिताः D

5. स्वप्नेऽपि ते न पश्यन्ति DE

6. येऽप्सु स्नान्ति C

अतिप्रभावयुक्तासि त्रैलोक्यस्यापि पावनी।
जनित्री सर्वदेवानामुमा देव्यसि नो नदी॥ 323॥

तुम अत्यन्त प्रभाव से युक्त हो, तीनों लोकों को भी पवित्र करने वाली हो और सारे देवताओं की जनिका (साक्षात्) उमा देवी हो तुम (साधारण) नदी नहीं हो।। 323।।

देवानां त्वं[1] धृतिर्देवि देवानां भारती[2] यथा[3]।
तृप्तिश्च सर्वभूतानां निम्नगे त्वं सदा भुवि॥324॥

सदा पृथिवी पर नीचे की ओर बहने वाली हे देवि! तुम देवताओं का धैर्य हो और उन देवताओं की भारती (शारदा) हो और समस्त प्राणियों के लिए तृप्ति (दायिका) हो।। 324।।

प्रसादं कुरु मे देवि निर्गच्छ भवनादितः।
अविक्षुब्धेन मनसा देशस्यास्य हिते रता॥325॥

हे देवी मुझ पर तुम कृपा करो। इस देश के कल्याण में संलग्न होकर बिना क्रुद्ध मन वाली होकर इस स्थान से आगे की ओर निकलो (बहना शुरु करो)।। 325।।

अर्धं देहाद्धरस्य त्वं देवपत्न्यसि नो नदी।
सिन्धुसङ्गमनं यावद् धावन्ती याहि[4] मेऽर्थिता॥326॥

तुम भगवान् शिव के शरीर का आधा भाग हो तुम देवपत्नी हो और नदी नहीं हो। मेरे द्वारा प्रार्थना की जाती हुई तुम सिन्धु तक उससे मिलने के लिए दौड़ती हुई पहुँच जाओ।। 326।।

---

1. तु H

2. भारते E

3. यह A, तथा अन्य MSS.

4. यावन्त्यायाहि A, धावमाने C

पतिस्ते[1] शङ्करस्त्वेको नापरोऽब्धिरितस्ततः[2]।
सिन्धुसङ्गमनेनाशु व्रजस्व स्वपतिं शिवम्[3] ॥327॥

तुम्हारा एक शङ्कर ही पति हैं। समुद्र (भी) इससे (भिन्न) दूसरा नहीं है। अतः सिन्धु के साथ सङ्गमन के द्वारा अपने पति शिव के पास चली जाओ।।327।।

निशम्यैवं पुनर्देवी सस्मारोक्तं यथा स्वयम्।
स्मृत्वा[4] सोत्कण्ठिता भर्तु[5]र्गमने मतिमादधे[6] ॥328॥

इसके बाद फिर देवी ने पुनः स्वयं कहे गये वचन को याद किया। उसको याद करके उसने उत्कण्ठित होकर (अपने) पति के पास जाने का विचार किया।। 328।।

ततो वेगेन महता सीमन्तमिव कुर्वती।
हिमाचलस्य प्रययौ तोयशैलोपमा[7] नदी॥ 329॥

तब जल के पर्वत के सदृश वह नदी हिमालय पर्वत के शिखर में सीमन्त सा बनाती हुई अर्थात् सिर के बालों को दो भागों में विभक्त करती हुई नारी की तरह बड़े वेग से आगे की ओर बढ़ी।।329।।

ततस्तु सङ्गता नद्या[8] कृष्णाया सह पार्थिव।
तथा सरिद्वराभिश्च शतशोऽथ सहस्रशः॥ 330॥

हे राजन्! इसके बाद कृष्णा नदी तथा (दूसरी) सैंकड़ों और हज़ारों श्रेष्ठ नदियों के साथ उस नदी का सङ्गम हुआ।। 330।।

---

1. पतित्वे A F

2. यतः C

3. तृतीय तथा चतुर्थ पाद परित्यक्त E

4. स्मृता G, स्मिता C

5. यह CDEF, तस्य A

6. मतिः G

7. यह D, तोयशल्योपमा G, तोयशैलोपमा A, तोयमार्गेण सा E

8. यह A, देव्या अन्य MSS

Ed. Leiden v.v. 316-319

स्वैराजकानां[1] मध्येन मात्राणां चैव भागशः।
भोगप्रस्थमतिक्रम्य गङ्गया सह सङ्गता॥ 331॥

स्वैराजक देशों के बीच में से तथा मात्रा देश के एक भाग से (निकलकर) वह भोगप्रस्थ को पारकर गङ्गा के साथ जा मिली।। 331।।

एषा हि[2] पापशमनी वितस्ता निम्नगोत्तमा।
कश्यपस्य तु वाक्येन लक्ष्म्या सह गता क्षितिम्॥ 332॥

कश्यप के वाक्य से अर्थात् उनकी आज्ञा मानती हुई निश्चित रूप से पापों को शान्त करने वाली (दूर भगाने वाली) नीचे बहने वाली नदियों में श्रेष्ठ यह वितस्ता नदी लक्ष्मी के साथ पृथिवी तल पर पहुँच गई।। 332।।

अदितिश्च दितिश्चैव शची च मनुजेश्वर।
तपनस्य सुता या च या च गङ्गा सरिद्वरा[3]॥ 333॥

एवं वसन्त्यां[4] प्रययौ[5] कश्मीरायां[6] चतुर्युगम्[7]॥ 334॥

हे नराधिपति! अदिति, दिति, शची और जो सूर्य की पुत्री यमुना है वह तथा उत्तम नदी जो गङ्गा है (वे सबकी सब भी पृथिवी पर आकर प्रकट हो गईं)। इस प्रकार कश्मीर में रहते हुए (इस) वितस्ता नदी को चार युग बीत गये।। 333-334।।

पूर्णे चतुर्युगे तस्मिन् कृत्वा धान्यादिसङ्ग्रहम्।
आश्वयुज्यामतीतायां निर्ययुर्मानवा बहिः॥ 335॥

इस प्रकार उन चार युगों के बीतने पर आश्वयुजी पूर्णिमा के बीत जाने पर चावल तथा अन्य धान्यादि को इकट्ठा करके मनुष्य वहाँ से बाहर निकले।। 335।।

---

1. स्वराजकानां D

2. एषासौ CG

3. इति नीलमते वितस्ताजन्म अतिरिक्त DEGH इति श्रीनीलमतपुराणे वितस्ताप्रसादवर्णनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः C इसके पश्चात् उवाच CD क्रिया परित्यक्त FG

4. वसन्त्या A, वसत्सु C

5. प्रययुः C

6. कश्मीरेषु C

7. चतुर्युगाः C

काश्यपश्चन्द्रदेवाख्यो वृद्धो ब्राह्मणपुङ्गवः[1]।
न निर्जगाम निर्वेदाच्चोदितोऽर्थेन भाविना ॥ 336 ॥

कश्यप वंश में उत्पन्न चन्द्रदेव नामक एक वृद्ध श्रेष्ठ ब्राह्मण निराशा (अवसाद) के कारण भावी घटना के वशीभूत होने के कारण (वहाँ से) बाहर नहीं निकला।। 336।।

क्रीडानिमित्तं च[2] भयान्निकुम्भस्य न घातितः।
ब्राह्मणेन[3] पिशाचास्तु[4] चिक्रीडुस्तेन ते तदा[5] ॥337॥

रज्जुबद्धेन तु यथा पक्षिणा नृप दारकाः।
कल्यमानः[6] पिशाचैस्तु निर्वेदं परमं ययौ ॥338॥

निकुम्भ के डर के कारण तथा उसे क्रीडा (मनोरंजन) के हेतु (सुरक्षित रखने के लिए) उनके द्वारा वह नहीं मारा गया। हे राजन्! जैसे रस्सी में बाँधे हुए पक्षी के साथ बालक खेला करते हैं वैसे ही उस ब्राह्मण के साथ तब वे पिशाच खिलवाड़ करने लगे। (इस प्रकार) पिशाचों के द्वारा पकड़ा हुआ वह (सांसारिक वस्तुओं के प्रति) बहुत अधिक उदास हो गया।। 337-338।।

हिमेन शीतेन तथा पिशाचैः
सम्पीड्यमानो द्विजवृद्धवर्यः[7]।
बभ्राम तत्रैव विमूढचेता
भ्रमन् ययौ यत्र स नागराजः ॥339॥

---

1. *मानवपुङ्गवः E*
2. *तु H*
3. *यह GH, ब्राह्मणोऽसौ C ब्राह्मणैस्तैः अन्य MSS*
4. *पिशाचैस्तु G, पिशाचाश्च H, पिशाचैस्तैः C*
5. *इस श्लोक के द्वितीय तथा तृतीय पाद परित्यक्त D*
6. *काल्यमानः AD*
7. *द्विजवर्यवृद्धैः G*

Ed. Leiden v.v. 325-328

बर्फ, सर्दी और पिशाचों से पीड़ित किया जाता हुआ वह सज्जन बूढ़ा ब्राह्मण किंकर्त्तव्यविमूढ चित्त वाला होकर वहीं घूमने लगा और घूमते घूमते वहाँ पहुँच गया जहाँ पर वह नागराज रहता था।। 339।।

यस्मिन् देशे त्वनन्तेन हलं पूर्वं निवेशितम्[1]।
तत्र नीलस्य वसतिः पूर्वमेव सुभाविता॥ 340॥

जिस देश में तो अनन्त ने जहाँ पहले ही अपने हल की स्थापना की थी वहाँ पहले से ही नील का सुन्दर और प्रभावोत्पादक निवासगृह बना हुआ था।। 340।।

एतस्मिन्नेव काले तु नीलो नाग[2]पतिर्विभुः[3]।
सेव्यमानो निकुम्भेन पिशाचेन महात्मना॥ 341॥

नागैश्चात्युल्बणै[4] र्भीमैः पर्यङ्कवरमाश्रितः।
आस्ते गिरिवरस्याधो धनदस्य महात्मनः॥342॥

इसी समय के बीच में निकुम्भ नामक महात्मा पिशाच और अत्यन्त बलशाली तथा भयङ्कर नागों के द्वारा सेवित होता हुआ वह शक्तिशाली नागराज नील महात्मा धनद नामक उत्तम पर्वत के निचले स्थान (तलहटी) में श्रेष्ठ पलंग के ऊपर अधिष्ठित होकर निवास कर रहा था।। 341-342।।

नागास्तं नागराजानं नागकन्याश्च भूरिशः।
उपासन्त महात्मानं कश्मीरायां[5] कृतालयाः॥343॥

कश्मीर में अपना घर बनाने वाले नागों और नागकन्याओं ने उस महात्मा नागराज की बार बार उपासना की।। 343।।

---

1. *फलं सर्वं निवेदितम् G, फलं पूर्वं निवेदितम् H*

2. *नाम- A*

3. *स्थितः प्रभुः H*

4. *उल्वलैः E*

5. *कश्मीरेषु C*

केचित् स्तुवन्ति राजानं केचिद् वीजन्ति पन्नगाः[1]।
केचिद् वरासनगतं[2]पर्युपासन्ति[3] धार्मिकम्॥ 344॥

कुछ (नाग) राजा की स्तुति कर रहे थे, कुछ नाग उसके ऊपर (पंखों से) हवा कर रहे थे और कुछ उत्तम आसन पर बैठे हुए उस धार्मिक नागाधिराज की पूजा कर रहे थे।। 344।।

तेषां मध्यगतं नीलं नीलाञ्जनचयोपमम्।
मुकुटेनार्कवर्णेन कुण्डलैश्च विराजितम्॥ 345॥

विद्युद्द्योतित[4]वर्णेन वाससैकेन[5] शोभितम्।
चन्द्ररश्मिनिकाशेन तथा चीनांशुकेन[6] च॥ 346॥

वितानेन विचित्रेण किङ्किणीजालमालिना।
तथा फणशतै[7]र्भीमैः सप्तभिः संविराजितम्[8]॥ 347॥

रत्नोज्ज्वलैर्दीप्तदीपै[9] र्ज्वालामालासमाकुलम्।
तं दृष्ट्वा चन्द्रदेवस्य नीलो ऽयमभवन्[10]मतिः॥348॥

उनके बीच में विद्यमान, काले काजल के ढेर के सदृश कृष्णवर्ण, सूर्य के रंग वाले (चमकीले) मुकुट और कुण्डलों से सुशोभित बिजली के सदृश चमकदार एक (अधोवस्त्र) वस्त्र से शोभित और चन्द्रमा की किरण के सदृश चमकते हुए रेशमी वस्त्र (उत्तरीय) से आवृत, छोटी छोटी घण्टियों के समूह से बनी हुई मालाओं वाले विचित्र शामियाने से ढके हुए तथा सात सौ भयानक सर्पों की फनों से शोभायमान रत्नों (अर्थात् रत्नों से बने होने) से उज्ज्वल, जलते हुए दीपों की ज्वालाओं की पङ्क्तियों से घिरे हुए उस नील को देखकर उस चन्द्रदेव ब्राह्मण की यह नील है इस प्रकार की बुद्धि हो गई। (उसने पहिचान लिया कि यही राजा नील है)।। 345-348।।

नूनं[11] प्रसादात्तस्यैव भुजङ्गाधिपतेः[12] प्रभोः।

---

1. *प्रथम दो पाद परित्यक्त A, -वन्दन्ति भूरिशः H*
2. *यह CH, वरासनगताः अन्य MSS.*
3. *पर्युपासन्त CH*
4. *यह A, विद्युद्द्योत अन्य MSS*
5. *वैससैकेन A*
6. *दीनांशुकेन च DF*
7. *फणिशतैः F*
8. *यह C, तं विराजितम् D, सुविराजितम् A*
9. *यह ADEF, -दीपरत्नैः C*
10. *यह अन्य MSS अवदन् A*
11. *ततः G*
12. *यह E, भुजगाधिपतेः H*

सोपसर्प्य[1] द्विजो नागं कृत्वा प्राध्ययनं[2] पुरः ॥349॥
जानुभ्यामवनिं गत्वा तदा स्तोत्रमुदैरयत्[3] ॥350॥

निश्चित रूप से शक्तिशाली उसी नागराज की कृपा होने के कारण वह ब्राह्मण उस नील नाग को सामने जाकर प्रणाम करके और घुटनों को ज़मीन से लगाकर तब इस स्तोत्र का उच्चारण करने लगा।। 349-350।।

चन्द्रदेवः[4]
नमस्ते नागराजेन्द्र नील नीलोत्पलद्युते।
नीलमेघचयप्रख्य नीलतोयकृतालय॥ 351॥

चन्द्रदेव ने (इस प्रकार स्तुति की)

नागाधिराज, नीलकमल के सदृश दीप्ति वाले, नीले मेघसमूह के समान दिखाई देने वाले एवं नीले जल में निवास करने वाले हे नील! तुम्हें मेरा नमस्कार है।। 351।।

फणानां त्वं शतैर्नाग शोभसे सप्तभिः सदा।
सप्तसप्तिरिवार्चिष्मान् राजसे त्वं गभस्तिभिः ॥352॥

हे नाग! तुम सदा सात सौ फनों से शोभित होते हो। तुम (अपने तेज की) किरणों के कारण सात घोड़ों वाले सूर्य के समान ज्योतिर्मय हो कर चमकते हो।। 352।।

---

1. उपसर्प्य G

2. परिक्रमं A, प्रक्रमणं C, स्वस्त्ययनं H

3. उदीरयेत् DEFG, उदैरित् C

इति नीलदर्शनम् अतिरिक्त DEF, इति श्रीनीलमते H, इति नीलमते नीलदर्शनम् A, इति श्रीनीलमतपुराणे चन्द्रदेवनीलपरिज्ञानं नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः।

4. चन्द्रदेव उवाच C, क्रिया परित्यक्त A

त्वं नील नीलार्चि[1] विनीतपापै
देवेश देवैरपि दृश्यसे[2] स्वैः।
नागेन्द्र[3] भोगीन्द्र[4] इवाम्बरस्थो[5]
ध्यानेन विद्वद्‌भिरिवामृताख्यः[6] ॥ 353 ॥

देवताओं के स्वामी, नागराज, फनों वाले सर्पों के पति और नील कान्ति वाले हे नील! विनष्ट पापों वाले अपने विद्वान् देवों के द्वारा (अपने) ध्यान द्वारा ही अमृत नामक तुम अम्बरस्थित व्यक्ति की तरह देखे जाते हो।। 353।।

त्वं नील यज्ञेश[7] इवासनस्थो[8]
वेदार्थविद्‌भिर्विविधैर्विधानैः।
संसारकार्येषु[9] सुयागकृद्‌भ[10]
राराध्यसे मोक्षफलाय विप्रैः ॥354 ॥

हे नील! वेद के (मन्त्रों के अर्थों) को जानने वाले (ब्राह्मणों के द्वारा) अनेक प्रकार विधिविधानों से आसन पर बैठे हुए यज्ञपति देवता की तरह सांसारिक कार्यों के शुभारम्भ के अवसरों पर उत्तम यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों के द्वारा मोक्षफल (की प्राप्ति) के लिए तुम उपासना के विषय बनते हो।। 354।।

---

1. *यह C, गत्वा तथा नीलार्थिपापैः A गत्वा नील नीलार्थिपापैः H*
2. *नेक्ष्यसे C*
3. *ध्यानेन E*
4. *भोगेन्द्रमिव FGH*
5. *अम्बरस्थं FH, अम्बरस्ते G अम्बरस्थे अन्य*
6. *अपीड्यमानः C, इवामृताख्यम् अन्य*
7. *यह C, यज्ञेशमिव अन्य*
8. *यह C, स्थम् अन्य*
9. *संस्कारकार्येषु B*
10. *सुयागकृद्‌भिः B, सुरागकृद्‌भिः C*

Ed. Leiden v.v. 341-342

नागेन्द्र नीलार्चिरिवामरेन्द्रै[1]
विज्ञायसे सूर्य[2] इवाम्बरस्थ[3]।
त्वं[4] नील नीलार्चिरिव[5] ज्वलानो[6]
भक्तस्य[7]कार्याणि च साधयान:[8] ॥355॥

हे नागराज नील! देवताओं के अधिपति इन्द्रों के द्वारा तुम (साक्षात्) अग्नि और आकाश में स्थित सूर्य के समान माने जाते हो। हे नील! नीली अग्नि के समान प्रज्ज्वलित होते हुए तुम भक्तों के कार्यों को सिद्ध (पूरा) किया करते हो।। 355।।

दृष्टो[9] मया हेतुभिरापतन्तं
सर्वस्य जन्तोर्वससे यतोऽद्य।
स्मृतस्ततो मोक्षय मेऽतिदु:खात्
त्रायस्व विप्रस्य नमो नरेन्द्र[10] ॥356॥

यद्यपि तुम सारे प्राणियों के अन्दर बसते हो तथापि आज किन्हीं (विशेष कारणों) से आये हुए तुम्हें मैंने यहाँ देखा है और याद किया है। इसीलिए मुझे अत्यधिक दु:ख से छुटाओ। इस ब्राह्मण की रक्षा करो। हे नराधिपति! तुम्हें मेरा नमस्कार है।। 356।।

---

1. *नागेश नीलार्चिरिवामरेशै: C*
2. *यह C, सूर्यम् अन्य*
3. *यह C, -स्थम् अन्य*
4. *यह ABCDF, त्वां E*
5. *यह C, नीलार्चिम् अन्य*
6. *उज्ज्वलश्च C, ज्वलंश्च G, ज्वलन्तं ABDEFH*
7. *स्वभक्तकार्याणि G*
8. *विधास्यमान: C, साधयन्तम् अन्य MSS.*
9. *यह C, दृष्टं अन्य*
10. *नगेन्द्र DEF*

त्वं नील[1] नीरौघचयप्रकाशो
विराजसे[2] विष्णुरिवामरेशः[3]।
विधे र्विधाता रमसे[4] यमेशं[5]
त्वं[6] वासुदेव[7]प्रणतः सदैव[8]॥ 357॥

हे नील! जल के समूह की भाँति प्रकाश (दीप्ति) वाले तुम देवताओं के स्वामी विष्णु की तरह शोभित होते हो। हे नागराज! तुम ब्रह्मा को बनाने वाले हो, यमराज को प्रसन्न करते हो और वासुदेव को सदा प्रणाम करते हो।। 357।।

त्वां[9] नील नीलाम्बर नीलनेत्र[10]
आकाशवत् सर्वगतं सुरेशम्।
ध्यात्वा[11] नरो योऽप्यजितेन्द्रियो वा
नागेन्द्र मुच्येत तव प्रसादात्॥ 358॥

नीले वस्त्रों वाले, नीले नेत्रों वाले और नागों के राजा हे नील! आकाश की तरह सब जगह व्यापक देवों के स्वामी तुम्हारा ध्यान कर के जो सामान्य नर है अथवा जो अजितेन्द्रिय मनुष्य है वह भी तुम्हारी कृपा से मुक्त हो जाता है।। 358।।

---

1. नीर G

2. यह B, विडौजसे ADFGHD

3. यह AC, अमरेशं H, अमरेशः अन्य MSS

4. रमसि A

5. यमीशं A, फणीश C

6. त्वां C

7. वासुदेवं CG

8. प्रणतोऽस्मि नित्यम् C

357 श्लोक के तृतीय और चतुर्थ पाद तथा 358 श्लोक के पहले पाद H में परित्यक्त

9. त्वं ABDEF

10. नेत्रम् AFG

11. ध्यायन् C

नील त्वामेव वेदार्थं जगु र्वेदाः सनातनम्।
ध्येयं ब्रह्म[1] मुमूक्षूणां कामिनां चार्थसाधनम्॥ 359॥

हे नील! वेदों ने वेदों के सारांशभूत, मोक्ष चाहने वाले योगियों के (जीवन के) लक्ष्य सनातन ब्रह्म (स्वरूप) और सांसारिक (पदार्थों की) कामना रखने वाले पुरुषों की अभिलाषा (पूर्ति) के साधन (बने हुए) तुम्हारा (ही गुण) गान किया है।। 359।।

त्वत्प्रकाशं यतो[2] ब्रह्म निष्कलं निर्मलं[3] परम्।
सूक्ष्मतो व्योम[4]निर्दिष्टं सर्वगात्रैरकृत्रिमम्॥360॥

क्योंकि ब्रह्म भी तुम्हारा ही प्रकाश है इसलिए वह अखण्ड और परम निर्मल है और वह (ब्रह्म) सूक्ष्म (व्यष्टि) होने के कारण व्योम (आकाश) कहा गया है और (सृष्टि दशा में वह) सारे शरीरों से युक्त होता हुआ भी (पारमार्थिक अवस्था में) अकृत्रिम (न बनाये जाने वाला) होता है।। 360।।

अकिञ्चनावदस्तत्त्वम[5]तिसूक्ष्मस्य नो पृथोः[6]।
अर्थाश्रयान् महार्थत्वं[7] तव[8] तस्याक्षरस्य च[9]॥ 361॥

हे अकिंचन (अपने पास कुछ न रखने वाले) नील! अतिसूक्ष्म और (अत्यन्त) विशाल हुए ब्रह्म का तत्त्व (रहस्य) तुम (भी) नहीं बता पाते हो। सब पदार्थों का आश्रय होने से तुम्हारी और उस अविनाशी ब्रह्म की महती सार्थकता है।। 361।।

कद्रूः पुत्रसहस्त्रेण नागराजेन्द्र शोभिता।
त्वया तु राजते[10]ऽत्यर्थं विष्णुनैवादितिर्यथा॥362॥

---

1. ब्रह्म H
2. इतो A
3. निर्मलं निष्कलं C
4. येन —CH
5. अकिञ्चनोऽसि देव त्वम् C
6. अतिसूक्ष्मोऽसि च पृथुः C
7. अथाश्रयो महार्थस्त्वं C
8. स्तुत्यः C, तत्र H
9. तस्य हरस्य E
10. शोभते E

हे नागपतियों के राजा! कद्रू (नागमाता) अपने हज़ारों पुत्रों से शोभित होती हुई (भी) तुमसे ही तो बहुत अधिक वैसी ही शोभा पा रही है जैसी विष्णु से अदिति की परा शोभा होती है।। 362।।

त्वमेव तपसात्यर्थं तथा विद्योतसे प्रभो[1]।
तोयं हिमं शीकरं[2] च तथा मुञ्चसि धार्मिक[3] ॥ 363 ॥

और हे प्रभो! तुम ही अपनी तपस्या से अत्यधिक चमकते हो और हे धर्मनिष्ठ! तुम जल, हिम और ठंडे जलकणों को छोड़ते हो अर्थात् इन सबकी वर्षा करते हो।। 363।।

प्रजापतिः कश्यपो हि सर्वभूतपिता प्रभो[4]।
त्वया तु शोभतेऽत्यर्थं पुत्रेणात्यन्तधार्मिक ॥364 ॥

हे अत्यन्त धार्मिक प्रभो! सारे प्राणियों का पिता एवं प्रजाओं को पालने वाले कश्यप तुम (सरीखे) पुत्र से अत्यधिक शोभा पा रहे हैं।। 364।।

त्वयि धर्मश्च सत्यं च क्षमा च सततं प्रभो।
देवासुरविमर्देषु शतशोऽथ सहस्रशः ॥ 365 ॥

त्वया[5] विनिहता[6] दैत्या देवब्राह्मणकण्टकाः।
वरदस्त्वं वरेण्यश्च सुरारिबलहा[7] प्रभो[8] ॥366 ॥

हे प्रभो! तुम्हारे भीतर धर्म, सत्य और क्षमा (सहिष्णुता) सदा रहती है। देवासुर संग्रामों में देवों और ब्राह्मणों के शत्रु सैंकड़ों और हज़ारों दैत्य तुम्हारे द्वारा मारे गये। हे शक्तिशाली। तुम वरदान देने वाले, वरने योग्य और देवों के शत्रु दैत्यों की सेना को मारने वाले हो॥ 365–366 ॥

---

1. तथा E
2. शर्करं F
3. ये दोनों पाद परित्यक्त AH
4. ये दोनों परित्यक्त AH
5. तदा C
6. विनिहतो C
7. वरारि– ACEFG, वारिबहल H
8. यह A, विभो अन्य MSS

भक्तानुकम्पी भक्तश्च देवदेवे जनार्दने।
तस्यातिदयितश्चासि यथा नागः स वासुकिः ॥367॥

तुम अपने भक्तों पर दया करने वाले, देवों के देव जनार्दन (कृष्ण) में भक्ति रखने वाले भक्त हो और जैसे उन्हें वासुकि नाग प्यारा है वैसे ही तुम भी उन्हें बहुत प्रिय हो॥ 367॥

धनदस्ते सखा नाग यथा शर्वस्य नित्यदा।
धनदश्चासि भक्तानां[1] धनेश इति विश्रुतः ॥368

हे नाग! जैसे धनद (धनदपर्वत और कुबेर) शिव का सदैव मित्र है वैसे ही वह तुम्हारा मित्र है। तुम भक्तों को धन प्रदान करने वाले हो इसलिए (उस कुबेर की भांति) धनेश के रूप में विख्यात हो॥ 368॥

नागानां त्वं गति र्नित्यं देवानामिव[2] वासवः।
भक्तिमानस्मि ते नित्यं तच्च जानासि धार्मिक[3] ॥369॥

जैसे देवताओं का आश्रय इन्द्र है वैसे ही तुम सदैव नागों के आश्रय हो। हे धार्मिक! मैं तुम्हारा सदा ही भक्त हूँ और वह बात तुम भी जानते हो॥ 369॥

नील उवाच
स्वागतं ते द्विजश्रेष्ठ दिष्ट्याऽसि मेऽन्तिकम्।
अर्चनीयोऽसि विप्रेन्द्र ह्यतिथिस्त्वं मतो मम[4] ॥370॥

नील ने कहा–

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! तुम्हारा स्वागत है। मेरे सौभाग्य से तुम मेरे पास (आये) हो। हे ब्राह्मणराज! तुम पूजनीय हो। तुमको मैं अपना अतिथि मानता हूँ॥ 370॥

---

1. दैत्यानां E

2. अपि H

3. नीलमते नीलस्तोत्रम् अतिरिक्त ADEFG, इति श्री–H, इति श्रीनीलमतपुराणे चन्द्रदेवकृतं नीलस्तोत्रवर्णनं नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः C

4. 370 b का पाठ 370 a से पहले E

वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं मनसि प्रियम्।
गृहं च मे तथा पश्य! तत्र आस्स्व[1] च यथासुखम्।।371।।

तुम्हारा कल्याण हो। जैसी तुम्हारी मनोवाञ्छा हो और जो तुम्हारे मन को प्रिय लगे उस वर को माँगो और मेरे इस घर को देख लो उसमें अपनी सुख सुविधा के अनुसार रहो॥ 371॥

चन्द्रदेव:[2]
अवश्यं मे[3] वरो देयस्त्वया नागेन्द्रसत्तम।
वरयामि वरं देव तं मे त्वं दातुमर्हसि।।372।।

चन्द्रदेव ने कहा

हे नागराजों में उत्तम नील! तुमको मुझे वह वर अवश्य देना चाहिए। हे देव! मैं उस वर को तुमसे माँग रहा हूँ और तुम्हें उसे मुझे देना भी चाहिए॥ 372॥

कश्मीरायां[4] जनो नित्यं वसतां भीमविक्रम।
क्लिश्यते हि सदा लोको निष्क्रमन्[5] प्रविशन् पुन:।।373।।

हे भयङ्कर पराक्रम वाले नील! इस कश्मीराप्रदेश में रहने वाले मनुष्य सदा (स्थायी रूप से) निवास करें। क्योंकि वे लोग सदैव निकलते हुए और फिर प्रवेश करते हुए यहाँ क्लेशयुक्त होकर रहा करते हैं॥ 373॥

गृहाणीह नरा:कृत्वा[6] पुराणि विविधानि च।
वसन्तु त्वत्प्रसादेन वरमेतद् वृतं[7] मया।।374।।

(अपने अपने) घर और तरह तरह के नगर बनाकर तुम्हारी कृपा से यहाँ लोग रहें यह वर मैंने तुमसे (माँगने के लिए) चुना है॥ 374॥

1. यह C, तत्रास्स्व अन्य MSS
2. उवाच अतिरिक्त G
3. च A, मे अन्य
4. कश्मीरेषु CG
5. निष्क्राम्यन् CG
6. यह A, नरास्त्यक्त्वा अन्य
7. वर एष वृतो CG

[1]नील:[2]
एवमस्तु द्विजश्रेष्ठ वसन्त्विह नराः सदा।
पालयन्तस्तु[3] मद् वाक्यं केशवाद् यन्मया श्रुतम्॥ 375॥

नील (ने कहा)

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! ऐसा ही हो। यहाँ पर लोग सदा रहते रहें। केशव से जो मेरे द्वारा सुना गया है उस वाक्य का तो वे लोग पालन करते रहें॥ 375॥

बृहदश्वः[4]
एवमुक्त्वा तदा नीलो ब्राह्मणं स्वं निवेशनम्[5]।
नीत्वा सम्पूज्य सम्भोज्य[6] ब्राह्मणस्य[7] यथाविधि॥ 376॥

बृहदश्व ने कहा

उस समय इस प्रकार उस ब्राह्मण को अपने घर में ले जाकर फिर उस ब्राह्मण की विधिपूर्वक पूजा की और उसे भोजन खिलाया॥ 376॥

कश्मीरायां वसत्यर्थ[8]माचाराणि[9] जगाद वै।
द्विजश्चोवास षण्मासान् सुखं[10] नीलनिवेशने॥377॥

कश्मीर में रहने के लिए (लोक सम्बन्धी) प्रथाओं रीति रिवाज़ आदि व्यवहारों को बताया और वह ब्राह्मण छः मास तक नील के निवासस्थान में सुखपूर्वक रहने लगा॥ 377॥

चैत्र्यां ततो व्यतीतायां प्राविशन्[11]सर्वतो जनाः[12]।
राजा वीरोदयाख्यश्च हस्त्यश्वैर्बहुभिर्वृतः॥ 378॥

---

1. इससे पहले यहां कुछ श्लोक लुप्त प्रतीत हो रहे हैं।
2. उवाच अतिरिक्त CG
3. पालयन्तु च A
4. उवाच अतिरिक्त CG
5. इस श्लोक के प्रथम दो पाद परित्यक्त A
6. सम्भोज्य सम्पूज्य CG
7. ब्राह्मणं तं CG, ब्राह्मणं च H
8. काश्मीरवासहेत्वर्थमा CG
9. सदाचारान् CG
10. सुखी A,C सुखं H,
11. प्राविशन् CG
12. जनाः CG

इसके बाद चैत्री (चैत्र मास की पूर्णिमा) के बीत जाने पर लोग और बहुत से हाथी, घोड़ों से घिरा हुआ वीरोदय नामक राजा वे सब चारों ओर से वहाँ (कश्मीरा में) प्रविष्ट हो गये ॥ 378 ॥

प्रविष्टे तु[1] जने तस्मिन्[2] द्विजो नीलेन योजितः
युवा धनौघसहितो[3] ययौ वीरोदयं[4] नृपम् ॥ 379 ॥

उन लोगों के घुस जाने पर नील के द्वारा नियुक्त और धन समूह से समृद्ध युवक चन्द्रदेव वीरोदय राजा के पास पहुँचा ॥ 379 ॥

तस्य सर्वं[5] यथा वृत्तं कथयामास स द्विजः।
राजापि सर्वलोकेषु कथयामास पार्थिव ॥ 380 ॥

उसके साथ जैसा सब कुछ (घटित) हुआ था वैसा उस ब्राह्मण चन्द्रदेव ने (सबको) सुना दिया। हे राजन्! राजा ने भी सभी लोगों को उसकी (व्यथा) कथा सुना दी ॥ 380 ॥

नीलोक्तं वचनं कुर्वंस्ततः प्रभृति वै जनः।
उवास सततं हृष्टः कश्मीरायां[6] कृतालयः ॥ 381 ॥

नील से कहे गये वचन को क्रियान्वित करते हुए उस समय से लेकर ही लोग कश्मीरा में (अपने अपने) घर बनाकर लगातार सुखपूर्वक रहने लगे ॥ 381 ॥

कृत्वा पुराणि ग्रामाणि[7] तीर्थान्यायतनानि च।
गृहाणि च विचित्राणि ह्युवास[8] वसतिं जनः ॥ 382 ॥

1. *प्रविष्टेषु CG*
2. *जनौघेषु CG*
3. *जनौघसहितो AH*
4. *वीर्योदयं H*
5. *सम्यक् E*
6. *कश्मीरेषु CG*
7. *ग्रामांश्च CG*
8. *चकार CG*

नगर, ग्राम, तीर्थ, देवतायतन (देवमन्दिर) एवं विचित्र घरों का निर्माण करके लोग उस निवासस्थली (बस्ती) में रहने लगे॥ 382॥

ततः[1] प्रभृति देशेऽस्मिन् स्वल्पं हि पतते[2] हिमम्।
जनस्तु[3] नीलवचनं[4] पालयत्येव नित्यशः[5]॥383॥

उस समय से लेकर इस देश में थोड़ा ही हिमपात होता है। यहाँ के लोग तो नील के वचन (शिक्षा) का सदैव पालन करते हैं।॥ 383॥

वैशम्पायनः[6]
एवमुक्तः स गोनन्दो[7] बृहदश्वेन भूमिपः[8]।
पप्रच्छ भूयस्तमृषिं जातकौतूहलस्तदा॥ 384॥

वैशम्पायन (ने कहा)

जब बृहदश्व ने उस राजा गोनन्द को इस प्रकार के वचन सुनाये तब उत्पन्न हुई जिज्ञासा (कौतुक) वाले उस (गोनन्द) ने उस ऋषि से दोबारा ये प्रश्न किये॥ 384॥

कान्याचाराणि[9] नीलेन चन्द्रदेवाय भार्गव।
पुरा प्रोक्तानि[10] चैतानि[11] कथयस्व महाद्युते[12]॥ 385॥

हे परम तेजस्वी भृगु के गोत्र में उत्पन्न (मुनि)! जो पहले नील के द्वारा चन्द्रदेव को बताये गए थे ये कौन कौन से आचार हैं इन्हें मुझे बताइए॥ 385॥

---

1. तदा C
2. निपतति CG
3. जनाश्च CG
4. वाक्यानि CG
5. पालयन्तोऽनिशं मुदा CG, सर्वदा E, नित्यदा H
6. उवाच अतिरिक्त CG
7. गोविन्दो DH
8. भूमिपः CG
9. का आचाराश्च CG
10. प्रोक्ताश्च CG
11. तान् मह्यं CG
12. महामते ACG

बृहदश्वः[1]
रौक्मपीठस्थितं[2] **विप्रं नागः पर्यङ्कमाश्रितः**[3]**।**
उवाच यत्तदा राजंस्तच्छृणुष्व समाहितः ॥ 386 ॥

बृहदश्व (ने कहा)

हे राजन् ! पलंग पर बैठे हुए नील नाग ने रजत सिंहासन पर बैठे हुए उस चन्द्रदेव ब्राह्मण को उस समय जो कहा वह सब तुम ध्यानपूर्वक सुनो ॥ 386 ॥

नीलः[4]

प्रणिपत्य हृषीकेशं हरिं पराशरं गुरुम्[5]**।**
कश्मीरायां[6] **वसत्यर्थं**[7] **वक्ष्याम्याचरणं तव ॥ 387 ॥**

नील (ने कहा)

भगवान् विष्णु, भगवान् कृष्ण और गुरु पराशर को प्रणाम करके मैं कश्मीर में रहने के लिए तुम्हारे द्वारा अनुसरण किये जाने वाले आचरण को बताऊँगा ॥ 387 ॥

आश्वयुज्यां निकुम्भस्तु नित्यमायाति काश्यप[8]**।**
हत्वा पिशाचान् सङ्ग्रामे वालुकार्णवगान् बहून् ॥ 388 ॥

हे कश्यप पुत्र! सङ्ग्राम में बालुका (रेत) के समुद्र में गये हुए बहुत से पिशाचों को मारकर आश्विन मास की पूर्णिमा में वह निकुम्भ सदैव आया करता है।। 388।।

---

1. *उवाच अतिरिक्त C*
2. *रौक्मं पीठं स्थितो A, रौक्मपीठस्थितो नागः H*
3. *पर्यङ्कञ्च तथाश्रितः AH, पर्यङ्कमास्थितः G*
4. *उवाच अतिरिक्त CG*
5. *चराचरगुरुं A, पराशरगुरुं H*
6. *कश्मीराणां CG*
7. *च वासार्थं A*
8. *कश्यप A*

पूजार्थं तस्य कर्तव्या[1] कौमुदी[2] तां निबोध मे[3] ॥ 389 ॥

उसकी पूजा के लिए कौमुदी (पूर्णिमा की रात में महोत्सव जिस तरह) करनी चाहिए वह मुझ से जान लो।। 389।।

सुधावदाता:[4] कर्तव्या:[5] पूजिताश्च तथा गृहा:[6]।
पुम्भि: स्नातानुलिप्तैश्च भाव्यं[7] बालैर्विशेषत: ॥ 390 ॥

घरों को सफेदी से चमकीला बनाना चाहिए और उनकी पूजा करनी चाहिए। मनुष्यों को जलस्नान और (इत्र आदि सुगन्धित द्रव्यों के) अनुलेपन से युक्त होना चाहिए और विशेष रूप से बालकों को (स्नान तथा अनुलेपन करना चाहिए)।। 390।।

न भोक्तव्यं दिवा चापि तद्दिनं पुरुषै: सदा[8]।
केवलं भोजनं देयं बालातुरजनस्य च ॥ 391 ॥

और सदैव उस दिन पुरुषों को दिन में भी भोजन नहीं करना चाहिए। केवल बच्चे और बीमार आदमी को ही भोजन देना चाहिए।। 391।।

सफलै:[9] पुष्पसङ्घातै:[10] पूजनीयास्तदा[11] गृहा:[12]।
चन्द्रोदये तत: प्राप्ते सम्प्रज्वाल्य हुताशनम् ॥ 392 ॥

1. *कर्तव्य: F*
2. *कौमुदीं C*
3. *द्वितीय पाद परित्यक्त EF*
4. *सुधावधाता: A*
5. *कर्तव्या: परित्यक्त H*
6. *गृहस्तथा F, पहले दो पाद परित्यक्त EF*
7. *सार्धं E*
8. *सह A*
9. *भोजनै: E, सत्फलै: CG*
10. *यह A, सफलै: पत्रै: E पत्रसंघातै: CGH*
11. *तथा CG*
12. *ग्रहा: E*

रुद्रं चन्द्रमुमां स्कन्दं नासत्यौ नन्दिनं तथा।
पूजयित्वार्घमाल्यादिनैवेद्यै[1]श्च पृथक् पृथक्॥ 393॥

ततः पूजा निकुम्भस्य कर्तव्या कृसरेण तु।
आदित्यपुत्रो रेवन्तः[2] साश्वैः[3] पूज्यश्च[4] मानवैः॥394॥

तब फलों के समेत पुष्पों के समूहों से घरों को पूजना चाहिए। इसके बाद चन्द्रमा के उदित होने पर अग्नि को जलाकर रुद्र, चन्द्र, उमा, स्कन्द, नासत्यौ (अश्विनी कुमारों) और नन्दी को अर्घों (जलादि पूजा द्रव्यों) और नैवेद्यों (पत्र, पुष्प, फल और तोय) से पृथक् पृथक् पूजकर उसके बाद निकुम्भ की खिचड़ी से पूजा करनी चाहिए। आदित्य के पुत्र रेवन्त की घुड़सवार मनुष्यों के द्वारा सेवा की जानी चाहिए।। 392-394।।

पूजनीया च[5] सुरभि[6] र्गोमद्भिः पुरुषैस्तथा[7]।
येषां च छागलाः[8] सन्ति तैश्च पूज्यो हुताशनः॥ 395॥

और गौओं को रखने वाले पुरुषों के द्वारा (समृद्धि की प्रतीक) गाय की पूजा करनी चाहिए। जिनके पास बकरे बकरियाँ हों उन्हें अग्नि की पूजा करनी चाहिए।। 395।।

औरभ्रिकै[9]स्तथा देवः पूजनीयो जलाधिपः।
येषां सन्ति करीन्द्राश्च[10] तैश्च पूज्यो गणाधिपः॥ 396॥

1. *यह A पूजनीयाश्च-D, पूजनीयाश्च माल्यादिनैवेद्यैः F, पूजयेत च सन्माल्यैः CG पूजनीयाश्च माल्याद्यैः H*
2. *यह CH, रेवन्दः अन्य MSS.*
3. *यह DEF, साश्वः ACG*
4. *पूज्यः स H*
5. *पूजनीयाश्च CG पूजनीयश्च H*
6. *मुनयो CG*
7. *तदा H*
8. *यह CDEFH, छशिलाः A*
9. *औरभ्रकैः A*
10. *करीन्द्राणि ed. Leiden, करीन्द्रा वै H*

गडरियों के द्वारा वरुण देव की पूजा की जानी चाहिए और जिनके पास (घर में) गजराज हैं उनके द्वारा गणपति गणेश (और शिव) की पूजा करनी चाहिए।। 396।।

कृत्वाग्निहवनं पश्चात् पूजयित्वा द्विजोत्तमान्।
प्रयुज्य चात्मनः पूजां भोक्तव्यं मांसवर्जितम्।।397।।

अग्निहोत्र करके उसके बाद उत्तम ब्राह्मणों की पूजा करके तथा अपनी (पृथक्) पूजा कराके माँस रहित (शाकाहारी) भोजन करना चाहिए।। 397।।

सार्धं भृत्यैस्तथा मित्रै[1]र्दारापत्यादिभिस्तथा।
वस्तव्या[2] च निशा सैव वह्नेः पार्श्वरतै[3] र्नरैः।। 398।।

सेवकों, मित्रों, पत्नी और सन्तान आदि के साथ अग्नि के पास रहकर मनुष्यों के द्वारा वही रात्रि बितानी चाहिए।। 398।।

शंङ्खनादरवोन्मिश्रै र्गीतवाद्यैश्च[4] नित्यशः[5]।
नेया भवति राजेन्द्र तथा प्रेक्षणकैः[6] शुभैः।।399।।

तथा प्रभातसमये स्वनुलिप्तैः[7] स्वलङ्कृतैः।
वह्निपूजा च कर्तव्या मङ्गलालभनं तथा।। 400।।

हे राजाधिराज! शङ्खनाद की ध्वनि से मिले हुए गीतों और वाद्यों तथा शुभ नाटकों (और तमाशों) के साथ सदैव वह रात्रि बितानी चाहिए और प्रभातकाल में अच्छी तरह से (चन्दनादि के) लेपनों और अलङ्कारों से सुसज्जित पुरुषों और नारियों के द्वारा अग्निपूजन करना चाहिए तथा मङ्गलकारी वस्तुओं का स्पर्श करना चाहिए।। 399-400।।

---

1. यह A, मित्रैस्तथा भृत्यैः DEH

2. वास्तव्या H

3. वह्निपार्श्वगतैः CG

4. गीतवादैश्च CG

5. सर्वशः CDEFH

6. प्रेक्षणिकैः A

7. यह CG, स्वानुलिप्तैः ADE

भोक्तव्यं सह मित्रैश्च क्रीडितव्यं यथासुखम्।
सुप्तव्यं[1] तां[2] तथा रात्रिं[3] द्वितीयायामनन्तरम्[4] ॥ 401 ॥

मित्रों के साथ भोजन करना चाहिए। सुख, सन्तुष्टि और अपने सामर्थ्यानुकूल खेलना चाहिए। उसी रात को सो जाना चाहिए और उसके बाद दूसरी (अगली) रात को सोना चाहिए।। 401।।

कर्दमेनानुलिप्ताङ्गैः क्रीडितव्यं तथा[5] नरैः[6]।
सुहृदः कर्दमेनापि[7] लेपयद्भि[8]रितस्ततः ॥ 402 ॥

कीचड़ से अनुलिप्त अङ्गों वाले और मित्रों को भी कीचड़ से पोतने वाले मनुष्यों को इधर उधर खेलना चाहिए।। 402।।

कामार्थवादिभिस्सर्वै[9]स्तल्लिङ्गार्थप्रबोधकैः।
गन्तृ[10]गम्यविशेषैश्च विविधैश्च सुभाषितैः ॥ 403 ॥

अश्लीलं वदमानैश्च[11] त्वा[12]क्रोशद्भिस्तथा द्विज[13]।
तस्मिन्नहनि पूर्वाह्णे निकुम्भस्यानुयायिनः[14] ॥ 404 ॥

आविशन्ति नरान् सर्वान् पिशाचा घोरदर्शनाः।
यश्चैवं कुरुते तस्य ह्[15]यपराह्णे तदा तनुम् ॥ 405 ॥

---

1. स्वप्तव्यं CG
2. च CG
3. तस्यां CG
4. द्वितीयायां निशीच्छया CG
5. यथा F
6. नरात् C भरात् G
7. अपि परित्यक्त तथा बचा हुआ स्थान H
8. लेपनीयाः CGH
9. कामार्थवादनिरतैः CG
10. भर्तृगम्य- DE
11. अश्लीलानि वदद्भिश्च CG
12. तथा CG हि H
13. एव च CG , द्विजैः H
14. चतुर्थपाद परित्यक्त
15. यह CDE, हि A परित्यक्त तथा सन्धि का अभाव A

Ed. Leiden v.v. 338b-339a

त्यक्त्वा स्नातस्य गच्छन्ति शपन्तो[1] चाप्य[2]कारणम्।
ततः स्नातैश्च कर्तव्यं केशवस्यार्चनं नरैः॥ 406॥

हे ब्राह्मण! काम की (वासना के उत्तेजक) अर्थपूर्ण बातों को करने वाले, उन (स्त्री पुरुषों) के लिङ्गों (योनि, शिश्नादि जननेन्द्रियों) के अर्थों (के बोधक शब्दों) को बतलाने वाले, विशेष प्रकार के भोक्ता नायक और भोग्या नायिका (स्त्रियों के साथ मैथुन करने वाले युवा तथा पुरुषों के साथ सहवास के लिए उद्यत नवयुवतियाँ) बने हुए, नाना प्रकार के सुन्दर (मनोरञ्जक) वचनों को बोलने वाले, अश्लील (वचनों को) कहने वाले और (परस्पर) गाली देने वाले सभी नरों और नारियों को (इस प्रकार) कामक्रीड़ा करनी चाहिए। उस दिन पूर्वाह्ण (दिन के पहले पूर्वभाग) में तो भयङ्कर आकृति वाले निकुम्भ के अनुयायी पिशाच सारे नरों के भीतर प्रविष्ट हो जाते हैं। जो ऐसा (उपर्युक्त क्रिया कलाप) करता है और स्नान करता है उसके शरीर को शाम के समय छोड़कर दूसरे उन व्यक्तियों के शरीर में चले जाते हैं जो ऐसा नहीं करते हैं और वे फिर उन्हें अकारण गाली देते हैं। तदनन्तर स्नान करने वाले व्यक्तियों को केशव की पूजा करनी चाहिए।। 403-406।।

सम्पूज्य विप्रान् भोक्तव्यं तनुलिप्तैः[3] स्वलङ्कृतैः[4]।
मित्रानुजीविभिः सार्धं दारापत्यादिभिस्तथा[5]॥ 407॥

अपने शरीर पर (सुगन्धित) लेप लगाने वाले एवं अलङ्कारों से सुसज्जित उन पुरुषों को ब्राह्मणों की पूजा करके मित्र, सेवक, स्त्री और बच्चों आदि के साथ भोजन करना चाहिए।। 407।।

ततः प्रभृति षणमासान् स्वेषु वेश्मसु मानवैः।
अग्निः सन्निहितः कार्यो रात्रौ विप्रैर्विशेषतः॥ 408॥

उस समय से लेकर छः महीनों तक रात्रिकाल में अपने अपने घरों में मनुष्यों को अग्नि को (प्रज्वलित करके) समीप रखना चाहिए। ब्राह्मणों को विशेष रूप से ऐसा करना चाहिए।। 408।।

---

1. *शापान्ते E*
2. *चास्य कारणम् A, करणाद् ध्रुवम् CG*
3. *लिप्तदेहैः CG*
4. *सुसंयतैः H*
5. *दारापत्यसमन्वितम् CG*

रात्रौ दीपश्च दातव्यो[1]मासमेकं बहिर्गृहात्।
यावत्कार्त्तिकमासस्य पौर्णमासीं[2] द्विजोत्तम॥ 409॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! कार्तिक पूर्णिमा पर्यन्त एक मास तक रात्रि में घर से बाहर दीपक की स्थापना करनी चाहिए।। 409।।

एषा तु कौमुदी नाम तिथिः कार्या शिवप्रदा[3]।
ततः पक्षे व्यतीते तु कर्त्तव्या सुखसुप्तिका॥ 410॥

कल्याण प्रदान करने वाली यह कौमुदी (कार्तिक पूर्णिमा) नाम की तिथि मनानी चाहिए। इसके बाद एक पखवारे के बीतने पर सुखसुप्तिका नामक उत्सव को मनाना चाहिए।। 410।।

पञ्चदश्यां यथा विप्र तथा मे गदतःशृणु।
तस्यां[4] दिवा[5] न भोक्तव्यं बालातुरजनं विना॥ 411॥

हे ब्राह्मण! पञ्चदशी (पन्द्रहवीं) को जिस प्रकार मनाना चाहिए उसको मुझ बताने वाले से सुनो। बच्चों और बीमार आदमियों के सिवाय और किसी को उसमें दिन का भोजन नहीं करना चाहिए।। 411।।

सूर्ये त्वस्तमनुप्राप्ते पूजयित्वा करीषिणीम्।
दीपवृक्षास्ततो देया देवतायतनेषु च॥ 412॥

चतुष्पथश्मशानेषु नदीपर्वतवेश्मसु।
वृक्षमूलेषु गोष्ठेषु चत्वरेष्वापणेषु च॥ 413॥

उसके बाद सूर्य के अस्त होने पर सम्पत्ति की अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी की पूजा करके देवमन्दिरों, चौराहों, श्मशानों, पर्वतों, घरों, वृक्षमूलों, गोशालाओं,

---

1. कर्तव्यो H

2. पौर्णमासी DE

3. शुभप्रदा DF इसके पश्चात् नील उवाच EG, नीलः AF, इति श्रीनीलमतपुराणे आश्वयुजीमहवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः। नील उवाच C

4. तस्या A

5. देव्या A

आँगनों और दुकानों में दीपवृक्ष (दीपाधार-धातु या लकड़ी से बनाई हुई दीपक टिकाने की आधार वस्तु) स्थापित करने चाहिएं।। 412-413।।

वस्त्रैश्चैवापणाः सर्वे कर्तव्या द्विज शोभिताः[1]।
दीपमालापरिक्षिप्ते प्रदेशे तदनन्तरम्॥ 414॥

स्वलङ्कृतेन[2] भोक्तव्यं द्विजेन्द्र नववाससा[3]।
सुहृद्भिर्बन्धुभिः[4] सार्धं ब्राह्मणै[5] श्चानुयायिभिः॥ 415॥

और हे ब्राह्मण! सारी दुकानें वस्त्रों से सजानी चाहिएं। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! इसके बाद दीपमालाओं से घिरे हुए स्थल पर अच्छी तरह से अलङ्कृत और नये वस्त्रों को धारण करने वाले व्यक्ति को मित्रों, सम्बन्धियों, ब्राह्मणों और आज्ञाकारी सेवकों के साथ भोजन करना चाहिए।। 414-415।।

ततः प्राप्ते द्वितीयेऽह्नि स्वनुलिप्तैः स्वलङ्कृतैः।
क्रीडितव्यं तदा[6] द्यूतैः श्रोतव्यं गीतवादितम्[7]॥ 416॥

इसके बाद दूसरे दिन के आने पर अच्छी तरह चन्दनादि के लेप किये हुए और अच्छे अलङ्कारों से सजे हुए व्यक्तियों को तब द्यूतक्रीडा करनी चाहिए और गीत और वाद्य को सुनना चाहिए।। 416।।

विशेषवच्च भोक्तव्यं पूर्वोक्तैस्तैर्जनैः सह।
तस्मिन् द्यूते जयो यस्य तस्य संवत्सरः शुभः॥ 417॥

पहले कहे गये उन सुहृद् आदि लोगों के साथ विशेष (मिष्टान्न आदि पदार्थों से युक्त) भोजन खाना चाहिए। उस जुए में जिसकी जीत होती है उसके लिए (सारा) वर्ष शुभ रहता है।। 417।।

---

1. श्चोपशोभिताः CG
2. स्वलङ्कृ तैश्च CG
3. नववस्त्रैः CG
4. यह A, ब्राह्मणैः अन्य MSS
5. यह A, बन्धुभिः अन्य MSS
6. तु तद् F, तथा A
7. यह अन्य, गीतवादिकं A

तस्यां रात्र्यां[1] तु कर्तव्यं शय्यास्थानं[2] सुशोभितम्[3]।
गन्धैर्वस्त्रैस्तथा धूपै[4] रत्नैश्चैवाप्यलङ्कृतम्[5] ॥ 418 ॥

दीपमालापरिक्षिप्तं तथा[6] धूपेन[7] धूपितम्।
दयिताभिश्च सहितैर्नेया[8] सा च निशा भवेत् ॥ 419 ॥

उस रात्रि में शय्या स्थान (पलंग की जगह) को सजाना चाहिए। उसे सुगन्ध, वस्त्रों, अगरबत्ती आदि की धूपों (सुगन्धित धूओं) और रत्नों से भी अलङ्कृत तथा दीपमालाओं से घिरा हुआ और (चन्दन, इत्र और केसर आदि सुगन्धित पदार्थों की) वाष्प से सुगन्धित करना चाहिए। उन लोगों को अपनी पत्नियों के साथ वह रात्रि बितानी चाहिए।। 418-419।।

नवैश्च वस्त्रैः पूज्याश्च[9] सुहृत्सम्बन्धिबान्धवाः।
ब्राह्मणा भृत्यवर्गाश्च चन्द्रदेव यथाविधि[10] ॥ 420 ॥

हे (ब्राह्मण) चन्द्रदेव! उन व्यक्तियों को मित्रों, सम्बन्धियों, बान्धवों, ब्राह्मणों और सेवकवर्गों को नये वस्त्रों के द्वारा विधि के अनुसार पूजित करना चाहिए।। 420।।

---

1. *रात्रौ CDEFG*
2. *यह CDEG, यथास्थानम् A*
3. *सुशोभनम् H*
4. *यह CDEFG, दीपै AH*
5. *चाप्यलङ्कृतम् CG*
6. *तदा D*
7. *दूपेन A*
8. *नीया A*
9. *पूज्याश्च नूतनवासोभिः CG*
10. *नील उवाच अतिरिक्त CDEG नीलः AF, इति श्रीनीलमते नीलः अतिरिक्त H, दीपमालाविधि को हाशिये के भीतर सीधा जोड़ा गया है। श्रीनीलमतपुराणे दीपमालाया वर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः। नील उवाच तत्पश्चात् इति C*

Ed. Leiden v.v. 405-407

एकादश्यां ततो रात्रौ शुक्लपक्षस्य मानवः।
सोपवासो हरिं देवं नृत्तगीतै[1] र्विबोधयेत्॥ 421॥

उसके बाद शुक्लपक्ष की एकादशी (की) रात्रि में उपवास करने वाला मनुष्य (ताल और लय वाले) नाच और गीतों से भगवान् विष्णु को जगाये।। 421।।

आषाढमासि प्रतिमां केशवस्य च[2] कारयेत्।
सुप्तां तु शेषपर्यङ्के शैलमृद्धेमदारुभिः[3]॥ 422॥

ताम्रारकूटरजतै[4]श्चित्रे वापि निवेशयेत्।
लक्ष्म्युत्सङ्गगतौ पादौ तदा तस्य[5] तु[6]कारयेत्॥ 423॥

आषाढ़ मास में वह (मनुष्य) पाषाण, मिट्टी, सुवर्ण, लकड़ी, ताँबे, काँसे और चाँदी से निर्मित, शेषनाग (शय्या रूप) पर सोई हुई भगवान् केशव (विष्णु) की मूर्ति को बनवाये अथवा (इस केशव की मूर्ति को) चित्र में चित्रित कराकर स्थापित करा देवे तब वह (इस चित्र में) उसके पैरों को लक्ष्मी की गोद में रखते हुए निर्मित करवाये।। 422-423।।

कार्त्तिकस्य तु[7] शुक्लान्ते कार्यं तस्य विबोधनम्।
यथा[7] तथा मे गदतः शृणु त्वं मुनिपुङ्गव॥ 424॥

हे मुनिश्रेष्ठ! कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष के अन्त में जिस विधि से उस विष्णु देवता का जागरण कराया जाये उसे तुम मुझ वक्ता से सुनो।। 424।।

---

1. यह DEH, नृत्तैर्गीतैः A, नृत्यगीतैः CG
2. यह A, तु अन्य MSS
3. शैलमृद्धेमदारुभिः A
4. यह ACDEFGH, रचितैः ed. Leiden
5. तस्यां CG
6. च A
7. च A

एकादश्यां तु कर्तव्यं रात्रौ जागरणं[1] तथा।
गीतैर्नृत्तै[2]स्तथा वाद्यैर्ब्रह्मघोषैस्तथैव च॥ 425 ॥

वीणापटहशब्दैश्च पुराणानां च वाचनैः[3]।
तत्कथाश्रवणैश्चान्यैस्तथा स्तोत्रप्रकीर्तनैः ॥426 ॥

प्रेक्षणीयप्रदानै[4] श्च भूमिशोभाभिरेव च।
पुष्पधूपप्रदानै[5]श्च नैवेद्यैर्विविधैस्तथा ॥ 427 ॥

और एकादशी की रात्रि में गीतों (ताल और लय पर) नाचों, ब्रह्मघोषों (वेदध्वनियों) वीणाओं, नगाड़ों और ढोलों, पुराणों के वाचनों, प्रवचनों और उनकी कथा के श्रवणों तथा (भक्तिपूर्ण) स्तोत्रों के कीर्तनों, नाटकों के आयोजनों, भूमि की शोभा करने वाली अल्पना के निर्माणों, पुष्प और धूपों की भेटों, विविध नैवेद्यों (पूजाद्रव्यों) के द्वारा केशव की प्रतिमा का जागरण होना चाहिए।। 425-427।।

दीपवृक्षैश्च विविधैर्वह्निपूजाभिरेव च।
भक्ष्यैरपूपैः शाकैश्च परमान्नैस्तथा फलैः[6] ॥ 428 ॥

इक्षोर्विकारैर्मधुना मृद्वीका[7]भव्यदाडिमैः।
कुठेरकस्य[8] मञ्जर्या मार्जन्या लवणेन च[9] ॥ 429 ॥

---

1. *रात्रिजागरणं DEF, रात्रौ जागरणा तथा A*
2. *यह AG, नृत्यैः DE*
3. *वादनैः H*
4. *प्रेक्षणीयैः प्रधानैश्च CG, प्रेक्षणीयप्रधानैश्च H*
5. *पुष्पधूपप्रधानैः AGH*
6. *फलैस्तथा DFG*
7. *यह ACG, मृद्वीकैः F, माध्वीकैः H*
8. *कुण्ठेरकस्य A*
9. *तत् E*

रक्तसूत्रेण रक्तेन चन्दनेन सितेन च।
अलक्तकेन बाजैश्च[1] कुङ्कुमेन सुगन्धिना ॥ 430 ॥

सम्पूज्य प्रतिमां रात्रौ द्वितीयेऽहनि पण्डितः।
स्नात्वा नदीजले पुण्ये प्रतिमां स्नापये[2]च्छुभाम्[3] ॥ 431 ॥

अनेक प्रकार के दीपवृक्षों (दीपाधारों) और अनेक प्रकार की पूजाओं, भोज्य पदार्थों, मालपूड़ों, सब्ज़ियों (दूध और चावल से बनाई) खीरों तथा फलों, गन्नों से बनी चीनी, शक्कर आदि चीजों, शहद, अंगूर तथा सुन्दर अनारों, पवित्र तुलसी के बौरों, झाड़ू, नमक, लाल धागे, लाल चन्दन, तथा सफेद चन्दन, अलक्तक (अन्नों के) बीजों और सुगन्धित केसर से रात्रि में देवप्रतिमा की पूजा करके ब्राह्मण पण्डित (विधिविधान को जानने वाला विद्वान् नदी के पवित्र जल में स्नान करके कल्याणकारी प्रतिमा को स्नान कराये।। 428-431।।

उत्थितां तु[4] परां[5] ब्रह्मन् पूर्वद्रव्यविनिर्मिताम्।
यदि चित्रनिविष्टा स्यात् प्रतिमा ब्राह्मणोत्तम[6] ॥ 432 ॥

पञ्चरात्रविधानेन[7] वेद्यामावाह्य तां बुधः।
आसनस्थां यथाशक्त्या[8] स्नापयेत्स यथाविधि ॥433 ॥

आदावाज्येन तैलेन मधुना तदनन्तरम्।
दध्ना क्षीरेण च ततः[9] पञ्चगव्येन चाप्यथ ॥ 434 ॥

हे ब्रह्मस्वरूप ब्राह्मणश्रेष्ठ! पूर्वोक्त (पत्थर आदि) द्रव्यों से विनिर्मित जगाई गई मूर्ति हो या यदि वह विचित्र बनाया हुआ देवता का चित्र हो तो

---

1. यह अन्य MSS, बीजेन A
2. यह DEF, स्थापयेत् ACG
3. शुभाम् C
4. तां CG
5. यह पराम् DEG परं मूलपाठ
6. तस्यां स्नानादि कर्तव्यं बुधैश्चित्रोपचारतः add C
7. निदानेन A
8. यथाशक्ति CG
9. यह CG, च तथा ADE

उसे पञ्चरात्र (सम्प्रदाय की) विधि से वेदी पर ले जाकर आसन पर बिठाकर उसे अपने सामर्थ्यानुसार और विधिपूर्वक पहले घी तथा तेल से स्नान कराये और उसके बाद दही, दूध से नहलाये एवं उसके बाद पञ्चगव्य (गाय के दूध, दही, घी, मूत्र तथा गोबर) से स्नान कराये।। 432-434।।

उद्वर्तनं ततो देयं माषचूर्णं[1] ततः[2] परम्।
ततो मसूरचूर्णं[3] च[4] ततस्त्वामलकानि[5] च॥ 435॥

रोध्रं[6] कालेयकं चैव[7] तगरं[8] कर्णकं[9] तथा।
सिद्धार्थकं प्रियङ्गुश्च[10] ततो वै बीजपूरकम्[11]॥ 436॥

सर्वौषध्यः सर्वगन्धाः[12] सर्वबीजानि काञ्चनम्[13]।
मङ्गल्यानि यथालाभं रत्नानि[14] च कुशोदकम्॥ 437॥

हस्तिदन्तोद्धृता[15] मृच्च वृषशृङ्गोद्धृता तथा।
नदीतीरात्सगोस्थानाद् वल्मीकात् सङ्गमाद्ध्रदात्[16]॥ 438॥

इन्द्रस्थानाच्च सरसस्तथा पर्वतमस्तकात्।
एतैः संस्नाप्य देवेशं[17] दद्याद् गोरोचनां शुभाम्[18]॥ 439॥

---

1. *चूर्णं माषा A, माषचूर्णः CG*
2. *अतः CG*
3. *मसूरचूर्णैः CG*
4. *तु H*
5. *आमलकाणुभिः CG*
6. *रौद्रं A*
7. *कालीयकं A, कालीयकोघैश्च CG*
8. *तगरैः CG*
9. *कर्णकैः CG*
10. *प्रियुङ्गुश्च H*
11. *बीजपूरकैः CG*
12. *सर्वगन्धान् DE, सर्वौषधीसर्वगन्धैः CG*
13. *सर्वबीजैश्च काञ्चनैः CG*
14. *यह DEF, पत्राणि AH*
15. *दन्तिदन्तोद्धृता CG*
16. *द्रुतम् E*
17. *देवं F*
18. *यह CDFG, गोरोचनादिकम् A, गोरोचनं शुभं H*

उस (स्नान कराने) के बाद प्रतिमा पर उबटन (सुगन्धित पदार्थों का लेप और मालिश) लगानी चाहिए। (इन पदार्थों का विवरण इस प्रकार है) उसके बाद (सबसे पहले) उड़द की दाल का चूर्ण, उसके बाद मसूर की दाल का चूर्ण एवं तत्पश्चात् आँवला, रोध्र (सफेद या लाल फूलों वाले वृक्ष के बीज और फूल) काला चन्दन, कदम्ब (कमल के बीज) सफेद सरसों, बड़ी पीपल (औषधि) सब प्रकार की औषधियाँ, सब प्रकार के सुगन्धित द्रव्य, सब प्रकार के बीज, सुवर्ण, मङ्गलकारी वस्तुएं जो जितनी उपलब्ध हो पायें, रत्न, कुशा घास से युक्त पानी, हाथी के दाँत से उखाड़ी गई, बैल के सींग से निकाली गई, नदी के तट, गौओं के बैठने के स्थान, बाँबी, नदियों के मिलन (सङ्गम) तालाब, इन्द्रदेवता के स्थान, झील और पर्वत शिखर से लाई हुई मिट्टी इन सभी मिट्टियों से लेप करके तथा स्नान कराकर इन देवेश्वर केशव को पवित्र गोरोचना (गोपित्त और गोमूत्र से बना हुआ सुगन्धित द्रव पदार्थ) प्रदान करे।। 435-439।।

ततस्तु[1]कलशा देया यथाशक्ति स्वलङ्कृताः।
जातीपल्लवसम्पूर्णाः फलपूर्णास्तु[2] काञ्चनाः॥ 440॥

उसके बाद अपने सामर्थ्य के अनुसार अच्छी तरह सजाये हुए, चमेली के पत्तों से भरे हुए और फलों से परिपूर्ण सोने के कलश प्रदान करने चाहिए। ॥ 440।।

पुण्याहे वेदशब्देन[3] वीणावेणु[4]रवेण च।
सूतमागधशब्देन तथा वन्दिस्वनेन च॥ 441॥

एवं संस्नाप्य गोविन्दं स्वनुलिप्तं[5] स्वलङ्कृतम्।
सुवाससं[6] पूजयेत[7] जातीपुष्पैः सकुड्मलैः॥ 442॥

---

1. च CG
2. फलमूलाश्च CG
3. पुण्याहे वेदशब्देन CG, पुण्याहवाचशब्देन ed. Leiden
4. वीणीविणु- A
5. स्वानुलिप्तं A
6. सवाससं D
7. पूजयते D

(किसी) पवित्र दिन में वेद (मन्त्रों की) ध्वनि, वीणा और बांसुरी के स्वर, कथावाचकों, चारणों (भाटों) के शब्द एवं स्तोताओं (स्तुति करने वालों) की आवाज़ के बीच में इस रीति से गोविन्द (केशव) को स्नान कराके अच्छी तरह उबटन लगाकर, अलङ्कार और उत्तम वस्त्र पहनाकर (अधखिली) कलिकायुक्त चमेली के पुष्पों के द्वारा (उसकी) पूजा करे।। 441-442।।

धूपं च सरजो[1] देयं दीपं दद्यात् सुशोभनम्।
ततस्तु[2] पूजयेद् देवं परमान्नैः सुशोभनैः॥ 443॥

पुष्पपराग से युक्त (अगरबत्ती आदि की) धूप देनी चाहिए और सुन्दर दीप प्रदान करना चाहिए। इसके बाद अत्यधिक स्वादिष्ट (अनेक प्रकार की) खीरों से गोविन्द देव की पूजा करनी चाहिए।। 443।।

सान्नरत्नप्रदानैश्च[3] पूज्या भागवता[4]स्ततः[5]।
ततोऽग्निहवनं कार्यं विप्राः पूज्यास्[6]त्वनन्तरम्॥ 444॥

वासोभिर्भूषणै रत्नैर्गोभिरश्वैर्गजैर्धनैः।
यथाविभवतो विप्र भोक्तव्यं तदनन्तरम्॥ 445॥

उसके बाद अन्नों सहित रत्नों के दानों से विष्णुभक्तों की पूजा करनी चाहिए। उसके पश्चात् अग्निहोत्र करना चाहिए और तदनन्तर ब्राह्मणों की पूजा अपने सामर्थ्य के अनुसार वस्त्रों, आभूषणों, रत्नों, गायों, घोड़ों, हाथियों और धनों से करनी चाहिए। हे ब्राह्मण! तत्पश्चात् भोजन करना चाहिए।। 444-445।।

---

1. *यह CDEF, चागरुजं A*
2. *च CG*
3. *संशोधित, सान्नरत्नप्रधानैश्च A, महारत्नप्रदानैश्च DEF; अन्नैः प्रधानरत्नैश्च*
4. *यह C, पूज्यो भागवतः D, पूज्यो भागवतैः E*
5. *तथा CG*
6. *तु परित्यक्त A*

त्रयोदश्यां ततः पूज्या जना ये रङ्गजीविनः।
मल्लभट्टादयो[1] ब्रह्मन् स्ववित्तस्यानुरूपतः[2] ॥ 446 ॥

हे ब्राह्मण त्रयोदशी (के दिन) में अपने धन के अनुरूप रङ्गकर्मिजनों, पहलवानों और योद्धाओं की पूजा (सत्कार) करनी चाहिए।। 446।।

चतुर्दश्यां न भोक्तव्यं भोक्तव्यं पयसापि[3] वा।
पञ्चदश्यां ततः[4] पूज्यो देवदेवो जनार्दनः ॥ 447 ॥

चतुर्दशी (के दिन) में कुछ नहीं खाना चाहिए अथवा यदि खाना हो तो केवल दूध ले लेना चाहिए। उसके बाद पञ्चदशी (के दिन) में देवों के देव भगवान् विष्णु (भगवान् कृष्ण) की पूजा करनी चाहिए।। 447।।

पौर्णमासीं तु सम्प्राप्य[5] न भोक्तव्यं तदा[6] दिवा।
ततश्चन्द्रोदये प्राप्ते पूजनीयाश्च कृत्तिकाः[7] ॥ 448 ॥

कार्त्तिकेयस्तथा खड्गो वरुणः सहुताशनः[8]।
माल्यैर्गन्धैस्तथा धूपैर्भक्ष्यैरुच्चावचैस्तथा ॥ 449 ॥

परमान्नैः फलैः[9] शाकै[10] र्वह्निसंतर्पणैस्तथा।
इक्षूणां च विकारैश्च दीपवृक्षैः सुशोभनैः[11] ॥ 450 ॥

---

1. मल्लमल्लादयो ADF, जल्लमल्लादयो H

2. स्वस्ववित्तानुरूपतः CG

3. मधुना DEF

4. यह CDEFG, तथा AH

5. ततः प्राप्य D

6. तथा H

7. पूजनीया च कृत्तिका A

8. कार्तिकेयं आदि अन्य MSS.

9. यह DF, तथा ACGH

10. शाखैः A

11. च शोभनैः A

कुल्माषैर्लोपिकाभिश्च[1] द्विजानां परिपूजनैः[2] ॥ 451 ॥

पौर्णमासी को प्राप्त करके अर्थात् पूर्णमासी आने पर उस समय दिन में भोजन नहीं करना चाहिए। उसके बाद चन्द्रमा के उदित होने पर कृत्तिकायें (कार्तिकेय-स्कन्द का पालन पोषण करने वाली देवमाता अप्सरायें) कार्तिकेय, कृपाण, वरुण, अग्नि, इन सबका पूजन मालाओं, इत्र आदि सुगन्धित द्रव्यों, धूपों, विभिन्न खाने योग्य उत्तम और निचले स्तर के पदार्थों (विविध प्रकार की) खीरों, फलों, सब्ज़ियों, अग्निपूजाओं, गन्ने से निर्मित खाँड, शर्करा आदि वस्तुओं, सुन्दर दीपाधारों, अधपके जौ, रेवड़ी आदि अन्न से ढकी शर्करा वाले पदार्थों और देवताओं के पूजन के द्वारा करे।। 448-451।।

एवं कृत्वा तदा पूजां मासदत्तं तु दीपकम्।
गृहाद् बहिस्तु यद्दत्तं[3] पिटके तत्तु कारयेत् ॥ 452 ॥

अपां समीपे[4] नीत्वा तु सभक्ष्यं तु[5] प्रवाहयेत्[6]।
तस्य मूलं[7] तु कर्तव्यं ततो वै चन्दनार्चितम्[8] ॥ 453 ॥

इस प्रकार पूजा करके तब घर के बाहर जो दीपक एक मास (की अवधि) के लिए रखा था वह टोकरी में रख देवे उसके बाद उसकी निचली तली (मूल) को चन्दन से लीपना चाहिए और उसे जल के समीप ले जाकर भक्ष्य पदार्थों को साथ रखकर (पानी में) प्रवाहित कर देना चाहिए।। 452-453।।

---

1. *लेपिकाभिश्च CG*
2. *द्विजांश्च परिपूजयेत् CG*
3. *यह H यच्च दत्तं A, वहिर्गृहात्तु यद्दत्तं CG*
4. *समीपं EFC*
5. *तत्र CG*
6. *वाहयेत् CG*
7. *मूले ACG*
8. *चन्दनार्चनम् CG*

क्षीरेण पूर्णं तं कृत्वा मत्स्यं तु सिकतामयम्[1]।
मुक्तानेत्रं न्यसेत्तस्मिं[2]स्तं च विप्रे निवेदयेत्[3] ॥ 454 ॥

(जो) रेत से बनी हुई है उस मछली को दूध से पूरी तरह भरकर उसमें मोतियों के नेत्र स्थापित कर दे और फिर उसे ब्राह्मण को प्रदान कर दे।। 454।।

बलीवर्द[4] ततो विप्र[5] श्वेतं शक्त्या विशेषतः[6]।
सर्वसस्यधरं रम्यं सर्वगन्धसमन्वितम् ॥ 455 ॥

सवासस़ं द्विजे दद्यात् कान्तारे सोऽपितिष्ठति[7]।
याम्यं मार्गं हि कान्तारे[8] तेन यान्ति विपश्चितः ॥ 456 ॥

हे ब्राह्मण! उसके बाद विशेष रूप से अपनी शक्ति के अनुसार सफेद, सभी प्रकार के अन्नों को धारण करने वाले, सुन्दर, सभी सुगन्धियों से युक्त और वस्त्रों से आच्छादित एक बैल को ब्राह्मण के लिए प्रदान करे। (दानदाता के लिए) वह बैल उस जंगल में (प्रतीक्षा करता हुआ) ठहरता है क्योंकि उस वन में यमलोक तक जाने वाला बैल मार्ग है उस बैल से बुद्धिमान् लोग (वहाँ तक) जाते हैं।। 455-456।।

यावन्ति रोमकूपानि तस्य दान्तस्य काश्यप[9]।
तावद् वर्षसहस्राणि स्वर्गे मोदन्ति तत्प्रदाः ॥ 457 ॥

हे कश्यप के वंश में उत्पन्न ब्राह्मण! उस बैल (के शरीर में) जितने बालों के छिद्र हैं उतने हज़ार वर्षों तक उस प्रकार के बैल को देने वाले लोग स्वर्ग में आनन्द लेते हैं।। 457।।

---

1. *कुर्यान्मत्स्यं च सैकतम् CG*
2. *मुक्तानेत्रं तु न्यसेत् H, मुक्तानेत्रं न्यसेत्तस्य A*
3. *न्यवेदयेत AFH,*
4. *बलीवर्दं A, वलीवर्दं CGH*
5. *दद्यात् CG, देयं H*
6. *परित्यक्त H*
7. *सोऽपि तिष्ठति E, सोऽवतिष्ठति CG सोपतिष्ठति मूलपाठ*
8. *कान्तारं A*
9. *कश्यप A*

पूजयित्वा ततो विष्णुं रक्तमाल्यादिभिः स्वयम्।
भोक्तव्यं गोरसप्रायं[1] सुप्तव्यं[2] चा[3]प्यनन्तरम्॥ 458॥

इसके बाद लाल माला आदि से स्वयं विष्णु की पूजा करके गौ के दूध, दही, छाछ आदि से युक्त भोजन करना चाहिए और उसके बाद सोना भी चाहिए।। 458।।

देवोत्थापनमेतद्धि कर्तव्यं दिनपञ्चकम्।
पञ्चाहमेतच्च तथा सुप्तव्यं[5] स्थण्डिले बुधैः॥ 459॥

इस प्रकार यह देवता के जागरण का कार्य पाँच दिनों तक करना चाहिए और यही पञ्चाह (पाँच दिनों का समुदाय) है इसमें बुद्धिमानों को चबूतरे पर सोना चाहिए।। 459।।

दिने दिने च स्नातव्यं नदीतोये सुशीतले॥ 460॥

(इस अवधि में) बहुत ठंडे नदी के जल में प्रत्येक दिन स्नान करना चाहिए।। 460।।

पूजनीयो हरिर्देवो ब्राह्मणाः[6] सहुताशनाः[7]।
वर्जनीयं तदा मांसं प्रयत्ना[8]दपि काश्यप[9]॥ 461॥

हे कश्यप वंशोत्पन्न ब्राह्मण! भगवान् विष्णुदेव की पूजा करनी चाहिए और अग्नि (होत्र) सहित ब्राह्मणों को भी पूजना चाहिए। तब (उस पञ्चरात्र में) प्रयत्न करके भी माँस (भोजन) को छोड़ देना चाहिए।। 461।।

---

1. *गोरसापानं CG*
2. *स्वप्तव्या CG*
3. *वा A*
4. *दिनपञ्चकं से लेकर स्थण्डिले तक परित्यक्त DEF*
5. *स्वप्तव्यं CG*
6. *ब्राह्मणैः H*
7. *सहुताशनः H*
8. *प्रयत्नात् से लेकर अगले श्लोक के मासं तक परित्यक्त A*
9. *मांसादैर्दिनपञ्चकम् H*

दैत्यदानवयक्षाश्च पिशाचा: सह राक्षसै:[1]।
वर्जयन्ति तदा[2] मांसं मांसादा[3] दिनपञ्चकम्[4] ॥ 462 ॥

माँस भक्षी राक्षसों सहित दैत्य, दानव यक्ष और पिशाच ये सभी तब पाँच दिनों तक माँस खाना छोड़ देते हैं।। 462।।

एवं सम्पूज्य देवेशं सर्वकामसमन्वितम्।
आयुषः परमा[5]साद्य विष्णुलोके महीयते ॥ 463 ॥

इस प्रकार देवाधिपति केशव (विष्णु) की पूजा करके भक्त सारी कामनाओं की पूर्ति से समन्वित होकर आयु की चरम सीमा अर्थात् पूर्णायु को पाकर विष्णुलोक में महिमा (आदर) को प्राप्त करता है।। 463।।

स्ववित्तशक्त्या कर्त्तव्यं मयोक्तं नून[6]मेव तु।
प्राप्नोतीदं फलं सर्वं वित्तशाठ्यं विवर्जयेत्[7] ॥ 464 ॥

अपनी आर्थिक शक्ति के अनुसार मेरे द्वारा कहा गया (यह सब) अवश्य ही करना चाहिए। ऐसा करने से व्यक्ति इस सारे फल को प्राप्त करता है। वित्त के विषय में धूर्तता (बेइमानी) को मनुष्य छोड़ दे।। 464।।

कार्तिक्यां समतीतायां सम्प्राप्ते प्रथमेऽहनि।
कश्मीरा निर्मिता[8]पूर्वं कश्यपेन महात्मना ॥ 465 ॥

---

1. *राक्षसैः सह H*

2. *च ते G*

3. *मांसादैः A*

4. *प्रयत्नादपि काश्यप H*

5. *आयुः परमम् CG*

6. *यह A, अप्युक्तं न्यूनम् CG, मदुक्तं न्यूनमेव तु H*

7. *इति श्रीनीलमते देवोत्थापनम् अतिरिक्त A, श्री परित्यक्त DEFH, इति श्रीनीलमतपुराणे कार्त्तिकपञ्चरात्रे देवोत्थापनं नाम तृतीयः। नील उवाच CG, क्रिया परित्यक्त A*

8. *निर्मिताः CG*

तस्मात्तत्र दिने कार्य[1]मुत्सवं[2] सर्वमानवैः[3]।
स्वाशितैः[4] स्वनुलिप्ताङ्गैः[5] सुचित्तैः सुजनावृतैः[6] ॥ 466 ॥

पूर्वकाल में (क्योंकि) कार्तिक पूर्णिमा के बीत जाने और पहले दिन के आने पर महात्मा कश्यप ने कश्मीरा (प्रदेश) का निर्माण किया था। इस कारण सब मनुष्यों को उस दिन अच्छी तरह खाकर अच्छी तरह अङ्गों पर चन्दनादि का लेप करके, सुचित्त (स्वस्थ मन वाले) होकर और अच्छे लोगों से घिर कर उत्सव करना चाहिए।। 465-466।।

श्रोतव्यं गीतवाद्यं च[7] तथा सेव्यं[8] च मङ्गलम्।
पानं च पानपैः पेयं[9] वस्त्रं धार्यं तथा नवम्[10] ॥ 467 ॥

गीत और वाद्य सङ्गीत सुनना चाहिए और माङ्गलिक वस्तुओं का सेवन (स्पर्श) करना चाहिए। मद्यपान करने वालों को शराब पीनी चाहिए एवं नया वस्त्र पहिनना चाहिए।। 467।।

तस्यातितोषमायाति सगणो भास्करः स्वयम्[11] ॥ 468 ॥

उसके ऊपर अपने गणों सहित स्वयं सूर्य अत्यधिक प्रसन्न होता है।। 468।।

---

1. *कार्यः CG*
2. *उत्सवः CG, तत्सर्वं D*
3. *यह अन्य MSS, सर्वजन्तुभिः A*
4. *स्वाशितैः G*
5. *स्वानुलिप्ताङ्गैः A*
6. *यह DEF, स्वजनावृतैः ACG*
7. *यह A, गीतवाद्यादि DEF*
8. *यह अन्य MSS, दिव्यं AH*
9. *पीयं A*
10. *इति संवत्सरप्रवेशः अतिरिक्त A, इति नीलमते- DE, इति श्रीनीलमते H इति नीलमते नव-F, इति श्रीनीलमतपुराणे नवसंवत्सरमहोत्सवकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः। नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ADE*
11. *यहां कुछ पद्य लुप्त हैं इनमें मार्गशीर्ष सप्तमी का उल्लेख हुआ है।*

Ed. Leiden v.v. 451-454

एष एव विधिः कार्यस्तथा माघस्य सप्तमीम्[1]।
आषाढसप्तमीं चैव[2] यशोविजयकाङ्क्षिभिः॥ 469॥

और यश और विजय चाहने वाले भक्तों को माघ की सप्तमी और आषाढ सप्तमी (के दिन) में यही (उत्सव मनाने की) विधि करनी चाहिए ।। 469।।

सप्तमीत्रितयं चैव[3] ध्रुव[4]मेतद् द्विजोत्तम[5]।
सप्तमीष्वथ सर्वासु सूर्यल्लोके महीयते[6]॥ 470॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! इन तीन सप्तमी (मार्गशीर्ष सप्तमी, माघ सप्तमी और आषाढ सप्तमी के दिनों) में यह विधि निश्चित रूप से सम्पन्न की जानी चाहिए। इन सारी सप्तमियों में इन विधियों को करने वाला व्यक्ति सूर्यलोक में पहुँचकर सम्मानित होता है।। 470।।

पौर्णमासीं[7] तु तां[8] प्राप्य मार्गशीर्षस्य मानवः।
नक्ताशी पूजयेच्चन्द्रं शुक्लमाल्यादिभिस्तथा[9]॥ 471॥

अन्नैर्भक्ष्यप्रकारैश्च दीपदानै[10]स्तथा फलैः।
लवणानां प्रदानैश्च वह्निपूजाभिरेव च॥ 472॥

---

1. *सप्तम्यां तपसस्तथा CG*
2. *आषाढसप्तमी चैव A आषाढस्य च सप्तम्यां CG*
3. *चैवं A*
4. *श्रुतम् CGH*
5. *विशेषतः CG*
6. *नीलमते सप्तमीविधानं अतिरिक्त A, इति नीलमते सप्तम्यः F, इति श्रीनीलमते सप्तम्यः H नील उवाच क्रिया परित्यक्त AF*
7. *पूर्णमासीं CG*
8. *ततः CG*
9. *दीनां भरात् CG*
10. *धूपदीपैः CG*

Ed. Leiden v.v. 454b-457a

पूजनैः ब्राह्मणानां च सुभगानां तथैव च।
रक्तवस्त्रयुगं देयं सुभगा ब्राह्मणी तु[1]या॥ 473॥

स्वसा पितृस्वसा या च मित्रपत्नी च[2] या भवेत्।
ध्रुवमेषा तु कर्तव्या पौर्णमासी[3] विचक्षणैः॥ 474॥

और उस मार्गशीर्ष पूर्णिमा को प्राप्त करके केवल रात्रि भोजन करने वाले भक्त को सफेद माला आदि, अन्नों, नानाविध खाद्य पदार्थों, दीपदानों, फलों, नमकों के प्रदानों, अग्नि की पूजाओं और सौभाग्यशाली ब्राह्मणों की पूजाओं के द्वारा चन्द्रमा की पूजा करनी चाहिए। लाल वस्त्रों का एक एक जोड़ा सौभाग्यवती ब्राह्मणी, बहन, पिता की बहिन, मित्रपत्नी को देना चाहिए। यह पूर्णमासी निश्चित रूप से बुद्धिमान् लोगों के द्वारा मनाई जानी चाहिए।। 471-474।।

कार्याश्चान्याः स्वशक्त्या वा न वा कार्या द्विजोत्तम।
कान्तं[4] रूपमवाप्नोति सौभाग्यं विपुलं स्त्रियः॥ 475॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! अन्य पूर्णिमायें अपने सामर्थ्य के अनुसार मनाई जानी चाहिएं अथवा नहीं भी मनाई जायें। (इनके मनाने से) पुरुष सुन्दर रूप को प्राप्त करता है और स्त्रियां प्रचुर मात्रा में सौभाग्य को पा लेती हैं।। 475।।

स्त्रीभिर्विशेषतः कार्याः पौर्णभास्य[5]स्तथा द्विज[6]॥ 476॥

हे ब्राह्मण! ये पूर्णिमायें स्त्रियों के द्वारा विशेष रूप से मनाई जानी चाहिएं।। 476।।

---

1. *च CG*
2. *तु DE FH*
3. *पूर्णमासी A*
4. *कान्तिं A*
5. *पूर्णमास्यः DE, पौर्णमास्यो CG*
6. *द्विजोत्तम CG*

यस्मिंस्तु वासरे विप्र प्रथमं पतते[1] हिमम्।
तत्र पूज्यस्तु हिमवान् हेमन्तशिशिरावुभौ॥ 477॥

हे ब्राह्मण! जिस (दिन) में बर्फ पहली बार गिरती है उसमें हिमालय की पूजा करनी चाहिए और हेमन्त और शिशिर इन दोनों ऋतुओं को भी पूजना चाहिए।। 477।।

मम पूजा च कर्तव्या स्थाननागस्य चाप्यथ[2]।
फलग्पत्रे[3] प्रदातव्ये[4] नगे मेरूद्भवे[5] तथा॥ 478॥

मेरी (मुझ नील नाग की) और स्थानीय नाग की भी पूजा करनी चाहिए और मेरुपर्वत से उत्पन्न फल तथा पत्ते पर्वत को समर्पित करने चाहिएं।। 478।।

बकपुष्पाणि[6] देयानि धूपं[7] गुग्गुलुजं[8] शुभम्[9]।
बलिः कार्यः प्रयत्नेन कुल्माषेण द्विजोत्तम॥ 479॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! बक पुष्प देने चाहिएं और गुग्गुल से उत्पन्न सुन्दर धूप (धूआँ) उड़ाना चाहिए और अधपके जौ (अनाज) से प्रयत्नपूर्वक बलि का निर्माण करना चाहिए।। 479।।

---

1. *पतेच्च प्रथमं CG*
2. *यह A, स्नानेन चास्य चाप्यथ D, स्नानं नागस्य अन्य MSS*
3. *फलपत्रं AH*
4. *प्रदातव्यं AH*
5. *नमेरुप्रभवे तथा G*
6. *बुकपुष्पाणि ACG*
7. *धूपो CG*
8. *गुग्गुलुजः CG*
9. *शुभः CG*

Ed. Leiden v.v. 461-463

कुल्माषभोजनं देयं सघृतं ब्राह्मणेषु च[1]।
उत्सवं[2] च सदा[3] कार्यं[4] गीतनृत्तसमाकुलम्[5] ॥ 480 ॥

घृतमिश्रित अधपके जौ का भोजन ब्राह्मणों को खिलाना चाहिए और सदा गीत और नृत्त (ताल और लय पर आश्रित नाच) से भरा हुआ उत्सव मनाना चाहिए।। 480।।

विशेषवच्[6]च भोक्तव्यं भोजनं च यथेच्छकम्।
नवो मद्यस्तु पातव्यो[7] मद्यपैः पतिते हिमे ॥ 481 ॥

(खीर मिठाई आदि) विशेष पदार्थों वाला इच्छानुसार (भरपेट) भोजन खाना चाहिए। हिम के गिरने पर शराबियों को नई शराब पीनी चाहिए।। 481।।

श्यामा देवी च सम्पूज्या पुष्पधूपानुलेपनैः।
अन्नैर्भक्ष्यैः फलै मूलैः स्वनुलिप्तैः[8] स्वलङ्कृतैः ॥ 482 ॥

अच्छी तरह से चन्दनादि का (शरीर पर) लेप करने वाले और अलङ्कारों से सजे हुए भक्तों को पुष्प, धूप, चन्दनादि के लेपनों, अन्नों, खाद्यपदार्थों, फलों और जड़ों से श्यामा देवी की पूजा करनी चाहिए।। 482।।

हिमोपरिनिविष्टै[9]श्च गुरुप्रावरणाम्बरैः।
मित्रभृत्याप्तसम्बन्धिसहितैश्च यथासुखम् ॥ 483 ॥

---

1. *ब्राह्मणेभ्यो घृतान्वितम् CG*
2. *उत्सवः CG, तत्सर्वं D*
3. *मुदा CG*
4. *कार्यः CG*
5. *समाकुलैः CG*
6. *विशेषतः CG*
7. *नवस्तु मद्यः पातव्यो DEF, नवं तु मद्यं पातव्यं G, नवो मद्यश्च पातव्यः H 481 श्लोक के पश्चात् नीलमते प्रथमहिमपातः A, इति श्रीनीलमते हिमपातः H, इति नीलमते नवहिमपातः DE, इति ओम् F, इति श्रीनीलमतपुराणे नवहिमपातादिकवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः। नील उवाच C क्रिया परित्यक्त A*
8. *स्वानुलिप्तैः A*
9. *हिमपृष्ठे प्रविष्टैश्च D*

भोज्यं विशेषवत्कार्यं श्रोतव्यं गीतवादितम्[1]।
द्रष्टव्यं पुंश्चलीनृत्तं पूजनीयास्तथा स्त्रियः[2] ॥ 484 ॥

फिरनों (भारी चोगों) से युक्त वस्त्रों वाले, मित्र, नौकर और विश्वस्त सम्बन्धियों सहित, बर्फ के ऊपर बैठे हुए उपासकों को सुखपूर्वक खीर आदि विशेष प्रकार का भोजन करना चाहिए, गीत और वाद्य सङ्गीत सुनना चाहिए, वेश्याओं के नृत्त (ताल और लय पर आश्रित नाच) को देखना चाहिए और स्त्रियों की पूजा करनी चाहिए।। 483-484।।

पौषकृष्णाष्टमीं[3] कार्यं श्राद्धं[4] शाकैर्द्विजोत्तम[5]।
माघकृष्णाष्टमीं[6] मांसैः फाल्गुणस्य सिताष्टमीम् ॥ 485 ॥

अपूपैः कारयेच्[7]छ्राद्धं[8] नित्यमेव समाहितः।
नवमीषु च तास्वेव स्त्रीणां श्राद्धं तु कारयेत् ॥ 486 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! पौष कृष्णाष्टमी को शाकों से श्राद्ध करना चाहिए और माघ कृष्णाष्टमी को माँसों से (श्राद्ध) करना चाहिए। फाल्गुन मास की शुक्लाष्टमी को सदैव एकनिष्ठ होकर मालपूड़ों से श्राद्ध करे और उन्हीं (पौषादि की) नवमी की तिथियों में स्त्रियों के श्राद्ध को कराये।। 485-486।।

श्राद्धं कृत्वा प्रयत्नेन ब्रह्मचारी वसेन्निशाम्[9]।
पौर्णमासी तु पौषस्य पुष्ययुक्ता यदा भवेत् ॥ 487 ॥

---

1. *गीतवादिकम् A*
2. *मद्यपानं अतिरिक्त A, इति नीलमते नव DEF, इति श्रीनीलमते नवमद्यपानम् H, इति श्रीनीलमतपुराणे नवमद्यपानं नाम अष्टमोऽध्यायः। नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ADEF*
3. *कृष्णाष्टमी MSS.*
4. *श्राद्धं कार्यं CG*
5. *द्विजोत्तमः E*
6. *कृष्णाष्टम्यां CG , कृष्णाष्टमीं अन्य MSS.*
7. *कुरुते A*
8. *भक्त्या CG*
9. *इति श्रीनीलमतेऽष्टकात्रयम् नीलः अतिरिक्त H, इत्यष्टमीत्रयम् नीलः A, इति नीलमतेऽष्टकात्रयम् नीलः FD, इति नीलमतेऽष्टकात्रयमन्वष्टकात्रयं च G, इति श्रीनीलमतपुराणे-C*

गौरसर्षपकल्केन तदा तूत्सादितो[1] नरः।
घृतेन स्नापनं[2] कुर्यात् स्वशरीरस्य[3] मानवः॥ 488॥

इस प्रकार श्राद्ध करके रात्रि में मनुष्य प्रयत्नपूर्वक ब्रह्मचारी होकर रहे। जब पौष की पूर्णमासी पुष्यनक्षत्र से युक्त हो जाये तो नर सफेद सरसों के तेल की चिपचिपी गाद के (लेप) से मालिश करवाये फिर मनुष्य (अपने) शरीर का स्नान घृत के द्वारा करे।। 487-488।।

ततो विरूक्षितः स्नातः सर्वौषधियुतैर्घटैः।
नारायणं तथा शुक्रं[4] सोमं पुष्यबृहस्पती॥ 489॥

पूजयित्वार्घमाल्यादि[5]नैवेद्यैश्च पृथक् पृथक्।
मन्त्रैस्तथोक्तदैवत्यैः[6] कृत्वाग्निहवनं द्विज॥ 490॥

अहताम्बरसंवीतः स्वनुलिप्तः[7] स्वलङ्कृतः।
पूजयित्वा धनैर्विप्रान् मङ्गलालब्धिपूर्वकम्॥ 491॥

घृतपायसमश्नीयात् पूजयित्वा द्विजोत्तमान्[8]।
संवीतमहतं कर्त्रे देयं कालविदे भवेत्॥ 492॥

हे ब्राह्मण! इसके बाद सारी औषधियों (के जलों) से युक्त घड़ों के द्वारा स्नान कराने से चमकता हुआ यजमान नारायण, शुक्र, सोम, पुष्य और बृहस्पति (तीन तारों का समूह) इन देवताओं की जल, माला और अन्य द्रव्यों से पृथक्-पृथक् पूजा करके और पूर्वोक्त (नारायणादि) देवताओं से सम्बन्धित मन्त्रों से

1. यह ACG, तदा चोत्सादितो नरः DE
2. यह DE, स्नपनं ACGH
3. यह अन्य MSS सशरीरंच A
4. शुक्रं DE
5. पूजयित्वार्घ्यमाल्याद्यैः A
6. यथोक्तदैवत्यैः CG
7. स्वानुलिप्तः AH
8. परित्यक्त DEF, यह FCG द्विजोत्तमम् A

अग्निहोत्र को करके न पहिने हुए नये रेशमी वस्त्र को धारण करके अच्छी तरह चन्दनादि के लेप को करके और भलीभाँति सज धज कर मङ्गलवस्तु स्पर्शपूर्वक धनों से उत्तम ब्राह्मणों की पूजा करके घी मिली हुई खीर को खाये। न पहने हुए नये रेशमी वस्त्र को भूत, वर्तमान और भविष्य को जानने वाले कर्मकाण्डी ज्योतिषी पुरोहित को दे देवे।। 489-492।।

एवं कृत्वा नरः पुष्टिं प्राप्नोति धनधान्यतः[1]।
स्नानमेवं विधानेन कर्तव्यं पापनाशनम्[2] ॥ 493 ॥

इस प्रकार करके मनुष्य धन और अनाज की दृष्टि से पुष्टि को प्राप्त करता है। इसी प्रकार विधिपूर्वक पापनाशक स्नान करना चाहिए।। 493।।

घृतेन स्नापयेद् देवं स्वशक्त्या मधुसूदनम्।
हरभक्तो हरं देवं यदा स्यादुत्तरायणम्॥ 494 ॥

जब उत्तरायण हो तो भक्त अपने सामर्थ्यानुसार भगवान् विष्णुदेव (कृष्ण) को घी से स्नान कराये और तब शिवभक्त भगवान् शिव देवता को नहलाये।। 494।।

आज्यं दत्वा तथार्चासु[3] कृताः शैलेन या[4] द्विज।
अर्चारूपमथाज्येन पुनरुत्पादयेन्नरः[5] ॥ 495 ॥

अर्चाः पूज्यास्तथा यत्नात्साज्या मासत्रयं बुधैः ॥ 496 ॥

और हे ब्राह्मण! इन प्रतिमाओं में जो प्रतिमायें पत्थर से बनाई गई हों उनको घी देकर (लगाकर) स्नान कराके मनुष्य फिर घी से वैसी ही (घृत की) प्रतिमा बनाये। इस प्रकार विद्वानों के द्वारा घृत निर्मित इन प्रतिमाओं की तीन मास तक प्रयत्नपूर्वक पूजा करनी चाहिए।। 495-496।।

---

1. *धनधान्यभाक् CG इति श्रीनीलमतपुराणे पौष्यां पुष्यस्नानवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः। C, पौषी नाम A*
2. *DEF में यह श्लोक 492 A के बाद मिलता है।*
3. *परित्यक्त DEF यथार्चासु F*
4. *शिलाभिर्याः कृताः CG, कृता शैलेन F*
5. *उत्पादयेद् बुधः CG, उत्पादयेन्नरः AEFH*

ब्राह्मणेषु[1] च दातव्यमिन्धनं शक्तितस्तथा।
तृणं दद्याद् गवामर्थे[2] यथाशक्त्या[3] द्विजातिषु॥ 497॥

और ब्राह्मणों को यथाशक्ति ईंधन देना चाहिए। अपने सामर्थ्य के मुताबिक ब्राह्मणादि वर्णों के मनुष्यों को (उनकी) गायों के लिए घास दी जानी चाहिए।। 497।।

एवं यः कुरुते सम्यक् स रिपूनधितिष्ठति।
कायाग्निं दीप्तिं सौभाग्यं[4] लभते[5]चोत्तमां गतिम्[6]॥ 498॥

जो ऐसा करता है वह अच्छी तरह शत्रुओं को जीत लेता है। वह शरीराग्नि, दीप्ति, सौभाग्य और मरणोपरान्त उत्तम गति को प्राप्त करता है।। 498।।

पौष्यां तु समतीतायां कृष्णा या द्वादशी भवेत्।
तस्यामुपोषितः स्नातस्तिलै र्दत्वा तिलोदकम्॥ 499॥

कृत्वा तिलैश्च[7] नैवेद्यं तिलैर्होमं[8] तथैव च।
तिलाश्च देया विप्रेषु[9] सर्वपापापनुत्तये[10]॥ 500॥

पौष (मास की) पूर्णिमा के बीतने पर जो कृष्णा (कृष्णपक्ष की) द्वादशी आये उसमें उपवास (व्रत) रखकर और तिलों से स्नान करके तथा तिलों से भरा हुआ पानी देकर (छिड़ककर) तिलों से पूजाद्रव्य बनाकर और तिलों से ही हवन करके सारे पापों को दूर करने के लिए ब्राह्मणों को तिल प्रदान करने चाहिएं।। 499-500।।

---

1. *ब्राह्मणेभ्यश्च CG*
2. *अर्थं CGF*
3. *यथाशक्ति ECG*
4. *दीप्तिं CG, दीप्तसौभाग्यं F, कायाग्नि-DE*
5. *च परित्यक्त A*
6. *इति नीलमते उत्तरायणम् अतिरिक्त DEF, इति श्रीनीलमते उत्तरायणम् H इति श्रीनीलमतपुराणे उत्तरायणवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः। नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ADEF*
7. *तु DE*
8. *तिलहोमं CGH*
9. *विप्रेभ्यः CG*
10. *इति तिलद्वादशी अतिरिक्त DEF, इति श्रीनीलमतपुराणे तिलद्वादशीवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः।C*

Ed. Leiden v.v. 480b-483

तस्या स्त्वनन्तरं ब्रह्मन् या स्यात्कृष्णचतुर्दशी।
अनर्काभ्युदिते काले स्नातव्यं शीतले जले॥ 501॥

हे ब्राह्मण! उस (कृष्ण पक्ष की द्वादशी) के बाद जो कृष्ण चतुर्दशी हो उसमें सूर्योदय न होने के समय अर्थात् सूर्योदय होने से पहले ही शीतल जल में स्नान कर लेना चाहिए।॥ 501॥

वितस्तायां विशोकायां चन्द्रवत्यामथापि च।
तथा हर्षपथायां वा[1] त्रिकोट्यां वा द्विजोत्तम॥ 502॥

सिन्धुं प्राप्याथवा पुण्यां तथा कनकवाहिनीम्।
अन्यां वा सरितं पुण्यां ह्रदांश्चैव सरांसि च॥ 503॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! वितस्ता अथवा विशोका अथवा चन्द्रवती या हर्षपथा या त्रिकोटी नदी में अथवा पवित्र सिन्धु और कनकवाहिनी अथवा अन्य (किसी) पवित्र नदी, तालाब और झील में पहुँच कर स्नान करना चाहिए॥ 502-503॥

यमस्य नाम्ना[2] दातव्या[3] सप्तसप्त जलाञ्जली[4]।
एकैकेन[5] द्विजश्रेष्ठ तानि नामानि मे शृणु॥ 504॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ (स्नान करते समय) यम के (सात नामों में से) एक एक नाम के द्वारा सात सात जलाञ्जलियाँ दी जानी चाहिए। यम के उन (सात) नामों को मुझ से सुनो।॥ 504॥

---

1. *यह अन्य MSS, या A*
2. *नाम्ना AH, नाम DEF नामभि : CG*
3. *दद्यात् CG*
4. *जलाञ्लीन् CG*
5. *एकैकेन CG एकैकस्मिन् (मूलपाठ)*

यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च।
वैवस्वताय कालाय सर्वप्राणहराय च ॥ 505 ॥

यम के लिए, धर्मराज के लिए, मृत्यु के लिए, अन्तक के लिए, वैवस्वत के लिए, काल के लिए और सबके प्राणों के अपहर्ता के लिए (मेरी ये पृथक् पृथक् जलाञ्जलियाँ हैं) ॥ 505 ॥

स्नात्वा च पूजा कर्तव्या धर्मराजस्य वै तदा।
पुष्पैः धूपैस्तथा गन्धैः कृसरेण[1] च भूरिणा ॥ 506 ॥

और तब स्नान करके धर्मराज की पूजा पुष्पों, धूपों, सुगन्धित इत्रों और बड़ी मात्रा में (बनी हुई) खिचड़ी से करनी चाहिए ॥ 506 ॥

वह्निपूजा प्रकर्तव्या[2] घृतयुक्तैस्तथा[3] तिलैः।
कृसरं भोजनीयाश्च ब्राह्मणेन्द्राः[4] सदक्षिणम्[5] ॥ 507 ॥

और घृतसंयुक्त तिलों से अग्नि की पूजा करनी चाहिए। ब्राह्मणराजों को दक्षिणादानसहित खिचड़ी खिलानी चाहिए ॥ 507 ॥

एवं कृत्वा नरः शुद्धो[6] मुच्यते सर्वकिल्विषैः।
महापातकयुक्तश्चेन्न भवेत द्विजोत्तम ॥ 508 ॥

हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! ऐसा करके मनुष्य पवित्र होता हुआ सभी पापों से छूट जाता है। किन्तु यदि कोई महापातकों से युक्त व्यक्ति हो तो वह मुक्त नहीं होता। (ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरुस्त्री के साथ सम्भोग तथा ब्रह्महत्यारे आदि की सङ्गति में रहना ये पाँच महापातक कहलाते हैं) ॥ 508 ॥

महापातकिनां मोक्षः प्रायश्चित्तं विना कुतः[7] ॥ 509 ॥

---

1. 505 श्लोक के चान्तकाय से लेकर 506 के कृसरेण तक A में परित्यक्त
2. यह AH, च कर्तव्या अन्य MSS.
3. तदा ed. Leiden
4. ब्राह्मणाः A
5. सह दक्षिणम् A
6. यह CG, शुद्धे : A श्राद्ध DEF
7. यह A, इति नीलमते तारारात्रिः यह DE इति परित्यक्त F, इति श्रीनीलमते तारारात्रिः H इति श्रीनीलमतपुराणे पौषकृष्णचतुर्दश्यां तारारात्रिवर्णनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नीलः उवाच CG क्रिया परित्यक्त DEF

महापातकी मनुष्यों का मोक्ष बिना प्रायश्चित्त (पाप से छुटकारा पाने के लिए किया जाने वाला अनुष्ठान) किये कैसे हो सकता है ॥ 509 ॥

श्रवणेन युता सैव यदि पञ्चदशी भवेत्।
तस्यां स्नानादिकं[1] सर्वं चा[2]क्षयं परिकीर्तितम्[3] ॥ 510 ॥

यदि (पौष मास के कृष्णपक्ष की) पञ्चदशी श्रवण नक्षत्र से युक्त हो तो उसमें किये गये स्नान आदि सभी अक्षय (पुण्य वाले) कहे जाते हैं ॥ 510 ॥

माघे[4] मासि सिते पक्षे चतुर्थी या भवेद् द्विज[5]।
उमासम्पूजनं कार्यं तस्यां सौभाग्यमीप्सुना ॥ 511 ॥

दीपान्नमाल्यधूपैश्चाप्यार्द्रकेण[6] गुडेन च।
कुसुम्भलवणाभ्यां च[7] कुङ्कुमाञ्जनकङ्कतैः[8] ॥ 512 ॥

कुन्दपुष्पैः समानीतैः प्रयत्नादपि काश्यप[9]।
पूज्याश्च सुभगास्तत्र योषितस्तु[10] पतिव्रताः ॥ 513 ॥

यासां जीवन्ति नाथाश्च स्वसृप्रभृतयश्च याः।
तथैवाश्वयुजे मासि तथा ज्येष्ठे[11] च[12] कारयेत् ॥ 514 ॥

---

1. *स्नानाधिकं AF*
2. *च A*
3. *श्रवणमाघस्या अतिरिक्त A, नीलमते श्रवणामावस्या DE इति-F, इति श्री H, इति श्रीनीलमतपुराणे श्रवणपञ्चदशीवर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः इसके बाद नील उवाच C क्रिया परित्यक्त DEF*
4. *माघमासि DEF*
5. *द्विजो भवेत् D*
6. *आर्द्रकेन A, ह्यार्दकेन H,*
7. *परित्यक्त H*
8. *कुसुमाञ्जनकङ्कतैः F*
9. *कश्यप A*
10. *च H*
11. *ज्यैष्ठै A*
12. *अपि CG*

हे ब्राह्मण! माघ मास में (आने वाले) शुक्ल पक्ष में जो चतुर्थी हो उसमें सौभाग्य की कामना करने वाले उपासक को दीपकों, अन्नों, मालाओं, धूपों और अदरक, गुड़, कुसुम्भ पुष्प, नमक, केसर, काजल और कंघों तथा प्रयत्नपूर्वक भी लाये कुन्दपुष्पों से उमा (पार्वती) देवी की पूजा करनी चाहिए। हे कश्यप गोत्र के वंशज! वहाँ (उपस्थित) सौभाग्यवती, पतिव्रता और जिनके पति जीवित हों और बहन आदि स्त्रियों का पूजन करना चाहिये उसी प्रकार का पूजन आश्विन और ज्येष्ठ मास में करवाये॥ 511–514॥

सर्वाश्चतुर्थी:[1] श्रद्धावांश्चतुर्थीत्रितयं ध्रुवम् ।
कारयेत नरो[2] ब्रह्मन् नारी कुर्याद्विशेषत:[3] ॥ 515॥

हे ब्राह्मण! श्रद्धालु मानव सारी चतुर्थियों और (माघ, आश्विन और जेठ मास की) तीन चतुर्थियों को निश्चित रूप से मनाये। नारी विशेष रूप से इन्हें मनाये (ही)॥ 515॥

पौर्णमास्यां तु माघस्य श्राद्धं कृत्वा तिलैर्नर:।
काकानां भोजनं दद्यात् प्रभूतं[4] बलिसंयुतम्[5] ॥ 516॥

माघ की पूर्णिमा में तिलों से श्राद्ध करके मनुष्य कौवों के लिए बलि युक्त भोजन प्रचुर मात्रा में प्रदान करे॥ 516॥

माघ्यां तु समतीतायामष्टम्यां तु[6] दिनत्रयम्।
कार्यं स्वल्पमहीमानं विधिं तस्य निबोध मे ॥ 517॥

माघ की पूर्णिमा के बीत जाने पर और अष्टमी के आने पर तीन दिन तक जो अल्प समार्थ्य से किये जाने वाला (छोटा) उत्सव है उसकी विधि मुझ से जान लो॥ 517॥

---

1. *चतुर्थ्य: AH*
2. *ततो CDEFG*
3. *नीलमते चतुर्थ्य : अतिरिक्त ADEF इतिश्री-H इति श्रीनीलमतपुराणे चतुर्थीत्रितयवर्णनं नाम पञ्चदशोऽध्याय: तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ADEF*
4. *प्रभूत-D*
5. *माघी पूर्णिमा अतिरिक्त A इति नीलमते काकबलि: DE, इति परित्यक्त F, नीलमतपुराणे माघीवर्णनं नाम षोडशोऽध्याय: तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त DEF*
6. *अष्टम्यादि CG*

चतुर्विंशतिसंख्यायां त्रेतायां[1] रघुनन्दनः।
हरिर्मनुष्यो भविता रामो दशरथात्मजः॥ 518॥

चौबीस संख्या वाले अर्थात् चौबीसवें त्रेतायुग में विष्णु रघुवंश के प्रिय (पुत्र) अर्थात् रघुकुलोत्पन्न दशरथ के पुत्र राम मनुष्य (के रूप में) राम (उत्पन्न) होंगे॥ 518॥

तस्मात्कालात्परं कार्यं महीमानं तथाल्पकम्[2]
तस्मादेवापरं कार्यं महीमानं तथा बृहत्॥ 519॥

उस काल से लेकर आगे तक (पहले की भाँति) अष्टमी में छोटे सामर्थ्यानुसार छोटा उत्सव मनाना चाहिए। इसके बाद बड़ा सामर्थ्य जुटाकर बड़ा उत्सव भी मना लेना चाहिए॥ 519॥

अष्टम्यां सर्वसस्यैस्तु चरुः कार्यः प्रयत्नतः।
तेनापूपैस्तथा पूज्या द्विज[3] सम्बन्धिबान्धवाः॥ 520॥

इसी अष्टमी में सारे अनाजों से प्रयत्नपूर्वक (उबले अन्नों से बनी) लप्सी (पतली खिचड़ी) बनानी चाहिए। उस (चरु) से और मालपूड़ों से ब्राह्मणों, सम्बन्धियों और भाई भतीजे आदि की पूजा करना चाहिए॥ 520॥

रामपत्नी तथा पूज्या सीता देवी प्रयत्नतः॥ 521॥

और राम की पत्नी सीता देवी की प्रयत्नपूर्वक पूजा करनी चाहिए॥ 521॥

नवम्यां पिष्टभोज्येन[4] मधुयुक्तेन भोजयेत्।
ब्राह्मणाद्यान् यथाशक्ति पूजनीया[5] करीषिणी[6] ॥ 522॥

नवमी में शहद मिले आटे के भोज्य पदार्थों वाला भोजन ब्राह्मणों को अपने सामर्थ्य के अनुसार खिलाना चाहिए और करीषिणी (सम्पत्ति की अधिष्ठात्री) देवी की पूजा करनी चाहिए॥ 522॥

---

1. *ससीतो A*
2. *अथाल्पकम् CGH*
3. *द्विजाः CHG*
4. *पिष्टभोजेन A*
5. *यह A, पूजयेत अन्य MSS*
6. *यह A, करीषिणीम् अन्य MSS*

बहुप्रकारसंयुक्तं दशम्यामोदनं ततः।
कारयेत्तेन सम्पूज्या द्विजमित्रा[1]नुयायिनः ॥ 523 ॥

उसके बाद दशमी में अनेक प्रकार के पके हुए चावल बनवाये। इस भात से ब्राह्मण, मित्र और सेवकों की पूजा करनी चाहिए॥ 523 ॥

आत्मपूजा प्रकर्तव्या[2]श्रोतव्यं गीतवादितम्[3] ।
मङ्गलालभनं[4]कार्यं नित्यमेव दिनत्रयम्[5] ॥ 524 ॥

मनुष्य को स्वयं अपनी पूजा करनी चाहिए और गीत और वाद्य उभय-विध सङ्गीत सुनना चाहिए और तीन दिन तक सदैव मङ्गलकारी वस्तुओं का स्पर्श करना चाहिए॥ 524 ॥

सैव चेच्छ्रवणोपेता भविता[6] द्वादशी द्विज।
सोपवासो हरिं देवं तस्यां सम्पूजयेद् बुधः[7] ॥ 525 ॥

हे ब्राह्मण! वही द्वादशी यदि श्रवण नक्षत्र से युक्त हो तो उसमें बुद्धिमान् व्यक्ति उपवास रखने वाला होकर विष्णु देव की उपासना करे॥ 525 ॥

तिलवच्च तथा तस्यां पूर्वोक्तं कर्म कारयेत्।
सर्वं तदक्षयं तस्यां कृतं भवति मानद[8] ॥ 526 ॥

और उसमें पहले बतलाई हुई विधि से तिलों से पूजा कर्म करे। हे देवताओं के सम्मान को करने वाले ब्राह्मण! उस द्वादशी में जो किया जाता है वह सारा अनश्वर होता है॥ 526 ॥

---

1. *यह H, द्विजभिः प्रनुयांयिनः A*
2. *यह AE, च कर्त्तव्या DECG*
3. *गीतवादिकम् A*
4. *मङ्गलम्भनं CGH*
5. *नीलमते महीमानम् अतिरिक्त DEF, महीमानं A, इति श्रीनीलमतपुराणे महीमानवर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त DEF*
6. *यह A या, च स्यात् अन्य MSS*
7. *द्विजः DEFCGH*
8. *श्रवणद्वादशी A नीलमते श्रवणद्वादशी DEF इति श्री..........H, इति श्रीनीलमतपुराणे फाल्गुणश्रवणद्वादशीनाम अष्टादशोऽध्यायः त्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ADEF*

तस्यां तु समतीतायां या स्यात्कृष्णचतुर्दशी।
तस्यामुपोषितः स्नातः[1] पूजयेच्च[2] महेश्वरम् ॥ 527 ॥

और उस (द्वादशी) के बीतने पर जो कृष्ण (पक्ष की) चतुर्दशी हो उसमें उपवास (व्रत) रखकर और स्नान करके महेश्वर (महादेव शिव) की पूजा करे ॥ 527 ॥

धृतकम्बलहीनं तु[3] लिङ्गं संस्नापयेद्[4] बुधः ।
देवोत्थानविधानोक्तै[5]र्द्रव्यैश्च विधिना ततः[6] ॥ 528 ॥

उसके बाद बुद्धिमान् उपासक धारण किये हुए कम्बल से रहित अर्थात् पहले ओढ़ाये हुए कम्बल को उतार कर वस्त्रहीन (शिव) लिङ्ग की (पहले) बताये हुए देवोत्थान (देवजागरण) के नियमों, पदार्थों और विधि के द्वारा पूजा करे ॥ 528 ॥

सम्पूज्य गन्धमाल्यादिरक्तवस्त्रानुलेपनैः।
नैवेद्यैर्विविधै[7] र्ब्रह्मन् वह्निब्राह्मणतर्पणैः ॥ 529 ॥

भक्त्या[8] रात्रौ ततः[9] कार्यः[10] नृत्तगीतैः प्रजागरः[11]
श्रोतव्याः[12] शिवधर्मा[13]श्च प्रादुर्भावाश्च तत्कृताः ॥ 530 ॥

---

1. *स्नात्वा CGH*
2. *पूतयेच्च A, पूजयेत H*
3. *वृतकम्बल —A*
4. *संस्नपयेद् CG*
5. *देवोत्थानविधानेन A*
6. *विधिना तथा CG विधिपूर्वकम् H*
7. *विधिवद् H*
8. *यह A भुक्त्वा अन्य MSS*
9. *तथा DE, तदा CG*
10. *कार्यो CG कार्यं मूलपाठ*
11. *प्रजागरः CG प्रजागरम् मूलपाठ*
12. *श्रोतव्यः E*
13. *शिवधर्मश्च E*

हे ब्राह्मण! गन्ध माला आदि, लाल वस्त्र और (चन्दनादि के) लेपों, अनेक प्रकार के पूजाद्रव्यों, अग्नि और ब्राह्मणों के तर्पणों के द्वारा उसकी पूजा करके उसके बाद मनुष्य को रात्रि में गीतों और नाचों के साथ भक्तिपूर्वक जागरण करना चाहिए। उसे भगवान् शिव के गुणों और उनके द्वारा लिये गये अवतारों (की कहानियों) को सुनना चाहिए॥ 529–530॥

पैष्टाश्च पशवः कार्या नैवेद्ये[1] शङ्करस्य च।
पञ्चदश्यां च सम्पूज्य[2]स्तत्रापि द्विजसत्तम[3] ॥ 531॥

कुल्माषलोपिकामिश्रं[4] भोक्तव्यं भोजनं तदा[5]।
तस्मिन् मासे[6] ध्रुवं पूज्यो[7] देवः[8]कृष्णचतुर्दशीम्[9] ॥ 532॥

इच्छया पूजनीयः[10] स्याच्[11]छेषमासेषु वा न वा।
सम्पूज्य रुद्रलोकस्थो गाणपत्यमवाप्नुयात्[12] ॥ 533॥

और हे सद्ब्राह्मणों में श्रेष्ठ! शङ्कर के भोज्य पूजाद्रव्यों के लिए आटे से पशुओं का निर्माण करना चाहिए। उसके बाद पञ्चदशी में भी शिव की पूजा करनी चाहिए उस (उत्सव) में भी तब अधपके जौ और रेवड़ी, तिलसकड़ी आदि से युक्त भोजन खाना चाहिए। उस महीने में कृष्णचतुर्दशी को महादेव शङ्कर की अवश्य पूजा करनी चाहिए। और बाकी महीनों में इच्छानुसार उसकी पूजा करनी चाहिए अथवा उनकी न भी पूजा की जाए। (इस प्रकार मनुष्य शङ्कर) की पूजा करके मरणोपरान्त रुद्रलोक में स्थित होकर गणपति का पद (शिवत्वपद) पा लेता है।)॥ 531–533॥

1. *नैवेद्या A, नैवेद्यं H*
2. *यह A, सम्पूज्यः तत्रापि में सन्धि परित्यक्त सम्पूज्याः CG*
3. *द्विजपुङ्गव CGDEF*
4. *कुल्माषलेपिकामिश्रं CFGH*
5. *तथा H*
6. *मासि CGH*
7. *पूजा C पूज्या GH*
8. *राजन् CG देव H*
9. *कृष्णचतुर्दशी ACG*
10. *पूजनीयाः CG पूजनीया ADEH*
11. *स्युः CG*
12. *नीलमते शिवरात्रिः F इति—DE इति श्रीनीलमतपुराणे शिवरात्रिवर्णनम् तत्पश्चात् नील उवाच CG, क्रिया परित्यक्त DEF*

फाल्गुणस्य च[1] मासस्य शुक्लपक्षे द्विजोत्तम।
महीमानं यथा कार्यं तथा मे गदतः शृणु॥ 534॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष में जिस (विधि) से बड़ा उत्सव करना है वह मुझ वक्ता से सुनो॥ 534॥

अनश्नद्भिरथा[2]ष्टम्यां नरैः स्नातैरलङ्कृतैः।
प्रदोषसमये देया दीपिका[3]स्तु हिमोपरि ॥ 535॥

इसके बाद भोजन न करने वाले अर्थात् व्रत धारण करने वाले तथा स्नान किये और सजे धजे मनुष्यों को रात्रि के प्रारम्भ काल में बर्फ के ऊपर छोटे छोटे दीपक रखने चाहिएँ।॥ 535॥

देवतानां पितृणां च भोक्तव्यं तदनन्तरम्।
द्वितीयेऽहनि मध्याह्ने धान्यदामैः[4]सुशोभनैः ॥ 536॥

पूजनीया गृहा विप्र देवागारा विशेषतः।
तदा सीता[5] च सम्पूज्या गन्धमाल्याभिस्तथा॥ 537॥

उसके बाद देवताओं और पितरों को भोजन कराना चाहिए। हे ब्राह्मण! अगले दिन दोपहर को अनाजों से बनी सुन्दर मालाओं से गृहों की पूजा करनी चाहिए और विशेष रूप से देवमन्दिर का पूजन करना चाहिए और उसके बाद गन्ध तथा माला आदि से सीता देवी की अच्छी तरह पूजा करनी चाहिए॥ 536-537॥

1. *यह A, अन्य MSS*
2. *यह AH, स्तथा DEF*
3. *यह AH, स्तथा, दीपका अन्य MSS*
4. *धान्यधानैः का संशोधित रूप · धान्यधामैः F, धान्यधामैः DE धान्यकूटैः CG*
5. *सूताः C*

अनन्तरं च भोक्तव्यं भोजनं च विशेषवत्[1]।
उत्सवं[2] चैव कर्तव्यं गीतनृत्तसमाकुलम्[3] ॥ 538 ॥

उसके बाद विशेष (हलुआ आदि) पदार्थों से युक्त भोजन खाना चाहिए तथा गीत, नृत्त (नाच) से युक्त उत्सव मनाना चाहिए ॥ 538 ॥

नित्यदानं सपक्वान्नमृते तस्मिन् दिने सदा।
नान्यत् किञ्चित् प्रदातव्यं लब्धं ग्राह्यं प्रयत्नतः ॥ 539 ॥

उस दिन सदा पके हुए अन्न के सिवाय और किसी वस्तु का दान नहीं करना चाहिए और बाहर से (उपहार स्वरूप) जो कुछ प्राप्त हो उसे प्रयत्नपूर्वक ग्रहण कर लेना चाहिए ॥ 539 ॥

द्वितीयेऽहनि कर्तव्यं प्रतिकर्म तथात्मनः।
मङ्गलालभनं[4] कार्यं चोत्सवं[5] च विशेषतः[6] ॥ 540 ॥

अगले दिन अपने आपको सजाना चाहिए, मङ्गलकारी वस्तुओं का स्पर्श करना चाहिए और विशेष रूप से उत्सव मनाना चाहिए ॥ 540 ॥

आश्रितानां द्विजानां च[7] शिल्पिसम्बन्धिनां[8] तथा।
तस्मिन्नहनि दातव्यं ग्राह्यं चैवाप्युपायनम् ॥ 541 ॥

उस दिन अपने आश्रय में रहने वालों, ब्राह्मणों, कारीगरों और सम्बन्धियों को दान देना चाहिए और उनसे भेंट (उपहार) भी ग्रहण कर लेना चाहिए ॥ 541 ॥

---

1. *यह अन्य MSS, विशेषवित् A*
2. *तत्सर्वं CG*
3. *नृतगीतसमाकुलम् G*
4. *मंगलालम्भनं CG*
5. *तत्सर्वं CGDE*
6. *यह A, विशेषवत् अन्य MSS*
7. *यह A, द्विजातीनां अन्य MSS*
8. *शिल्पसम्बन्धिनां H*

मद्यं तु मद्यपैः[1] पेयं[2] ब्राह्मणैः पानकाः शुभाः।
शय्यास्थानं च कर्तव्यं धूपगन्धाधिवासितम्[3] ॥ 542॥

शराबियों को शराब पी लेनी चाहिए और ब्राह्मणों को पवित्र पेय वस्तुएं पीनी चाहिएं तथा शयनस्थान को धूप और गन्ध से सुगन्धित करना चाहिए॥ 542॥

तस्मिन्नहनि न[4] कार्यो[5] विमुखः कश्चिदेव तु।
स्त्रीभिर्भाव्यं प्रहृष्टाभिः सुवस्त्राभिस्तथैव च[6]॥ 543॥

स्वाशिताभिः सुगन्धाभिः स्वनुलिप्ताभिरेव[7] तु[8]।
भूषणैर्भूषिताभिश्च क्रीडितव्यं नरैः सह[9] ॥ 544॥

उस दिन किसी को भी प्रतिकूल (नाराज़) नहीं करना चाहिए। स्त्रियों को प्रसन्न, सुन्दर वस्त्र धारण करने वाली, अच्छा भोजन करने वाली, सुगन्धयुक्त चन्दनादि के लेप वाली और अलङ्कारों से अंलकृत होना चाहिए और उन्हें आदमियों के साथ खेलना चाहिए ॥ 544॥

फाल्गुण्या[10]स्तु ततो रात्रौ प्राप्ते चन्द्रोदये शुभे।
पूजा कार्या शशाङ्कस्य[11] अर्यम्णश्चाप्यनन्तरम् ॥ 545॥

---

1. *मध्यं मध्यपैः : A*
2. *पीयं A*
3. *धूपगन्धातिवासितम् EF, धूपगन्धादि-H*
4. *नो CG*
5. *कार्यं A*
6. *स्वनुलिप्ताभिरेव E तु परित्यक्त H*
7. *सुवस्त्राभिस्तथैव E*
8. *यह AH, च EFCG*
9. *महीमानवर्णनम् अतिरिक्त A, इति नीलमते महीमानवर्णनम् DE इति नीलमते महीमानम् H, इति परित्यक्त F, इति श्रीनीलमतपुराणे महीमानवर्णनं नाम विंशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त*
10. *फालगुण्यां CFG*
11. *शशाङ्कस्यापि ECG*

उसके बाद फाल्गुणी पूर्णिमा की रात्रि में शुभचन्द्रोदय का समय आने पर पहले चन्द्रमा की पूजा करनी चाहिए उसके बाद सूर्य का भी पूजन करना चाहिए ॥ 545 ॥

गीतैर्नृत्तैस्तथा वाद्यै[1] रात्रौ कार्यः प्रजागरः।
द्वितीयेऽह्नि ततः प्राप्ते प्रेक्षा देया द्विजोत्तम ॥ 546 ॥

नर्तकानां नटानां च चारणानां[2] तथैव च।
तावदेतद् भवेत् कार्यं यावत्स्यात् कृष्णपञ्चमी ॥ 547 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! गीतों, नाचों और वाद्य के सङ्गीतों के साथ रात्रि में जागरण करना चाहिए। उसके बाद दूसरे दिन के आने पर नर्तकों, कलाकारों और चारणों (भाटों) की कलाओं का प्रदर्शन करना चाहिए। जब तक कृष्णपक्ष की पञ्चमी आ जाये तब तक यह कार्य करते जाना चाहिए ॥ 546-547 ॥

भोजनं पर्पटप्रायं भोक्तव्यं दिनपञ्चकम्।
प्रतिकर्म तथा कार्यं स्त्रीजनस्य तथात्मनः[2] ॥ 548 ॥

पर्पट नामक औषधि से भरा हुआ भोजन पाँच दिनों तक खाना चाहिए और स्त्रीगण का और अपना शृंगार करनी चाहिए ॥ 548 ॥

तस्यामेव तु पञ्चम्यां कश्मीरा तु रजस्वला।
यस्माद् भवति कर्तव्या तस्याः पूजा ततो द्विज[3] ॥ 549 ॥

हे ब्राह्मण! क्योंकि उसी (कृष्णपक्ष की) पञ्चमी में कश्मीरा देवी रजस्वला हो जाती है इसलिए उसकी पूजा करनी चाहिए॥ 549 ॥

रम्या शैलमयी[4] कार्या कश्मीरा तां च पूजयेत्।
अभ्यङ्गवस्त्रदानेन नैवेद्यं च निवेदयेत्॥ 550 ॥

---

1. *वाद्यैः A*
2. *वारणानां A*
3. *फाल्गुण्यः अतिरिक्त A नीलमते फाल्गुणी EF, इति श्रीनीलमतपुराणे फाल्गुणपौर्णमासीवर्णनं नाम एकविंशोध्यायः तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त DEF*
4. *शिलामयी CG*

कश्मीरा देवी की सुन्दर प्रस्तरमूर्ति बनानी चाहिए और उपासक उसकी पूजा करे। उसको मालिश और वस्त्रप्रदान करने के साथ पत्र, पुष्प फलादि पूजाद्रव्य समर्पित करे॥ 550॥

पुष्पधूपाद्यलङ्कारं न दातव्यं दिनत्रयम्।
नैवेद्ये गोरसं सर्वं[1] वर्जनीयं द्विजोत्तम ॥ 551॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! फूल, धूप आदि एवं सजावट की वस्तुएँ उसे तीन दिन तक नहीं प्रदान करनी चाहिए और पूजा द्रव्य के रूप में गोनिर्मित दूध, दही आदि सभी वस्तुएँ निषिद्ध हैं ॥ 551॥

स्त्रीभिस्तु पूजा कर्तव्या मानुषैर्न[2] कथंचन।
स्नाप्या स्त्रीभि र्भवेद् देवी कृष्णपक्षाष्टमीं तु तां ॥ 552॥

स्त्रियों के द्वारा तो उसकी पूजा की जानी चाहिए किन्तु किसी भी प्रकार से मनुष्यों के द्वारा उसका पूजन नहीं होना चाहिए। उस कृष्णाष्टमी को स्त्रियों के द्वारा (कश्मीरा) देवी को स्नान कराना चाहिए ॥ 552॥

अनन्तरं द्विजैः स्नाप्या सर्वौषधियुतैर्घटैः।
ततो गन्धैस्ततो बीजैस्ततो रत्नैस्ततः फलैः ॥ 553॥

स्नापयित्वा च तां देवीं गन्धैर्माल्यैश्च पूजयेत्[3]
वस्त्रालङ्करणैश्चान्नै[4] र्विशेषै र्गोरसोद्भवै[5] ॥ 554॥

उसके बाद सारी औषधियों से युक्त घटों (के जलों) से ब्राह्मणों के द्वारा उसको नहलाना चाहिए। उसके पश्चात् सुगन्धों, बीजों, रत्नों और फलों से (जल छिड़क कर) उसका स्नान कराकर उस देवी की सुगन्धों और मालाओं,

1. यह *ADF*, *नैवेद्ये गोरसयुक्तं G*, *नैवेद्ये गोरसयुक्तं C*, *नैवेद्ये गोरसं सर्वं BF*, *नैवेद्ये गोरसमयं H*
2. *न मनुष्यैः DEH*, *न नरैस्तु कदाचन CG*
3. *यह पूजनम् का संशोधित रूप F*
4. *चान्यैः B*
5. *गोरससम्भवैः D*

वस्त्रों अलङ्कारों, अन्नों और गोदुग्ध से उत्पन्न विशेष खीर मिठाई आदि पदार्थों से पूजा करनी चाहिए ॥ 553–554 ॥

मौद्गैर्माषै स्त्रिकोणै[1]श्च तथा तण्डुलशालिभिः।
कर्तव्यं देवयजनं बन्धूनां चैव दापयेत्॥ 555 ॥

पिसी हुई मूँग और उड़द से बने हुए त्रिकोणात्मक पदार्थों और चावलों और मूँजों (छिलके समेत चावलों) से देवों की पूजा करनी चाहिए और सगे सम्बन्धियों को भी इन्हें देना चाहिए॥ 555 ॥

वह्निपूजा च कर्तव्या कर्तव्यं द्विजपूजनम् ॥ 556 ॥

और अग्निपूजा करनी चाहिए तथा ब्राह्मण पूजन करना चाहिए॥ 556 ॥

सुस्नाताभिः प्रहृष्टाभिः स्वाशिताभिर्द्विजोत्तम।
स्त्रीभिर्भाव्यं सुगन्धाभिः सुवस्त्राभिश्च तद्दिनम्॥ 557 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! उस दिन स्त्रियाँ अच्छी तरह से नहाई हुई आनन्दित, भरपेट भोजन करने वाली, उत्तम गन्ध (लगाने) वाली, और सुन्दर वस्त्रों को धारण करने वाली होनी चाहिएं॥ 557 ॥

भोजनं प्रेषणीयं च तथा मित्रगृहे द्विज।
तन्त्रीवाद्यं सुमधुरं[2] श्रोतव्यं स्वाशितैः[3] सुखम्[4] ॥ 558 ॥

और हे ब्राह्मण! मित्रों के घर में भोजन भेजना चाहिए। खूब खाकर सुखपूर्वक सुमधुर वीणावादन को सुनना चाहिए ॥ 558 ॥

---

1. *यह AH, पेष्टैः अन्य MSS.*
2. *च मधुरं BDF*
3. *यह CG स्वाशितः अन्य MSS.*
4. *नीलमते राज्ञीस्नापनम् अतिरिक्त ABDEF, इति श्री–H, इति श्रीनीलमतपुराणे कश्मीराख्यराज्ञीस्नपनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEF*

Ed. Leiden v.v. 535b-538

ततः प्रभृति कश्मीरा ऋतुस्नाता द्विजोत्तम।
गर्भं गृह्णात्यतः कार्यं[1] कृष्यारम्भं[2] ततः परम् ॥ 559॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! रजस्वला होने पर स्नान करने पर कश्मीरा देवी उस समय से लेकर आगे तक गर्भ धारण करती है इसलिए उसके बाद कृषि के आरम्भ करने का पर्व मनाना चाहिए॥ 559॥

दिने दैवज्ञनिर्दिष्टे[3] क्षेत्रं कृत्वा सुहृद्वृतः।
पूजयेत् पृथिवीं देवीं गोयुगं सुरभिं हलम्[4] ॥ 560॥

ज्योतिषी के द्वारा बताये हुए दिन में खेत को तैयार करके मित्रों से घिरा हुआ कृषक पृथिवी देवी, बैलों की जोड़ी, गाय और हल की पूजा करे ॥ 560॥

बलदेवं[5] महादेवं वामदेवं दिवाकरम्।
औषधीशं निशानाथं पर्जन्येन्द्रौ प्रचेतसम्[6] ॥ 561॥

रामं सलक्ष्मणं सीतां शेषं च धरणीधरम्।
ब्रह्माणं[7] कश्यपं वह्निं वायुं गगनमेव च ॥ 562॥

माल्यैर्गन्धैस्तथा धूपै[8] र्नैवेद्यैश्च पृथक् पृथक् ॥ 563॥

बलदेव (कृष्ण के बड़े भाई) महादेव (शिव) वामदेव (प्रेम के देवता कामदेव) सूर्य, औषधियों के देवता चन्द्रमा, मेघ, इन्द्र, वरुण, लक्ष्मण सहित राम, सीता, पृथिवी को धारण करने वाले शेषनाग, ब्रह्मा, कश्यप, अग्नि, वायु और आकाश की मालाओं, गन्धों और धूपों तथा पूजा द्रव्यों से पृथक् पृथक् पूजा करनी चाहिए ॥ 561-563॥

1. *कार्यः CG*
2. *कृष्यारम्भः CG*
3. *दैवज्ञनिर्दिष्टं B*
4. *हयम् (मूलपाठ) ततः B हलम् H*
5. *यह CG, बालदेवं A, जलदेवं BDE*
6. *परित्यक्त A*
7. *ब्राह्मणं A*
8. *तु धूपश्च A*

वह्निसम्पूजनं कार्यं ततो ब्राह्मणपूजनम्
ब्राह्मणानां ततो देया दक्षिणा वित्तशक्तितः ॥ 564 ॥

अग्नि का पूजन करना चाहिए उसके बाद ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए। उसके अनन्तर धन की शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को दक्षिणायें देनी चाहिएँ ॥ 564 ॥

ततस्तु वापयेद् बीजं पुरुषो[1] लक्षणान्वितः।
स्वाशितश्च सुवस्त्रश्च स्वनुलिप्तः[2] स्वलङ्कृतः ॥ 565 ॥

उसके बाद (अपने शरीर पर) शुभलक्षणों (चिह्नों) वाला पुरुष अच्छी तरह खाकर, अच्छे वस्त्र धारण कर चन्दनादि के लेप से युक्त और अच्छे अलङ्कारों को पहनकर बीज को बोये ॥ 565 ॥

बीजं सुवर्णतोयाक्तं ससुवर्णं च वापयेत्।
पुण्याहे[3] द्विजघोषेण वाद्यशब्देन भूरिणा ॥ 566 ॥

किसी शुभ दिन में सोने के पानी से भीगे हुए और लगे हुए सोने वाले बीज को ब्राह्मणों की (मङ्गल) ध्वनि और बाजों के ऊँचे स्वर के साथ (खेत में) बोये ॥ 566 ॥

हलेन[4] वाहयेद् भूमिं पूर्वं प्राक् प्रवणां शुभाम्।
स्वलङ्कृतेन भोक्तव्यं क्षेत्रमध्ये तदा[5] द्विज ॥ 567 ॥

सुहृद्भार्याश्रितैः सार्धं वाद्यशब्दै र्मनोहरैः[6]
उत्सवं[7] चैव कर्तव्यं गीतनृत्तसमाकुलम्[8] ॥ 568 ॥

---

1. पुरुषं पद तथा उसके विशेषण द्वितीयान्त CG
2. यह CG, स्वानुलिप्तः अन्य MSS
3. यह A पुण्याहं D, पुण्याहद्विजघोषेण C, पुण्याह-GH
4. फलेन BD, तदा A
5. यह A तथा CGDEH
6. मनोरमैः B, मनोहरैः A
7. तत्सर्वं BDEG
8. नीलमते कृष्यारम्भः ABCDEF इति— H इति नीलमते कृष्यारम्भवर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशोध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त BDEFD

हे ब्राह्मण! (सबसे) पहले किसान प्रारम्भ से ही समतल बनाकर तैयार की गई मङ्गलकारिणी भूमि को हल से जोते। तथा (उसके बाद) तब खेत के बीच में खूब सजधज कर मित्रों, पत्नी और आश्रितों के साथ उसे भी भोजन करना चाहिए सुन्दरवाद्य शब्दों से युक्त और संगीत और नाच से भरपूर उत्सव मनाना चाहिए॥ 567-568 ॥

फाल्गुण्यां समतीतायां या द्विजैकादशी भवेत्।
तस्यां[1] स्त्रीभिर्भवेत् पूज्यश्छन्दोदेव इति स्मृतः[2]॥ 569॥

हे ब्राह्मण! फाल्गुन मास की पूर्णिमा के बीतने पर जो एकादशी हो उसमें छन्दोदेवता ही पूजा के योग्य होता है ऐसा कहा गया है॥ 569॥

मनुष्यैस्तु न[3] कर्तव्या तस्य[4] पूजा कदाचन[5]।
ब्रह्मणो वरदानेन स्त्रीभिः पूजामवाप्तवान्[6]॥ 570॥

मनुष्यों के द्वारा कभी भी उसकी पूजा नहीं की जानी चाहिए क्योंकि वह ब्रह्म के वरदान के कारण स्त्रियों के द्वारा (ही) सम्पन्न की जाने वाली पूजा को प्राप्त कर पाया था॥ 570॥

जलोद्भवानां मांसेन भक्ष्यै[7]रुच्चावचैस्तथा।
माल्यैर्धूपैश्च विविधैः कुङ्कुमेन[8] सुगन्धिना॥ 571॥

उसकी पूजा जल में उत्पन्न मछली आदि प्राणियों के मांस, ऊँची और निचली किस्म के अनेक खाद्य पदार्थों, मालाओं, धूपों और सुगन्धित केसर से करनी चाहिए॥ 571॥

---

1. *यह ACG तस्या : BDEF*
2. *श्रुत : CG*
3. *यह अन्य MSS च A, नरैस्तु सा न CG*
4. *यह अन्य MSS, तस्या A, तस्या : B*
5. *यह AH, कथंचन अन्य MSS*
6. *अवाप्नुयात् E*
7. *भक्तै : BD*
8. *कुसुमेन B*

एवं सम्पूजनं कृत्वा द्वादश्यां पूजयेद् बुधः॥ 572॥

इस प्रकार पूजा करके बुद्धिमानों को द्वादशी को उसकी (पुनः) पूजा करनी चाहिए॥ 572॥

द्वारेणादौ[1] विनिष्क्राम्य[2] गवाक्षेण प्रवेशयेत्
स्ववेश्मतो यथाकामं स्थापयेत तदा द्विज[3]॥ 573॥

हे ब्राह्मण! प्रारम्भ में दरवाज़े (के रास्ते) से अपने घर के बाहर निकालकर रोशनदान से फिर अन्दर प्रवेश कराये फिर इच्छानुसार उसकी यथोचित स्थान में स्थापना करे ॥ 573॥

ततश्चतुर्दशीं प्राप्य तामेव द्विजपुङ्गव।
सम्पूज्य शङ्करं कार्यं रात्रौ[4] तु महदु[5]त्सवं[6]॥ 574॥

हे उत्तम ब्राह्मण! उसके बाद उसी चतुर्दशी को शङ्कर की पूजा करके रात्रि में बहुत बड़ा उत्सव करना चाहिए ॥ 574॥

तस्यां विप्र चतुर्दश्यां निकुम्भः शङ्करं तदा[7]
सम्पूजयति धर्मात्मा सानुयात्रो महाबलः॥ 575॥

हे ब्राह्मण तब उस चतुर्दशी में धर्मात्मा, सहानुयायियों समेत महाबलशाली निकुम्भ शङ्कर की पूजा करता है॥ 575॥

---

1. *यह अन्य MSS, द्वारेणाजौ : A*
2. *यह A, विनिष्काल्य DEFH विनिष्कास्य BCG*
3. *इति नीलमते छन्दोदेवपूजा BDEFH, इति श्रीनीलमतपुराणे छन्दोदेवपूजावर्णनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त BDEF*
4. *कार्यो रात्रौ CG, रात्रौ कार्यो B*
5. *सुमहद् CGBD, च महद् F*
6. *उत्सवः CG*
7. *सदा CG, तथा H*

तस्यां तदा प्रकर्तव्यं[1] निशि नित्यं[2] प्रजागरम्[3]।
पूजा च देवदेवस्य शम्भोः कार्या प्रयत्नतः॥ 576॥

तब उस रात्रि में नित्य जागरण करना चाहिए और देवों के देव भगवान शम्भु की प्रयत्नपूर्वक पूजा करनी चाहिए॥ 576॥

पूजनीयो निकुम्भस्तु[4] पिशाचाधिपतिर्बली।
पिशाचानां च दातव्या बलयश्च सुसंस्कृताः॥ 577॥

पिशाचों के अधिपति और बलशाली निकुम्भ की पूजा करनी चाहिए पिशाचों के लिए बहुत अच्छी तरह तैयार की गई (भोज्य सामग्री की बलि देनी चाहिए)॥ 577॥

पललोलोपिकामिश्रा[5] मत्स्यमांसामिषैर्युताः[6]।
वृक्षमूलेषु गोष्ठेषु गृहेषु विविधेष्वपि[7]॥ 578॥

चतुष्पथेषु रथ्यासु चत्वरेषु[7]नदीषु च।
शून्यालयेषु मुख्येषु गिरीणां शिखरेषु च ॥ 579॥

अट्टालकश्मशानेषु राजमार्गेषु काश्यप[8]।
तां रात्रिं रक्षणं[9] कार्यं बालकानां गृहे गृहे॥ 580॥

हे कश्यप के वंशोत्पन्न ब्राह्मण! मछलियों के मांस के आहारों से युक्त दाल चावलों मिश्रण से बनाये हुए। (बकरे आदि के) मांस पेड़ों की जड़ों गोशालाओं, अनेक प्रकार के घरों, चौराहों, गलियों, प्राङ्गणों, नदियों, मुख्य

---

1. *प्रकर्तव्यो ECG*
2. *नित्य - A*
3. *यह AH, प्रजागरः BCDEFG*
4. *च BCDEFGH*
5. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त BD, लूपिका – A लेपिका CGH*
6. *विविधेषु च*
7. *चत्वारेषु A, चतुरेषु C*
8. *कश्यप ADG*
9. *यह BDFH, लक्षणं ACG*

खाली घरों, पर्वतों के शिखरों, घरों के ऊपरी भागों (अटारियों) श्मशानों और सड़कों में रखने चाहिएँ। उस रात्रि में प्रत्येक घर में बालकों की रक्षा करनी चाहिए ॥ 580 ॥

पुंश्चलीसहितैर्नेया[1] क्रीडामार्गै[2]र्निशा च[3] सा।
ब्रह्मचर्येण गीतेन नृत्तैर्वाद्यैर्मनोहरैः[4] ॥ 581 ॥

क्रीडामार्ग पर चलने वाले अर्थात् कामक्रीडा सक्त मनुष्यों को वेश्याओं का साथ लेकर सुन्दर गीत, नाचों और वाद्यों के साथ वह रात्रि ब्रह्मचर्य (आत्मसंयम) रखते हुए बितानी चाहिए ॥ 581 ॥

ततः पञ्चदशीं प्राप्य चान्त्यां[5] संवत्सरस्य[6] तु[7]
श्राद्धं कृत्वा प्रदातव्यं शुनामन्नं यथेच्छकम्[8] ॥ 582 ॥

इसके बाद वर्ष की अन्तिम पञ्चदशी को पाकर श्राद्ध करके कुत्तों को उनकी इच्छानुसार (भरपेट) भोजन देना चाहिए ॥ 582 ॥

---

1. *यह CG, नीया अन्य MSS*
2. *क्रीडामार्गेषु CG, क्रीडमान H*
3. *परित्यक्त CG, तु DEH*
4. *इति नीलमते पिशाचचतुर्दशी ABDEH इति परित्यक्त F इति श्रीनीलमतपुरायणे चैत्रकृष्णचतुर्दशीवर्णनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ABDE*
5. *ह्यन्त्यां DEH*
6. *सांवत्सरस्य H*
7. *यह तथा अन्य MSS, च A*
8. *इति नीलमतेऽन्त्यामावस्या D, ह्यन्त्यामावस्या F, अन्त्यामावसी इति BE, श्रीनीलमते ह्यमावसी H*
   अन्तामममात्स्यं स्पष्ट रूप से भ्रष्ट पाठ A. इति श्रीनीलमतपुराणे चैत्रामावर्णनं नाम षड्विंशोध्यायः C, तत्पश्चात् नील उवाच क्रिया परित्यक्त ABDEFH

Ed. Leiden v.v. 559-560

चैत्रशुक्लसमारम्भे प्रथमेऽहनि काश्यप[1]।
पितामहस्य कर्तव्या तदा पूजा विचक्षणैः॥ 583॥

पुष्पैर्नानाविधैर्गन्धै र्वस्त्रालङ्कारधूपनैः[2]।
हुताशपूजनैर्ब्रह्मन्[3] ब्राह्मणानां च तर्पणैः[4]॥ 584॥

हे कश्यप वंश में उत्पन्न ब्राह्मण! तब चैत्र मास के शुक्ल पक्ष के आरम्भ होने पर प्रथम दिन बुद्धिमान् लोगों को अनेक प्रकार के फूलों, सुगन्धों, वस्त्रों, अलङ्कारों, धूपों, अग्नि की पूजाओं और ब्राह्मणों के तर्पणों के द्वारा ब्रह्मा की पूजा करनी चाहिए ॥ 583-584॥

तस्मिन्नेवाह्नि कर्तव्या महाशान्तिर्द्विजोत्तम।
आढ्येन[5] रक्षणार्थाय श्रियस्तत्प्रापणाय च ॥ 585॥

हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ! उसी दिन धनवान् व्यक्ति को धन की प्राप्ति और रक्षा के लिए महाशान्ति उत्सव मनाना चाहिए ॥ 585॥

तस्मिन्नेवाह्नि कर्तव्या पूजा कालस्य काश्यप।
तस्मिन् कालस्य गणना[6] प्रवृत्ता पूर्वमेव तु ॥ 586॥

हे कश्यप के वंशज! उस दिन काल की पूजा करनी चाहिए। पूर्व समय में उसी दिन काल की गणना आरम्भ हुई थी॥ 586॥

तस्मिन्नहनि वै सृष्टं ब्रह्मणेदं जगत्पुरा।
सूर्योदये द्विजश्रेष्ठ इत्येव[7]मनुशुश्रुम ॥ 587॥

---

1. *यह अन्य MSS, कश्यप A*
2. *भूषणै: CG*
3. *धूपै र्हुताशपूजाभि : CG*
4. *इति नीलमते ब्रह्मपूजा ABDE, इति परित्यक्त F, इति श्रीनीलमतपुराणे चैत्रशुक्लप्रतिपदि ब्रह्मपूजावर्णनं नाम सप्तविंशोऽध्याय: तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ABDE*
5. *आढयै र्हि CG*
6. *गनना A, कालगणना H*
7. *चेत्येवम् H*

हे द्विजोत्तम पूर्व काल में उसी दिन ही सूर्य के उदय होने पर ब्रह्मा ने इस सृष्टि की रचना की थी ऐसा हमने परम्परानुसार सुन रखा है ॥ 587 ॥

पूजनीयास्तथा[1] देवा ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः[2]।
ग्रहर्क्षशान्तिः कर्तव्या दैवज्ञविधिचोदिता[3] ॥ 588 ॥

और (उस दिन) ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर देवों की पूजा करनी चाहिए। ज्योतिषी के द्वारा बताई गई विधि से ग्रहों और नक्षत्रों की शान्ति करनी चाहिए ॥ 588 ॥

पूजनीया ग्रहाः[4] सर्वे नक्षत्राणि च मानद।
कालस्यावयवाः सर्वे[5] ये च संवत्सरादयः ॥ 589 ॥

हे मान देने वाले! सभी ग्रहों और नक्षत्रों तथा काल के सभी संवत्सर आदि अङ्गों की भी पूजा करनी चाहिए ॥ 589 ॥

कालकल्पावुभौ पूज्यौ मनवश्च चतुर्दश।
अतीताश्च[6] भविष्याश्च[7] तेषां नामानि मे शृणु ॥ 590 ॥

काल और कल्प (ब्रह्मा का एक दिन) इन दोनों तथा भूतकाल में हुए और भविष्य में होने वाले चौदह मनुओं की भी पूजा करनी चाहिए। मुझ से उनके नामों को सुनो ॥ 590 ॥

---

1. *तदा H*
2. *ब्रह्मा, विष्णुर्महेश्वर : A*
3. *— शोदिता D*
4. *गृहाः AD*
5. *द्वितीय तथा तृतीय पाद परित्यक्त H,*
6. *अतीतश्च B*
7. *भविष्यश्च B, भविष्यन्तः CG*

स्वायम्भुवो मनुः पूर्वं स्वारोचिषस्तथा
औत्तममस्तामसश्चैव रैवतश्चाक्षुष[1]स्तथा ॥ 591 ॥

वैवस्वतोऽर्कसावर्णि[2] ब्रह्मसावर्ण[3] एव च।
भद्रेशो दक्ष सावर्णो[4] रौच्यो[5] भौत्यस्तथैव च ॥ 592 ॥

सब से पहले स्वायम्भुव मनु, फिर स्वारोचिष, औत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, अर्कसावर्णि, ब्रह्मसावर्ण, भद्रेश, दक्ष, सावर्ण, रौच्य और भौत्य ॥ 591–592 ॥

सम्पूजनीया देवेन्द्रा[6]स्तथा ब्रह्मन्[7]चतुर्दशाः[8]।
विश्वभुक् च विपश्चिच्च सुचित्तिश्च निधिस्तथा ॥ 593 ॥

विभुर्मनोजवश्चैव तेजस्वी च तथा वडिः[9]।
अद्भुतश्च तथा शान्ति[10] वृषो देववरस्तथा ॥ 594 ॥

ऋतुधामा[11] च देवेन्द्राः शुचिः शुक्र[12]श्चतुर्दशाः।
युगानां च तथा पूजा कर्तव्या द्विजपुङ्गवैः[13] ॥ 595 ॥

हे ब्राह्मण! चौदह देवेन्द्रों की पूजा करनी चाहिए। विश्वभुक्, विपश्चित्, सुचित्ति, निधि, विभु, मनोजव, तेजस्वी, वडि, अद्भुत, शान्ति, देवों में श्रेष्ठ

---

1. *चक्षुषः A*
2. *यह: ACG, अर्कसौवर्णो B, अर्कसावर्णो H*
3. *ब्रह्मसावर्णि रेव CG, ब्रह्मसौवर्ण BF*
4. *भद्रेश ऋक्षसावर्णो A, रुद्रेशर्क्षसावर्णो CG*
5. *रौश्यो C, राम्यो D, रम्यो BH, रौम्यो G*
6. *देवेन्द्राः A*
7. *यह H, ACD*
8. *चतुर्दशाः A चतुर्दश मूलपाठ*
9. *यह ACD, बहिः E*
10. *शान्तो CG*
11. *यह CDEG, ऋतुदामा AH*
12. *शुक्ल H*
13. *यह A द्विजसत्तम CGH*

वृष, देवेन्द्र, शुचि, और शुक्र ये चौदह देवेन्द्र हैं। श्रेष्ठ ब्राह्मणों को युगों की पूजा भी करनी चाहिए। ॥ 593-595 ॥

पञ्चसंवत्सराः पूज्याः पूज्यं चैवायनद्वयम्।
ऋतुषट्कं तथा पूज्यं मासा द्वादश चाप्यथ[1] ॥ 596 ॥

द्वौ पक्षौ तिथयश्चैव पूज्याः पञ्चदशैव तु।
करणाश्च[2] मुहूर्ताश्च राशयश्च पृथक् पृथक् ॥ 597 ॥

पांच सवंत्सरों, दो अयनों (दक्षिणायन और उत्तरायण नामक सूर्यमार्ग) छः ऋतुओं तथा बारह मासों की पूजा करनी चाहिए दो पक्षों, पन्द्रह तिथियों, करणों, मुहूर्तों तथा राशियों की अलग अलग पूजा करनी चाहिए ॥ 596-597 ॥

मरीचिमत्र्य[3]ङ्गिरसौ पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम्।
भृगुं सनत्कुमारं च सनकं च सनन्दनम् ॥ 598 ॥

धर्मं वसिष्ठं[4] सत्यं च कामार्थौ च हुताशनम्।
वसुरुद्रांल्लोकपालांल्लोकालोकनिवासिनः ॥ 599 ॥

सुदामानं शंखपादं[5] केतुमन्तं तथैव च।
तथा हिरण्यरोमाणं दिक्पालां[6]श्चैव पूजयेत् ॥ 600 ॥

मरीचि अत्रि, अङ्गिरा, पुलत्स्य पुलह, क्रतु, भृगु, सनत्कुमार, सनक, सनन्दन, धर्म, वसिष्ठ, सत्य, काम, अर्थ, अग्नि, वसुओं, रुद्रों लोकालोक पर्वत पर रहने वाले लोकपालों, सुदामा, शंखपाद, केतुमान् और हिरण्यरोमा नामक दिक्पालों की भी पूजा करनी चाहिए ॥ 598-600 ॥

---

1. *यह अन्य MSS, वाप्यथ A*
2. *कर्णानि CG*
3. *मरीचिरत्र्य A*
4. *यह H तथा अन्य MSS, वरिष्ठं मूलपाठ*
5. *शङ्खपालं H*
6. *यह अन्य MSS, दिक्काल A, मृण्मलांश्चैव H*

शक्राद्याश्च[1] ब्राह्मणश्रेष्ठ दक्षपुत्र्य[2]स्तथैव च।
सती ख्यातिः स्मृतिः स्वाहा ह्य[3]नसूया तथा स्वधा॥ 601 ॥

प्रीतिः क्षमा च सम्भूतिः सन्नति[4]श्चाप्य[5]रुन्धती।
कीर्त्ति र्लक्ष्मी[6]र्धृत्ति[7] मेंधा तुष्टिः[8] श्रद्धा क्रिया मतिः॥ 602 ॥

बुद्धिर्लज्जा वसुः शान्तिः पुष्टिः सिद्धिस्तथा रतिः।
सुरसाच[9] वसुधाशी[10]लम्बा भानुर्मरुद्वती[11]॥ 603 ॥

सङ्कल्या च मुहूर्त्ता[12] च साध्या विश्वा व काश्यप।
अदितिर्दितिर्दनुः काला दनायुः सिंहिका मुनिः ॥ 604 ॥

---

1. *यह H, शक्राद्यान् अन्य MSS.*
2. *दक्षपुत्रीः CG,*
3. *हि परित्यक्त A, अपि G*
4. *सतिथि—B, सातिथि F,*
5. *प्य परित्यक्त A,*
6. *लक्ष्मी कीर्तिः CG*
7. *वृत्तिः CD*
8. *यह CG, पोष्टिः D, पुष्टि अन्य MSS.*
9. *सुरमा च C, सुरसा च G, अरुंधती H*
10. *वसुधाशी संशोधित, (वसुधा+आशी) A वसुर्दाशी H, वसुन्दाशी CGBF*
11. *मरुद्वती AH,*
12. *मुमूर्त्ता A*

कद्रूः क्रोधा[1] इरा प्रावा[2] विनता[3] सुरभि[4] खशा।
शश्वा[5] च तथा पूज्या[6] सुप्रभा च तथा जया॥ 605॥

हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! इन्द्रादि (देवों) और दक्ष की बेटियों सती, ख्याति, स्मृति, स्वाहा, अनसूया, स्वधा, प्रीति, क्षमा, सम्भूति, सन्नति अरुन्धती, कीर्ति, लक्ष्मी, धृति, मेधा, तुष्टि, श्रद्धा, क्रिया, मति, बुद्धि, लज्जा, वसु, शान्ति, पुष्टि, सिद्धि, रति, सुरसा, संकल्पा, मुहूर्ता, साध्या, विश्वा, अदिति, दनु, काला, दनायु, सिंहिका, मुनि, कद्रू, क्रोधा, इरा, प्रावा, विनता, सुरभि, खशा, भृशाश्वा, सुप्रभा और जया की पूजा करनी चाहिए। ॥601-605॥

बहुपुत्रश्च सम्पूज्यस्तस्य पत्नीद्वयं तथा।
पत्नीचतुष्कसंयुक्तोऽरिष्टनेमी तथैव च[7]॥ 606॥

बहुपुत्र और उसकी दोनों पत्नियों की तथा चार पत्नियों समेत अरिष्टनेमी की भी पूजा करनी चाहिए। ॥606॥

ऋद्धिं वृद्धिं तथा निद्रां[8] धनेशं नडकूबरम्[9]।
शंखपद्मौ निधी[10] पूज्यौ भद्रकाली सरस्वती ॥ 607॥

ऋद्धि, वृद्धि तथा निद्रा, कुबेर और नडकूबर की (पूजा करनी चाहिए)। दो निधियों शङ्ख और पद्म की पूजा करनी चाहिए। भद्रकाली और सरस्वती (पूजनीया है) ॥607॥

---

1. *क्रूरा CG*
2. *स्राव, CG, प्रवा DE*
3. *वितता A*
4. *सुराति: A*
5. *यह CG*
6. *यह CG*
7. *संयुक्तो ऽरिष्टनेमी तथैव च CG संयुक्तं पूज्यं चारिष्टनेमिनम्*
8. *वृन्दां D*
9. *नवकूवरम् BE, मुक्तवरम् D, ये दो पाद N, संशोधित N, परित्यक्त H*
10. *तथा CG*

वेदोपवेदवेदाङ्ग[1] विद्यास्थानानि कृत्स्नशः।
नागान् यक्षान् पिशाचांश्च[2] तथैव गरुडारुणौ ॥ 608 ॥

(ऋग्वेदादि चार) वेदों (आयुर्वेदादि चार) उपवेदों (शिक्षाव्याकरणादि छः) वेदाङ्गों इन सभी (चौदह) विद्यास्थानों, नागों, यक्षों, पिशाचों तथा गरुड और अरुण (की भी पूजा करनी चाहिए।) ॥ 608 ॥

जम्बुः शाकः कुशः क्रौञ्चः शाल्मलिद्वीप एव च।
गोमेधः[3] पुष्करश्चैव द्वीपाः पूज्याः पृथक् पृथक् ॥ 609 ॥

जम्बु, शाक, कुश, क्रौञ्च, शाल्मलिद्वीप गोमेध और पुष्कर ये द्वीप अलग अलग पूजे जाने चाहिए ॥ 609 ॥

लवणः क्षीर आज्यश्च[4] दधि मण्डः[5] सुरोदकः।
तथैवेक्षुरसोदश्च पूज्यः स्वादूदकस्तथा[6] ॥ 610 ॥

लवण (सागर) क्षीर (सागर) आज्य (घृतसागर) दधि (सागर) मण्ड (भात की माण्ड का सागर) सुरोदक (शराब का सागर) इक्षुरस (गन्ने के रस का सागर) और स्वादूदक (स्वादु जल का सागर) पूज्य हैं ॥ 610 ॥

उत्तराः कुरवः[7] पुण्या रम्यो हैरण्वतस्तथा।[8]
भद्राश्वः केतुमालश्च वर्षश्चैव इलावृतः[9] ॥ 611 ॥

---

1. देवोपदेवदेवाङ्ग — BD
2. नागान् यक्षान् सुपर्णांश्च D— सुपर्णांश्च E, नागयक्षाः सुपर्णांश्च CG
ह्य3. यह अन्य MSS, गोमेधः A गोमेदः मूलपाठ
4. क्षीराज्ये च D, आज्यं च GE, आज्यो F, आज्योद H
5. दधि मण्डम् G
6. स्वादक एव च H
7. यह CGE, कौरवाः A
8. इस श्लोक के प्रथम और द्वितीय पाद परित्यक्त D
9. तथेलावृतनामकः CG

हरिवर्ष[1]: किम्पुरुषो वर्षो भारतसंज्ञक[2]।
भारतस्य तथा भेदाःपूजनीयाश्च ये नव॥ 612॥

हरिवर्ष किम्पुरुष और भारत नामक वर्ष अर्थात् (भारतवर्ष देश) की पूजा करनी चाहिए और भारत के जो नौ भेद है उनका भी पूजन करना चाहिए॥ 611-612॥

इन्द्रद्युम्नः[3] कशेरुमां[4] स्ताम्रवर्णो गभस्तिमान्।
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गान्धर्वो वारुणस्तथा॥ 613॥

अयं च मानवद्वीप[5] स्तथा सागरसंवृतः।
चत्वारः सागराः पूज्यास्तथा पातालसप्तकम्[6]॥ 614॥

रुक्मभौमः शिलाभौमः पातालो नीलमृत्तिकः[7]।
रक्तभौमः[8] पीतभौमः[9] श्वेतः कृष्णाक्षिति[10] स्तथा॥ 615॥

(ये नौ भेद इस प्रकार हैं) इन्द्रद्युम्न, कशेरुमान्, ताम्रवर्ण, गभस्तिमान् नागद्वीप, सौम्य, गान्धर्व, वारुण और सागर से घिरा यह मानवद्वीप। चार सागरों और सात पातालों की पूजा करनी चाहिए। इन सात पातालों के नाम इस प्रकार हैं- रुक्मभौम, शिलाभौम, नीलमृत्तिक, रक्तभौम, पीतभौम, श्वेत और कृष्णक्षिति ॥613-615॥

कालाग्निरुद्रः शेषश्च वराहश्च तथा हरिः।
भूर्भुवःस्वर्महश्चैव जनश्च तपसा सह॥ 616॥

---

1. *वर्षे B, वर्षं H*
2. *भारतसंज्ञिते B, भारतसंज्ञितः H*
3. *यह CGFH, इन्द्रद्युम्नं A*
4. *कशेरुश्च CG, कसेरुमां F*
5. *मानवो द्वीपः CG*
6. *पातालसप्तकाः BDEF*
7. *नीलमूर्त्तिकः D*
8. *परित्यक्त D*
9. *परित्यक्त E*
10. *क्षतिस्तथा A*

सत्यलोक[1]स्तथा लोकाः पूजनीया द्विजोत्तम।
पृथिव्यापस्तथा तेजः पवनाम्बरमेव[2] च[3] ॥ 617 ॥

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! कालाग्नि, रुद्र, शेष, वराह, हरि, भूः, भुवः स्वः, महः और तपः के साथ जन लोक और सत्यलोक इनकी पूजा करनी चाहिए ॥ 616-617 ॥

मनो बुद्धिं[4]तथात्मानमव्यक्तं[5] पुरुषं तथा।
हिमवान् हेमकूटश्च[6] निषधो[7] नीलपर्वतः ॥ 618 ॥

श्वेतश्च शृङ्गवान्मेरुर्माल्यवान् गन्धमादनः।
पर्वतप्रवरः पूज्यो यो नाम्ना मानसोत्तरः ॥ 619 ॥

महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षवान[8]पि।
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च कैलासश्च नगोत्तमः ॥ 620 ॥

मन, बुद्धि, आत्मा और अव्यक्त पुरुष (परमात्मा) की पूजा करनी चाहिए। हिमवान्, हेमकूट, निषध, नीलपर्वत, श्वेतपर्वत, शृङ्गवान्, मेरु, माल्यवान् गन्धमादन, मानसोत्तर नाम से प्रसिद्ध पर्वत प्रवर की पूजा करनी चाहिए। इसके साथ ही महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, ऋक्षवान्, विन्ध्य, पारियात्र और पर्वतश्रेष्ठ कैलाश का पूजन करना चाहिए ॥ 618-620 ॥

---

1. *यह—A, BCDGH, मर्त्यलोकः—ed. Leiden*
2. *यह A, पवन H, —पवनं खं च CGD*
3. *पूजयेत् CGH*
4. *बुद्धि : F, मनोबुद्धी H*
5. *त्वयक्तं A*
6. *हिमकूटश्च FH*
7. *निषदो—DE*
8. *ऋक्षमान् B*

Ed. Leiden v.v. 594c-598a

भागीरथी पावनी[1]च ह्लादिनी[2] ह्लादिनी तथा।
सीता वंक्षुश्च सिन्धुश्च सप्त गङ्गा च मानद॥ 621॥

सुप्रभा काञ्चनाक्षी च विशाला मानसह्रदा[3]।
सरस्वत्योघनादा[4]च सुमेरु[5] र्विमलोदका॥ 622॥

हे सम्मान देने वाले! भागीरथी, पावनी, ह्लादिनी, ह्लादिनी, सीता, वंक्षु और सिन्धु ये सात गङ्गायें हैं। सुप्रभा, काञ्चनाक्षी, विशाला, मानसह्रदा, सरस्वती, ओघनादा और स्वच्छ जलवाली सुमेरु ये जो नदियाँ हैं इन सब की पूजा करनी चाहिए॥ 620-622॥

पुष्कराद्यानि तीर्थानि वितस्ताद्याश्च निम्नगाः।
शची वनस्पतिर्गौरी धूम्रोर्णा रुचिराकृतिः ॥ 623॥

सिनीवाली कुहू राका तथा चा[6] नुमतिः शुभा।
आयतिर्नियतिः प्रज्ञा मतिर्वेला[7] च धारिणी॥ 624॥

जो पुष्करादि तीर्थ और वितस्तादि नदियाँ हैं इनकी पूजा करनी चाहिए। शची, वनस्पति, गौरी, सुन्दर आकृति वाली धूम्रोर्णा, सिनीवाली, कुहू, राका, शुभकारिणी, अनुमति, आयति, नियति, प्रज्ञा, मति, वेला और धारिणी इन सब देवियों की पूजा करनी चाहिए ॥623-624॥

---

1. *प्लवनी A*
2. *ह्लादिनी हलादिनी DFCG*
3. *यह H, मानसाह्रद! D, मानसो ह्रद B, मानसाह्रद A*
4. *ओघनामा H, ओघोनामा F, ओगणासा, ओगनासा E*
5. *सुवेगा CG, सुवेतृ H,*
6. *च परित्यक्त A*
7. *मेंधा H*

देवौ धातृविधातरौ[1] सप्तछन्दांसि[2]चा[3]प्यथ।
ऐरावणश्च[4] सुरभि[5] रुच्चै श्श्रवस[6] एव च॥ 625॥

धाता और विधाता देवता और सात छन्द, ऐरावण (इन्द्र का हाथी) कामधेनु और उच्चैश्श्रवस (इन्द्र का घोड़ा) इनकी पूजा करनी चाहिए॥ 625॥

धान्वन्तरिर्ध्रुवश्[7]चैव शस्त्राण्यस्त्राणि चाप्यथ।
विनायकः कुमारश्च तथैव च विनायकाः ॥ 626॥

शाखो विशाखः स्कन्दश्च नैगमेशस्तथैव च।
मरुतश्च ग्रहाश्चैव रोगाणामधिपो ज्वरः॥ 627॥

ऋषयो वालखिल्या[8]श्च कश्यपागस्त्यनारदाः[9]।
तथैवाप्सरसः पुण्याः पूज्या देवाश्च सोमपाः॥ 628॥

धन्वन्तरि, ध्रुव और शस्त्र तथा अस्त्र, विनायक (गणेश), कुमार, विनायक, (गरुडादि पक्षी) शाख, विशाख, स्कन्द, नैगमेश, मरुद्गण, ग्रह, रोगों का स्वामी ज्वर, वालखिल्य, कश्यप, अगस्त्य तथा नारद आदि ऋषिगण, पवित्र अप्सरायें और सोमरस का पान करने वाले देवगण इन सबकी पूजा करनी चाहिए॥ 626-628॥

---

1. *धातृविधातारौ CGH*
2. *छन्दानि BF*
3. *यह तथा अन्य MSS वा A*
4. *ऐरावणं ABFH*
5. *सुरभिम् ABFH*
6. *उच्चैश्श्रवसमेव ABFH उच्चैश्श्रवा हयः CG*
7. *यह CG धान्वन्तरिं ध्रुवं ABFH*
8. *बालखिल्याश्च BCG*
9. *कश्यपोऽगस्त्यनारदौ B*

आदित्या वसवो रुद्रा विश्वे[1]देवास्तथाश्विनौ।
भृगवोऽङ्गिरसः साध्या मरुतश्च महाबलाः ॥ 629 ॥

आदित्यों, वसुओं, रुद्रों, विश्वेदेवों, अश्विनी देवों, भृगुओं, अङ्गिरसों, साध्यों और महाबलशाली मरुतों (इनकी पूजा करनी चाहिए) ॥ 629 ॥

धाता[2] मित्रो[3]ऽर्यमा पूषा शक्रोंऽशो[4] वरुणो भगः।
त्वष्टा विवस्वान्[5] सविता विष्णुर्द्वादश भानवः ॥ 630 ॥

धाता, मित्र, अर्यमा, पूषा, शक्र, अंश, वरुण, भग, त्वष्टा, विवस्वान्, सविता और विष्णु ये बारह आदित्य हैं ॥ 630 ॥

धरो[6] ध्रुवश्च भोजश्च आपश्चैवानिलानलौ[7]।
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥ 631 ॥

धर, ध्रुव, भोज, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष, और प्रभास ये आठ वसु कहे गये हैं ॥ 631 ॥

अङ्गारकस्तथा सूर्यो निर्ऋतिर्घोष एव च[8]।
अजैकपाच्चाहिर्बुध्न्यो धूमकेतुर्ध्वजस्तथा ॥ 632 ॥

---

1. *विश्वे से पहले के पद परित्यक्त E*
2. *दाता H*
3. *पित्र्यो A*
4. *संशोधित शक्रेशो MSS*
5. *विवस्वत् F*
6. *धनो BDF*
7. *अनिशानिलः BD अनिलानलः A अनिलानलाः H अनिशानलः F*
8. *अङ्गारकं, सूर्यं, इत्यादि द्वितीयान्त पदों का प्रयोग ABDEFH*

वाहन[1]श्चेश्वरो[2] मृत्युः कपालिरथ कङ्कणः[3]।
एकादशैते विज्ञेया रुद्रास्त्रिभुवनेश्वराः ॥ 633 ॥

अङ्गारक (मङ्गलग्रह) सूर्य, निर्ऋति, घोष, अजैकपाद्, अहिर्बुध्न्य, धूमकेतु तथा ध्वज, वाहन, ईश्वर, मृत्यु, कपालि और कङ्कण ये ग्यारह रुद्र जानने चाहिए जो तीनों भुवनों के स्वामी हैं ॥ 632-633 ॥

ऋतुर्दक्षो वसुः सत्यः कालः कामो[4] ध्वनिस्तथा।
कुरु र्वाग्[5]दनुजो[6] विश्वे[7] रोचमानाश्च ये[8] दश ॥ 634 ॥

क्रतु, दक्ष, वसु, सत्य, काल, काम, ध्वनि, कुरु, वाक् और दनुज ये दस चमकते हुए विश्वेदेव कहे गये हैं ॥ 634 ॥

नासत्यदक्षौ विज्ञेयावश्विनौ[9] वदतां वर[10]।
भुवनो भानवश्चैव[11] सुजन्यः सुजनस्तथा[12] ॥ 635 ॥

त्याजः सुवश्च मूर्धा च दक्षश्च व्यश्च[13] बन्धुकः[14]।
प्रसवश्च व्ययश्चैव भृगवो द्वादश स्मृताः ॥ 636 ॥

---

1. *वाहनं ABDEFH*
2. *चेश्वरं ABDEFH*
3. *मृत्युं कपालिमथकङ्किणम् A किङ्कणम् B मृत्युं कपालिमथकिङ्किणम् FH मृत्युःकङ्कणस्तथा G, मृत्युः कपाली कङ्कणस्तथा C*
4. *कालो BF*
5. *रुरुर्भाग् ed Leiden*
6. *मनुजो BDEF*
7. *विश्वं F*
8. *यह A ते अन्य MSS*
9. *आश्विनौ CG*
10. *वरौ B*
11. *भावनश्चैव H*
12. *यह ed. Leiden, क्रतु MSS .*
13. *अन्यश्च BDF*
14. *बन्धकः BF*

हे वक्ताओं में श्रेष्ठ! नासत्य और दक्ष ये दो अश्विनी कुमार समझे जाने चाहिएं। भुवन, भानव, सुजन्य, सुजन, त्याज, सुव, मूर्धा, यक्ष, व्य, बन्धुक, प्रसव और व्यय ये बारह भृगु कहे गये हैं ॥ 635-636 ॥

आत्मा ह्या[1]युर्मनो दक्षो मद[2]: प्राणस्तथैव च।
हविष्मांश्च गविष्ठश्च ऋच्च[3] सत्यस्तथैव च ॥ 637 ॥

इत्येतेऽङ्गिरसः पुत्रा दश देवा[4] महाबलाः।
मनो मदश्च[5] प्राणश्च नरः[6] पालश्च वीर्यवान् ॥ 638 ॥

दितिर्हयो नयश्चैव हंसो नारायणस्तथा।
विभुश्चापि प्रभुश्चापि[7] साध्या द्वादश कीर्त्तिताः ॥ 639 ॥

आत्मा, आयु, मन, दक्ष, मद, प्राण, हविष्मान्, गविष्ठ, ऋत और सत्य ये दस महाबलशाली देव अङ्गिरा के पुत्र कहे गये हैं। मन, मद, प्राण, नर, पराक्रमी पाल, दिति, हय, नय, हंस, नारायण, विभु और प्रभु ये बारह साध्य कहे गये हैं ॥ 637-639 ॥

एकज्योतिर्द्विज्योतिश्च त्रिज्योतिर्ज्योतिरेव च।
एकचक्रो[8] द्विचक्रश्च[9] त्रिचक्र[10]श्च महाबलः ॥ 640 ॥

ऋतजित् सत्यजिच्चैव सुषेणः सेनजित्तथा।
अग्निमित्रोऽरिमित्रश्च प्रभुमित्रो[11] ऽपराजितः ॥ 641 ॥

---

1. *च CG*
2. *मोद : A*
3. *यह FH, रीतः A, ऋभुः CG, ऋभुः ed. Leiden द्वितीय तथा तृतीय पाद परित्यक्त B*
4. *देशाः A*
5. *मृदो मृदश्च H*
6. *नर— F*
7. *चैव BFCG*
8. *एकशुक्रो E, एकशक्रो BD*
9. *द्विशुक्रो E द्विशक्र BD*
10. *त्रिशक्रः BDE*
11. *प्रभमित्रो CGH*

ऋतश्च ऋतवान् धर्ता[1] निधर्ता[2]वरुणो ध्रुवः।
विधारणो नाम तथा देवदेवो महाबलः॥ 642॥

ईदृक्षश्चाप्यदृक्षश्च[3] ईहादृक् चा[4]मिताशनः।
कृतिनः प्रसकृद्[5]दक्षः समरश्च[6]महायशाः॥ 643॥

धाता चोग्रो[7]धनुर्भीमस्त्वभियुक्तः[8] सदासहः।
द्युति[9]र्वसुरथो[10]ऽदृश्यो[11] वामः[12] कामो जयो[13] विराट्[14]॥ 644॥

एते चै[15]कोनपञ्चाशन्मरुतः परिकीर्तिताः॥ 645॥

एकज्योति, द्विज्योति, त्रिज्योति, ज्योति, एकचक्र, द्विचक्र, महाबली त्रिचक्र, ऋतजित्, सत्यजित्, सुषेण, सेनजित् अग्निमित्र, अरिमित्र, प्रभुमित्र, अपराजित, ऋत, ऋतवान्, धर्ता, निधर्ता, वरुण, ध्रुव, विधारण, महाबली देवदेव, ईदृक्ष, अदृक्ष, ईहादृक्, अमिताशन, कृतिन, प्रसकृत्, दक्ष, महायशस्वी समर, धाता, उग्र, धनु, भीम, अभियुक्त, सदासह, द्युति, वसुरथ, अदृश्य, वाम, काम, जय और विराट्......ये उनचास मरुत् कहे गये हैं ॥ 640-645 ॥

---

1. *यह CG, दर्भा BD दन्ता F, धाता A*
2. *नियन्ता F*
3. *ईदृक्षुश्चापदृक्षुश्च B*
4. *च परित्यक्त BDFCG*
5. *कृती नम्रः सकृद् CG*
6. *समराः A*
7. *यह ACG ह्युग्रो अन्य MSS*
8. *चाभियुक्तः CG, अभियुक्तः H*
9. *महाद्युति BE, प्रद्युति H*
10. *परित्यक्त H*
11. *परित्यक्त B, यशो DEF*
12. *वासः DEF*
13. *कामो DFH*
14. *यहाँ किसी एक पंक्ति के लुप्त हो जाने से शेष मरुद्गणों के नाम छूट गये हैं।*
15. *हि D*

विश्वकर्मा ततः[1] पूज्यः सर्वशिल्प[2]प्रवर्त्तकः।
आयुधं वाहनं छत्रमासनं चिह्नदुन्दुभी॥ 646॥

सम्पूज्या[3] विधिवद् ब्रह्मन् गन्धमाल्यानुलेपनैः।
दीपधूपप्रदानैश्च[4] नैवेद्यैश्च पृथक् पृथक्॥ 647॥

हे ब्राह्मण! सभी शिल्पों के प्रर्वतक विश्वकर्मा की भी पूजा करनी चाहिए। आयुध, वाहन, छत्र, आसन, चिह्न और दुन्दुभि इन सभी की विधिपूर्वक सुगन्ध, माला, अनुलेप, दीप, धूप और नैवेद्य के साथ पृथक् पृथक् पूजा करनी चाहिए॥ 646-647॥

एतेषां पूजनं कृत्वा पूजनीया विशेषतः।
ग्रहो वारस्तथा मासो[6] यः स्यात् संवत्सर[7]प्रभुः॥ 648॥

इन सब की पूजा करके ग्रह तथा वर्ष के स्वामी वार (दिन) विशेष की पूजा करनी चाहिए ॥ 648॥

ग्रहो भविष्यद् वर्षश्च[8] तथा मासस्य वारकः।
दैवज्ञवक्त्राद् विज्ञेयौ ग्रहमासौ विचक्षणैः॥ 649॥

ग्रह, भविष्य में आने वाले वर्ष और मास के (स्वामी) दिन का पूजन करना चाहिए। बुद्धिमान् पुरुषों को ग्रह और मास के सम्बन्ध में ज्योतिषी के मुख से विशेष रूप से जानना चाहिए। ॥ 649॥

---

1. *यह A, तथा अन्य MSS.*
2. *सर्वशिल्पी-A*
3. *सम्पूज्य B*
4. *धूपदीपप्रधानैश्च H, धूपैर्दीपप्रदानैश्च C, धूपदीपप्रदानैश्च B*
5. *अन्य MSS, नागः A*
6. *सोमो B*
7. *संवत्सर : AF*
8. *वर्षस्य CG*

दैवज्ञादेव विज्ञेयं मासं वर्षं च[1] वारकम्।[2]
एतेषां पूजनं कार्यं बह्वन्नकुसुमोत्करैः[3] ॥ 650 ॥

ज्योतिषी से ही मास, वर्ष और दिन के सम्बन्ध में विशेष जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। इन सभी का प्रचुर अन्न और फूलों के ढेरों से पूजन करना चाहिए ॥ 650 ॥

फलवेदात्ततो[4] ज्ञात्वा नागवर्षस्य वारकम्।[5]
तस्य[6] पूजा प्रयोक्तव्या[7] भक्ष्यभोज्यपुरःसरा[8] ॥ 651 ॥

तब फलित ज्योतिष से नागवर्ष के दिन को जानकर उस दिन की पूजा भक्ष्य (चबाकर खाने योग्य ठोस) और भोज्य (नरम खिचड़ी खीर आदि तरल) पदार्थ से करनी चाहिए ॥ 651 ॥

ततो[9]ऽग्निहवनं कार्यं सर्वेषामनुपूर्वशः[10]।
ओङ्कारपूर्वकं ब्रह्मन् घृताक्षतयवैस्तिलैः ॥ 652 ॥

हे ब्राह्मण! तब ओङ्कार नाम के जप के साथ क्रमानुसार सभी के लिए घृत, अक्षत (जौ) और तिलों का हवन अग्नि में करना चाहिए ॥ 652 ॥

---

1. *यह A, -वर्षस्य CG, मासवर्षं अन्य MSS.*
2. *यह G, वारिकम् अन्य MSS.*
3. *बहुग्रन्थसमोत्करैः BFG बह्वन्नकुसुमोत्करैः E*
4. *यह A, तथा अन्य MSS.*
5. *संशोधित तारिकम् H, वारिकम् अन्य MSS.*
6. *ह्यस्य BDE*
7. *प्रकर्तव्या F*
8. *पुरस्सरम् H*
9. *अतो CG*
10. *अन्नपूर्वकम् A*

तान् पृथक् पृथगुद्दिश्य देया विप्रेषु दक्षिणा।
ब्राह्मणा भोजनीयाश्च सुहृत्सम्बन्धिबान्धवाः ॥ 653 ॥

उन सभी का पृथक् पृथक् नामोल्लेख करके ब्राह्मणों को दक्षिणा देनी चाहिए (तत्पश्चात्) ब्राह्मणों, रिश्तेदारों और भाई भतीजे आदि निकट सम्बन्धियों को भोजन खिलाना चाहिए ॥ 653 ॥

विशेषवच्च भोक्तव्यं कार्यं च महदुत्सवम्[1]।
पूजनीया द्विजश्रेष्ठ तथा ज्योतिषका द्विजाः ॥ 654 ॥

और हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! (हलुआ, पूड़ी आदि) विशेष भोजन खाना चाहिए तथा बड़ा उत्सव मनाना चाहिए एवं ज्योतिषी ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए ॥ 654 ॥

धनधान्यौषधैर्वस्त्रैः[2] पूजनीया[3] द्विजोत्तमाः[4]।
फलवेदविदश्चैव त्वितिहासविदश्च[5] ये ॥ 655 ॥

धनों, अनाजों, औषधियों और वस्त्रों से उत्तम ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए और जो फलित ज्योतिष की विद्या को जानने वाले और जो इतिहासवेत्ता हैं उनका भी पूजन करना चाहिए ॥ 655 ॥

वाचकाः[6] पूजनीयाश्च दक्षिणाभिमुखा द्विज[7]।
आत्मशोभा च कर्तव्या पुष्पालङ्कारधूपनैः ॥ 656 ॥

हे ब्राह्मण! दक्षिणा की ओर उन्मुख अर्थात् दक्षिणाभिलाषी और (इतिहास और पुराणादियों) की कथा करने वाले विद्वानों की पूजा करनी चाहिए तथा फूलों, अलङ्कारों और धूपों से अपने आपको सजाना चाहिए। ॥ 656 ॥

---

1. *कार्यश्चापि महोत्सवः CG*
2. *धनधान्यैश्च-H धनधान्यौषधवस्त्रैश्च मूलपाठ*
3. *यह A, पूज्याश्च अन्य MSS*
4. *यह A, द्विजपुङ्गवाः अन्य MSS*
5. *यह A, तु अन्य MSS में परित्यक्त*
6. *याचकाः BD*
7. *द्विजाः H*

कथितेयं महाशान्ति[1]: सर्वाघविनिसूदनी।
सर्वोत्पातप्रशमनी कलिदु:स्वप्ननाशिनी॥ 657॥

आयुष्प्रदा पुष्टिकरी धनसौभाग्यवर्धिनी।
व्याधिशत्रुप्रशमनी राज्यराष्ट्रविवर्धिनी॥ 658॥

मङ्गल्या च पवित्रा च लोकद्वय[2]सुखावहा॥ 659॥

सारे पापों को नष्ट करने वाली, सारे उपद्रवों को शान्त करने वाली, कलियुग में उत्पन्न दु:स्वप्नों अर्थात् असद्विचारों की विनाशिका, दीर्घायु प्रदान करने वाली, पुष्टिप्रदायिका, धन और उत्तम भाग्य को बढ़ाने वाली, शारीरिक रोग और शत्रुओं को शान्त करने वाली, राज्य और राष्ट्र की उन्नति करने वाली, मङ्गलकारिणी, पवित्र और इहलोक तथा परलोक इन दोनों में सुख देने वाली यह महाशान्ति नामक पूजाविधि बतला दी है ॥ 657-659॥

चैत्रमाससमारम्भे[3] ये मयाभिहितास्तव।
ते सर्वे ब्रह्मसदनं तदा यान्ति द्विजोत्तम॥ 660॥

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! जो मैने ये देव तुम्हें बतलाये हैं वे सबके सब भी चैत्रमास के आरम्भ काल में ब्रह्मलोक में चले जाते हैं ॥ 660॥

बाह्मी सभा कामरूपा विशेषेण सदानघ[4]।
धारयत्यचलं रूपमनिर्देश्यं मनोहरम्॥ 661॥

हे पापाचाररहित ब्राह्मण! इच्छानुसार रूप धारण करने वाली वह ब्राह्मी सभा सदैव विशेषरूप से स्थिर, अनिर्वचनीय और सुन्दर रूप को धारण किया करती है ॥ 661॥

---

1. *यह DEFCG, मया शान्तिः A*
2. *लोकोभय-CG*
3. *चैत्रशुक्ल A-चैत्रमाससमारम्भो BDF*
4. *सदानघा CG*

तस्यां सभायां ब्रह्माण[1] मनिर्देश्यं विसंयुतम्[2]।
यथोक्तास्तु नमस्यन्ति[3] ह्युपासन्ति स्तुवन्ति च[4] ॥ 662 ॥

उस सभा में अव्याख्येय एवं (सांसारिक बन्धनों से) मुक्त उस ब्रह्मा की जो पहंले बताये हैं वे अर्थात् सभी पूर्वोक्त देवता नमस्कृति उपासना एवं स्तुति करते हैं ॥ 662 ॥

विश्वावसुश्चाश्विनौ[5] गन्धर्वौ च हाहाहूहू[6]।
नारदप्रमुखाश्चान्ये गायन्ति[7] च जगद्गुरुम् ॥ 663 ॥

विश्वावसु, अश्विनौ (देवताओं के दो वैद्य) दो हाहा हूहु गन्धर्व और अपने प्रधान नारद के साथ अन्य मुनि जगद्गुरु (ब्रह्मा) का गीतगान करते हैं। ॥ 663 ॥

उपनृत्यन्ति[8] देवेशं देवरामा[9]: सहस्त्रश:।
उर्वशी मेनका रम्भा मिश्रकेशी ह्यलम्बुसा[10] ॥ 664 ॥

विश्वाची च घृताची च पञ्चचूला[11] तिलोत्तमा।
सानुमत्य[12]मला वृन्दा[13] प्राधान्येन तथेतरा: ॥ 665 ॥

हज़ारों देवाङ्गनायें प्रधान रूप से उर्वशी, मेनका, रम्भा, मिश्रकेशी, अलम्बुसा, विश्वाची, घृताची, पञ्चचूला, तिलोत्तमा, सानुमती, अमला, वृन्दा तथा अन्य

---

1. ब्राह्मणम् *H*
2. अनिर्देश्यौजसावृतम् *CG*
3. परित्यक्त *A*
4. स्तुवन्त: पर्युपासते *CG*
5. यह *AH*, चलशिनौ *F*, चलिशिनौ *BDE*, चाश्विनौ *CG*, शालिशिरा *ed. Leiden*, शालिशिनौ (मूलपाठ)
6. हहाहुहू *CG*
7. जयन्ते च *DEF*, यजन्ते *B*
8. उपानृत्यन्ति *B*, अग्रे नृत्यन्ति *H*
9. यह *CGDE*, देवानाम् *B*, देवनामा *AFH*
10. ह्यलम्भसा *B*, ह्यलंबुका *AD*
11. पंचचूर्णा *BE*
12. मानवती *BDEFH*
13. वृन्दा *CG*, मन्दा *D*

(अपसरायें भी) देवों के देव (ब्रह्मा) के समक्ष नृत्य करती हैं ॥ 664-665 ॥

तदा[1] पितामहो[2] देवः सर्वदेवसमागमे।
अब्दे[3] नियुङ्क्ते[4] मानुष्ये ग्रहादींस्तत्र पालकान्॥ 666 ॥

तब सभी देवताओं के उस सम्मेलन में पितामह ब्रह्मा मानववर्ष में ग्रहों आदियों को पालक (रक्षक) के रूप में नियुक्त करते हैं ॥ 666 ॥

कृत्वोपासां[5]जगद्भर्तुर्यान्ति स्थानात्ततःपरम्।
स्वानि स्वानि द्विजश्रेष्ठ हृष्टपुष्टा दिवौकसः[6] ॥ 667 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! जगत्स्वामी (ब्रह्मा) की उपासना करके उसके पश्चात् द्युलोकवासी देवता हृष्ट पुष्ट होकर इस स्थान से पृथक् अपने अपने स्थानों पर चले जाते हैं ॥ 667 ॥

चैत्रे मासि[7] सिते पक्षे पञ्चम्यां द्विजसत्तम।
श्रियश्च पूजनं कार्यं प्रोक्ता श्रीपञ्चमी तु सा॥ 668 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की पञ्चमी को लक्ष्मी की पूजा करनी चाहिए। वह श्रीपञ्चमी कही गई है ॥ 668 ॥

---

1. *यह तथा MSS, तथा A*
2. *यह DEFCG, पितामहा AH*
3. *आब्दे E*
4. *नियुक्ते A*
5. *कृत्वोपमां H*
6. *नीलमते नववत्सरः A, नीलमते नवसंवत्सरः BDEF, इति श्री-H*
7. *चैत्रमासि CG*

Ed. Leiden v.v. 642-644

सर्वथा[1] पञ्चमी पूज्या चैत्रे मासि ध्रुवं[2] तथा[3]।
यस्तु सम्पूजयेत्सर्वां पञ्चमीं[4] तु करीषिणीम् ॥ 669 ॥

नासौ विमुच्यते लक्ष्म्या यावज्जीवं द्विजोत्तम।
विष्णुलोकमवाप्नोति देहभेदे द्विजोत्तम ॥ 670 ॥

और हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! (वैसे तो) सदैव सभी पञ्चमी तिथियों पर लक्ष्मी की पूजा करनी चाहिए परन्तु चैत्रमास की पञ्चमी को निश्चित रूप से (लक्ष्मी की पूजा करनी चाहिए)। जो सभी पञ्चमी तिथियों में लक्ष्मी का पूजन करता है लक्ष्मी उसका जीवन भर त्याग नहीं करती है। वह देह त्यागने के पश्चात् विष्णुलोक को प्राप्त करता है ॥ 669-670 ॥

स्कन्दस्य तत्र कर्तव्या पूजा माल्यैः सुगन्धिभिः[5] ॥ 671 ॥

गन्धालंकारवासांसि कुक्कुटं च निवेदयेत्।
घण्टामजं[6] क्रीडनकं नैवेद्यं च मनोहरम् ॥ 672 ॥

उस (चैत्र में) सुगन्धित मालाओं, सुगन्धियों, आभूषणों, वस्त्रों, मुर्गे, घण्टे, बकरे, सुन्दर खिलौने और पूजा द्रव्यों से स्कन्द की पूजा करनी चाहिए ॥ 671-672 ॥

ध्रुवेयं चैत्रषष्ठी च परिशेषा[7]स्तु कामतः[8]।
यः करोति गृहे तस्य विरोगाः सर्वबालकाः[9] ॥ 673 ॥

---

1. *सर्वा त्रा CG*
2. *ध्रुवा CG*
3. *तदा BDEF*
4. *सर्वाः पञ्चमीः CG*
5. *इस श्लोक के प्रथम दो पाद छूट गये हैं MSS.*
6. *अज्ञं A*
7. *परिशिष्टाः CG परिशेषाः A परितोषः H*
8. *कामदा A*
9. *नीलमते चैत्रषष्ठी BDF, इति श्री-H नीलमते श्रीपंचमी स्कन्दषष्ठी च A, इति नीलमतपुराणे बालकरक्षाकारि चैत्रशुक्लषष्ठीवर्णनं नाम त्रिंशोध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ABDFH*

Ed. Leiden v.v. 645-649

चैत्र मास की यह षष्ठी तिथि निश्चित रूप से मनानी चाहिए और शेष (चैत्रषष्ठी) तिथियाँ अपनी इच्छानुसार मनाई जानी चाहिएँ। जो इन्हें मनाता है उसके घर सभी बच्चे नीरोग रहते हैं ॥ 673 ॥

तामेव नवमीं प्राप्य सोपवासो नरः शुचिः।
सम्पूजयेद् भद्रकालीं पुष्पधूपान्नसम्पदा॥ 674॥

उसी नवमी के आने पर पवित्र मनुष्य को उपवास रखकर पुष्प, धूप और अन्न सामग्री से भद्रकाली की पूजा करनी चाहिए ॥ 674 ॥

सर्वा या[1] नवमी पूज्या भद्रकाली सुरेश्वरी।
कार्यसिद्धिमवाप्नोति तस्यां पूजयिता नरः[2] ॥ 675 ॥

देवों की स्वामिनी भद्रकाली की सभी नवमी तिथियों में पूजा करनी चाहिए जो उसमें उसकी पूजा करता है वह मनुष्य कार्य में सफलता प्राप्त करता है ॥ 675 ॥

एकादश्यां तु चैत्रस्य शुक्लपक्षे द्विजोत्तम।
तस्यां[3] पूजा च कर्तव्या[4] वास्तो[5]र्ब्राह्मणपुङ्गव॥ 676 ॥

पुष्पालंकारधूपाद्यैश्शाकैश्च विविधैस्तथा।
धूपैश्च विविधाकारैर्वह्निपूजाद्विजार्चनैः[6] ॥ 677 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ एवं उत्साही ब्राह्मण! चैत्रमास के शुक्लपक्ष की उस एकादशी में वास्तुदेव की पूजा करनी चाहिए। फूलों, अलङ्कारों, धूप आदि (के धूमों) विविध प्रकार की साग सब्ज़ियों, नानाविध स्वरूप वाले सुगन्धित पदार्थों

1. *यह H, वा BCG, च A*
2. *चैत्रनवमी अतिरिक्त A, नीलमते-BDF, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे चैत्रशुक्ले भद्रकालीनवमीवर्णनं नाम एकत्रिंशोध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ABDFH*
3. *तस्याः B*
4. *यह A, प्रकर्तव्या अन्य MSS*
5. *यह तथा अन्य MSS, वास्तु-A*
6. *अतिरिक्त F, नीलमते-ABDE, इति-H, इति श्रीनीलमतपुराणे चैत्रैकादश्यां वास्तुपूजावर्णनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH*

और ब्राह्मणपूजा तथा अग्निपूजा के द्वारा वास्तुदेव की पूजा करनी चाहिए ॥ 676–677 ॥

द्वादशी या तु चैत्रस्य शुक्ला नित्यमुपोषितैः[1]।
वासुदेवस्य कर्तव्या पूजा द्विज[2] यथाविधि[3] ॥ 678 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! चैत्र मास के शुक्लपक्ष की द्वादशी को हमेशा उपवास रखकर विधि के अनुसार वासुदेव (कृष्ण) की पूजा करनी चाहिए ॥ 678 ॥

चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां कामदेवं च[4] पूजयेत्।
पट्टस्थं[5] विविधैर्माल्यैर्गन्धैरुच्चावचैस्तथा ॥ 679 ॥

चैत्रमास के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी में वस्त्र पर स्थित (चित्रित) कामदेव के चित्र की विविध मालाओं और नाना प्रकार की उत्कृष्ट और निकृष्ट (साधारण) सुगन्धों से पूजा करनी चाहिए ॥ 679 ॥

आत्मशोभा च[6] कर्तव्या पूजनीया गृहस्त्रियः।
इयं ध्रुवा विनिर्दिष्टा शेषाः कार्या न वा द्विज ॥ 680 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! अपने आपको सजाना चाहिए और घर की स्त्रियों की पूजा करनी चाहिए। (इसका विधान है इस कारण) इस त्रयोदशी को निश्चित रूप से मनाना चाहिए। बाकी सब मनाई जायें या न मनाई जायें ॥ 680 ॥

---

1. *यह CG, उपोषितः DEBF, उपोषिता AH*
2. *तत्र CG*
3. *नीलमते चैत्रद्वादशी BDE, द्वादशी A, इति श्रीनीलमतपुराणे चैत्रशुक्लद्वादश्यां वासुदेवार्चनं नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ABCEFH।*
4. *यह A, तु अन्य MSS*
5. *पटस्थं CG*
6. *यह A, तु अन्य MSS*

द्वादश्यां शीततोयस्य कुम्भं पुष्पोपशोभितम्[1]।
कामदेवाग्रतः[2] स्थाप्यं[3] पल्लवैश्चोपशोभितम्[4] ॥ 681 ॥

अनर्काभ्युदिते[5] काले स्नाप्या स्यात्तेन वारिणा।
दयिता द्विजशार्दूल स्वयं[6] कान्तेन काश्यप[7] ॥ 682 ॥

हे कश्यप के वंशज और श्रेष्ठब्राह्मण! द्वादशी में फूलों और पत्तों से सजाया हुआ ठंडे जल का घड़ा कामदेव के आगे रखना चाहिए और सूर्योदय से पहले पति के द्वारा उस जल से पत्नी को स्वयं स्नान कराना चाहिए॥ 681-682 ॥

चैत्रे मासि[8] सिते पक्षे पञ्चदश्यां द्विजोत्तम।
योद्धुं याति निकुम्भस्तु पिशाचान् वालुकार्णवे॥ 683 ॥

तस्मात्तेषां तु मध्याह्ने एकैकस्य[9] गृहे गृहे।
पूजा कार्या प्रयत्नेन यथावत् तन्निबोध मे[10] ॥ 684 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! क्योंकि चैत्रमास के शुक्लपक्ष की पञ्चदशी को निकुम्भ पिशाचों से युद्ध करने के लिए रेत के समुद्र (मैदान) में जाता है इसलिए प्रत्येक घर में पिशाच की प्रयत्न से ठीक ठीक पूजा करनी चाहिए। उस

---

1. *पुष्पपयोम्भितम् B*
2. *कामाग्रतस्तु CG*
3. *संस्थाप्य CG*
4. *तृतीय तथा चतुर्थ पाद परित्यक्त BDEF*
5. *अनर्कांद्युतिते E*
6. *स्व-C*
7. *कश्यप ABD, मदनत्रयोदशी अतिरिक्त F, नीलमते-BDE, इति श्री-H, इति श्री नीलमतपुराणे चैत्रशुक्लत्रयोदशीमदनत्रयोदशीवर्णनं नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH*
8. चैत्रमासि *H*
9. *प्रत्येकं तु CG*
10. *निबोधय A*

पूजाविधि को मुझसे जानो ॥ 683–684 ॥

पिशाचं मृण्मयं कृत्वा काष्ठिकं[1] वा द्विजसत्तम।
गन्धैर्माल्यै[2]स्तथा वस्त्रैरलङ्कारैः प्रपूजयेत्[3] ॥ 685 ॥

भक्ष्यैश्च लोपिकापूपै[4]र्मांसैः पानैस्तथैव च[5]।
आयुधैर्विविधाकारै श्छत्रोपानहर्यष्टिभिः ॥ 686 ॥

हे ब्राह्मणोत्तम! मिट्टी या लकड़ी से पिशाच (की मूर्ति) बनाकर मनुष्य सुगन्धों, मालाओं, वस्त्रों और अलङ्कारों से उसकी विशेष पूजा करे और रोटी, चावल आदि खाद्य पदार्थों, पके अन्न (के पूरी, रेवड़ी गज़क आदि के टुकड़ों,) मालपूड़ों, माँस, शरबत आदि पेय वस्तुओं, अनेक प्रकार के आकार वाले हथियारों, छत्रों, जूतों और छड़ियों से भी उसका पूजन करे ॥ 685–686 ॥

नृभिः शुष्कान्नसम्पूर्णे[6] स्थायिभक्ष्ययुते[7] तथा।
कुद्दालपिटके चोभे तथा तस्य निवेदयेत्[8] ॥ 687 ॥

मनुष्यों के द्वारा सूखे अन्न से भरी, देर तक टिकने वाले भक्ष्य पदार्थों से युक्त काञ्चन वृक्ष की लकड़ी से बनी दो टोकरियाँ पिशाच को दी जायें। ॥ 687 ॥

गेयम्भानद्धवाद्यं च तन्त्रीवाद्यं च वादयेत् ॥
मध्याह्ने तं तु[9] सम्पूज्य प्राप्ते चन्द्रोदये पुनः[10] ॥ 688 ॥

---

1. *यह CDG, काक्षं A, काक्षिं E, कक्षं B, संशोधित, काक्ष्यं च (मूल पाठ)*
2. *गन्धमाल्यैः F*
3. *यह A, च पूजयेत् अन्य MSS*
4. *यह H, लेपिकापूपैः BCG, लेपिकाभिश्च A*
5. *यह H, रपूपैर्मांसपानकैः A, मांसैः पानैस्तथाविधैः BCDEFG*
6. *संशोधित-सम्पूर्णा ABDEFH*
7. *–युता ABDEFH, संस्थाप्यानेकभक्ष्यकम् CG*
8. *यह तथा अन्य MSS, निवेशयेत् A*
9. *यह A, तत्र G, तत् तु C*
10. *ततः H, 688a, 689ab, 690a परित्यक्त BDEF*

पूर्ववत्पूजयेद् विद्वान् स्ववित्तस्यानुरूपतः।
तथा कृतस्वस्त्यनो ब्राह्मणैस्तु विसर्जयेत्॥ 689॥

उपासक गीत गाये, मंढे हुए ढोल और तबले आदि और तानपूरा, वीणा आदि (लोहे के तार से बने) वाद्य बजाये। दोपहर को उसकी पूजा करके चन्द्रोदय के होने पर बुद्धिमान् व्यक्ति अपने धन सामर्थ्य के अनुसार पुनः उसकी पूजा करे और अपने लिए ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराकर उसकी मूर्ति को जल में विसर्जित करे ॥ 688-689॥

विसर्ज्यमाने[1] तस्मिं[2]स्तु[3] तन्त्रीवाद्यं च वादयेत्।
तस्यानुव्रजनं कार्यं द्वितीयेऽहनि काश्यप॥ 690॥

हे कश्यप के वंशज! उसको जल में विसर्जित करते समय तन्त्रीवाद्य बजाना चाहिए और दूसरे दिन इसी प्रक्रिया के साथ उसका अनुगमन करना चाहिए ॥ 690॥

आरोढव्यं[4] भवे[5]च्छैलं समीपस्थमि[6]ति स्थितिः।
गृहमागत्य[7] कर्तव्यमुत्सवं[8] गीतवादितैः[9]॥ 691॥

सुहृद्भिः सह भोक्तव्यं भोजनं तु विशेषवत्[10]॥ 692॥

समीपवर्ती पहाड़ पर चढ़ना चाहिए यह विधान है। घर लौटने पर गीत और वाद्य के साथ उत्सव मनाना चाहिए। मित्रों की सङ्गति में विशेष भोजन करना चाहिए। ॥ 691-692॥

---

1. *विसृज्यमाने CGH, विसर्जमाने A*
2. *यह CG, वादे H, वाद्ये अन्य MS*
3. *च A*
4. *आरोढव्यो CGH, आरूढव्यं A*
5. *भुवः BDEF*
6. *शैलः समीपस्थ CG*
7. *आगम्य ed. Leiden*
8. *कर्तव्य उत्सवः CG*
9. *गीतवादनैः CG, गीतवाद्यतः A*
10. *विशेषतः BDE*

इरा[1] नामा[2]प्सराः पूर्वं शप्ता[3] शक्रेण काश्यप।
विश्वावसोः सम्प्रयुक्ता सुरोपस्थान[4]वर्जिता॥ 693॥

हे काश्यप! विश्वावसु के द्वारा नियुक्त की गई इरा नाम की अप्सरा पूर्वकाल में इन्द्र के द्वारा शापित होकर देवताओं की सभा से निकाल दी गई॥ 693॥

स्थावरत्वमनुप्राप्ता हिमवत्यचलोत्तमे[5]।
बहुधा सा विभक्ताङ्गी निकुम्भे निर्गते बहिः॥ 694॥

उसने पर्वतों में उत्तम हिमवान् पहाड़ में (झाड़ी के रूप में) जड़ (स्थिर) आकृति प्राप्त की। निकुम्भ के बाहर चले जाने पर उसका शरीर अनेक रूपों में विभक्त हो गया॥ 694॥

यदा[6] जाता इरा[7] देवी इरापुष्पोपशोभिता।
इरावाटे[8] ततो गत्वा नारीपुत्रगणान्वितः[9]॥ 695॥

सुवासाः स्वनुलिप्ताङ्ग[10] सुचित्तः[11] सुसमाहितः।
इरासम्पूजनं कुर्यात् पुष्पै रत्नै[12]र्विचक्षणः॥ 696॥

जब इरा देवी इरा पुष्पों से शोभित हो तो इरावाट (उद्यान) में जाकर नारी और पुत्रजन से समन्वित, सुन्दर वस्त्र पहने हुए, अच्छी तरह शरीर के अङ्गों

---

1. *इला CG*
2. *नाम्नी CG*
3. *यह अन्य MSS, प्राप्ता A*
4. *सुराप्रस्थान- H*
5. *अचलोपमे B*
6. *तदा CG*
7. *त्विरा CG*
8. *इरावटं BE, इरावाटं CG*
9. *यह अन्य MSS, धनान्वितः A*
10. *स्वानुलिप्ताङ्गः AB*
11. *मुदितः G*
12. *अन्यैः BCDFG*

पर चन्दनादि का लेप किये हुए, प्रसन्नचित्त और एकाग्रचित्त हुआ बुद्धिमान् मनुष्य पुष्पों और रत्नों से इरा का पूजन करे ॥695-696॥

निवेदयेच्च विविधान्भक्ष्यभोज्यान्[1] सदीपकान्।
इरावाटे ततो गत्वा भोक्तव्यं तु[2] विशेषवत्॥697॥

. इसके बाद इरावाट (इरा के उद्यान) में जाकर दीपक जलाने के साथ अनेक प्रकार के चबाकर खाने योग्य और पतली खिचड़ी आदि बिना चबाये निगलने योग्य पदार्थों को (इरा देवी को) अर्पित करे। और फिर (हलुआ पूड़ी आदि) विशेष भोजन खाना चाहिए॥697॥

इरापुष्पैस्ततः पूज्या द्विजस्त्रीमित्रबान्धवाः।
रक्तसूत्रनिबद्धानि[3] इरापुष्पाणि कारयेत्॥698॥

इसके बाद ब्राह्मण, मित्र और भाई बन्धुओं की इरापुष्पों से पूजा करनी चाहिए और इन इरापुष्पों को लाल धागों से गूँथना चाहिए ॥698॥

बिभृयादात्मना तानि[4] स्त्रीषु दद्याद् विशेषतः।
श्रोतव्यं गीतावाद्यादि द्रष्टव्यं नर्तनं[5] तथा॥699॥

इन गूंथे हुए पुष्पों को अपने ऊपर धारण करना चाहिए और इनको मनुष्य विशेष रूप से स्त्रियों को प्रदान करे। उसे संगीत और वाद्य आदि श्रवण करना चाहिए और नाच को देखना चाहिए ॥699॥

इरापुष्पसमायुक्तं पानं पेयं विशेषवत्।
इरा देवेषु[6] दातव्या तथा प्रीणन्ति[7] देवताः॥700॥

---

1. *भक्ष्यान् भोज्यान् A, H*
2. *यह A, च अन्य MSS*
3. *रक्तसूत्राणि बद्धानि A*
4. *बाले B*
5. *वर्त्तनं A*
6. *देवीषु E*
7. *पेयन्ति A प्रीयन्ति (मूलपाठ)*

इरापुष्प से युक्त विशेष प्रकार का पान (पेय पदार्थ) पीना चाहिए।

देवताओं को (यही) इरा प्रदान करनी चाहिए। ऐसा करने से देवता प्रसन्न होते हैं ॥ 700 ॥

इरासहस्त्रं यो दद्यात् केशवाय समाहितः।
तस्य तुष्यति[1] देवेशः स्वर्गं लोकं स[2] गच्छति[3] ॥ 701 ॥

जो एकाग्रचित्त होकर हज़ार इरा के फूल केशव को समर्पित करता है उस पर देवेश्वर प्रसन्न होते हैं और वह स्वर्गलोक को जाता है ॥ 701 ॥

इरया पूजयेद् रुद्रं ब्रह्माणं शशिनं रविम्[4]।
शुभां[5] करीषिणीं दुर्गां[6] सर्वास्तुष्यन्ति देवताः[7] ॥ 702 ॥

रुद्र, ब्रह्मा, सूर्य, चन्द्रमा, शुभकारिणी लक्ष्मी और दुर्गा की पूजा इरा फूलों से करनी चाहिए इससे सभी देवता प्रसन्न होते हैं ॥ 702 ॥

इरा नागेषु दयिता दयिता मे विशेषतः ॥ 703 ॥

इरावाटे[8] तु यः पूजां करोति मम काश्यप।

---

1. *यह अन्य MSS, पुष्यति A*
2. *च AB*
3. *नयेच्च तम् CG*
4. *च विशेषतः CG*
5. *शुभं E, H*
6. *देवीं B*
7. *तोषयेत् सर्वदेवताः CG*
8. *इरावटे BE*

इरापुष्पैर्भृशं तेन तुष्टि में हि[1] प्रजायते[2] ॥ 704 ॥

हे काश्यप! इरा नागों को प्रिय है मुझे विशेषकर प्रिय है। जो इरावाट में मेरी पूजा इरा के फूलों से करता है उस (पुरुष) से मैं अत्यधिक सन्तुष्ट हो जाता हूँ ॥ 703-704 ॥

शुक्ले वैशाखमासस्य[3] तृतीयायां[4] द्विजोत्तम[5]।
तस्यां कार्य[6] यवैर्होमं[7] यवान् दद्याद् द्विजातये ॥ 705 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! वैशाखमास के शुक्लपक्ष की तृतीया को यवों के साथ हवन करना चाहिए और ब्राह्मणों को जौ देने चाहिएँ ॥ 705 ॥

यवैः सम्पूजयेद् विष्णुं भोक्तव्याश्च तथा यवाः।
गङ्गासम्पूजनं कार्यं तस्मिन्नहनि काश्यप[8] ॥ 706 ॥

हे काश्यप! उस दिन यवों से विष्णु की पूजा करनी चाहिए और जौ भी खाने चाहिए तथा गङ्गा की पूजा करनी चाहिए ॥ 706 ॥

जपं होमं[9] तथा श्राद्धं तपः स्नानादिकं च यत्[10]।
अक्षयं सर्वमुद्दिष्टं दानं स्वल्पमपि ध्रुवम् ॥ 707 ॥

---

1. *देहे B*
2. *-मेऽभिप्रजायते H तुष्टिमेत्यस्य स द्विज CG. इरामञ्जरीपूजा अतिरिक्त A, नीलमते-BDEF, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे चैत्र्यामिरामञ्जरीपूजावर्णनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH*
3. *वैशाखे शुक्लमासस्य CG*
4. *तृतीयस्यां H*
5. *यवानुत्पादयामास कृतं च कृतवान् युगम् अतिरिक्त ed. Leiden*
6. *तस्यां कार्यो CG*
7. *होमो CG*
8. *ब्रह्मलोकात् त्रिपथगां पृथिव्यामवतारयत् अतिरिक्त ed. Leiden*
9. *जपो होमो CG*
10. *तत् E*

(उस दिन किया हुआ) जप, होम, श्राद्ध, तप, स्नान आदि वह सब अक्षय होता है थोड़ा सा दान भी निश्चित रूप से अविनश्वर है ॥ 707 ॥

सिन्धुतीरे प्रयत्नेन द्वितीयायामुपोषितैः[1]।
तृतीयायां[2] च कर्तव्यं[3] मनुजैश्च[4] यथाविधि[5] ॥ 708 ॥

सिन्धु नदी के किनारे पर पहुँचकर मनुष्यों को द्वितीया और तृतीया के दिन उपवास रखते हुए प्रयत्न के साथ ये सब विधिपूर्वक करना चाहिए ॥ 708 ॥

विष्णुदेवो जगन्नाथो ब्रह्मन् प्राप्ते[6] कलौ युगे।
अष्टाविंशतमे[7] भावी[8] बुद्धो नाम जगद्गुरुः ॥ 709 ॥

पुष्ययुक्ते निशानाथे वैशाखे मासि काश्यप।
तस्मात् कालादथारभ्य काले भाविन्यतः परम् ॥ 710 ॥

---

1. *यह DEF, उपोषितः अन्य MSS*
2. *तृतीयेयं BF, तृतीयस्यां H*
3. *कर्तव्या ABF*
4. *यह A, तु अन्य MSS*
5. *अक्षयतृतीया अतिरिक्त A, नीलमते-BDEF, इति श्री-H, इति श्री-नीलमतपुराणेऽक्षयतृतीयावर्णनं नाम सप्तत्रिंशोध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त। ABDEFH*
6. *यह A, प्राप्ते ब्रह्मन् अन्य MSS*
7. *विंशतितमे CG*
8. *यह CG, भागे अन्य MSS*

शुक्ले सम्पूजनं तस्य यथा कार्यं तथा शृणु।
सर्वौषधैः सर्वरत्नैः[1] सर्वगन्धै[2]स्तथैव च[3] ॥ 711 ॥

बुद्धार्चास्नापनं[4] कार्यं शाक्योक्तै[5] र्वचनैस्तथा।
सुधासिताश्च कर्त्तव्या शाक्यावासाः प्रयत्नतः ॥ 712 ॥

हे ब्राह्मण! अट्ठाइसवें कलियुग के आने पर वैशाख मास में पुष्य नक्षत्र के चन्द्रमा से युक्त होने पर जगन्नाथ, विष्णुदेव, जगद्गुरु बुद्ध के नाम से (प्रसिद्ध) होंगे। हे काश्यप! तब से लेकर आगामी समय में शुक्लपक्ष में उनका पूजन जैसी (विधि से)करना है वह मुझसे सुनो। शाक्यों के वचनों के अनुसार सभी औषधियों, सभी रत्नों और सभी गन्धों से बुद्ध की प्रतिमा को स्नान कराना चाहिए। शाक्यों के निवास स्थानों (बौद्धविहारों) को प्रयत्नपूर्वक सफेदी से पोतना चाहिए ॥ 709-712 ॥

क्वचिच्चित्रयुताः कार्याश्चैत्या देवगृहा[6]स्तथा।
उत्सवं[7]च तथा कार्यं नटनर्तकसङ्कुलम्[8] ॥ 713 ॥

और कहीं कहीं चैत्यों (बौद्धमन्दिरों)और देवालयों को चित्रों से युक्त करना चाहिए। नटों और नर्तकों के समूह के साथ उत्सव मनाना चाहिए ॥ 713 ॥

शाक्यानां पूजनं कार्यं चीवरा[9]हार पुस्तकैः।
सर्वमेतद् भवेत्कार्यं यावत्प्राप्ता भवेन्मघा ॥ 714 ॥

---

1. *सर्वौषधिसमायुक्तैः CG*
2. *सर्वगन्धैः सर्वरत्नैः BDEF*
3. *सुभावितैः CG*
4. *स्नपनं DH, स्थापनं CG*
5. *शास्त्रोक्तैः H*
6. *देवालयाः CG*
7. *तत्सर्वं DE एतत्सर्वं CG*
8. *चतुर्थ पाद परित्यक्त BDEF*
9. *गोवस्त्राहार-CG धीवराहा-H, दीनाराहार-A प्रथम, द्वितीय और तृतीय पाद परित्यक्त BDEF*

बौद्ध भिक्षुओं को विशेष प्रकार के वस्त्रों, अन्नों और पुस्तकों से सम्मानित करना चाहिए यह सारा कार्य मघा नक्षत्र के आने से पहले तक कर लेना चाहिए ॥ 714 ॥

दिनत्रयं च कर्तव्यं नैवेद्यं विधिवद् द्विज।
पुष्पवस्त्रादिना पूजा दानं दीनजनस्य च[1] ॥ 715 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! तीन दिन तक विधिपूर्वक नैवेद्य (पूजा द्रव्य) बनाना चाहिए। फूलों और वस्त्रों तथा अन्य वस्तुओं से पूजा करनी चाहिए और गरीबों को दान देना चाहिए ॥ 715 ॥

पौर्णमासीं[2] तु[3] सम्प्राप्य वैशाखस्य द्विजोत्तम।
मधुयुक्तै[4]स्तिलैः[5] कार्यं तदा[6] ब्राह्मणपूजनम् ॥ 716 ॥

तिलैः स्नानं तिलैर्होमं[7] तिलैः श्राद्धं तथैव च।
मात्रादानं[8] तु कर्तव्यं दीपदानं सुरालये ॥ 717 ॥

तिला देयाश्च विप्रेषु दक्षिणायां[9] तथा तिलाः ॥ 718 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! वैशाख मास की पूर्णिमा को मधुयुक्त तिलों के द्वारा ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए। तिलों से स्नान, होम और श्राद्ध करना चाहिए। मन्दिरों के लिए धन का दान और दीपदान करना चाहिए। ब्राह्मणों को दक्षिणा में तिल देने चाहिएँ ॥ 716-718 ॥

---

1. *नीलमते बुद्धजन्माह: अतिरिक्त DEF, इति श्री-H, बुद्धजन्मदिनं A, इति श्रीनीलमतपुराणे वैशाखशुक्ले पुष्ययोगे बुद्धजन्माहोत्सववर्णनं नाम अष्टत्रिंशोऽध्याय:। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH*
2. *पौर्णमास्यां H*
3. *यह तथा अन्य MSS, च A*
4. *सान्नयुक्तै: BDGF, मानयुक्तै: E*
5. *द्विजै: DEF*
6. *तथा A*
7. *होम: CG*
8. *मात्राचारं A*
9. *यह A, भक्षणीया: अन्य MSS*

माघकृष्णे द्विजश्रेष्ठ एकादश्यामुपोषितैः[1]।
द्वादश्यां सकलः कार्यो वैशाखोक्तो[2] मया विधिः ॥ 719 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! माघ मास के कृष्णपक्ष की एकादशी को उपवास रखकर द्वादशी को वह सब करनी चाहिए जो विधि मैंने वैशाख मास के लिए कही है ॥ 719 ॥

वैशाख्यां पौर्णमास्यां[3] तु ब्राह्मणान् पञ्च सप्त वा[4]।
क्षौद्रयुक्तैस्तिलैः कृष्णै[5]रर्चयेदथवेतरैः ॥ 720 ॥

वैशाखमास की पूर्णिमा में तो मधु से युक्त काले या अन्य प्रकार के तिलों से पाँच या सात ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए ॥ 720 ॥

प्रीयतां धर्मराजेति[6] यदा[7] मनसि वर्तते।
यावज्जीवं कृतं[8] पापं तत्क्षणादेव नश्यति[9] ॥ 721 ॥

धर्मराज प्रसन्न हों ऐसा विचार जब मन में आता है तो जीवन भर किया गया जो पाप है वह उसी क्षण नष्ट हो जाता है ॥ 721 ॥

---

1. *उपोषितः ABDEFH*
2. *– वैशाखोक्तो H, सकलं कार्यं वैशाखोक्तं CG*
3. *यह H CG, पूर्णमास्या अन्य MSS*
4. *पञ्च सप्त वा BDEF*
5. *यह तथा अन्य MSS., पुष्पैः A*
6. *धर्मराट् चेति CG*
7. *यथा BDEF*
8. *यह BCEFGH, यावज्जीवकृतं A*
9. *प्रविनश्यति C, इति ज्येष्ठी अतिरिक्त A, नीलमते ज्येष्ठी BDEF, इति श्री–H, एक श्लोक अतिरिक्त तत्पश्चात् इति श्रीनीलमतपुराणे ज्यैष्ठीवर्णनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच CG, क्रिया परित्यक्त ABDEFH*

औषधीनां ततो राजा सम्पक्वो भवते यवः[1]।
यवान्नेन तदाभ्यर्च्या देवताः पितरस्तथा ॥ 722 ॥

उसके बाद जब औषधियों का राजा जौ पक जाता है तब देवों और पितरों की पूजा यवान्न से करनी चाहिए ॥ 722 ॥

ततो[2]ऽनुलिप्तः स्रग्वी च नववासा[3] यथाविधि।
वाद्यब्राह्मणघोषेण यवान्नं प्राशयेन्नरः[4] ॥ 723 ॥

उसके बाद चन्दनादि के लेप से युक्त और मालाओं को धारण करने वाला व्यक्ति नये वस्त्रों को पहिनकर विधिपूर्वक बाजों और ब्राह्मणों की ध्वनि के साथ जौ अन्न का भक्षण करे ॥ 723 ॥

ज्यैष्ठ्यां तु समतीतायां या द्विजेन्द्राष्टमी भवेत्।
तस्यां विनायकः पूज्यः सगणो मोदकोत्करैः ॥ 724 ॥

भक्ष्यैर्माल्यैस्तथा गन्धैः कुल्माषेण च भूरिणा।
गीतवाद्यैः[5] सुमधुरै र्ब्राह्मणानां च तर्पणैः ॥ 725 ॥

हे ब्राह्मणाधिपति! ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा के बीतने पर जो अष्टमी (आ रही) हो उसमें लड्डुओं के ढेरों, भक्ष्य पदार्थ, मालाओं, सुगन्धों बहुत से अधपके जौ, अत्यधिक मधुर गीतों, बाजों और ब्राह्मणों के तर्पणों से गणेश का पूजन करना चाहिए ॥ 724-725 ॥

सर्वासु वा[6] पूजनीयस्त्वष्टमीषु विनायकः।
कार्यसिद्धिमवाप्नोति सोपवासस्तु पूजयेत्[7] ॥ 726 ॥

1. *कुरुते यवाः BD*
2. *अतो A*
3. *नववासो A, वरवासा H*
4. *द्विजान् CG, यवाग्रायणम् अतिरिक्त A, नीलमते-BDF, सम्यगभ्यर्च्य ततस्तत्र यवान्नं प्राशयेत् स्वयम् CG, इति श्रीनीलमते यवाग्रायणवर्णनं नाम एकचत्वारिंशोध्यायः। नील उवाच C*
5. *यह ACG, गीतैर्वाद्यैः अन्य MSS*
6. *वै BDEF*
7. *विनायकाष्टमी AE, नीलमते विनायकाष्टम्यः BDF*

अथवा सारी अष्टमियों में विनायक (गणेश) की पूजा करनी चाहिए। उपवास (व्रत) रखकर जो उसकी पूजा करता है वह व्यक्ति कार्यों में सफलता प्राप्त कर लेता है ॥ 726 ॥

आषाढमासे[1] सम्प्राप्य[2] स्वातियोगं[3] तथा द्विज[4]।
वायुसम्पूजनं कार्यं गन्धैर्माल्यैर्द्विजोत्तम[5] ॥ 727 ॥

भूरिणा परमान्नेन सक्तुना विविधेन च।
सुमनोभिर्विचित्रैश्च कुसुमैश्च तथापरैः[6] ॥ 728 ॥

और हे ब्राह्मण! आषाढ़मास में स्वातिनक्षत्र के योग में पहुँचकर मनुष्य को सुगन्धों, मालाओं, प्रचुर मात्रा में दूध से बनाई खीर, नाना प्रकार के सत्तू, रंग- बिरंगे फूलों और दूसरी अनेक पुष्पकलिकाओं से वायुदेव की पूजा करनी चाहिए। ॥ 727–728 ॥

आषाढ[7]शुक्लपक्षान्ते कर्तव्यं दिनपञ्चकम्।
देवप्रस्वापने ब्रह्मन्नुत्सवं[8] गीतवादितैः[9] ॥ 729 ॥

हे ब्राह्मण! आषाढ़मास के शुक्लपक्ष के अन्त में देवों को सुलाने (के अवसर) पर गीतों और बाजों के साथ पाँच दिनों का उत्सव मनाना चाहिए॥ 729 ॥

---

1. *यह CG, आषाढयोगं BDEF, आषाढयोगे H*
2. *सम्प्राप्ते A*
3. *स्वातियोगे ABDEFH*
4. *तथैव च A*
5. *द्विजार्चनम् BDEF*
6. *स्वातियोगः अतिरिक्त A नीलमते-BDEF, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे आषाढमासे स्वातियोगवर्णनं नाम त्रिचत्वारिंशोध्यायः। नील उवाच C*
7. *आषाढ़े-E*
8. *यह H, उत्सवैः CG, तत्सर्वं A*
9. *गीतवादनैः H*

एकादशीचतुर्दश्योर्धनहोत्रं[1] च कारयेत्।
निशाद्वयं[2] ततः कार्यं[3] रात्रिजागरणं तथा॥ 730॥

एकादशी और चतुर्दशी में धनहोत्र नामक यज्ञ कराये और तब से लेकर दो रात्रियों तक रात्रिजागरण करना चाहिए॥ 730॥

द्वादश्यां पञ्चदश्यां च द्विज सात्वतपूजनम्।
त्रयोदश्यां च कर्तव्यं प्रेक्षादानं यथाविधि॥ 731॥

धनं[4] च शक्त्या दातव्यं ये नरा रङ्गजीविनः॥ 732॥

हे ब्राह्मण! द्वादशी और पञ्चदशी में विष्णु की पूजा करनी चाहिए और त्रयोदशी में विधिपूर्वक नाटकों (के मञ्चन) का आयोजन करना चाहिए तथा जो रङ्गकर्मी (अभिनय द्वारा जीविकोपार्जन करने वाले) हैं उनको यथाशक्ति धन देना चाहिए । ॥ 731-732॥

हिंसात्मकै[5]स्तु किं तस्य यज्ञैः कार्यं[6] महात्मना।
प्रस्वापे च प्रबोधे च पूजितो[7] येन केशवः[8]॥ 733॥

जिस महापुरुष ने केशव (विष्णु) के सुलाने और जागरण के उत्सव में उसकी पूजा की है उसको हिंसात्मक (हिंसा से भरे हुए) यज्ञों से क्या प्रयोजन है? अर्थात् उसे पशु बलि आदि से भरपूर यज्ञों को करने की आवश्यकता नहीं है॥ 733॥

---

1. *संशोधित धनहोरां D, धनहोरं AEF, राज्यहोमं H, बलिहोमं CG*
2. *निशाद्वये CG*
3. *अत्र कार्यं च CG*
4. *दानं EH*
5. *होमात्मकैः BDEF*
6. *किं कार्यं तस्य यज्ञैः H*
7. *पूजितं F*
8. *नीलमते प्रस्वापनम् अतिरिक्त ABDF, इति श्री-H*

आषाढान्ते वैश्वदेवं नक्षत्रं प्राप्य पण्डितः।
विद्वान्[1] सम्पूजयेद् देवान् वायूक्तविधिना तथा[2] ॥ 734 ॥

आषाढ़ मास के अन्त में वैश्वदेव नक्षत्र के प्राप्त होने पर विद्वान् पण्डित को वायुदेवता के विषय में कही गई विधि से (अन्य) देवताओं की पूजा करनी चाहिए ॥ 734 ॥

सक्तून् गोरस[3] सम्मिश्रान् ब्राह्मणेभ्यः प्रदापयेत्।
हिमं च शर्करां चैव शाकं हरितकं तथा ॥ 735 ॥

छत्रोपानहमाल्यादि दक्षिणायनवासरे।
वारिधानीश्च[4] सम्पूर्णाः शीततोयेन[5] मानद[6] ॥ 736 ॥

हे मान देने वाले! दक्षिणायन के दिन उपासक दूध से मिले हुए सत्तू, बर्फ, शक्कर, हरी सब्ज़ी, छाते, जूते, माला आदि और ठंडे पानी से भरे हुए जलपात्र (घड़े) ब्राह्मणों को देवे ॥ 735-736 ॥

आषाढ्यां समतीतायां यदा स्याद् द्विज रोहिणी।
तदा च[7] कश्यपः पूज्यो देशस्यास्य प्रवर्तकः ॥ 737 ॥

---

1. *विश्वान् BDE*
2. *तदा E, नीलमते वैश्वदेवपूजा अतिरिक्त BDEF, इति-H, -वर्णनम् G, उत्तराषाढपूजा A, इति श्रीनीलमतपुराणे वैश्वदेवनक्षत्रे विश्वेदेवपूजावर्णनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH.*
3. *गोमय-A*
4. *वारिधान्यैः B संशोधित, वारिधान्यश्च (मूलपाठ)*
5. *यह CEH, श्वेततोयेन अन्य MSS*
6. *नीलमते दक्षिणायनम् अतिरिक्त BDF.*
7. *यह A, तु अन्य MSS.*

गन्धमाल्यादिनैवेद्यै र्ब्राह्मणानां च पूजया।[1]
तस्मिन्नहनि रोहिण्यः पूजनीयाः सवत्सकाः[2] ॥ 738 ॥

हे ब्राह्मण! आषाढ़ पूर्णिमा के बीत जाने पर जब रोहिणी नक्षत्र का योग हो तब इस देश के संस्थापक कश्यप की पूजा सुगन्ध, माला आदि नैवेद्यों से करनी चाहिए। उस दिन ब्राह्मण की पूजा तथा बछड़ों समेत रोहिणी गौओं की पूजा करनी चाहिए ॥ 737-738 ॥

ततस्तु श्रावणीं प्राप्य वितस्तासिन्धुसङ्गमे।
स्नात्वा सम्पूजनं कार्यं[3] देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ॥ 739 ॥

श्रावणी के आ जाने पर वितस्ता और सिन्धु नदी के सङ्गम पर स्नान करके देवों के देव शार्ङ्गधनुर्धारी (विष्णु) की पूजा करनी चाहिए ॥ 739 ॥

स्वस्ति वाच्य[4] द्विजैः[5] पश्चात् क्रीडितव्यं यथासुखम्।
विशेषवच्च भोक्तव्यं तत्र वै[6] द्विजपुङ्गव ॥ 740 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! ब्राह्मणों के द्वारा स्वास्तिवाचन कराकर मनुष्य को सुख-सुविधा के अनुसार खेलना चाहिए तथा निश्चय ही वहाँ विशेष भोजन करना चाहिए ॥ 740 ॥

सामध्वनिश्च श्रोतव्यस्तस्मिन्नहनि काश्यप[7]।
क्रीडितव्यं विशेषेण कुमारीभिस्तथा जले[8] ॥ 741 ॥

हे कश्यप के वंशज! उस दिन सामवेद की ध्वनि भी सुननी चाहिए तथा कुमारी कन्याओं को विशेष रूप से पानी में क्रीड़ा करनी चाहिए ॥ 741 ॥

---

1. *पूजनम् C*
2. *इति नीलमते कामधेनुपूजा अतिरिक्त A*
3. *यह AH, कृत्वा अन्य MSS*
4. *स्वस्तिवाच्यं B, स्वस्तिवाद्यान् A*
5. *द्विजै : B द्विजान् (मूलपाठ)*
6. *तत्रैव BEF, यत्र वै G*
7. *कश्यप A*
8. *अन्तिम दो पाद परित्यक्त BD*

श्रवणर्क्षमनुप्राप्ते चन्द्रमस्यथ काश्यप।
स्नातस्य श्रवणे पुष्टिः सर्वस्मिन् सर्वदा भवेत्[1] ॥ 742 ॥

हे काश्यप! और इसके बाद चन्द्रमा का श्रवण नक्षत्र के साथ योग होने पर (इस दशायुक्त) श्रवण में स्नान करने वाले मनुष्य की सदा समस्त कार्य में पुष्टि (सिद्धि) होती है ॥ 742 ॥

श्रावण्यां समतीतायां या स्यात् कृष्णाष्टमी।
तस्यामुत्पद्यते देवो मानुष्ये मधुसूदनः ॥ 743 ॥

भारावतारणार्थं[2] हि तस्यां तु द्विजसत्तम।
अष्टविंशे तु[3] सम्प्राप्ते द्वापरान्ते च नः[4] श्रुतम् ॥ 744 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! अट्ठाइसवें द्वापर के अन्त में श्रावण की पूर्णिमा के पश्चात् कृष्णाष्टमी को (पृथिवी का) भार हल्का करने के लिए मधुसूदन (कृष्ण) देव मानव रूप में जन्म लेते हैं ऐसा हमने सुना है। ॥ 743-744 ॥

तत्राहनि तु कर्तव्यं तस्मात्कालात्तदा[5] परम्।
पूजनं देवदेवस्य देव्याश्चैव यथाविधि ॥ 745 ॥

तब उस (जन्मदिन के) समय से लेकर उस दिन देवों के देव (कृष्ण) की तथा देवी (कृष्णपत्नी रुक्मिणी) की विधि के अनुसार पूजा करनी चाहिए ॥ 745 ॥

---

1. *नीलमते श्रावणी अतिरिक्त ABDF, इति श्री-H, पहले दो पाद परित्यक्त BD*
2. *भारावतारे तीर्थं हि BDF, भारावतारि तीर्थं हि E, भारावतारणार्थाय H, धर्मसंरक्षणार्थं हि C*
3. *अष्टाविंशति BDEF*
4. *इति CG*
5. *-सदा-BCD, कालादथापरम् E, -ततः-H*

देवकी च यशोदा च तथा[1] पूज्ये[2] द्विजोत्तम।
गन्धैर्माल्यैस्तथा भक्ष्यैर्यवगोधूमसम्भवैः[3] ॥ 746 ॥

सगोरसैर्भक्ष्यभोज्यैः फलैश्च विविधैस्तथा।
एवं सम्पूजनं कृत्वा रात्रौ कुर्यान्महोत्सवम् ॥ 747 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! और उस दिन देवकी और यशोदा की पूजा गन्धों, मालाओं, जौ और गेहूँ से बने खाद्यपदार्थों, गाय के दूध से युक्त भक्ष्य (चबाने योग्य) और भोज्य (निगलने योग्य) पदार्थों तथा विविध प्रकार के फलों से करनी चाहिए इस प्रकार पूजा करके रात्रि को महान् उत्सव मनाना चाहिए ॥ 746-747 ॥

तथा[4] जागरणं कार्यं[5] नवम्यां द्विजसत्तम।
अनर्काभ्युदिते[6] काले स्त्रियः कौसुम्भवाससः ॥ 748 ॥

नदीतीरे शुभे रम्ये विविक्ते सरसि[7] त्वथ[8]।
नयेयुः प्रतिमाः सर्वा गीतवाद्यैर्मनोहरैः ॥ 749 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! और तब नवमी को जागरण करना चाहिए। सूर्योदय से पहले कुसुम्भ पुष्पों के रंग से रंगे वस्त्र पहिन कर स्त्रियां सुन्दर गीतों और वाद्यों के साथ सभी प्रतिमाओं को उठाकर नदी के सुन्दर और शुभ किनारे या निर्जन तालाब के पास ले जायें ॥ 748-749 ॥

---

1. *तदा BE*
2. *देवकीं च यशोदां च तथा पूजेद् G*
3. *यवगोधूमसर्षपैः E, भव्यै गोंधूमसम्भवैः H*
4. *इस श्लोक के पहले दो पाद परित्यक्त HCG रात्रिजागरणं BDEF*
5. *कुर्यात् B*
6. *अनर्केऽभ्युदिते Ed. Leiden*
7. *सरसे CG*
8. *अपि वा BCGH*

तस्मिन्नहनि भोक्तव्यं भोजनं यवसम्भवम्।
युक्तमिक्षुविकारैश्च मरिचैश्च घृतेन च[1] ॥ 750 ॥

उस दिन जौं से बने हुए, गन्ने के परिवर्तित रूप वाले गुड़ादि पदार्थों, मिर्चों और घी से युक्त भोजन खाना चाहिए ॥ 750 ॥

ततः पञ्चदशीं प्राप्य कृष्णां पित्र्यर्क्षसंयुताम्।
पितॄणां तर्पणं कार्यं श्राद्धं कार्यं प्रयत्नतः ॥ 751 ॥

उसके बाद पितृनक्षत्र से युक्त कृष्णपञ्चदशी के आने पर पितरों का तर्पण करना चाहिए और प्रयत्नपूर्वक उनका श्राद्ध करना चाहिए ॥ 751 ॥

सुभाषिता[2] बर्हिषदोऽग्निष्वात्ता[3]स्तथैव च।
क्रव्यादाश्चोपहूताश्च आज्यपाश्च सुकालिनः ॥ 752 ॥

सर्वे पितृगणाः पूज्याः पुष्पधूपान्नसम्पदा।
तिलैः कार्याः प्रयत्नेन श्राद्धास्तस्मिन् द्विजोत्तम[4] ॥ 753 ॥

सुभाषित, बर्हिषद, अग्निष्वात्त, क्रव्याद, उपहूत, आज्यप, सुकाली–इन सब पितरों की पूजा प्रचुर अन्नों, गन्धों और फूलों से करनी चाहिए। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! उस दिन प्रयत्नपूर्वक तिलों से श्राद्ध करने चाहिएँ ॥ 752–753 ॥

---

1. *नीलमते श्रीकृष्णजन्मदिनम् अतिरिक्त A, नीलमते कृष्णजन्माहः BDEF, इति श्रीजन्माष्टम्याहः H, इति श्रीनीलमतपुराणे कृष्णजन्माहवर्णनं नाम एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH.*
2. *यह BCDEFH, सुभाषिता A, सुभास्वतो G.*
3. *अग्निष्ठाताः C, अग्निष्वात्ताः F*
4. *नीलमते मघामावस्या AEF-माघामावस्या D-माघामावसी B, इति श्रीनीलमतपुराणे मघामावस्यावर्णनं नाम एकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त BDEFH*

प्रोष्ठपदस्य[1] मासस्य शुक्लपक्षे दिने दिने।
पूजनीयो महेन्द्रश्च शची[2] देवी तथैव च॥ 754॥

प्रोष्ठ पद (भाद्रपद) मास के शुक्लपक्ष के प्रत्येक दिन महेन्द्र और शची देवी की पूजा करना चाहिए॥ 754॥

पटे[3] कृत्वा[4] तु सर्वेण यथाशक्त्या द्विजोत्तम।
दैवज्ञेनैव विधिना पूजा कार्या[5] महीक्षिता॥ 755॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! कपड़े पर (उसे चित्रित करके) ज्योतिषी के द्वारा बताई गई विधि के अनुसार सारे राजाओं द्वारा शचीसमेत उसकी पूजा की जानी चाहिए ॥ 755॥

ब्राह्मणानां तु कर्तव्या[6] पूजा च[7] गोप्रजीविना।
भक्ष्यैरन्नैः[8] फलैर्मूलै[9] रत्नैर्वस्त्रैः[10] सधूपकैः॥ 756॥

भक्ष्य पदार्थों, अन्नों, फलों, मूलों (शकरकन्द आदि जड़ों) रत्नों, वस्त्रों और धूपों से ग्वाले को ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए ॥ 756॥

महेन्द्रः सगणः पूज्यः सायुधश्च सवाहनः।
इन्द्रपक्षस्य या मध्ये शुक्ला ब्राह्मण पञ्चमी॥ 757॥

---

1. *यह A प्रोष्ठपादस्य अन्य MSS*
2. *शची G सती (मूलपाठ)*
3. *पटी E*
4. *यह G, कृतं अन्य MSS*
5. *दैवज्ञार्थविधानेन पूजा कार्या G तु पूज्यो मूलपाठ*
6. *यह A, कर्तव्यं अन्य MSS*
7. *यह A, सम्पूजनं अन्य MSS*
8. *रत्नैः H*
9. *फलैर्वस्त्रमूलैः A*
10. *अन्नैः A*

तस्यां मे पूजनं[1] कार्यं गन्धधूपान्नसम्पदा।
माल्यैर्वस्त्रोपहारै[2]श्च वह्निब्राह्मणतर्पणैः ॥ 758 ॥

प्रेक्षादानैश्च विविधै भूमिशोभाभिरेव च।
तस्मिन्नेवाह्नि कर्तव्यं[3] स्थाननागस्य[4] चाप्युत[5] ॥ 759 ॥

(उसके) गणों समेत, शस्त्रों सहित और वाहनयुक्त महेन्द्र की पूजा करनी चाहिए। हे ब्राह्मण! इन्द्रपक्ष के बीच में जो शुक्लपक्ष की पञ्चमी हो उस में सुगन्ध, धूप और अन्नप्राचुर्य, मालाओं, वस्त्रों के उपहारों, अग्नि और ब्राह्मणों को तर्पणों नाट्याभिनय के समायोजनों और भूमि की सजावटों से मुझ नीलनाग की पूजा करनी चाहिए तथा उसी दिन स्थानीय नाग (देवता) की पूजा करनी चाहिए ॥ 759 ॥

ततस्त्वनन्तरं पक्षे[6] श्राद्धं कार्यं दिने दिने।
चतुर्दशीं वर्जयित्वा श्यामाकैस्तु विशेषतः ॥ 760 ॥

उसके बाद आने वाले पक्ष में चतुर्दशी को छोड़ कर प्रत्येक दिन श्यामाक (जंगली धान) से विशेष रूप से श्राद्ध करना चाहिए ॥ 760 ॥

शस्त्रेण निहता ये तु तेभ्यो धर्म्या चतुर्दशी।
सर्वं पक्षं[7] भवेच्छ्राद्धमेवमेवाह केशवः ॥ 761 ॥

---

1. *यह DEF, सम्पूजनं ACGH*
2. *यह ABDEFH, माल्य-CG*
3. *कर्त्तव्या सभी MSS*
4. *यह CDH, स्थाननागस्य E, स्थानं नागस्य A*
5. *चाप्यथ A*
6. *पक्षं BFB*
7. *सर्वपक्षं G*

त्रिभागहीनं पक्षं वा त्रिभागमन्त्यमे[1]व वा।
वित्तशक्त्या तु कर्त्तव्यं त्रयोदश्यां सदैव हि[2] ॥ 762 ॥

चतुर्दशी (का श्राद्ध) उनके लिए शास्त्रोक्तधर्म से विहित है जो शस्त्र से मारे गए हैं। केशव ने कहा है कि इस सम्पूर्ण पक्ष में श्राद्ध करना चाहिए। अथवा इस पक्ष के तीसरे भाग को छोड़कर या अन्तिम तीसरे भाग में (श्राद्ध करना चाहिए) त्रयोदशी को अपनी शक्ति के अनुसार सदैव ही श्राद्ध करना चाहिए ॥ 761-762 ॥

परपाकरति र्यो वै योऽपि चैवाधनो भवेत्।
कर्मजीवी भवेद् यो वै[3] तेनापि द्विजपुङ्गव ॥ 763 ॥

यथाकथञ्चिच्छ्राद्धं च कर्त्तव्यं स्यात् त्रयोदशीम्।
अत्र गाथा पितृगीता निबोध गदतो मम ॥ 764 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! दूसरों के द्वारा पकाकर दिये गये भोजन को खाने में रुचि वाले, निर्धन और मजदूर को भी त्रयोदशी के दिन जैसे तैसे श्राद्ध करना चाहिए। यहाँ पितृगणों के द्वारा गाई ये गाथा मुझ वक्ता से जान लो ॥ 763-764 ॥

अपि नः स कुले[4] जायेद्[5] यो नो[6] दद्यात् त्रयोदशीम्।
पायसं मधुसंमिश्र वर्षासु च मघासु च[7] ॥ 765 ॥

क्या वह हमारे कुल में पैदा होगा जो हमें वर्षा और शिशिर ऋतुओं में त्रयोदशी के दिन शहद मिली खीर खाने को देगा ॥ 765 ॥

---

1. *चान्त्यम् G*
2. *यह अन्य MSS, तु A*
3. *वा BEF*
4. *यह AB, संकुलो अन्य MSS*
5. *यह CDF जातो B, जयेद् MSS*
6. *न A*
7. *नीलमते श्राद्धपक्षः अतिरिक्त BDEF, इतिश्री–H, इति श्रीनीलमतपुराणे श्राद्धपक्षवर्णनं नाम द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH*

Ed. Leiden v.v. 734-737

श्राद्धपक्षस्य या मध्ये[1] चतुर्थी द्विजसत्तम।
दिक्पालपूजनं[2] कार्यं प्रौष्ठपद्या सदा[3] बुधैः ॥ 766 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! भाद्रपद मास की जो चतुर्थी श्राद्धपक्ष के मध्य में आये उसमें सदा बुद्धिमानों को दिक्पालों (दिशाओं के रक्षकों) की पूजा करनी चाहिए ॥ 766 ॥

आयुधानि च पूज्यानि रात्रौ दुर्गागृहे तदा[4]
स्नात्वा प्रभाते सम्पूज्य[5] सर्वाण्युक्तानि काश्यप[6] ॥ 767 ॥

भुक्त्वा तु शान्तिः कर्तव्या किञ्चिच्छिष्टे दिवाकरे।
नीराजनाख्या सा ज्ञेया[7] शालिहोत्रविचक्षणैः ॥ 768 ॥

ज्योतिषां पालकाद्याश्च[8] कल्पेष्वाथर्वणेषु च।
अतः परं पूजनीया जना ये रङ्गजीविनः[9] ॥ 769 ॥

हे काश्यप! उस समय रात्रि में दुर्गा मन्दिर में शस्त्रों की पूजा करनी चाहिए। प्रभात काल में स्नान करके और पूर्वोक्त सभी पदार्थों की पूजा करके तथा भोजन खाकर सूर्यास्त काल से कुछ पहले शान्ति महोत्सव मनाना चाहिए। शालिहोत्र (अश्वमेध) यज्ञ में निपुण विद्वानों के द्वारा यह पूजा विधि नीराजना नामक पूजा विशेष के रूप में जाननी चाहिए। इसके बाद ज्योतिर्विद्याओं, कल्पसूत्रों और अथर्ववेद से सम्बद्ध विद्याओं के रक्षकों की पूजा करनी चाहिए और जो रङ्गजीवी (रङ्गमञ्च के कलाकार) हैं उनका भी पूजन करना चाहिए ॥ 767-769 ॥

---

1. *मध्ये च G*
2. *दिक्कालपूजनं A*
3. *त्वया G*
4. *यह A, अन्य MSS*
5. *ज्य परित्यक्त A*
6. *कश्यप A*
7. *यह ABDEF, विज्ञेया CGH*
8. *पालका ये च Ed. Leiden*
9. *नीलमते महानवमी अतिरिक्त ABDFH, ओं नमः H, इति श्रीनीलमतपुराणे महानवमीवर्णनं नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDFH*

कन्यामध्यमनुप्राप्ते सहस्त्रकिरणे द्विज।
रात्र्यन्ते सोपवासेन पूज्योऽगस्त्यो महामुनिः[1] ॥ 770 ॥

पूर्णकुम्भैः[2] सकूष्माण्डैर्यवैर्धान्यैर्घृतेन च।
जातीपद्मोत्पलैः शुभ्रैश्चन्दनेन सितेन च॥ 771 ॥

धेन्वा वृषेण वस्त्रैश्च रत्नैः सागरसम्भवैः[3]।
छत्रोपानहदण्डैश्च पादुकाभिस्तथैव च॥ 772 ॥

भूरिणा परमान्नेन फलमूलैः सुशोभनैः।
अन्नप्रकारैर्भक्ष्यैश्च वह्निब्राह्मणभोजनैः[4] ॥ 773 ॥

संवत्सरं तु त्यागेन फलस्यैकस्य काश्यप।
अगस्त्यपूजां कृत्वैवं[5] दैवज्ञं पूजयेत् ततः[6] ॥ 774 ॥

हे काश्यप ब्राह्मण! सूर्य के कन्याराशि के मध्य में पहुँचने पर उपवास रखकर रात्रि के अन्त में पेठों समेत जल भरे घड़ों, जौ, धान्यों (अनेक प्रकार के अन्नों), घी, सफेद चमेली, कमल और कुमुद पुष्पों, सफेद चन्दन, गाय, बैल, वस्त्रों, सागर में उत्पन्न रत्नों, छातों, जूतों, डंडों, खड़ाउओं, प्रचुर मात्रा में बनाई गई खीरों, बहुत सुन्दर फलों और कन्दों (जैसे शकरकन्दों) अनेक प्रकार के अन्नों, भक्ष्य पदार्थों, अग्नि और ब्राह्मणों के भोजनों तथा एक किसी फल के एक वर्ष तक परित्याग के द्वारा मनुष्य को महान् मुनि अगस्त्य की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार अगस्त्य की पूजा करके तदनन्तर मनुष्य ज्योतिषी की पूजा करे ॥ 770–774 ॥

---

1. *यह A, मुनिर्भवेत् अन्य MSS*
2. *पूजाकुम्भैः E*
3. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त A*
4. *पूजनैः H,*
5. *कर्तव्यं A, कृत्वैव G*
6. *तदा BEF*

तेन संदर्शितं पश्येत्तदागस्त्यं महामुनिम्।
कामानभीष्टानाप्नोति दृष्ट्वागस्त्यं मुनिं[1] नरः[2] ॥ 775 ॥

तब वह उस ज्योतिषी के द्वारा दिखलाये गये महामुनि अगस्त्य मुनि का दर्शन करे। मनुष्य अगस्त्य मुनि को देखकर मनोवाच्छित कामनाओं को प्राप्त कर लेता है ॥ 775 ॥

धान्ये पक्वे सिते पक्षे दिने दैवज्ञचोदिते।
देवान् पितॄन्समभ्यर्च्य जलमग्निं द्विजांस्तथा ॥ 776 ॥

द्विजातिपूजनं कृत्वा दैवज्ञस्य च पूजनम्।
नववस्त्रपरीधानः[3] स्वनुलिप्तः[4] स्वलङ्कृतः ॥ 777 ॥

स्त्रग्वी पूर्वमुखः शुक्लो ब्रह्मघोषपुरःसरः[5] ॥ 778 ॥

---

1. *यह A, अगस्त्यमुनिं अन्य MSS.*
2. *नीलमतेऽगस्त्यदर्शनम् अतिरिक्त BDEF, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणेऽगस्त्यदर्शनवर्णनं नाम चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEFH*
3. *परीधानं A*
4. *स्वानुलिप्तः A*
5. *दूसरी पंक्ति परित्यक्त A, शृण्वन् वाद्य BDH, शृण्वन् वाक्य E*
   शृण्वन् वादित्रघोषं च गीतशब्दं तथैव च।
   मण्डलं रुचिरं कृत्वा भूमौ पट्टे पटेऽपि वा॥ CG, हाशिये में अतिरिक्त F

मध्ये ब्रह्माण[1]मालिख्य तथा[2]नन्तं च भोगिनम्।
ततो लिख्येत[3] दिक्पालान् स्वां स्वां दिशमवस्थितान्॥ 779॥

धान्य (अनाज) के पक जाने पर ज्योतिपी के द्वारा बताये गये शुक्लपक्ष में किसी दिन देवों, पितरों, जल, अग्नि और ब्राह्मणों तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों वर्णों की पूजा करके ज्योतिपी की भी पूजा करना चाहिए। नवीन वस्त्र धारण कर अनुलेपन कर, अलङ्कृत होकर माला पहन कर पूर्व की ओर मुख कर, ब्रह्मघोष (वेदपाठ ध्वनि) पूर्वक भूमि या वस्त्र पर मध्य में ब्रह्मा और अनन्त नाग को चित्रित कर अपनी अपनी दिशा में स्थित दिक्पालों का चित्रण करे। ॥776-779॥

तेषां तु पूजनं कार्यं धूपमाल्यानुलेपनैः।
वस्त्रै रत्नैः[4] फलैर्भक्ष्यैर्वह्निब्राह्मणतर्पणैः॥ 780॥

उनकी पूजा धूपों, मालाओं, अनुलेपों, वस्त्रों, रत्नों, फलों, भक्ष्यपदार्थों, अग्नितर्पण और ब्राह्मणतर्पणों के द्वारा करनी चाहिए ॥780॥

गुडोपेतास्तथा धानाः[5] सर्वसस्यसमुद्भवाः।
ब्राह्मणानां प्रदातव्या भृत्यबन्धुजनस्य च॥ 781॥

गुड़ में मिले हुए चावल तथा सभी अन्नों से बने भोजन ब्राह्मणों, सेवकों तथा सम्बन्धियों को देने चाहिएँ ॥781॥

स्वयं तु धाना भोक्तव्या रात्रौ न तु दिवा बुधैः।
दिवा धानासु वसति[6] रात्रौ च दधिसक्तुषु॥ 782॥

अलक्ष्मीः कोविदारेषु कपित्थेषु सदा स्थिता[7]॥ 783॥

1. *ब्राह्मणम् DEFH*
2. *ततो ABDEGH*
3. *विलिख्येत् E, लेख्यात् A*
4. *यह अन्य MSS, अत्रैः A*
5. *दानाः C*
6. *वसती A*
7. *सदार्थिता C. धनचतुर्थी अतिरिक्त F, नीलमते धनदचतुर्थी ABDE: इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे धनदचतुर्थीवर्णनं नाम पंचपंचाशत्तमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C*

Ed. Leiden v.v. 751-754

बुद्धिमान् व्यक्तियों को स्वयं रात में चावल खाने चाहिएँ न कि दिन में खाने चाहिएँ। क्योंकि लक्ष्मी का अभाव दिन को चावलों और रात को दही और सत्तुओं में रहता है और कचनार तथा कैथ में सदैव स्थित होता है ॥ 782-783 ॥

तामेव पञ्चमीं प्राप्य पूज्यो देवो जलेश्वरः।
पूजनीया उमा[1] देवी[2] यथा तु धनदस्तथा[3] ॥ 784 ॥

उस (पक्ष) की उसी पञ्चमी को पाकर जल के अधिपति (वरुण) देव की पूजा करनी चाहिए। जैसी उमा देवी की पूजा करनी चाहिए वैसी ही कुबेर की करनी चाहिए ॥ 784 ॥

तामेव षष्ठीं सम्प्राप्य[4] स्नापनीयाः[5] कुमारिकाः[6]।
अलङ्कृतास्तु कर्तव्या प्राप्य तामेव सप्तमीम् ॥ 785 ॥

उस (पक्ष) की उसी षष्ठी के आने पर कुमारियों को स्नान कराना चाहिए और उसी सप्तमी को पाकर उन्हें अलङ्कृत करना चाहिए ॥ 785 ॥

आत्मपूजा नरैः[7] कार्या स्त्रीणां बालजनस्य च।
ततस्तामष्टमीं प्राप्य क्रीडितव्यं यथासुखम्[8] ॥ 786 ॥

---

1. *तु सा HC*
2. *देव्या HC*
3. *यह पद्य परित्यक्त BD, नीलमते वरुणपञ्चमी अतिरिक्त AE नीलमते परित्यक्त F, इति श्रीनीलमतपुराणे वरुणपञ्चमीवर्णनं नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः। नील उवाच C*
4. *पञ्चमीं प्राप्य BDF*
5. *स्नपनीयाः AGH, पूजनीयाः E*
6. *कुमारकाः BDEF*
7. *जनैः G*
8. *तथा सुखम् DF*

सिन्दूरकर्दमाक्ताङ्गैर्नृत्यवाद्यपुरःसरम्[1]।
स्नात्वा सम्पूजनीया तु देवी नाम्ना[2] त्वशोकिका ॥ 787 ॥

मनुष्यों को अपनी और स्त्रियों तथा बच्चों की पूजा करनी चाहिए। उसके बाद उस अष्टमी के आने पर सिन्दूर से अङ्गों पर लेप कर नृत्त (नाच) और वाद्य के साथ सुखसुविधानुसार क्रीडा करनी चाहिए। फिर स्नान करके अशोकिका नामक देवी की पूजा करनी चाहिए ॥ 786–787 ॥

शय्यासनं निवेद्यं स्यात्[3] सोत्तरच्छदनं[4] शुभम्।
पुष्पान्नधूपनं[5] सर्वं भोक्तव्यं गुडसंयुतम् ॥ 788 ॥

अशोकिका की शय्या, आसन, ओढ़ने की सुन्दर चादर, पुष्प, अन्न और धूप, प्रदान करना चाहिए तथा गुड़ से युक्त भोजन करना चाहिए ॥ 788 ॥

उमायाः पूजनं कार्यं तस्यां[6] सौभाग्यमीप्सुना।
धूपान्नदीपमाल्यैश्च[7] दध्यन्नेन[8] गुडेन वा[9] ॥ 789 ॥

कुसुम्भलवणाभ्यां वा[10] कुङ्कुमाञ्जनकङ्कणैः[11]।
आराममथ गत्वा तु[12] तोयवृक्षोपशोभितम्[13] ॥ 790 ॥

---

1. *नृत्यवाद्यपुरःसरैः BDEFG*
2. *यह AH, नाम अन्य MSS*
3. *च G*
4. *–छादनं G*
5. *पुष्पार्घ्य–G*
6. *तस्याः AH*
7. *धूपान्नैः–H*
8. *यह A अघातेन BDEF, आर्द्रकेण H,*
9. *धूपार्घ्यदीपमाल्यैश्च भुञ्जीतान्नं गुडान्वितम् अतिरिक्त G*
10. *–लवणाद्यैश्च BDEF*
11. *यह A, काङ्क्षितैः BDE*
12. *परित्यक्त E*
13. *नीलमते गोधूमनवमी अतिरिक्त ABDEF, इति श्रीनीलमतपुराणे गोधूमनवमीवर्णनं नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नीलः, उवाच C*

Ed. Leiden v.v. 758-761

ततस्तोये तु[1] वैतस्ते स्नातव्यं[2] दिनसप्तकम्[3]।
दशम्यादौ[4] द्विजश्रेष्ठ यताहारेण[5] साधुना॥ 791॥

वितस्ताजन्मदिवसात्[6]त्र्यहं पूर्वं त्र्यहं परम्।
वितस्ताजन्मदिवसं तां च ब्रह्मंस्त्रयोदशीम्॥ 792॥

उस अष्टमी में सौभाग्य चाहने वाले व्यक्ति को धूप, अन्न, दीप, माला, दही, अन्न और गुड़, कुसुम्भ, फूल, लवण, कुङ्कुम, अञ्जन और कङ्कणों से उमा की पूजा करनी चाहिए। और उसके बाद हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ब्राह्मण! वृक्षों और जलप्रवाहों से शोभित उद्यान में जाकर तदनुसार संयमित भोजन करने वाले सज्जन मनुष्य को दशमी आदि तिथियों में सात दिन तक तीन दिन पूर्व और तीन दिन पश्चात् तथा वितस्ता के जन्मदिन त्रयोदशी के दिन वितस्ता के जल में स्नान करना चाहिए॥ 789-792॥

पूजनीया वितस्ता स्यात्त[7]था तद्[8] दिनसप्तकम्[9]।
गन्धैर्माल्यैः[10] सनैवेद्यैर्दीपदानैः सुशोभनैः[11]॥ 793॥

पताकाभि[12]र्विचित्राभी रक्तसूत्रैः सकङ्कणैः[13]।
फलैश्च विविधै र्ब्रह्मन् वह्निब्राह्मणतर्पणैः[14]॥ 794॥

---

1. *तोयेन H*
2. *पातव्यं H*
3. *यह G, पञ्चकम् अन्य MSS*
4. *दशम्यादि G*
5. *यह G यदाहारेण अन्य MSS*
6. *-दिवसं A*
7. *नम A*
8. *तद् G, ते C*
9. *पञ्चकम् C*
10. *गन्धमाल्यैः BDEF*
11. *दीपैः धूपैश्च शोभनैः G*
12. *यह A, स्नानकाभिः अन्य MSS*
13. *च कङ्कणैः ACG*
14. *वितस्तोत्सवम् A, नीलमते-BDF, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे वितस्तोत्सववर्णनं नाम अष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ABDEFH*

Ed. Leiden v.v. 762-765

हे ब्राह्मण! उन सात दिनों तक वितस्ता नदी की पूजा गन्धों, मालाओं, नैवेद्यों, बहुत सुन्दर दीपदानों, विभिन्न प्रकार की पताकाओं, लाल धागों से युक्त कङ्कणों, विविध प्रकार के फलों तथा अग्नितर्पणों और ब्राह्मणतर्पणों से करनी चाहिए॥ 793-794॥

वितस्ताजन्मदिवसाद् यदूर्ध्वं स्याद्[1] दिनत्रयम्।
प्रेक्षादानं च कर्तव्यं पूजनीया[2] नटादयः॥ 795॥

वितस्ता के जन्मदिवस के पश्चात् तीन दिन तक नाट्याभिनयों का समायोजन कराना चाहिए तथा नटादियों को सम्मानित करना चाहिए ॥ 795॥

वितस्तोत्सवमध्ये तु[3] शुक्ला या द्वादशी द्विज[4]।
सोपवासो हरिं देवं[5] पूजयेत विचक्षणः॥ 796॥

हे ब्राह्मण! वितस्ता के उत्सव के मध्य में जो शुक्लद्वादशी आये उस दिन बुद्धिमान् मनुष्य उपवास करके भगवान् हरि (विष्णु) की पूजा करे ॥ 796॥

एषा ध्रुवा विनिर्दिष्टा शेषा कार्या न वा द्विज।
महती सा विनिर्दिष्टा द्वादशी सर्वदा शुभा[6]॥ 797॥

हे ब्राह्मण! ये (द्वादशी) निश्चित रूप से मनाने योग्य है अन्य को मनाया जाये या न मनाया जाये। वह यह द्वादशी सदैव ही बहुत शुभ कही गई है॥ 797॥

द्वादशी बुधयुक्ता सा[7] महत्यपि च कीर्त्तिता[8]।
तस्यां जपं तथा[10] स्नानं दानं श्राद्धादिकं तथा॥ 798॥

---

1. च *G*
2. तर्पणीया *G*
3. अपि *BDEF,* च *G*
4. यदि *H*
5. तत्र *G*
6. यह पाद परित्यक्त *D*
7. बुधसंयुक्ता *H*
8. प्रकीर्तिता *G*
9. जपं *G*
10. तदा *H*

प्रोक्तवान् द्वादशगुणं स्वयं मे मधुसूदनः।
बुधश्रवणसंयुक्ता द्वादशी द्विज सा[1] यदि॥ 799॥

अत्यन्तमहती नाम तस्यां सर्वमथाक्षयम्।
तस्यां स्नात्वा नरः सम्यङ् नदीद्वितयसङ्गमे॥ 800॥

फलमाप्नोति[2] यत् प्रोक्तं सन्निहत्यां रविग्रहे।
उपनहौ तथा छत्रं पूजाकुम्भं[3] तथैव च॥ 801॥

वस्त्रयुग्मं तथान्नाद्यं[4] यः प्रयच्छति वै तदा[5]।
शेषाणां यदि[6] चेत् कर्ता श्वेतद्वीपे महीयते[7]॥ 802॥

बुध नक्षत्र से युक्त वह द्वादशी भी महिमामयी कही गई है। मधुसूदन (भगवान् कृष्ण) ने मुझे स्वयं कहा है कि उस द्वादशी को किये गये जप, स्नान, दान, श्राद्ध आदि (के फल) बारहगुना हो जाते हैं। हे ब्राह्मण! यदि वह द्वादशी बुध और श्रवण (नक्षत्रों) से युक्त हो तो वह निश्चित रूप से अत्यन्त महिमाशालिनी होती है। और उस में किये गये सभी कार्य अविनश्वर होते हैं। उस (द्वादशी) में मनुष्य दो नदियों के सङ्गम में अच्छी तरह स्नान करके उसी फल को प्राप्त करता है जो सूर्यग्रहण में (नदियों के) सङ्गम (स्नान करने से) होता है। तब दो जूते, छत्र, पूजाकुम्भ, दो वस्त्र और अन्नादि का जो पुरुष दान करता है और शेष दिनों में भी इसी प्रकार दान करता है वह श्वेत द्वीप में सम्मान को प्राप्त करता है ॥ 798-802॥

---

1. *यह A, द्विज सा द्वादशी अन्य MSS*
2. *प्राप्नोति B*
3. *यह पूजाकुम्भं BDG, पूजाकुम्भो E, पूर्णकुम्भं (मूलपाठ)*
4. *तदान्नाद्यं DE, तथा नद्यां B*
5. *तथा AGH*
6. *चापि G*
7. *नीलमते द्वादश्यः अतिरिक्त ADEF*
   इति श्रीनीलमतपुराणे द्वादशीवर्णनं नाम एकोनषष्टितमो ऽध्यायः C

सैव चेच्छ्रवणोपेता यदि वा स्याच्च द्वादशी[1]।
तस्य स्युरिच्छतो[2] लोका यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥ 803॥

और वही द्वादशी यदि श्रवणनक्षत्र से युक्त होकर आये तो उसे मनाने वाला मनुष्य यदि वह चाहे तो चौदह इन्द्रों की समयावधि तक लोकों के ऊपर (शासन करने का) अधिकार प्राप्त कर लेता है॥ 803॥

तस्मिन्नहनि सम्प्राप्य[3] वितस्तासिन्धुसङ्गमात्[4]।
मृत्तिकां[5] स्नानकाले तु स्नातव्यं सततं तया[6]॥ 804॥

सङ्गम[7]स्नानजं पुण्यं तेनाप्नोति नरः सदा[8]॥ 805॥

उस दिन वितस्ता और सिन्धु के सङ्गम से (कुछ मिट्टी) प्राप्त करके उससे स्नानकाल में लगातार (देह में लगा कर) स्नान करना चाहिए। इस प्रक्रिया से मनुष्य सदा सङ्गम में स्नान करने से उत्पन्न पुण्य को प्राप्त करता है ॥ 804-805॥

अथाश्वयुक्चतुर्थ्यां तु देवपूजा[9] विधीयते।
नवम्युक्तविधानेन सर्वोपकरणादिभिः॥ 806॥

उसके बाद आश्विन मास की चतुर्थी को नवमी के लिए बताये गये विधान के अनुसार सभी (माल्यादि) उपकरणों से देवपूजा की जाती है ॥ 806॥

1. *यदि चेत् सा चतुर्दशी B, यदि चेत् स्यात्तु द्वादशी C, यदि स्याज्जातद्वादशी E*
2. *इच्छया G*
3. *संस्नाप्य BDEG, संस्थाप्य C*
4. *सङ्गमे G*
5. *संशोधित मृत्तिका से ABE, मृद् ग्राह्या स्नानकाले G*
6. *तथा A*
7. *सङ्गमं EH*
8. *महाद्वादशी अतिरिक्त A, नीलमते-BDE, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे महाद्वादशीवर्णनं नाम षष्टितमोऽध्यायः। नील उवाच C क्रिया परित्यक्त ABDEFH*
9. *देवीपूजा G*

पूज्याश्च सुभगास्तत्र याश्च नार्यः पतिव्रताः।
यासां जीवन्ति नाथाश्च स्वसृप्रभृतयश्च याः॥ 807॥

उसमें जो सौभाग्यवती स्त्रियाँ ऐसी हैं जिनके पति जीवित हैं और जो स्वयं पतिव्रता है उनकी तथा बहिनों आदि की पूजा करनी चाहिए॥ 807॥

यथैवाश्वयुजे मासि तथा माघे च पूजयेत्[1]।
यथा माघे तथा ज्येष्ठे[2] चतुर्थीत्रितयं तदा[3]॥ 808॥

तब जिस प्रकार आश्वयुज् (आश्विन) मास में उसी प्रकार माघ मास में तथा वैसे ही जेठ मास में (देवपूजा एवं स्त्रीपूजा करनी चाहिए)। इस प्रकार तीन चतुर्थियों के लिए यह विधान है ॥ 808॥

आश्वयुज्यां शुक्लपक्षे[4] स्वातिना संगतः शशी।
यदा तदोच्चैःश्रवसः पूजा कार्या प्रयत्नतः॥ 809॥

आश्वयुज् मास के शुक्लपक्ष में जब चन्द्रमा का स्वातिनक्षत्र के साथ योग हो तब प्रयत्नपूर्वक उच्चैःश्रवा (इन्द्र के घोड़े) की पूजा करनी चाहिए ॥ 809॥

पूजनीयाश्च तुरगा यदि[5] स्यान्नवमी द्विज।
शान्त्यै[6]स्वस्त्ययनं कार्यं तदा तेषां दिने दिने॥ 810॥

हे ब्राह्मण! यदि नवमी हो तब घोड़ों की पूजा करनी चाहिए। तब प्रतिदिन उनकी शान्ति के लिए स्वस्तिवाचन का कार्य करना चाहिए ॥ 810॥

---

1. *कारयेत् E*
2. *ज्यैष्ठे A*
3. *तथा BDEH चतुर्थीत्रयम् अतिरिक्त A, नीलमते-BDE, इति श्री-H, इति श्रीनीलमतपुराणे चतुर्थीतृतीय (त्रितय) वर्णनं नाम एकषष्टितमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नील उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABDEH*
4. *आश्विनस्य सिते पक्षे G*
5. *यदा E*
6. *शान्त्यै। शन्ति मूलपाठ F*

धान्यं भल्लातकं[1] कुष्ठवचासिद्धार्थकानि च।
पञ्चरङ्गेण[2] सूत्रेण तथा[3] बध्नीत पण्डितः॥ 811॥

बुद्धिमान् व्यक्ति धान्य, (चावल) भल्लातक, कुष्ठ (गन्धक), सूखा अदरख और सफेद सरसों इनको पाँच रंगों वाले सूत से बाँधे ॥811॥

वायव्यैर्वारुणैः सौरैः शाक्रैर्मन्त्रैश्च वैष्णवैः।
वैश्वदेवैस्तथाग्नेयैर्होतव्योऽग्निर्दिने दिने॥ 812॥

वायु, वरुण, सूर्य, इन्द्र, विष्णु, विश्वदेव और अग्नि सम्बन्धित मन्त्रों से प्रतिदिन अग्निहोत्र (अग्नि में आहुतियाँ डालकर) हवन करना चाहिए ॥812॥

तुरगा यन्त्रणीयाश्च पुरुषैः शस्त्रपाणिभिः।
ताडनं वाहनं चैव तदा तेषां विवर्जयेत्[4]॥ 813॥

(अपने) हाथों में शस्त्र धारण करने वाले पुरुषों को घोड़ों को (अपने) नियन्त्रण में रखना चाहिए। आदमी उस समय (उस दिन) उनको पीटना और उन पर चढ़ना छोड़ दें ॥813॥

ततः शाक्रमनुप्राप्ते नक्षत्रं च[5] निशाकरे।
कुमुदैरावणौ पद्मः पुष्पदन्तोऽथ वामनः॥ 814॥

सुप्रतीकोऽञ्जनो नीलः पूजनीया गजोत्तमाः।
नमस्कृत्य यथाश्वोक्तं[6] विधिं नागेषु कारयेत्[7]॥ 815॥

---

1. *वल्लातकं A, बल्लातकं H, वल्लतकं C*
2. *पञ्चरङ्गेन AH*
3. *तदा BEF*
4. *यह A, विसर्जयेत् BDEFH अश्वदीक्षा अतिरिक्त A, नीलमते अश्वदीक्षा DE, इति श्रीनीलमतपुराणे अश्वदीक्षावर्णनं नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नीलः उवाच अतिरिक्त C*
5. *यह A, तु अन्य MSS*
6. *संशोधित यथास्वोक्तं ABCEFH से*
7. *हस्तिदीक्षा A, नीलमते-BDEF, इतिश्री-H, इतिश्रीनीलमतपुराणे हस्तिदीक्षावर्णनं नाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः C, तत्पश्चात् नील उवाच अतिरिक्त C.*

इसके बाद चन्द्रमा के शक्र नक्षत्र को प्राप्त कर लेने पर कुमुद, ऐरावण, पद्म, पुष्पदन्त और वामन, सुप्रतीक, अञ्जन और नील इन उत्तम हाथियों की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार इन्हें नमस्कार करके अश्वों के सम्बन्ध में कही गई विधि के अनुसार (विधि अपनाकर) हाथियों की पूजा करे ॥814-815॥

ततोऽष्टम्यां पूजनीया भद्रकाली यथाविधि।
उपोषितैरर्घ्यधूपैश्च[1] वस्त्रैर्माल्यादिभिस्तथा[2] ॥816॥

दीपै रत्नै[3] स्तथा भक्ष्यैः फलैर्मूलैस्तथैव च।
आमिषैर्विविधैः शाकैर्वह्निब्राह्मणतर्पणैः ॥817॥

बिल्वपत्रेण च तथा[4] चन्दनेन घृतेन च।
पानकैर्विविधाहारैः[5] सस्यैः शिल्पिजनैस्तथा[6] ॥818॥

भूशोभाभिर्नृत्तगीतै रात्रिजागरणेन च।
दुर्गागृहे पुस्तकानां पूजा कार्या तथा द्विज ॥819॥

---

1. *वस्त्रधूपैः BDEFH, वस्त्रदीपैः C.*
2. *यह A, माल्यैर्वस्त्रादिभिर्द्विज BDEF*
3. *दीपरत्नैः BDEF*
4. *बिल्वपत्रैस्तथा सम्यक् G*
5. *विविधाहारैः H विविधाकारैः मूलपाठ*
6. *सस्यैश्चापि पृथग्विधैः G*

उसके बाद अष्टमी में पूजा द्रव्यों, धूपों, वस्त्रों, माला आदियों और दीपों, रत्नों, खाद्य वस्तुओं, फलों, कन्दमूलों, माँसों और अनेक प्रकार के शाकों (सब्ज़ियों), अग्नियों तथा ब्राह्मणों के तर्पणों, बेल के पत्ते, चन्दन, घी, पेय पदार्थों, विविध प्रकार के आहारों, अनाजों, भूसज्जाओं, नाचों, सङ्गीतों और रात्रि जागरण से उपवास रखने वाले शिल्पी जनों, (कारीगरों) के द्वारा भद्रकाली की पूजा करनी चाहिए। और हे ब्राह्मण! दुर्गामन्दिर में पुस्तकों की पूजा करनी चाहिए॥ 816-819॥

स्वकानां[1] शिल्पभाण्डानां[2] कार्या शिल्पिजनेन[3] च।
वाद्यभाण्डानि चान्यानि कवचानि तथैव च[4]॥ 820॥

आयुधानि वरं लब्ध्वा[5] हृष्टो मंगलपूर्वकम्[6]।
प्राश्नीयाद् दधिसंयुक्तं ब्राह्मणेनाभिमन्त्रितम्[7]॥ 821॥

आश्रितोपाश्रितान् मित्रान् फलवेदविदस्तथा[8]।
पूजनीयाश्च कर्तव्याः[9] स्त्रीभिर्गत्वा फलद्रुमम्[10]॥ 822॥

कारीगरों को द्वारा अपनी कलाओं में प्रयुक्त अर्थात् विविध प्रकार के कार्यों के लिए उपयोगी औज़ारों की पूजा करनी चाहिए। वाद्ययन्त्र, दूसरे कवच और हथियारों और उपहारों को लेकर वह (शिल्पिवर्ग) प्रसन्न हो कर मङ्गलाचरण के साथ ब्राह्मण के द्वारा मन्त्रों से पवित्र किये गये दधिमिश्रित भोजन को सेवकों तथा उनके आश्रित रहने वाले परिवारमित्रों और ज्योतिषियों को खिलाये और फिर स्त्रियों के साथ फल वाले वृक्ष के पास जाकर इन सबकी पूजा करे॥ 820-822॥

1. *स्वतानां A*
2. *शिल्पिभाण्डानां AF*
3. *यह अन्य MSS., शिल्पिजनेन A.*
4. *कवचास्त्राणि चैव हि G.*
5. *आयुधानि वरं हृष्टो F, तदा वरं लब्ध्वा हृष्टो C, वरं हृष्टे BE.*
6. *यह H, मङ्गलालब्धिपूर्वकं A, मङ्गलालब्धपूर्वकं C, मंगलालब्धपूजनं BDEF*
7. *ब्राह्मणानभिमन्त्रितान् E*
8. *मन्त्रफलवेदविदस्तथा F.*
9. *कर्तव्याः G कर्त्तव्यं (मूलपाठ)*
10. *फलद्रुमान् G*

Ed. Leiden v.v. 789b-792

देवीं सम्पूज्य पुष्पादिदीपधूपान्नसम्पदा।
देयं पिण्डं तु श्येनस्य तेन पिण्डोऽभिनन्दितः ॥ 823 ॥

पुष्पादियों, धूपों और अन्न की सम्पत्ति से देवी की पूजा करके और बाज को (अन्न) पिण्ड प्रदान करना चाहिए इस (कर्मकाण्ड) से वह (दिया गया) पिण्ड अभिनन्दित (अनुगृहीत) हो जाता है ॥ 823 ॥

सुहृत्सम्बन्धिविप्राणां[1] तथाश्रितजनस्य च।
दातव्यं भोजनं विप्र वसन्तेऽथ शरद्यपि ॥ 824 ॥

हे ब्राह्मण! मित्रों, सम्बन्धियों और आश्रित जनों (सेवकों) को वसन्त और शरद् ऋतु में भी भोजन प्रदान करना चाहिए ॥ 824 ॥

अष्टम्यां वा चतुर्थ्यां वा चतुर्दश्यां[2] तथैव च।
नवम्यामथ दातव्यं शुक्ले[3] पक्षेऽथ नेतरे[4] ॥ 825 ॥

शुक्लपक्ष में अष्टमी, चतुर्थी तथा चतुर्दशी एवं नवमी में (भी इनको) भोजन देना चाहिए और किसी दिन न भी दिया जाय ॥ 825 ॥

यथा[5] पूजा कृता देव्यास्तथा भोक्तव्यमग्रतः[7] ॥ 826 ॥

जिस (विधि) से देवी की पूजा की गई हो उसी विधि से उसके सामने भोजन करना चाहिए ॥ 826 ॥

एवमेव प्रदातव्यं गृहदेवान्[8] विचक्षणैः।
ब्रह्मन् संवत्सरस्यादौ[9] श्येनपिण्डं विवर्जितम्[10] ॥ 827 ॥

---

1. *मित्राणां A*
2. *चतुर्दश्यां चतुर्थ्यां वा E*
3. *शुक्ल G*
4. *ऽथवेतरे Ed Leiden.*
5. *तथा A, यस्याः G.*
6. *तस्याः G*
7. *नीलमते कार्तिकपूजा अतिरिक्त ABDEF, इति श्री-H, इतिश्रीनीलमतपुराणे कार्तिकपूजावर्णनं नाम चतुषष्टितमोऽध्यायः। तत्पश्चात् नीलः उवाच C*
8. *गृहदेवान् B, गृहदेवा F गृहदेव्या (मूलपाठ)*
9. *संवत्सरस्यादि BDEH*
10. *यह AH, विसर्जयेत् E*

Ed. Leiden v.v. 792-796

हे ब्राह्मण! इसी प्रकार से ही वर्ष के प्रारम्भ में बुद्धिमानों को श्येनपिण्ड को छोड़कर गृहदेवताओं को (भोजन) देना चाहिए ॥ 827 ॥

तच्च देयं गृहे विप्र न तु वृक्षे कदाचन[1] ॥ 828 ॥

और हे ब्राह्मण! यह भोजन घर में देना चाहिए किन्तु वृक्ष के नीचे कभी नहीं ॥ 828 ॥

यदा पक्वं[2] भवेद् द्राक्षावाटं[3] चैव सुशोभनम्[4] ।
गन्तव्यं स्त्रीसहायेन भृत्यमित्रान्वितेन[5] च ॥ 829 ॥

जब बहुत सुन्दर द्राक्षावाट (अंगूरों का बाग) पक जाये तो मनुष्य को पत्नी के साथ और नौकरों तथा मित्रों को साथ लेकर जाना चाहिए ॥ 829 ॥

अनुलिप्तेन[6] स्नातेन[7] स्रग्विणा च सुवाससा ।
द्राक्षावाटे[8] च[9] सम्पूज्या श्यामा देवी[10] द्विजोत्तम ॥ 830 ॥

पुष्पधूपान्नभक्ष्याद्यैर्ब्राह्मणानां च तर्पणैः ।
कुल्माषेण प्रभूतेन घृतेन मधुना तथा[11] ॥ 831 ॥

---

1. यह A, कथंचन CG नीलमते गृहदेवीपूजा अतिरिक्त BD- गृहदेव्याः पूजा E- गृहदेवपूजा AH. इति श्रीनीलमतपुराणे गृहदेवपूजावर्णनं नाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः। C
2. पक्वो CG.
3. द्राक्षावाटो CG.
4. यश्च सुशोभनः CG
5. भृत्यमित्रान्वयेन BEF.
6. अनुलिप्तेन A
7. स्नातेन साङ्गरागेन G
8. द्राक्षावटे BD.
9. तु G
10. संपूज्य श्यामां देवीं G
11. यथा EF

ब्राह्मणानां च दातव्या द्राक्षा प्रथमतो द्विज।
ततस्तु पश्चाद् भोक्तव्यं[1] मृद्वीकाबहुसंयुतम्[2] ॥ 832 ॥

कर्तव्यमुत्सवं[3] चानु गीतनृत्तसमाकुलम्[4] ॥ 833 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! (उपासक को) अनुलेपन और स्नान करके माला एवं सुन्दर वस्त्रों को धारण कर द्राक्षावाट में पुष्पों, धूपों, अन्नों, भक्ष्य पदार्थों आदि, अधपके जौ, प्रभूत घी, शहद और ब्राह्मणों के तर्पणों के द्वारा श्यामादेवी की पूजा करनी चाहिए। हे ब्राह्मण! सबसे पहले ब्राह्मणों को अंगूर देने चाहिए उसके बाद प्रचुर मात्रा में अंगूरों से युक्त भोजन लेना चाहिए। उसके पश्चात् गीतों और नृत्त (नाच) से युक्त उत्सव मनाना चाहिए! ॥ 830-833 ॥

प्रतिमासं च[5] पुष्येण राज्ञः स्नानं विधीयते।
ज्योतिषोक्तविधानेन सर्वकालफलप्रदम्[6] ॥ 834 ॥

प्रतिमास पुष्यनक्षत्र आने पर ज्योतिषविद्या के द्वारा कही गई विधि के अनुसार राजा को सब कालों में फल प्रदान कराने वाला स्नान कराया जाता है।

जन्मर्क्षे[7] च गते[8] चन्द्रे सर्वेणैवं[9] तथा द्विज।

---

1. *भोक्तव्या G*
2. *सम्मता G*
3. *कर्तव्यश्चोत्सवो G*
4. *समाकुलः G, श्यामादेवी पूजा अतिरिक्त A, नीलमते-BDEF, इति श्रीनीलमतपुराणे श्यामादेवीपूजावर्णनं नाम षष्टितमोऽध्यायः। C*
5. *यह A, तु अन्य MSS.*
6. *सर्वकामफलप्रदम् BEFG*
7. *जन्मर्क्षे B*
8. *सिते A*
9. *सर्वैरेवं G*

चन्द्रस्य पूजा[1]कर्तव्या नक्षत्रग्रहयोस्तथा[2] ॥ 835 ॥

नक्षत्रदेवता याश्च पुष्पधूपान्नसम्पदा।
विप्राग्निपूजनं कार्यमुत्सवो[3] गीतवादितैः[4] ॥ 836 ॥

हे ब्राह्मण! चन्द्र का जन्म नक्षत्र के साथ योग होने पर सब को इस प्रकार निम्न विधि से चन्द्रमा, नक्षत्र और ग्रह की पूजा करनी चाहिए। नक्षत्रों के देवताओं की फूलों, धूपों और अन्नप्राचुर्य से उपासना करनी चाहिए। ब्राह्मणों और अग्नि की (पूजा करनी चाहिए) तथा गीतवाद्यों के साथ उत्सव मनाना चाहिए ॥ 835-836 ॥

संवत्सरस्याथ[5] कार्यो[6] लक्षहोमो[7] महीक्षिता[8]।
कोटिहोमस्तथा कार्य[9] एक एव द्विजोत्तम ॥ 837 ॥

तयोर्विधानं विज्ञेयं कल्पेष्वाथर्वणेषु च ॥ 838 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! राजा को प्रतिवर्ष लक्षहोम और एक ही कोटिहोम सम्पन्न करना चाहिए। उनको करने की विधि कल्पसूत्रों और अथर्ववेद से सम्बद्ध ग्रन्थों से जाननी चाहिए ॥ 837-838 ॥

---

1. *चन्द्रपूजा च G*
2. *तदा A*
3. *यह G*
4. *यह अन्य MSS, वादिभिः A*
5. *प्रति संवत्सरं G*
6. *यह अन्य MSS, कार्यं A*
7. *लक्षहोमं E*
8. *महीक्षिताम् BDEF*
9. *परित्यक्त E*

नित्यानि तानि[1] कर्माणि निमित्तेष्वपराणि च।
सम्मन्त्र्य सह कार्याणि[2] सांवत्सरपुरोहितैः[3] ॥ 839 ॥

नित्य किये जाने वाले कार्य और दूसरे जो विशेष नैमित्तिक कार्य हैं वे सभी ज्योतिषियों तथा कर्मकाण्ड के जानकार पुरोहितों के साथ सलाह करके करने चाहिए ॥ 839 ॥

अभिषेकोऽह्नि कर्तव्यः[4] प्रतिसंवत्सरं नृपैः[5]।
अभिषेको[6] द्विजश्रेष्ठ यथापूर्वं सदैव तु[7] ॥ 840 ॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! राजाओं को अपने अभिषेक की (बरसी) के दिन प्रतिवर्ष पहले की तरह सदैव स्नान करना चाहिए ॥ 840 ॥

पुरोधाः[8] सोपवासस्तु जुहुयाज्जातवेदसि[9]।
गणं चैव प्रतिरथं शब्दवर्षगणावुभौ ॥ 841 ॥

आयुष्यमभयं चैव तथा स्वस्त्ययनं परम्।
वैष्णवानि च मन्त्राणि शाक्राणि विविधानि च[10] ॥ 842 ॥

सावित्रब्राह्मरौद्राणि वारुणानि तथैव च[11]।
नगरं च तथा कार्यं पताकाध्वजसङ्कुलम्[12] ॥ 843 ॥

उपवास करके पुरोहित को प्रतिरथगण, शब्दगण और वर्ष, गण आयुष्य,

---

1. *यह A. एतानि अन्य MSS*
2. *कार्याणि सह संमन्त्र्य G*
3. *नीलमते राजकर्माणि अतिरिक्त ABDEF, इति नीलमते राजकर्मविधिवर्णनम् G*
4. *दातव्यं AH*
5. *बुधैः BE, नृप A*
6. *अभिषेको G अभिषेकं कर्त्तव्यं (मूलपाठ)*
7. *यह A, तथा सदा अन्य MSS*
8. *पुरोगः BF*
9. *जातवेदसे G*
10. *चान्यानि च यथाविधि B, शैवानि च यथाविधि H.*
11. *यथाविधि E*
12. *यह पाद परित्यक्त AH*

अभय और स्वास्तिवाचन के मन्त्र तथा विष्णु, इन्द्र, सविता, ब्रह्मा, रुद्र और वरुण देवताओं के विविध मन्त्रसमूहों से अग्नि में आहुति देनी चाहिए। नगर को पताकाओं और ध्वजों (झंडों) के समूहों से सजाना चाहिए॥ 841-843॥

नीरजस्कं तथा कार्यं[1] राजमार्गं जलैः शुभैः[2]।
पौरैः स्नातैः सुवस्त्रैश्च भाव्यं मङ्गलमालिभिः[3]॥ 844॥

शुभजलों के द्वारा राजमार्ग को धूलिरहित बनाना चाहिए। नागरिकों को स्नान करके सुन्दर वस्त्र पहनकर मङ्गलमालाओं से युक्त होना चाहिए ॥ 844॥

गन्तव्यं वारमुख्याभिस्तथा राजनिवेशनम्।
पौरमुख्यैस्तथा बाह्यै[4]र्गणमुख्यैस्तथैव च॥ 845॥

मुख्य गणिकाओं, मुख्य नागरिकों, गणों के प्रमुखों और विदेशियों को राजमहल में जाना चाहिए॥ 845॥

शोभनीयं च नगरं मार्गाश्च नटनर्तकैः।
राजा स्नातः पुनः[5] स्नाप्यः पञ्चगव्येन धार्मिकः॥ 846॥

नगर और मार्गों को नटों और नर्तकों से शोभायमान बनाना चाहिए। (पहले) स्नान किये हुए धार्मिक राजा को पुनः पञ्चगव्य (दूध, दही, मक्खन, गोबर और गोमूत्र) से स्नान कराना चाहिए ॥ 846॥

मृत्ताम्ररौप्यसौवर्णैः स्नापनीयो घटैस्तथा[6]।
तोयस्य पयसो दध्नः सर्पिषश्च तथायुतैः[7]॥ 847॥

---

1. *यह पाद परित्यक्त A*
2. *शुभैर्जलैः H*
3. *मंगलमौलिभिः B*
4. *यह G, वाद्यै अन्य MSS*
5. *पुरः AH.*
6. *यह AB, तथा घटैः अन्य MSS*
7. *सर्षपैश्च तथायुतैः E*

शूद्रविशक्षत्रविप्राणां[1] गणमुख्यैर्यथादिशम्।
पश्चाद् दक्षिणतः प्राक् च उत्तरेण यथाक्रमम्॥ 848॥

मिट्टी, ताँबे, चाँदी और सुवर्ण से बनाये गये घड़ों में भरे हुए पानी, दूध, दही और घी से पश्चिम, दक्षिण, पूर्व और उत्तर में क्रमपूर्वक खड़े हुए शूद्रों, वैश्यों, क्षत्रियों और ब्राह्मणों के गणों के प्रमुखों के द्वारा (राजा को) स्नान कराना चाहिए ॥ 847-848 ॥

स्नानकाले च कर्तव्यं महाकल्कलं तथा[2]।
वादित्रशङ्खपुण्याहं[3] सूतवन्दिजनैः[4] सह॥ 849॥

स्नान के समय वाद्य, सङ्गीत, शङ्खध्वनि, सूतों और वन्दिजनों के द्वारा शुभ दिन की कामना और महान् कोलाहल किया जाना चाहिए ॥ 849 ॥

सामन्तैस्तु तथा भाव्यं छत्रचामरपाणिभिः।
राजा स्नातः पुनः[5] स्नाप्यो मृत्तिकाभिर्यथाक्रमम्॥ 850॥

सामन्त राजाओं को अपने हाथों में छत्र और चामर लिये हुए होना चाहिए। नहाये हुए राजा को पुनः क्रमानुसार मिट्टियों से स्नान कराना चाहिए ॥ 850 ॥

पर्वतो[6]र्ध्वमृदा[6] राज्ञः[7] शिरः[8] संशोधयेत् तदा[9]।

---

1. *विप्र परित्यक्त E*
2. *कर्तव्यो महान् कोलाहलः शुभः G*
3. *पुण्याह EG*
4. *स्नातवन्दिजनैः B*
5. *पुरः H*
6. *पर्वताध्वमृदा ABD*
7. *राज्ञां E*
8. *शिरं AH*
9. *संवेदयेत्तथा ABDEH*

शोध्यौ कर्णौ च वल्मीका[1]च्छक्रस्थाना[2]च्च कन्धरा[3] ॥ 851 ॥

तब राजा का सिर पर्वत की चोटी की मिट्टी से पवित्र करना चाहिए। कान बाँबी की मिट्टी और गर्दन इन्द्र के मन्दिर की मिट्टी से पवित्र करनी चाहिए। ॥ 851 ॥

राजवेश्मगृहद्वाराद्धृदयं तस्य शोधयेत्।
देवालयमृदा पृष्ठं[4] दक्षिणं तु[5] तथा[6] भुजम् ॥ 852 ॥

गजदन्तोद्धृतमृदा वृषशृङ्गमृदापरम्[7]।
वैश्यद्वारात्कटिं[8] चास्य ऊरू कमलिनीमृदा ॥ 853 ॥

उसके हृदय को राजमहल के घर के दरवाज़े से (मिट्टी लेकर) पीठ को देवमन्दिर की मिट्टी से पवित्र करना चाहिए। दाईं भुजा हाथी के दाँत से खोदी गई मिट्टी और दूसरी (बाईं भुजा) बैल के सींग से निकाली गई मिट्टी और कटिस्थल को वैश्य के दरवाज़े की मिट्टी तथा दोनों जङ्घाओं को कमलिनी (में लगी) मिट्टी से पवित्र करना चाहिए ॥ 852-853 ॥

पौरैः स्नातैः सुवस्त्रैश्च भाव्यं मङ्गलपाणिभिः।
मृद्भिः स्नाप्य[9] ततः स्नाप्यो[10] राजा सर्वौषधैः शुभैः[11] ॥ 854 ॥

---

1. *वल्मीकमृदा G*
2. *यह BH, चक्रस्थानात् E, छत्रस्थानात् ed. Leiden*
3. *गोस्थानाच्च तथा जङ्घे पादौ चोभौ सरो मृदा अतिरिक्त DEF*
4. *मृष्टं B*
5. *च FG,*
6. *तदा B*
7. *परः G*
8. *यह ADEG, कटी अन्य MSS*
9. *स्नातश्च BG*
10. *च संस्नाप्यो G*
11. *सर्वौषधिगणैः G*

सर्वगन्धैःसर्वरत्नैःसर्वबीजैस्ततः परम्।
सर्वपुष्पैः सर्वफलैर्दूर्वा[1]गोरोचनाङ्कुरैः ॥ 855 ॥

स्नान किये हुए अच्छे वस्त्र पहिनकर मङ्गलवस्तुओं को हाथ में लिये हुए नागरिक पहले मिट्टी से स्नान किये हुए राजा को उसके बाद सभी शुभ औषधियों, सभी गन्धों, सभी रत्नों, सभी बीजों, सभी पुष्पों, सभी फलों, दूर्वा (दूब घास) गोरोचन पीले रंग के (गोपित्त) और अङ्कुरों (से पवित्र किये जल) से स्नान करायें ॥ 854-855 ॥

ततो भद्रासनगतं तीर्थतोयैःशुभाम्बरैः[2]।
यथाशक्ति समानीतैः[3] पुरस्कृत्य[4] पुरोहितम्[5] ॥ 856 ॥

नृपतिस्त्वभिषेक्तव्यो[6] दैवज्ञवचनान्नरैः।
ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रमुख्यै[7]स्तथैव च ॥ 857 ॥

मुख्याभि र्वारमुख्याभि र्वणिग्भिश्च यथोचितम्।
ततः स्नातोऽनुलिप्ताङ्गः[8] कृतदैवतपूजनः[9] ॥ 858 ॥

---

1. *यह BDFGH धूर्वा अन्य MSS*
2. *शुभाम्बरम् BFG*
3. *समासीनः A*
4. *पुरस्कृतं H*
5. *पुरोधसम् CH*
6. *स्वभिषेक्तव्यो G*
7. *शूद्रैर्मुख्यैः G*
8. *अवलिप्ताङ्गः B*
9. *कृतदैवज्ञश्च जनः F*

Ed. Leiden v.v. 822-825a

आबद्धमुकुटः स्त्रग्वी बद्धपट्टो विभूषितः।
मङ्गलालम्भनं[1] कृत्वा दत्त्वा पूर्णाहुतिं ततः ॥ 859 ॥

पूजयेत धनौघेन दैवज्ञं सपुरोधसम्[2]।
यथाशक्ति द्विजांश्चान्यानभयं[3] चैव घोषयेत् ॥ 860 ॥

उसके बाद श्रेष्ठ आसन पर बैठे हुए पुरोहित को आगे करके अच्छे वस्त्र धारण किये हुए ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों के प्रमुख लोगों मुख्य गणिकाओं और व्यापारियों के द्वारा यथाशक्ति दूर दूर तीर्थों से लाये हुए जलों से ज्योतिषी के कथनानुसार राजा का यथोचित स्नान करवाया जाये। तब स्नान किये हुए अङ्गों पर लेप किये हुए मुकुट बांधे हुए, माला पहिने (माथे पर) पट्टा बाँधे हुए और विभूषित राजा को देवताओं की पूजा करके मङ्गल वस्तुओं को छूकर यज्ञ में पूर्णाहुति देकर इसके पश्चात् अपनी शक्ति के अनुसार धन के प्राचुर्य से पुरोहित के साथ ज्योतिषी और दूसरे ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए और दूसरे (बाकी) ब्राह्मणों के लिए अभयदान घोषित करना चाहिए ॥ 856-860 ॥

आघातस्थानगान्[4] सर्वान् विसृजेत् यथा[5] पशून्।
मोक्षयेद् बन्धनात्सर्वान्[6] ऋते लोकस्य कण्टकान् ॥ 861 ॥

जैसे आघात (वध्य) स्थान पर पहुँचे हुए पशुओं को छोड़ देवे वैसे संसार के लिए कष्टक (कष्टकारी) बने हुए दुष्ट पुरुषों को छोड़कर बाकी कैदियों को बन्धन मुक्त कर दे ॥ 861 ॥

व्याघ्रचर्मोत्तरे रम्ये तदा[7] सिंहासने शुभे।
उपवेश्यो भवेद् राजा स्वयं गृहपुरोधसा[8] ॥ 862 ॥

गृहपुरोहित स्वयं राजा को अधिक उत्कृष्ट व्याघ्रचर्म से (ढके) सुन्दर और शुभ सिंहासन पर बिठाये ॥ 862 ॥

---

1. *मङ्गलालभनं G*
2. *पुरोहितं E*
3. *नभयं A*
4. *आगतान्-H, अज्ञातस्थानगान् A*
5. *यथा (मूलपाठ) यह G*
6. *इस पद्य का दूसरा तीसरा पाद परित्यक्त E*
7. *तथा C*
8. *यह अन्य MSS, गृहं पुरोधसा A*

Ed. Leiden v.v. 825b-829a

पश्येरन् प्रकृतीः सर्वाः स्वयं मङ्गलपाणयः।
छत्रायुधाद्यं[1] सम्पूज्य गजसङ्घांस्तुरङ्गमान्[2] ॥ 863 ॥

आरुह्यालङ्कृतं नागं विसृजेद्ध[3]नसञ्चयान्[4]।
प्रक्रम्य नगरं सर्वं प्रविश्य[5] च तथा गृहम्[6] ॥ 864 ॥

सामन्तपौरमुख्यांश्च[7] धनेनार्च्य[8] विसर्जयेत्[9] ॥ 865 ॥

सभी प्रजाजनों को हाथों में मङ्गल वस्तुएँ लेकर (राजा को) देखना चाहिए। छत्र, शस्त्रादि, हाथियों के समूहों और घोड़ों की पूजा करके (राजा) अलङ्कृत हाथी पर सवार होकर धन के ढेरों को बाँटे। नगर की परिक्रमा कर के और घर में (वापिस लौटकर) प्रवेश करके सामन्तों और नगरप्रमुखों की धन से पूजा करके उन्हें विदा करे ॥ 863-865 ॥

नित्यं राज्ञा समुत्थाय पूजनीयाः सुरद्विजाः।
वह्निसम्पूजनं कार्यं द्रष्टव्यं वदनं घृते ॥ 866 ॥

(प्रातः) उठने के पश्चात् राजा को प्रतिदिन देवताओं और ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए और अग्नि की पूजा करनी चाहिए और घी में अपने मुँह (की परछाईं) को देखना चाहिए ॥ 866 ॥

---

1. *छत्रायुधाभ्यां B*
2. *गजसङ्घं तुरङ्गमम् B, गजसङ्घतुरङ्गभान् F*
3. *व्यसृजत् B*
4. *धनसञ्चयम् E*
5. *निवेश्य A*
6. *गृहं तथा E*
7. *सामन्तान् पौरमुख्यांश्च BG*
8. *चाभ्यर्च्य हर्षात् G*
9. *नीलमते संवत्सराभिषेकः अतिरिक्त BDEF इति श्री-H, -संवत्सराभिषेकः A. इतिश्रीनीलमतपुराणे संवत्सराभिषेकवर्णनं नाम अष्टषष्टितमोध्यायः। नीलः C*

Ed. Leiden v.v. 829b-832

श्रोतव्यं तिथिनक्षत्रं[1] कर्तव्यं वैद्यभाषितम्।
सभासंस्थेन[2] द्रष्टव्यो व्यवहारस्तथा समः॥ 867॥

तिथि और नक्षत्र (के नाम) को सुनना चाहिए और वैद्य के कहने के अनुसार कार्य करना चाहिए। सभा में जाकर उस (राजा) को समुचित न्याय करना चाहिए ॥ 867॥

विमानना न कर्तव्या कस्यचिच्च कदाचन।
स्वभेदो रक्षितव्य[3]श्च नित्यं ब्राह्मणपुङ्गव॥ 868॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! राजा को कभी किसी को अपमानित नहीं करना चाहिए तथा सदा आन्तरिक फूट से बचना चाहिए॥ 868॥

दुर्गत्वादस्य देशस्य परचक्रभयं विना।
स्वभेदेनेह नश्यन्ति बद्धमूला नराधिपाः॥ 869॥

यह देश पहुँचने में दुर्गम होने के कारण और दूसरे शत्रुसमूह के भय से मुक्त होने के बावजूद यहाँ अच्छी तरह स्थापित होते हुए भी राजा आन्तरिक फूट के कारण नष्ट हो जाते हैं ॥ 869॥

नित्यं सन्निहिता देवाः कश्मीरामण्डले[4] द्विज।
तेषां भक्तिः सदा कार्या नागेषु[5] ब्राह्मणेषु च॥ 870॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! इस कश्मीरामण्डल में सदैव देवता उपस्थित होकर रहते हैं। उनके प्रति तथा नागों और ब्राह्मणों के प्रति सदैव भक्ति रखनी चाहिए॥ 870॥

पूज्याः पिशाचाश्च तथा बलिपूर्वेण कर्मणा।
देशानुसाराः[6] कर्तव्या जनाः कार्याः स्वधिष्ठिताः॥ 871॥

---

1. *तिथिपत्रं च G*
2. *यह A, सभासदेन BDEF*
3. *रक्षितव्य A*
4. *काश्मीरमण्डले E*
5. *यह A, नागानां अन्य MSS*
6. *यह A, देशानुकाराः MSS*

बलिकर्म के द्वारा पिशाचों की पूजा करनी चाहिए इस कश्मीर देश में लोगों को अच्छी तरह बसाते हुए देश में प्रचलित रीति रिवाजों का उनसे पालन कराना चाहिए ॥ 871 ॥

आगतश्च जनः सर्वः पूजनीयो दिगन्तरात्।
दण्डोऽपराधप्रतिमः कार्यः सर्वस्य काश्यप ॥ 872 ॥

नोग्रदण्डो भवेद् राजा क्षमेत[1] न च[2] कस्यचित्।
कारयेत तथा[3] राज्यं राजशास्त्रोपदेशतः ॥ 873 ॥

हे कश्यप वंशज! (कश्मीरा में) अन्य दिशाओं से आये हुए सभी लोगों की पूजा करनी चाहिए। सबको अपने अपराध के अनुरूप दण्ड देना चाहिए। राजा को दण्ड देने में न उग्र होना चाहिए और न किसी को क्षमा करना चाहिए। उसे राजशास्त्र के उपदेश के अनुसार राज्य करना चाहिए ॥ 872-873 ॥

निकुम्भे निर्गते ब्रह्मन् तथा चैवाप्यनागते[4]।
षण्मासमध्ये कर्तव्या यात्रा देवगृहे नृपैः ॥ 874 ॥

संवत्सरे[5] सकृत्[6] कार्यो[7] देवतानां गृहे गृहे।
यात्रोत्सवो[8] यथा[9] ब्रह्मंस्तथा मे गदतः शृणु ॥ 875 ॥

हे ब्राह्मण! छः महीनों के मध्य जब निकुम्भ बाहर गया हो और वापिस नहीं लौटा हो तब राजाओं को देवगृहों (देवालयों) की यात्रा करनी चाहिए। हे ब्राह्मण! वर्ष में कम से कम एक बार देवताओं के प्रत्येक घर (देव मन्दिर) में जैसा यात्रोत्सव मनाना चाहिए उसकी वैसी विधि मुझ वक्ता से सुनो ॥ 874-875 ॥

---

1. *क्षमते E*
2. *च न FG*
3. *तदा E*
4. *देवेऽप्यनागते BD*
5. *संवत्सरं AH*
6. *सदा G*
7. *कार्यो G कार्यं मूलपाठ*
8. *यात्रोत्सवः AGH यात्रोत्सवं (मूलपाठ)*
9. *तथा AH*

Ed. Leiden v.v. 838-841

विनायकगृहे यात्रा चतुर्थ्यां संप्रशस्यते[1]।
कुमारस्य गृहे षष्ठ्यां[2] सप्तम्यां सवितुस्तथा ॥ 876 ॥

दुर्गागृहे नवम्यां च पञ्चम्यां श्रीगृहे तथा।
अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां[3] महादेवनिवेशने ॥ 877 ॥

शक्रवेश्मनि चाष्टम्यां पौर्णमास्यां कलाभृतः[4]।
धनदस्य चतुर्थ्यां तु[5] पञ्चम्यां वरुणस्य तु[6] ॥ 878 ॥

चतुर्थी में विनायक के मन्दिर की यात्रा प्रशंसित होती है, षष्ठी में कुनार के मन्दिर, सप्तमी में सूर्य (के मन्दिर), नवमी में दुर्गा के मन्दिर, पञ्चमी में लक्ष्मीमन्दिर, अष्टमी और चतुर्दशी में महादेव (शिव) के मन्दिर, अष्टमी में इन्द्र के मन्दिर, पौर्णमासी में चन्द्रमा के मन्दिर, चतुर्थी में कुबेर के (मन्दिर) और पञ्चमी में वरुण के मन्दिर की यात्रा प्रशंसित है ॥ 876-878 ॥

पञ्चमी द्वादशी चैव पौर्णमासी तथैव च।
सर्वेषामेव नागानां यात्राकर्मणि पूजिताः ॥ 879 ॥

पञ्चमी, द्वादशी और पौर्णमासी सभी नागों के मन्दिरों की यात्रा के कर्म के लिए पूजित (प्रशस्त) मानी जाती हैं ॥ 879 ॥

---

1. *सम्पश्यते E*
2. *यह A, कार्त्तिकेयालये षष्ठ्यां G, षष्ठ्यां कुमारस्य गृहे अन्य MSS.*
3. *यह सभी MSS, चतुर्थ्यां वा Ed. Leiden.*
4. *परित्यक्त E*
5. *च B*
6. *च B, तत्पश्चात् चतुर्दश्यां चतुर्थ्यां वा कार्यं यमनिवेश्मनि। अतिरिक्त BEF. यह पद्य परित्यक्त AH.*

Ed. Leiden v.v. 842-845

शुक्लपञ्चदशी शस्ता[1] सर्वदेवेषु काश्यप।
सर्वासु कार्यं तिथिषु तथातिथिनिवेशनम्[2] ॥ 880 ॥

हे काश्यप! शुक्लपक्ष की पूर्णमासी सभी देवताओं की यात्रा के लिए (शुभ) विहित है। अतिथियों के निवासस्थान पर सभी तिथियों में अवलोकनार्थ जाना चाहिए॥ 880 ॥

यात्रां तु कर्तुकामेन[3] पूर्वमेव दिने शुभे।
विनायकपतेः पूजा कर्त्तव्या मोदकोत्करैः ॥ 881 ॥

यात्रा को करने की कामना वाले मनुष्य को पहले ही शुभ दिन में गणेश महाराज की लड्डुओं के ढेरों से पूजा करनी चाहिए॥ 881 ॥

द्वितीयेऽहनि कर्तव्या ग्रहशान्ति[4] स्ततः[5] परम्।
तृतीयेऽहनि कर्त्तव्यं गन्धर्वाणां च पूजनम् ॥ 882 ॥

उसके बाद दूसरे दिन ग्रहों की शान्ति करनी चाहिए। तीसरे दिन गन्धर्वों की पूजा करनी चाहिए॥ 882 ॥

चतुर्थेऽहनि कर्त्तव्यं पिशाचानां च पूजनम्।
पञ्चमेऽहनि कर्त्तव्यं स्थाननागस्य[6] पूजनम् ॥ 883 ॥

और चौथे दिन पिशाचों की पूजा करनी चाहिए। पाँचवें दिन स्थानीय नाग देवता की पूजा करनी चाहिए॥ 883 ॥

---

1. *शप्ता D*
2. *निवेशनम् G निवेशने मूलपाठ*
3. *कर्तुः कामेन ED. Leiden*
4. *ग्रहकान्तिः G*
5. *यह AD, तथा अन्य MSS*
6. *स्नाने नागस्य BD*

Ed. Leiden v.v. 846-849

षष्ठेऽहनि च कर्त्तव्यं ब्राह्मणानां च पूजनम्।
सप्तमेऽहनि कर्तव्यं[1] दीनानाथस्य पूजनम्[2] ॥ 884 ॥

छठे दिन ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए। सातवें दिन गरीब और अनाथ की पूजा करनी चाहिए॥ 884 ॥

एवं तु यजनं[3] कृत्वा[4] यथावद् दिनसप्तकम्।
ततस्तु स्नापनं[5] कार्यं विधिना येन तच्छृणु ॥ 885 ॥

इस प्रकार विधिपूर्वक सात दिनों तक यज्ञ करके उसके बाद जिस विधि से स्नान कराया जाये वह (विधि) सुनो।॥ 885 ॥

सुधावदातं कर्तव्यं चित्रितं देवतागृहम्।
एवं तु यजनं कृत्वा[6] कुसुमोत्करभूषितम्[7] ॥ 886 ॥

ततोऽर्चास्नापनं[8] कार्यं कल्पशाखाविधानतः[9]।
पुण्याहगीतघोषेण सुभगानर्त्तितेन[10] च ॥ 887 ॥

देवमन्दिर सफेदी से उज्ज्वल और चित्रों से युक्त करना चाहिए और फूलों के समूह की सज्जा के साथ यज्ञ करके उसके बाद शुभ दिन के गीतों की ध्वनि और सौभाग्यवती नारियों के नृत्त (नाच) के साथ मूर्तियों को नहलाना चाहिए॥ 886-887 ॥

---

1. *दूसरा तथा तीसरा पाद परित्यक्त BD.*
2. *यह A, दीनानाथजनस्य च अन्य MSS.*
3. *योजनं H*
4. *गत्वा H*
5. *स्नपनं GH*
6. *आचारं शौचपूर्वं तु G*
7. *शोभितम् BFG*
8. *स्नपनं G*
9. *कल्पशाखानुसारतः G*
10. *नर्तनेन BDEF*

ततोऽर्चास्नापनस्यार्थं[1] पौरैर्नृत्तपुरःसरैः[2]।
आनेतव्यं[3] च महता विभवेनोदकं शुभम्॥ 888॥

उसके बाद मूर्ति के स्नान के लिए आगे आगे नाचते हुए नागरिकों को बड़े ठाट बाट और शान के साथ पवित्र जल लाना चाहिए।॥ 888॥

तीर्थात् सन्निहिताद्[4] राजन् गजपृष्ठाधिरोहितम्[5]।
अश्वयानेऽथ गोयाने नरयाने तथा[6] पुनः॥ 889॥

हे राजन्! पास के तीर्थ से निकाले हुए (उस जल को) हाथी की पीठ पर रखकर या रथ, बैलगाड़ी और मनुष्य की बँहगी में रखकर लाना चाहिए।॥ 889॥

प्रतिमां तेन सम्प्राप्य[7] स्नापयेत[8] यथाविधि।
राजाभिषेककथितः[9] कार्यश्च[10] नगरे विधिः[11]॥ 890॥

उस जल को प्राप्त करके उससे मूर्ति को विधि के अनुसार स्नान कराये। नगर में (दूसरे स्थानों पर भी) राज्याभिषेक के लिए बताई गई विधि के अनुसार (प्रतिमापूजन के कार्य को) करना चाहिए।॥ 890॥

---

1. *स्नापनस्यार्थे ADG, स्थापनस्यार्थे EF, स्नापनस्यान्ते B*
2. *यह ACDE FH, नृत्तपुरःसरम् Ed. Leiden*
3. *आनेतव्यं GH आनीतव्यः A*
4. *सनिहितं C*
5. *-रोहनम् C,-रोपितम् B, -रोहणम् AH*
6. *ऽथवा G*
7. *संप्लाव्य G*
8. *स्नपयेत GH*
9. *यह GH, राजाभिषेकः कथितः B राजाभिषेककथितं A*
10. *कार्यः GH कार्यं A*
11. *विधिः GH विधिं A*

प्राप्तेऽथ यात्रादिवसे[1] कूटागारं तु कारयेत्।
वस्त्रैर्माल्यैस्तथा गन्धैः[2] पताकाभिरलंकृतम्॥ 891॥

इसके बाद यात्रादिवस के आने पर वस्त्रों, मालाओं, सुगन्धों और पताकाओं से अलङ्कृत पालकी को बनवाये॥ 891॥

आरोप्य प्रतिमां तत्र तत्सरूपां तथापराम्[3]।
कूटागारश्च वोढव्यस्तुरगैर्गोभिरेव वा[4]॥ 892॥

बलिभिः पुरुषैर्वापि माल्यवस्त्राद्यलङ्कृतैः[5]।
नृपेण सोऽनुगन्तव्यः[6] सबलेनाथ पृष्ठतः॥ 893॥

उस (पालकी) में (उस मूल) प्रतिमा को रखकर तथा उसके सदृश दूसरी प्रतिमा को भी उसमें स्थापित कर उस पालकी को घोड़ों या बैलों या और माला वस्त्रादियों से सुशोभित बलवान् पुरुषों को ढोना चाहिए। उसके बाद अपनी सेनासहित राजा को उसके पीछे पीछे चलना चाहिए।॥ 892-893॥

प्रधानेनाथ गन्तव्यं[7] नृपहीने तथा पुरे[8]।
धूपपूजा प्रदातव्या स्थाने स्थाने तथापरैः॥ 894॥

इसके बाद राजा से विहीन नगर में (नगर) प्रधान को उत्सव में चलना चाहिए तथा जगह जगह दूसरे पुरुषों के द्वारा धूपों से पूजा प्रदान की जानी चाहिए।॥ 894॥

क्ष्वेडितोत्कृष्टशब्दैश्च[9] जयवाद्यस्वनैस्तथा।
पथा समेन[10] नगरं भ्राम्येत कूटगृहं शुभम्॥ 895॥

---

1. *कुछ पद परित्यक्त H*
2. *यह A, रत्नैः अन्य MSS*
3. *यह अन्य MSS, यथापराम् A*
4. *यह BDE, च अन्य MSS*
5. *-कृतः G*
6. *यह अन्य MSS, नृपे मासो स गन्तव्यः A*
7. *गन्तव्यो BEH, च कर्तव्यं G*
8. *नृपहीनस्तथापरः E*
9. *क्ष्वोडित-D, क्ष्वेडितोत्कृष्टकृतैः शब्दैः E*
10. *यथा स्वनेन BEFH*

हल्के और ऊँचे शब्दों तथा जयकारों और बाजों की आवाज़ों के साथ उस शुभ पालकी को समतल रास्ते से नगर में घुमाया जाये।॥ 895॥

ततः प्रवेश्य[1] प्रतिमां देववेश्मनि काश्यप[2]।
महान्तमुत्सवं[3] कार्यं गीतनृत्तसमाकुलम्॥ 896॥

हे कश्यप के वंश में उत्पन्न पुरुष! उसके बाद उस प्रतिमा को देवालय (देवमन्दिर) में प्रविष्ट कराकर गीत और नाच से भरपूर बहुत बड़ा उत्सव करना चाहिए।॥ 896॥

द्वितीयेऽहनि दातव्या प्रेक्षा रङ्गोपजीविनाम्।
तेषां शक्त्या धनं देयं मल्लादीनां द्विजोत्तम॥ 897॥

हे ब्राह्मणोत्तम! इसके बाद रङ्गकर्मियों के द्वारा नाटक का आयोजन किया जाना चाहिए। उनको तथा पहलवान आदियों को शक्ति के अनुसार धन प्रदान करना चाहिए॥ 897॥

प्रेक्षाकाले[5] च कर्त्तव्यं प्रेक्षकाणां च पूजनम्[6]।
मनुष्याणां द्विजश्रेष्ठ ताम्बूलकुसुमादिभिः॥ 898॥

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! नाटक के अभिनय के समय सामाजिकजनों की पूजा पान खिलाने और फूल आदियों से करनी चाहिए।। 898।।

ओदनं विकिरेद्[7] भक्त्या सपुष्पफलसंयुतम्।
भूतानां खन्यदृश्यानां[8] प्रेक्षकाणां द्विजोत्तम[9]॥ 899॥

---

1. *प्रविश्य ABC*
2. *स्थापयेत् E*
3. *उत्सवः G*
4. *संशोधित कार्यः G कार्यं (मूलपाठ)*
5. *प्रेक्ष्याकाले D*
6. *पूजयेत् F*
7. *विकरेद् BC*
8. *खल्वदृश्यानां Ed. Leiden*
9. *नीलमते यात्रोत्सवः अतिरिक्त तत्पश्चात् बृहदश्व उवाच ABDE, परित्यक्त A*

Ed. Leiden v.v. 862-865

हे श्रेष्ठब्राह्मण! गुफाओं में न देखे जाने वाले (क्षुद्र कीट पतङ्ग आदि) प्रेक्षक जीवों के लिए पुष्पों और फलों से मिले हुए चावल को (चारों ओर) बिखेर देवे॥ 899॥

बृहदश्वः
इत्युक्तवान् स नागेन्द्रो ब्राह्मणं तं[1] यशस्विनम्।
एष प्रयत्नः कर्तव्य[3] आरोग्यायुर्धनेप्सुभिः॥ 900॥

बृहदश्व ने (कहा)

स्वास्थ्य, आयु और धन चाहने वाले मनुष्यों को (उपर्युक्त प्रकार का) यह प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार उस नागराज (नील) ने उस यशस्वी ब्राह्मण (चन्द्रदेव) को यह कहा।॥ 900॥

वित्तशक्त्या करिष्यन्ति ये जना[4] नीलभाषितम्।
तेषामारोग्यमायुश्च धनं च भविता बहु॥ 901॥

जो लोग नील के द्वारा कहे गये वचन का (अपने) धन की शक्ति के अनुसार अनुपालन करेंगे उनको सुन्दर स्वास्थ्य, दीर्घायु और प्रचुर धन प्राप्त होगा।॥ 901॥

देहभेदे गमिष्यन्ति देवलोकं न संशयः।
पुत्रपौत्रास्तथैतेषां स्वर्गायुर्धनभागिनः॥ 902॥

भविष्यन्त्यायुषोपेता नात्र कार्या विचारणा।
तवापि[5] विदितं राजन् सकलं नीलभाषितम्॥ 903॥

(मृत्यु के पश्चात्) देह का नाश होने पर वे निश्चित रूप से देवलोक में जायेंगे और उनके पुत्र पौत्र भी स्वर्ग, दीर्घ आयु और धन को प्राप्त करेंगे। वे दीर्घ आयु को भोगने वाले होंगे। इसमें कोई सोचने की बात नहीं है। हे राजन्! नील के कहे सभी वचन आपको भी विदित हो गये हैं॥ 902-903॥

1. *तु A*
2. *प्रयत्नं ABE, प्रयत्नात् अन्य MSS*
3. *कर्तव्यः B*
4. *यह ABEG, नरा अन्य MSS*
5. *तथापि BH*

लोके देशेऽधिकमतः श्रुत्वा कुरु यथासुखम्।
काल्दोषसमुद्भिन्नं[1] यत् किञ्चिन्नीलभाषितम्[2] ॥ 904 ॥

तत् सर्वं कुरु राजेन्द्र मम वाक्येन मानद।
नीलवाक्यं न क्रियते[3] भवतीहोदकप्लवः ॥ 905 ॥

अतिवृष्टिरनावृष्टिर्दुर्भिक्षं मरणं [4]तथा।
अकाले राजमरणं राजदण्डश्च दारुणः[5] ॥ 906 ॥

इसलिए (ये सब सुनकर) लोक तथा देश में जिससे अधिक सुख प्राप्त हो ऐसा करो। हे मान देने वाले राजन्! नील के द्वारा कहे गये जो वचन कालदोष के कारण छूट गये हैं उन सबका मेरे कहने से पुनः पालन करो। यदि इन नील के वचनों का अनुसरण नहीं किया जाता तो यहाँ बाढ़, अतिवृष्टि, अनावृष्टि (सूखा) अकाल, मृत्यु, राजा की अकाल मृत्यु तथा भयानक राजदण्ड होते हैं। ॥ 904–906 ॥

हिमस्यैव प्रपतनं भूरि चैव प्रजायते[6]।
तस्माच्छ्राव्यं तु लोकानां बहुशो नीलभाषितम् ॥ 907 ॥

तत्कर्तारो भविष्यन्ति पशुधान्यधनैर्युताः।
त्वं चापि[7] विजयी शश्वत् सर्वत्रैव भविष्यसि[8] ॥ 908 ॥

और तब बहुत अधिक हिमपात होता है। इसलिए नील के वचन बार बार लोगों को सुनाने चाहिए। जो उनके अनुसार कार्य करने वाले हैं वे पशुओं, अन्नों और धनों से युक्त होंगे और तुम भी सर्वत्र सदा विजयी होंगे।॥ 908 ॥

---

1. *काल्दोषसमुच्छिन्नं Ed. Leiden*
2. *तृतीय चतुर्थ पाद परित्यक्त BDF*
3. *कुरुते B*
4. *दुर्भिक्षमरणे तथा BDEFG*
5. *दारुणम् BEF*
6. *यह AH, उपजायते अन्य MSS*
7. *यह अन्य MSS, वापि A*
8. *इति नीलमते गोनन्दानुशासनम्। अतिरिक्त G*

Ed. Leiden v.v. 870-874

वैशम्पायन उवाच[1]
एवमुक्तोऽपि[2] **गोनन्दो**[3] **बृहदश्वेन भूमिपः।**
प्रावर्तयत् समुच्छिन्नानाचारान् कालदोषतः[4] **॥ 909 ॥**

वैशम्पायन (ने कहा)

बृहदश्व के द्वारा ऐसा कहने पर भी राजा गोनन्द ने उनमें से (कुछ) आचारों को पुनः आरम्भ किया जो कालदोष के कारण छूट गये थे॥ 909 ॥

तस्मात्[5] **स बलभद्रेण मथुरायां निपातितः।**
नीलोक्तं वचनं[6] **राजा काश्मीरः सकलं**[7] **यदि॥ 910 ॥**

करोत्यकाले मरणं नैव तस्योपजायते।
तस्मिन् देशे तथातङ्को[8] **नैव कश्चिद्**[9] **भविष्यति**[10] **॥ 911 ॥**

इस कारण वह मथुरा में बलभद्र के द्वारा मारा गया। यदि कश्मीर का राजा नील के द्वारा कहे गये समस्त वचनों का अनुसरण पूरी तरह से करेगा तो उसकी अकाल मृत्यु कभी नहीं होगी और इस देश में कोई भी आतङ्क नहीं होगा।॥ 910-911 ॥

जनमेजयः
काश्मीरक[11] **स्तु गोनन्दो बृहदश्वेन भाषितम्।**

---

1. *परित्यक्त H*
2. *उक्तः सः G*
3. *गोविन्दो B*
4. *कालचोदितः A*
5. *ततः G*
6. *सकलं E*
7. *सकलः E*
8. *यह G, तथातङ्कं अन्य MSS*
9. *किञ्चिद् GH*
10. *इतिनीलमते आचारमाहात्म्यम्। अतिरिक्त ABDEFGH, इति श्रीनीलमतपुराणे आचारमाहात्म्यवर्णनं नाम एकसप्ततितमोऽध्यायः C*
11. *काश्मीरिकस्तु G*

श्रुत्वा स्वकीयमाचारं किमपृच्छदतः परम्[1] ॥ 912 ॥

जनमेजय (ने कहा)

बृहदश्व के द्वारा कहे गये अपने रीति रिवाज़ों को सुनकर कश्मीर के राजा गोनन्द ने उसके बाद और क्या पूछा ?॥ 912 ॥

वैशम्पायनः[2]
काश्मीरक[3]स्तु गोनन्दो बृहदश्वेन भाषितम्[4]।
श्रुत्वोवाच मुनिश्रेष्ठं[5] बृहदश्वं[6] नराधिपः[7] ॥ 913 ॥

वैशम्पायन (ने कहा)

बृहदश्व के कथन को सुनकर कश्मीर के राजा गोनन्द ने मुनिश्रेष्ठ बृहदश्व को कहा।॥ 913 ॥

गोनन्द उवाच[8]
प्राधान्येन तु ये नागाः कश्मीरायां[9] कृतालयाः।
नामतस्तु समाचक्ष्व श्रोतुमिच्छामि तानहम् ॥ 914 ॥

गोनन्द (ने कहा)

कश्मीरा में जो तो नाग मुख्य रूप से निवास करते हैं उनके नाम तो बताओ। मैं उनके विषय में सुनना चाहता हूँ।॥ 914 ॥

बृहदश्वः
नागानामधिपो[10] नीलो वासुकिश्चोपतक्षकः।
कम्बलाश्वतरौ[11] नागौ कार्कोटकधनञ्जयौ ॥ 915 ॥

---

1. *तृतीय चतुर्थ पाद परित्यक्त ADE*
2. *उवाच अतिरिक्त CG, परित्यक्त A*
3. *काश्मीरिकः G*
4. *प्रथम द्वितीय पाद परित्यक्त ADE*
5. *मुनिश्रेष्ठो BDE*
6. *बृहदश्वो D*
7. *नराधिपम् BDEFH*
8. *परित्यक्त B*
9. *कश्मीरेषु G*
10. *नाम्ना नागाधिपो B*
11. *कन्धर्याश्वतरौ A*

बृहदश्व (ने कहा)

(वहाँ) नागों का राजा नील, वासुकि और उपतक्षक दो नाग कम्बल और अश्वतर, (और दो नाग) कार्कोटक और धनञ्जय (रहते) हैं॥ 915॥

ऐलपत्रो[1] ह्यनन्तश्च नागौ नन्दोपनन्दकौ।
कुलिकः श्वेतशङ्खश्च[2] पालासः[3] खेडिमो[4] बडिः॥ 916॥

ऐलपत्र, अनन्त और नन्द, उपनन्दक दो नाग, कुलिक, श्वेतशङ्ख, पालास, खेडिम और बडि।॥ 916॥

हेलिहालः शङ्खपालो नागौ चन्दननन्दनौ[5]।
नागौ नीलमहानीलौ नागौ वातिकषण्डिकौ॥ 917॥

हेलिहाल, शङ्खपाल तथा चन्दन और नन्दन दो नाग, नील और महानील दो नाग, वातिक तथा षण्डिक दो नाग।॥ 917॥

द्वौ पद्मौ द्वौ महापद्मौ द्वौ कालौ द्वौ च कच्छपौ[6]।
द्वौ समुद्रौ समुद्राणौ[7] द्वौ गजौ द्वौ च तक्षकौ॥ 918॥

दो पद्म, दो महापद्म, दो काल, दो कच्छप, दो समुद्र, दो समुद्राण, दो गज, दो तक्षक।॥ 918॥

हस्तिकर्णौ ह्यु[8]भौ नागौ द्वौ हस्ती वामनावुभौ।
महिषौ द्वौ वराहौ द्वौ कूपनौ[9] द्वौ च पन्नगौ[10]॥ 919॥

---

1. *यह ABDE, ऐलापत्रो अन्य MSS*
2. *यह ABEFD*
3. *पालाशः A, पालसः E, पालादः H*
4. *खेडिसो G, खेत्रिमो D*
5. *नन्दनचन्दनौ B, नन्दननन्दनौ F, यह शब्द तथा तृतीय पाद परित्यक्त E*
6. *काश्यपौ D, कश्यपौ EF*
7. *समुद्रानौ EG*
8. *हि A*
9. *कुनपौ A*
10. *शमनगौ E*

दो हस्तिकर्ण नाग, दो हस्ती, दो वामन, दो महिष, दो वराह, दो कूपन और दो पन्नग ॥ 919 ॥

पानीयश्चाप्यनीकश्च[1] कनकाक्षः[2] कलिङ्ककः[3]।
अर्जुनः पुण्डरीकश्च[4] धनदो[5] नडकूबरः ॥ 920 ॥

पानीय, अनीक, कनकाक्ष, कलिङ्कक, अर्जुन, पुण्डरीक, धनद और नडकूबर।॥ 920 ॥

खेदः[6] शपालः खेरीशो[7] लाहुरो[8] लेदिर[9]स्तथा।
खेडश्च[10] फरथाडश्च[11] जयन्त[12]स्त्वौसमस्तथा[13] ॥ 921 ॥

खेद, शपाल, खेरीश, लाहुर, लेदिर, खेड, फरथाड, जयन्त और औसम ॥ 921 ॥

सूदनौ[14] द्वौ सुपार्श्वश्च सुनासः[15] पञ्चहस्तकः।
प्रद्युम्नश्चान्धकः शम्भुः साल्वो[16] मूलेश्वरो घशः[17] ॥ 922 ॥

दो सूदन, सुपार्श्व, सुनास, पञ्चहस्तक, प्रद्युम्न, अन्धक, शम्भु, साल्व, मूलेश्वर और घश।॥ 922 ॥

---

1. *अनेकश्च EH*
2. *कनकाख्यः E*
3. *कलङ्कः E, कलङ्गकः DF, कलुङ्गक B, कलिङ्गकः G*
4. *पौण्डरीकश्च ed. Leiden*
5. *परित्यक्त A*
6. *खेडः BDG*
7. *खीरेशो DE*
8. *लाहरो D*
9. *यह AG, अन्य लोदिरः*
10. *खेदः G, खेलः B*
11. *फरथाश्वः BDEF*
12. *यजन्तो E*
13. *त्वौसमस्तथा EG, स्वौसमस्तथा F, तु समस्तथा H.*
14. *सुदनौ DE*
15. *सनासः B*
16. *यह H, सालो D, स्वालवो C, स्वालो AG, स्वाल्वे B*
17. *घृषः H*

उगोलसाहुनीमध्यौ[1] नागौ गन्धिलपिच्छलौ[2]।
स्वधादो[3] मूषकादश्च[4] पिशितादो घटौदनः[5] ॥ 923 ॥

उगोल, साहुनीमध्य, दो नाग गन्धिल और पिच्छल, स्वधाद मूषकाद, पिशिताद और घटौदन।॥ 923 ॥

नारायणोऽनिरुद्धश्च वासुदेवो जलन्धमः[6]।
पात्रश्च मानस[7]श्चैव तथैवोत्तरमानसः ॥ 924 ॥

नारायण, अनिरुद्ध, वासुदेव, जलन्धम, पात्र, मानस तथा उत्तरमानस।॥ 924 ॥

अमानसः[8] कपाली च नागः सङ्कर्षणस्तथा।
शतचारः[9] खिलेचारो[10] रोहिण्याक्ष्य[11]ऽथ शक्तिकः[12] ॥ 925 ॥

अमानस, कपाली, संकर्षण नाग, शतचार, खिलेचार, रोहिण्याक्ष और शक्तिक ॥ 925 ॥

आखुफालः फलाफश्च नागः कानसर[13]स्तथा।
सुस्रवो[14] देवपालश्च नागेन्द्रोऽथ बलाहकः[15] ॥ 926 ॥

आखुफाल, फलाफ, कानसर नाग, सुस्रव, देवपाल, नागेन्द्र और बलाहक।। 926।।

1. उघोल-*ed. Leiden*, उगोलमाहुनीमध्यौ *DE*
2. गन्धपिञ्छिलौ *DE*
3. सुधादो *E*
4. मूपिकाभश्च *BDE*, मूल्कादश्च
5. घटोदनः *D*, घटोदरः *ed. Leiden*
6. जलान्धमः *H* जलोन्धमः *C*
7. पानसः *H*
8. दुर्मानसः *B*, शमानसः *E*
9. शतदारः *H*, शतधारः *DE*
10. किलोशार *DE*, किलोशारो *BF*
11. रोहिण्याक्षो *DH*
12. शक्तितः *ed. Leiden*
13. यह अन्य *MSS*, कावसरः *A*
14. आश्रवो *E*, सुभद्रो *H*
15. फलादृकः *B*, फलाफकः *EF*

चन्द्रसूर्यावुभौ नागौ शुचिशुक्लौ विडूरथः[1]।
फेलडः सुकुमारश्च खिडीवो[2] विजयो जयः ॥ 927 ॥

दो नाग चन्द्र और सूर्य, शुचि और शुक्ल, विडूरथ, फेलड, सुकुमार, खिडीव, विजय और जय। ॥ 927 ॥

ऊडूच[3]: क्रोफणो[4] वायुः शुक्रो[5]वैश्रवणोऽपमः।
मण्डूकनासो[6] गान्धारो नागः शूर्पारकि[7]र्ध्वनिः ॥ 928 ॥

ऊडूच, क्रोफण, वायु, शुक्र, वैश्रवण, अपम, मण्डूकनास, गान्धार, शूर्पारकि और ध्वनि।॥ 928 ॥

शमनो[8] लोलभो[9] भद्रो[10] बिन्दुर्बिन्दुसरो नडः[11]।
तित्तिरिः प्रस्तभद्रश्च[12] नागो ग्रहपतिस्तथा[13] ॥ 929 ॥

शमन, लोलभ, भद्र, बिन्दु, बिन्दुसर, नड, तित्तिरि, प्रस्तभद्र और ग्रहपति नाग ॥ 929 ॥

---

1. *विभूरथः D*
2. *खिडीचो A, खिडीवी H, खिनीवै DEF*
3. *यह ACFG, ऊरूचः अन्य MSS.*
4. *कोफणो BF*
5. *चक्रो BDEF*
6. *मण्डूकनागो B*
7. *शूर्परकिः B*
8. *शमलो BDEFG*
9. *लोलनो CH, लोलुनो ed. Leiden*
10. *यह A, वभ्रुः C, बभ्रु अन्य MSS.*
11. *-रुहः BE, ततः G*
12. *यह A, हस्तभद्रः C, हस्तिभद्रः अन्य MSS.*
13. *तथा DEFG स्ततः (मूलपाठ)*

अपराजितः पण्डितः कोपपतिर्दुर्जयोऽष्टकः[1]।
नागो हिमसर[2]श्चैव नागः फलरोऽपरः[3] ॥ 930 ॥

अपराजित, पण्डित, कोपपति, दुर्जय, अष्टक, नाग हिमसर, दूसरा नाग फलसर।॥ 930 ॥

तथा नागो ह्यग्रसरो[4] नागो नीलसरो विहा[5]।
आशुलाक्षो[6]ऽक्षिपालश्च प्रह्लादो यमकस्तथा ॥ 931 ॥

नाग अग्रसर, नाग नीलसर, विहा, आशुलाक्ष, अक्षिपाल, प्रह्लाद और यमक।॥931 ॥

अनिष्टः सुमुखो वेदः खड्गपुच्छो[7] विभीषणः।
मौहूर्त्तिकः प्रियस्वामी[8] कुमारश्चन्दनोपमः[9] ॥ 932 ॥

अनिष्ट, सुमुख, वेद, खड्गपुच्छ, विभीपण, मौहूर्त्तिक, प्रियस्वामी, कुमार और चन्दनोपम।॥ 932 ॥

कपाल[10]श्चरणषण्डो[11] नागः पूरणकस्तथा।
कदम्बश्चापदो वाली विभूतिः कालकुञ्जरः ॥ 933 ॥

---

1. *कोपपतिर्दुर्जयोप्टकः C, कोपततिर्दुर्जयोप्टकः H. कोपततिर्दुर्जयोप्टकः D, कोपततिण्डजयोप्टकः E कोपततिन्दुर्जयोप्टकः BF, कोपपतिदुर्जयांपुकः A*
2. *हिमरसः EF*
3. *फलरसोऽपरः C*
4. *तथा च नागेशाःसरो E,— रूपसरो G*
5. *विफा B*
6. *अशीलाक्षो BEF, अशूलाक्षो G*
7. *खड्गपद्मो C*
8. *प्रियः स्वामी B*
9. *यह AH, चन्दनोऽपरः अन्य MSS.*
10. *यह ACG, कलापः अन्य MSS.*
11. *चरणखेडो B*

कपाल, चरणपण्ड, नाग पूरणक, कदम्ब, आपद, वाली, विभूति और कालकुञ्जर॥ 933॥

डवश्चक्रधरः श्वभ्रो[1] भवो[2] देहारको गुडः[3]।
अन्धः पङ्गुस्तथा कुष्ठी काणो बधिरवण्ठकौ[4]॥ 934॥

डव, चक्रधर, श्वभ्र, भव, देहारक, गुड, अन्ध, पङ्गु, कुष्ठी, काण, बधिर और वण्ठक॥ 934॥

अनागपादः कितवः[5] सूकरः प्रसवोत्करौ[6]।
साधीयः शतपादश्च योगः शतमुखो द्रुहः[7]॥ 935॥

अनागपाद, कितव, सूकर, प्रसव, उत्कर, साधीय, शतपाद, योग, शतमुख और द्रुह॥ 935॥

अतिनिद्रोऽतिबहुभुग् बिन्दुनादः[8] शिरोजडः[9]।
कामराक्षो[10] विशालाक्षः सुवर्ताक्षो[11] भयानकः[12]॥ 936॥

अतिनिद्र, अतिबहुभुक् बिन्दुनाद, शिरोजड, कामराक्ष, विशालाक्ष, सुवर्ताक्ष और भयानक॥ 936॥

---

1. *श्वर्वा A*
2. *देवो BEF*
3. *गुरुः BDE*
4. *–कंटकौ E, –कंठकौ BF*
5. *यह अन्य MSS., कितयः A*
6. *यह A, प्रसवो कणो C, प्रसवोत्कटौ अन्य MSS.*
7. *शतमुखोद्वहः F*
8. *विन्दुमुनादः D*
9. *शिरोजरः DE*
10. *कामलाक्षो E*
11. *सुवताक्षौ D सुवताक्ष्यौ B, सर्वरक्षो C*
12. *भयानकः BDEF, भयः शकः C.*

भूवीरो[1] धर्मलावण्यौ[2] दैत्यराजः[3] षडङ्गुलः।
गन्धर्वो धृतराष्ट्रश्च कुसुमः कुहरः[4] कुहः[5] ॥ 937 ॥

भूवीर, धर्म, लावण्य, दैत्यराज, षडङ्गुल, गन्धर्व, धृतराष्ट्र, कुसुम, कुहर और कुह ॥ 937 ॥

महाक्षश्च वधूसश्च[6] कदूसो[7] देवदानवौ।
नक्षत्रो मषकः पीतो गौतमः सुशुभो जिहः[8] ॥ 938 ॥

महाक्ष, वधूस, कदूस, देव, दानव, नक्षत्र, मषक, पीत, गौतम, सुशुभ और जिह ॥ 938 ॥

स्वर्गः[9] शिखरवासी[10] च श्रीवासः श्रीधरः खगः।
लाङ्गली[11] बलभद्रश्च[12] स्वरूपः पञ्चहस्तकः ॥ 939 ॥

स्वर्ग, शिखरवासी, श्रीवास, श्रीधर, खग, लाङ्गली, बलभद्र, स्वरूप और पञ्चहस्तक ॥ 939 ॥

कामरूपो दरीकर्णः[13] सप्तशीर्षो बहूदरः[14]।
सुनेत्रो बहुनेत्रश्च हनुमान्अङ्गदो हरः ॥ 940 ॥

---

1. *भुव्रीवो C, कुबेरो G*
2. *धर्मलाटवो C, धर्मलटवो E, धर्मल्पटो B, धर्मज्ञलटवो H, धर्मलटको G, धर्मलाटोवै F*
3. *यह अन्य MSS., चैत्यराजः A*
4. *कुहरः कुहरः H*
5. *कुडः G*
6. *वटूसश्च C वटूपश्च H*
7. *कटूसो C*
8. *जिहः E, रिहः H*
9. *दुर्गः BDEFH*
10. *शिशिरवासी CD, शिरेवासी H*
11. *लाङ्गुली D*
12. *बकभद्रश्च H*
13. *धरीकर्णः DF*
14. *यह A, बहूधरः DF, बहूदरः B*

कामरूप, दरीकर्ण, सप्तशीर्ष, बहूदर, सुनेत्र, बहुनेत्र, हनुमान्, अङ्गद और हर ॥ 940 ॥

हबक:[1] पाठर:[2] पाथो मलो विमलको मट:[3]।
नाग: शतमुखश्चैव चित्राश्वो दधिवाहन:[4] ॥ 941 ॥

हबक, पाठर, पाथ, मल, विमलक, मट, नाग, शतमुख, चित्राश्व और दधिवाहन ॥ 941 ॥

सुशीम: कालिय: काल: पटन:[5] खदिरस्तथा।
अत्रिश्च शवलश्चैव वर्णको[6] ललनस्तथा[7] ॥ 942 ॥

सुशीम, कालिय, काल, पटन, खदिर, अत्रि, शवल, वर्णक और ललन ।।942 ।।

हेलियारो[8] हेमियारो[9] वलीर:[10] केलुको[11] निमि:।
चाटरो लेलिहानश्च पञ्चास्य:[12] पिङ्गलोदर:[13] ॥ 943 ॥

हेलियार, हेमियार, वलीर, केलुक, निमि, चाटर, लेलिहान, पञ्चास्य और पिङ्गलोदर ॥ 943 ॥

---

1. *हनुर: H, हठक: ed. Leiden, हभक: C*
2. *पाटन: B, पाटल: E पाटक: C*
3. *मद: H, सर: C*
4. *दधिवर्णन: C*
5. *पटिन: E*
6. *यह अन्य MSS., वर्णलो A*
7. *यह अन्य MSS., कलमस्तथा A*
8. *लेलिह्वरो A*
9. *हेमिवासो वा A, हिमियामी E, हिमियासो BF*
10. *बलीर: A, वरील: BFG*
11. *कलुको A*
12. *कश्यप: BEF*
13. *यह FG पिङ्गलोदक: CH पिङ्गलोचक: A लिङ्गलोदर: E*

कृतं[1] त्रेता द्वापरश्च समः संवत्सरस्तथा।
खल्वाटो[2] बहुरोमा च कापोतिः पुष्पसाह्वयिः[3] ॥ 944 ॥

कृत, त्रेता, द्वापर, सम, संवत्सर, खल्वाट, बहुरोमा, कापोति और पुष्प-साह्वयि।॥ 944 ॥

राष्ट्रेश्वरः शिनीरिश्च[4] शतानन्दोऽतिकोपनः।
आनन्दोऽथ जयानन्दस्त्रिशीर्षो जटिलस्तथा॥ 945 ॥

राष्ट्रेश्वर, शिनीरि, शतानन्द, अतिकोपन, आनन्द, जयानन्द, त्रिशीर्ष और जटिल॥ 945 ॥

गन्धः सोम[5]स्तथा गार्ग्य इनिटिस्सनिटिस्तथा[6]।
ऐरावतः सकौरव्यो माषादः कुमुदप्रभः[7] ॥ 946 ॥

गन्ध, सोम, गार्ग्य, इनिटि, सनिटि, ऐरावत, कौरव्य, माषाद और कुमुदप्रभ ॥ 946 ॥

हवोत्सवः[8] शठः शाण्यः[9] शत्रुघ्नो[10] रामलक्ष्मणौ।
महादेवः कामपालो गोशिराः सयुधिष्ठिरः॥ 947 ॥

हवोत्सव, शठ, शाण्य, शत्रुघ्न, राम, लक्ष्मण, महादेव, कामपाल, गोशिरा और युधिष्ठिर। ॥ 947 ॥

---

1. *कृतः B*
2. *खट्वाटो E*
3. *पुष्पसाल्वयिः A, पुष्पसाह्वयः H*
4. *गिनीरिश्च B*
5. *यह A, गन्धसोमः अन्य MSS.*
6. *यह A, इनिटिर्मिनिटिस्तथा अन्य MSS.*
7. *यह A, कुमुदः प्रभः CF, कुसुमप्रभः F*
8. *यह BEFH, हचोसचः A, हवोमवः CG*
9. *शण्यो F*
10. *अरुघ्नो E, शरुघ्नो BF*

डाङ्गो भूयो[1] विशाखश्च सोमो रेवा[2] महोदरः।
मकरो मकराक्षश्च नड्बलो बलवान् शिखी[3] ॥ 948 ॥

डाङ्ग, भूय, विशाख, सोम, रेवा, महोदर, मकर, मकराक्ष, नड्बल, बलवान् और शिखी। ॥ 948 ॥

चन्दपाटनकः[4] काकः केबुको[5] ब्राह्मणप्रियः[6]
करवीरो जरासन्धो निशाचरदिवाचरौ ॥ 949 ॥

चन्दपाटनक, काक, केबुक, ब्राह्मणप्रिय, करवीर, जरासन्ध, निशाचर और दिवाचर।॥ 949 ॥

पातञ्जलिश्च[7] वत्स[8]श्च माठरो[9] विठरो[10] विडः[11]।
होचरः[12] करवालश्च[13] तपनोघः[14] शिरस्तथा ॥ 950 ॥

पातञ्जलि, वत्स, माठर, विठर, विड, होचर, करवाल, तपनोघ और शिर।। 950 ।।

---

1. *ताङ्गभूयो C डाङ्कूयो ed. Leiden*
2. *समेरोवा C, समो रोवा ed. Leiden*
3. *यह अन्य MSS., सुखी A*
4. *चर्मपाटनकः ABE*
5. *कोबुको C, केबका A*
6. *ब्राह्मणीप्रियः C*
7. *यह H, उल्लिञ्जलिः CEG, उल्लिञ्जलः A, उल्लिञ्जिलिः BF*
8. *यह BEFGH, वकश्च A, वन्दश्च C*
9. *मठरो E*
10. *वटरो BFG, वठरो ed. Leiden*
11. *विटः B, विठः C*
12. *होवरः C*
13. *कलवालश्च C*
14. *यह AH, तपनो अन्य MSS.*

कर्करः[1] करवाटश्च वरघोषः सुमङ्गलः।
गुल्लकः[2] शम्बरः[3] शामी पयो माहानिहाशजः[4] ॥ 951 ॥

कर्कर, करवाट, वरघोष, सुमङ्गल, गुल्लक, शम्बर, शामी, पय और माहानिहाशज ॥ 951 ॥

करहालः[5] कुसूरात्रो[6] धौम्यो नागोऽथ गालवः।
उखोलश्च[7] शिखोल[8]श्च वह्निरूपो हिरण्मयः[9] ॥ 952 ॥

करहाल, कुसूरात्र, धौम्य, नाग, गालव, उखोल, शिखोल, वह्निरूप और हिरण्मय।॥ 952 ॥

सत्याकुलः[10] कुलूषश्च[11] कृपाणः[12] कूटको[13] हरिः।
किमूदः[14] शलभश्चैव किंशुकः प्रियसारकः[15] ॥ 953 ॥

सत्याकुल, कुलूष, कृपाण, कूटक, हरि, किमूद, शलभ, किंशुक और प्रियसारक।॥ 953 ॥

---

1. *कवाटः H*
2. *गुल्ल A*
3. *यह ABGH, शम्भरः अन्य MSS.*
4. *महानिहाशजः B, महानिहागजः H*
5. *यह BCFGH, करहारः E, करलाहः A*
6. *कुंवरात्रो E, कुम्बरात्रो B*
7. *उखेलश्च B, उखशश्च F, नखशंश्च E*
8. *शिखेलश्च B, शिलेखश्च E*
9. *यह अन्य MSS हिरण्ययः A*
10. *यह BEFG , सात्यकुलः C, सरद्यः H*
11. *–कुल्कुलूषश्च H*
12. *कृपणः BE*
13. *कुटको B*
14. *क्रौस्रग्धः BEF, केषग्धः H*
15. *प्रियसाकरः BF*

माराकुलो[1]ऽभ्रशिखरो वसिष्ठः[2] सवनामुखः[3]।
नागौ राजमहाराजौ[4] सुभद्रभद्रवालिशौ[5] ॥ 954 ॥

माराकुल, अभ्रशिखर, वसिष्ठ, सवनामुख, राज तथा महाराज दो नाग, सुभद्र और भद्रवालिश।॥ 954 ॥

वीरब्रह्माशनौ नागौ नागौ सारसपुक्ककौ[6]।
डक्ककश्च[7] तथा चक्को[8] गोशो वंशनगस्तथा ॥ 955 ॥

दो नाग वीर तथा ब्रह्माशन, दो नाग सारस तथा पुक्कक, डक्कक, चक्क, गोश और वंशनग ॥ 955 ॥

विद्याधरश्च यक्षश्च विरसः सस्यवर्धनः।
भद्राश्वो[9] गजनेत्रश्च[10] कणारः कुमुदस्तथा ॥ 956 ॥

विद्याधर, यक्ष, विरस, सस्यवर्धन, भद्राश्व, गजनेत्र, कणार और कुमुद ॥ 956 ॥

आनकः[11] कनवः[12] चम्बः[13] शण्डमर्कौ[14] गिरिप्रियः।
उग्रायुधो[15]ऽभिमन्युश्च अमर[16]श्चामृताशनः ॥ 957 ॥

---

1. *मालाकुलो CG*
2. *वासिष्ठः B*
3. *सुवनामुखः BE*
4. *संशोधित पाठ, द्वौ ज्यो महाराजो MSS.*
5. *वाशिलौ F*
6. *यह A, मानसपुक्कसौ H, सारसचुक्कसौ B, सरसप्रककसौ E*
7. *परित्यक्त F, चुक्ककश्च B*
8. *चुक्को B*
9. *भद्राशो ed. Leiden*
10. *जगनेत्रश्च EF*
11. *आवकः BEF.*
12. *काणकः B. कानवः C*
13. *शम्भः CG*
14. *चण्डसक्कौ B एडसोंकौ E*
15. *भग्नायुधो BE*
16. *अमृतश्च B असुरश्च G*

आनक, कनव, चम्ब, शण्ड, मर्क, गिरिप्रिय, उग्रायुध, अभिमन्यु, अमर और अमृताशन ॥ 957 ॥

अजकर्णोऽथ गोनासः[1] सगालुवालुकाननः[2]।
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो दीप्तो विहङ्गमः ॥ 958 ॥

अजकर्ण, गोनास, सगालु, वालुकानन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, दीप्त और विहङ्गम ॥ 958 ॥

शङ्खाक्षः कमलाक्षश्च मणिनागो बहेचकः[3]।
जयन्तः कोपनो[4] विश्वः[5] शाखामुखसुवर्चलौ[6] ॥ 959 ॥

शङ्खाक्ष, कमलाक्ष, मणिनाग, बहेचक, जयन्त, कोपन, विश्व, शाखामुख और सुवर्चल ॥ 959 ॥

गुहा सुमाली माली च माल्यवानानृतः परः।
क्षात्रो मत्स्यानको[7] भीष्मः काश्मीरो[8] मधुवालिशौ ॥ 960 ॥

गुहा, सुमाली, माली, माल्यवान्, आनृत, पर, क्षात्र, मत्स्यानक, भीष्म, काश्मीर, मधु और वालिश। ॥ 960 ॥

भीमाक्षो[9] भीमनादश्च नागौ हालुषकालुषौ[10]।
महेन्द्रेन्द्रसुधामानः शालीयो मालियस्तथा ॥ 961 ॥

---

1. *गोलास: CEF*
2. *यह A, सलाग: कालकानन: CH*
3. *यह A, बहेटक: EF, दहेटक: B, टहबक: G*
4. *कूपनो E, कुमनो C*
5. *विद्वान् BEF*
6. *सुवर्चसौ BH*
7. *यह A, मस्मनको CDE, समन्नको B, सम्मनको G*
8. *भीष्मकश्मीरौ GH*
9. *भीमाको E.*
10. *हालुषखालवौ BF, हाखुषखालवौ D, हालुषखालुषौ H*

भीमाक्ष, भीमनाद, हालुष और कालुष दो नाग, महेन्द्र, इन्द्र, सुधामा, शालीय और मालिय ॥ 961 ॥

सहस्त्रधारो द्युतिमान् विभूतिःकवडास्वरौ[1]।
शवलो[2] बहुरूपश्च भद्राश्वश्चोत्तरीयशः[3] ॥ 962 ॥

सहस्रधार, द्युतिमान्, विभूति, कवड, अस्वर, शवल, बहुरूप, भद्राश्व और उत्तरीयश ॥ 962 ॥

मणिकण्ठः कलोलश्च शूरवालो[4]ऽथ नूपुरः।
कुशकुण्डोऽतुल्यषश्च[5] अटः श्वभ्रो वितारणः ॥ 963 ॥

मणिकण्ठ, कलोल, शूरवाल, नूपुर, कुशकुण्ड, अतुल्यष, अट, श्वभ्र और वितारण ॥ 963 ॥

अरविन्दः[6] सकल्हारो बिन्दुमान्[7] द्रमिटो[8] वटः।
सागरौ द्वौ तथा गाङ्गौ[9] वैतस्तो यामुनावुभौ[10] ॥ 964 ॥

अरविन्द, कल्हार, बिन्दुमान्, द्रमिट, वट, दो सागर, दो गाङ्ग, वैतस्त और दो यामुन नाग ॥ 964 ॥

---

1. *कवनासुरौ BDF, कवयासुरौ E, कवडंबरौ G, कवरांवरौ C.*
2. *शेवलो BDEF*
3. *चोत्तरीयकः BDEFGH यह पद्य परित्यक्त A*
4. *शूलवालो DEH, शीलवालो B*
5. *मूल्यश्च E*
6. *अर्धबिन्दुः B*
7. *विन्दुमान् D, बिन्दुमात्र A*
8. *यह CH, प्रसितो D, भ्रमिटो E, प्रमितो B, इडो A*
9. *गङ्गौ E*
10. *वैतस्तयामुनावुभौ H*

चित्रोपचित्रौ[1] सुरभिर्भूतलाम्बरचारिणौ।
उपचित्रः कङ्कतश्च[2] नागौ नारदपर्वतौ॥ 965॥

चित्र, उपचित्र, सुरभि, भूतलचारी, अम्बरचारी, उपचित्र, कङ्कत तथा नारद और पर्वत ये दो नाग॥ 965॥

विश्वावसुः पारिजातो गल्लुलुल्लो[3] जलालुसः[4]।
नागश्च माक्षिकस्वामी भूर्जिलश्चिकुरस्तथा॥ 966॥

विश्वावसु, पारिजात, गल्लुलुल्ल, जलालुस, माक्षिकस्वामी नाग, भूर्जिल और चिकुर॥ 966॥

अकद्रो[5] बहुकेशश्च[6] केशपिङ्गलधूसरौ।
लम्बकर्णो[7] गण्डलश्च[8] नागः श्रीमाढकस्तथा॥ 967॥

अकद्र, बहुकेश, केशपिङ्गल, धूसर, लम्बकर्ण, गण्डल और श्रीमाढक नाग॥ 967॥

आवर्ताक्ष[9]श्चन्द्रसारो[10] नागः कर्हसुर[11]स्तथा।
लम्बको[12]ऽथ चतुर्वेदः पुष्करत्रितयं तथा॥ 968॥

आवर्ताक्ष, चद्रसार, कर्हसुर नाग, लम्बक, चतुर्वेद और तीन पुष्कर॥ 968॥

---

1. *-चित्रौ ed. Leiden.*
2. *काङ्कतिश्च E*
3. *गगुलुल्लो BF, बल्ललल्लो G गगालुलोलो E*
4. *जल्लुसः BF, जल्वसः D, जलुभः E.*
5. *अकध्रो FH, अलको D, अकष्टो G*
6. *यह H, बहुकश्वः A, बहुकष्टश्च G, बहुरूपश्च BEF*
7. *यह अन्य MSS, कम्बकर्णो A*
8. *गभुलश्च D, गडुलश्च B*
9. *यह A, आवर्तकृत् अन्य MSS.*
10. *चन्द्रसरो D, चन्द्ररसो, B*
11. *कादसुरः D, कामसुरः BEF*
12. *कम्बलो H.*

अक्षोट[1]नागष्टङ्कश्च श्येनो[2] वट्टिलकाचरौ[3]।
क्षीरकुम्भो निकुम्भश्च विकुम्भः समरप्रियः ॥ 969 ॥

अक्षोट नाग, टङ्क, श्येन, वट्टिल, काचर, क्षीरकुम्भ, निकुम्भ, विकुम्भ और समरप्रिय ॥ 969 ॥

एलिधानो[4] विधानश्च[5] चाण्डो[6] भोगी ज्वरान्वितः[7]।
भोगो[8] भार्गवतो[9] रौद्रो रुद्रो भोजकदेहिलौ[10] ॥ 970 ॥

एलिधान, विधान, चाण्ड, भोगी, ज्वरान्वित, भोग, भार्गवत, रौद्र, रुद्र, भोजक और देहिल ॥ 970 ॥

रोहिणोऽथ भरद्वाजो दधिनक्रः प्रतर्दनः।
नागौ जानुवरेवौ[11] द्वौ शत्रुमित्रौ[12] सकर्दमौ ॥ 971 ॥

रोहिण, भरद्वाज, दधिनक्र, प्रतर्दन, जानु, वरेव ये दो नाग, शत्रु, मित्र और कर्दम। ॥ 971 ॥

पङ्कश्च किन्दमो रम्भो[13] बहुभोगो बहूदरः।
मत्स्यो भीतो[14] बहूत्साहो[15] करडिः[16] विनताप्रियः ॥ 972 ॥

---

1. *अक्षटो-E*
2. *श्योनो E*
3. *बुद्धिलकाधरौ C, वट्टिटलकाधरौ BDEFH*
4. *यह BDEH, एलिगानो CF, पलिथानो A*
5. *विगानश्च F*
6. *खण्डो BDEF, वाण्डो CH*
7. *यह A, जरान्वितः अन्य MSS.*
8. *भोगी AH*
9. *पर्वताभो H, भासवतो BEFG*
10. *रुद्रभोजकदेहिलौ E*
11. *यह C, जानवौ द्वौ H, जावररेवौ BDEFG, जरवदेवो A*
12. *यह अन्य MSS, शक्रमित्रौ A.*
13. *किन्दसेरम्भो B, किदसेरम्भो E, किन्दमो रम्यो F*
14. *भेता BF*
15. *यह A, बहुत्सश्च अन्य MSS.*
16. *करभिः DE*

पङ्क, किन्दम, रम्भ, बहुभोगी, बहूदर, मत्स्य, भीत, बहूत्साह, करडि और विनताप्रिय ॥ 972 ॥

ताम्राकरो[1]ऽथ रजतो वनमाली सभावकः[2]।
नागो ज्योतिष्यको[3]वेद्यो[4] धौरसारो[5] जनार्दनः ॥ 973 ॥

ताम्राकर, रजत, वनमाली, भावक, ज्योतिष्यक नाग, वेद्य, धौरसार और जनार्दन ॥ 973 ॥

न्यग्रोधो डम्बरोऽश्वत्थो बलिपुष्पो बलिप्रियः।
अङ्गारकः शनैश्चारी[6] नागः कुञ्जरको बुधः ॥ 974 ॥

न्यग्रोध, डम्बर, अश्वत्थ, बलिपुष्प, बलिप्रिय, अङ्गारक, शनैश्चारी, कुञ्जरक नाग और बुध ॥ 974 ॥

कलिगृत्सौ[7] कुटिलको[8] नागौ राहुबृहस्पती[9]।
चौरक[10]स्तस्करः केतुः सूतपौरोगवावुभौ ॥ 975 ॥

कलि, गृत्स, कुटिलक, राहु और बृहस्पति नाग, चौरक, तस्कर, केतु, सूत और पौरोगव दोनों (नाग) ॥ 975 ॥

---

1. *ताम्रकारो B, ताम्राकारी H*
2. *सभावुकः B*
3. *ज्योतिषिको F*
4. *वैद्यो F, वद्यो A*
5. *धारोमारो BDEF.*
6. *शनैश्चरो BE*
7. *कलिगृत्सः G, कलिगृत्सो C*
8. *कुटिंकेको D, कुटिकेको BEF*
9. *बाहु-B*
10. *चारकः B*

अजकर्णोऽश्वकर्णश्च विद्युन्माली दरीमुखः[1]।
ओराणो रोचनो[2] हासी नर्तनो गायन[3]स्तथा॥ 976॥

अजकर्ण, अश्वकर्ण, विद्युन्माली दरीमुख, ओराण, रोचन, हासी, नर्तन और गायन॥ 976॥

कम्भाटश्च[4] सुभाटश्च बहुपुत्रो निशाचरः।
मयूरः कोकिलस्त्राता मलयो यवनप्रियः[5]॥ 977॥

कम्भाट, सुभाट, बहुपुत्र, निशाचर, मयूर, कोकिल, त्राता, मलय और यवनप्रिय॥ 977॥

कोटपालो महीपालः गोपालः पटलःशुचिः[7]।
राजाधिराजो विनतः स्वर्गो विमलको मणिः[8]॥ 978॥

कोटपाल, महीपाल, गोपाल, पटल, शुचि, राजाधिराज, विनत, स्वर्ग, विमलक और मणि॥ 978॥

चक्रहस्तो[9] गदाहस्तः शूली पाशी[10] सगस्तथा[11]॥
नागश्चित्रकरो वत्सो वत्सो बकपतिस्तथा॥ 979॥

चक्रहस्त, गदाहस्त, शूली, पाशी और सग, वत्सचित्रकर नाग और वत्सबकपति नाग॥ 979॥

---

1. *धरीमुखः H*
2. *रोधनो H*
3. *गायकस्तथा A*
4. *कम्भटश्च BE*
5. *यह अन्य MSS, यौवनप्रियः A*
6. *यह GA, पाटलः अन्य MSS.*
7. *तथा BDEF*
8. *मणिः BEF*
9. *यह अन्य MSS, चक्रस्तो च A*
10. *माषी BE*
11. *यह CH, मगं तथा DE, मृगस्तथा B.*

शीतार्तो[1] यवमाली[2] च रावणो राक्षसाकृतिः।
यज्वा दाता तथा होता भोक्ता भोगपति[3]स्तथा॥ 980॥

शीतार्त, यवमाली, रावण, राक्षसाकृति, यज्वा, दाता तथा होता, भोक्ता और भोगपति॥ 980॥

एते प्रधानतो[4] राजन् नागेशाः कीर्त्तिता मया[5]।
एतेषां यत् परीवारं[6] पुत्रपौत्रादिकं च यत्॥ 981॥

न तच्छक्यं मया राजन् वक्तुं वर्षशतैरपि[7]।
सर्वेषामेव नागानां पुण्यानि भवनान्युत॥ 982॥

हे राजन्! मैंने प्रधान रूप से इन नागराजों को बताया है। इनका जो परिवार तथा जो पुत्र और पौत्रादि हैं और हे राजन्! जो सभी नागों के पवित्र भवन हैं उन सबका ही वर्णन करना मेरे द्वारा सौ वर्ष तक भी सम्भव नहीं है॥ 982॥

सर्वे वरप्रदा नागाः[8] सर्वे नीलमनुव्रताः।
सर्वेऽतिदयिता राजन् वासुकेः[9] सुमहात्मनः॥ 983॥

हे राजन्! (ये) सारे नाग वर देने वाले हैं, सब नील के पीछे चलने का व्रत रखने वाले हैं और सबके सब परम महात्मा वासुकि के अत्यन्त प्रिय हैं॥ 983॥

---

1. *शीतान्तो BDEF*
2. *वनमाली H, यक्षमाली C*
3. *भोगपदः DEF*
4. *प्राधान्यतो C*
5. *मतः EF*
6. *एवं च यः परिवारः G*
7. *प्रथम पंक्ति कुछ परिवर्तित रूप में दुबारा प्रयुक्त-न तद् वक्तुं मया राजन् शक्यं वर्षशतैरपि A*
8. *वरप्रदानाश्च EF*
9. *वास्तव्याः B*

दिक्पालानथ ते वक्ष्ये कश्मीरायां [1]निबोध तान्।
पूर्वस्यां दिशि राजेन्द्र नागो बिन्दुसरः स्मृतः[2] ॥ 984 ॥

दक्षिणेन तथा नागो नाम्ना[3] श्रीमाढकः स्मृतः।
उत्तरेण तथा राजन् प्रोक्तश्चोत्तरमानसः[4] ॥ 985 ॥

इसके बाद मैं तुम्हें कश्मीरा में स्थित दिक्पालों को बतलाता हूँ उनको तुम मुझ से जान लो। हे राजाधिराज! पूर्व दिशा में बिन्दुसर (दिक्पाल) माना गया है और हे राजन्! दक्षिण दिशा में श्रीमाढक नाम से प्रसिद्ध (दिक्पाल) बताया गया है तथा उत्तर दिशा में उत्तरमानस (दिक्पाल) कहा गया है।॥ 984-985 ॥

एवं नागसहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च।
तार्क्ष्यजं[5] तु भयं त्यक्त्वा वसन्तीह गतव्यथाः ॥ 986 ॥

ये चोक्ताश्च[6] मया नागास्तेषां मध्या[7]ष्षडङ्गुलः।
एको विवासितो राज्ञा नीलेनामिततेजसा ॥ 987 ॥

इस प्रकार गरुड़ के भय से मुग्ध होकर और दुःखरहित होकर हज़ारों, दसियों लाखों और अरबों की सङ्ख्या में नाग वहाँ रहते हैं। मेरे द्वारा कहे गये नागों के मध्य जो एक षडङ्गुल (नामक नाग) है वह अपार तेज वाले राजा नील के द्वारा निकाल दिया गया है।॥ 986-987 ॥

स्थानं षाडङ्गुलं[8] राजन् महापद्मस्य धीमतः।
तृतीयस्य तु यद्दत्तं[9] तत्र जातं जलाशयम्[10] ॥ 988 ॥

---

1. *कश्मीरेषु G*
2. *मतः G*
3. *नाम DE*
4. *स्तूत्तरमानसः CDEF*
5. *तार्क्षजं DE, तार्क्षणं C*
6. *तु DF*
7. *नाग H*
8. *षडङ्गुलं D, षडङ्गुलो C*
9. *जातं A*
10. *जातो जलाशयः G. नीलमते नागायतनकीर्त्तनम्। गोनन्दः अतिरिक्त A*

योजनायामविस्तारं[1] समुद्रमिव चापरम्[2] ॥ 989 ॥

हे राजन्! षडङ्गुल का वह स्थान बुद्धिमान् तृतीय महापद्म को दिया गया था। वहाँ एक योजन लम्बी चौड़ी दूसरे समुद्र के समान एक झील बन गई थी।॥ 988-989 ॥

छद्मनापहृतं यच्च महापद्मेन पार्थिव।
नीलस्यानुमतं[3] पूर्वं[4] विश्वगश्वान्नराधिपात्[5] ॥ 990 ॥

हे राजन्! (यह वह स्थान है) जो पूर्वकाल में नील के आदेशानुसार महापद्म ने छलपूर्वक राजा विश्वगश्व से लिया था।॥ 990 ॥

गोनन्दः

षडङ्गुलः कथं राज्ञा नीलेनास्माद् विवासितः।
कथं च विश्वगश्वस्य स्थानं जातं जलाशयम्[6] ॥ 991 ॥

एतत्सर्वं समाचक्ष्व कुशलो ह्यसि धार्मिक ॥ 992 ॥

गोनन्द (ने कहा)

षडङ्गुल को राजा नील ने इस (स्थान) से क्यों निकाला ? और विश्वगश्व का स्थान जलाशय (झील) में कैसे परिवर्तित हो गया? हे धर्मनिष्ठ! आप कुशल (निपुण) हैं यह सब कुछ विस्तार से कहो ॥ 991-992 ॥

---

1. *योजनायामविस्तारः G, योजनानामविस्तारं DE, योजनानां सविस्तारः B.*
2. *समुद्र इव चापरः G*
3. *नीलस्यानुमते G*
4. *पूर्वे G*
5. *नीलमते महापद्मप्रवेशः अतिरिक्त D, नीलमते नागायतनकीर्त्तनम् BEF, इति श्री-H, इति नीलमते दिक्पालनागवर्णनं षडङ्गुलविवासनवर्णनम् G इति श्रीनीलमतपुराणे नागायतनकीर्त्तनं नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः। तत्पश्चात् गोनन्द उवाच C, क्रिया परित्यक्त ABEFGH, 990, 991 श्लोक परित्यक्त A.*
6. *जातो जलाशयः G, जातं जलाशयः H*

Ed. Leiden v.v. 955b-957

बृहदश्वः[1]
पूर्वमेव सतीदेशे महापद्मं भुजङ्गमम्।
विदित्वैव[2] कृतस्थानं वैनतेयो ह्यबाधत॥ 993॥

बृहदश्व (ने कहा)

नाग महापद्म ने पहले से ही सतीदेश में अपना निवासस्थान बना लिया है और यह जानकार ही विनता का बेटा (गरुड़) उसे सताता था।॥ 993॥

तस्य पुत्रांस्तथा सर्वानाश्रितोपाश्रितान्[3] खगः[4]।
आकृष्य भक्षयामास शतशोऽथ सहस्रशः॥ 994॥

पक्षी (गरुड़) ने सैंकड़ों और हज़ारों की सङ्ख्या में उसके पुत्रों, सभी आश्रितों और उपाश्रितों (आश्रितों के आश्रितों) को खींच खींचकर खा लिया था॥ 994॥

स्वजने भक्ष्यमाणे च[5] महापद्मो भुजङ्गमः[6]।
आजगाम महानागं[7] नीलं शरणमञ्जसा॥ 995॥

और अपने लोगों के इस प्रकार खाये जाने पर वह नाग महापद्म शीघ्रता से महानागर नील की शरण में आया॥ 995॥

---

1. *उवाच अतिरिक्त CG.*
2. *विदित्यैव A.*
3. *आश्रितोपश्रितः B*
4. *खगः A, खगैः G.*
5. *अथ C*
6. *महापद्मो भुजङ्गमः परित्यक्त A*
7. *महाभागं G*

स्थानं च प्रार्थयामास कश्मीरायां[1] जनेश्वर[2]।
तमुवाच तदा नीलो महापद्मं भुजङ्गमम्॥ 996॥

हे राजन्! उसने कश्मीरा में निवास स्थान के लिए प्रार्थना की। तब नील ने महापद्म नाग को कहा॥ 996॥

नागा भुजङ्गशार्दूल[3] सर्वे ते च[4] कृतालयाः।
नास्ति[5] स्थानं तु वससि यत्र नागेन्द्रसत्तम॥ 997॥

हे सर्वश्रेष्ठ नाग! सभी नागों ने अपने निवास स्थान (यहां) बना लिये हैं। हे नागेन्द्रों में श्रेष्ठ! इसलिए यहां तुम्हारे रहने के लिए कोई भी स्थान नहीं बचा है॥ 997॥

न तं देशं प्रपश्यामि[6] सूक्ष्ममप्यमरप्रभो।
नागै र्नाधिष्ठितं यत्तु सर्वमेव[7] भुजङ्गम[8]॥ 998॥

हे देवों के राजा नाग! मुझे (वह) बिलकुल छोटा सा स्थान भी नहीं दिखाई देता जो नागों के अधिकार में न हो॥ 998॥

परिवारेण बहुना तथा त्वं परिवारितः।
किन्त्वस्ति साम्प्रतं शून्यं स्थानं षाडङ्गुलं[9] शुभम्॥ 999॥

और तुम तो बहुत बड़े परिवार से घिरे हुए हो। लेकिन इस समय षडङ्गुल का सुन्दर स्थान खाली है॥ 999॥

---

1. *काश्मीरायां D*
2. *जलेश्वरे B, जलेश्वरम् E*
3. *यह A, भुजङ्गशार्दूल अन्य MSS.*
4. *इह H*
5. *तन्नास्ति B*
6. *प्रविश्यामि BF*
7. *यह BEH, सर्वमेवं C*
8. *स्थानं स्यादिह मानद G यह श्लोक परित्यक्त A*
9. *षाडङ्गुलो C*

मया निर्वासितो नागस्तस्माद्देशात् षडङ्गुलः।
मानुषाणां[1] स दारांश्च[2] हरत्यहरहः पुरा ॥ 1000 ॥

उस स्थान से मैंने षडङ्गुल नाग को निकाल दिया है क्योंकि वह पहले प्रतिदिन मनुष्यों की पत्नियों का अपहरण कर लेता है॥ 1000 ॥

इतो निर्वास्य[3] दत्तं च[4] स्थानं तस्य ततो मया।
उशीरके गिरिश्रेष्ठे दार्वेषु[5] भुजगोत्तम ॥ 1001 ॥

हे नागश्रेष्ठ! यहां से निकालकर मैंने उसे दार्द प्रदेश के पर्वतों में उत्तम उशीरक पर्वत पर स्थान दिया है॥ 1001 ॥

मयापि[6] स्थानपालोऽसौ युक्त्या तत्र निवेशितः[7]।
गृहीतश्चानुरागेण[8] जनः काश्मीरको[9]मया[10] ॥ 1002 ॥

इस युक्ति से मैंने उसे वहाँ का स्थानपाल नियुक्त किया है तथा कश्मीर के लोगों को भी मैंने प्यार से जीत लिया है॥ 1002 ॥

षडङ्गुलश्च नागेन्द्रः समे पथि निवेशितः[11]।
पूज्यमानो[12] जनैस्तत्र सुखमास्ते षडङ्गुलः ॥ 1003 ॥

नागों के राजा षडङ्गुल को मैंने समतल मार्ग में बसा दिया है जहाँ लोगों के द्वारा पूजा जाता हुआ वह षडङ्गुल प्रसन्नतापूर्वक रहता है।॥ 1003 ॥

---

1. *मानुष्याणां FG*
2. *यह G*
3. *निर्वासितं A*
4. *परित्यक्त A*
5. *दार्वे E*
6. *मया च E*
7. *निवासितः BEF*
8. *गृहे तच्चानुरागेण*
9. *काश्मीरिको G*
10. *इस पद्य का तृतीय चतुर्थ पाद परित्यक्त AH*
11. *इस पद्य का प्रथम द्वितीय पाद परित्यक्त AH*
12. *स्थाने अतिरिक्त A*

मद्वाक्याच्चाभयं दत्तं तत्रास्य हरिणा स्वयम्।
स्थाने षाडङ्गुले रम्ये[1] विश्वगश्वस्य भूपतेः ।। 1004 ।।

यदेत[2]न्नगरं रम्यं नाम्ना चन्द्रपुरं पुरम्[3]।
अत्र ते दद्मि वसतिं कुरु तत्र जलाशयम्[4] ।। 1005 ।।

मेरी प्रार्थना पर हरि (विष्णु) ने स्वयं उसे अभयप्रदान किया है। यहाँ मैं तुम्हें राजा विश्वगश्व के षडङ्गुल (के अधिकार क्षेत्र) से सम्बद्ध सुन्दर स्थान चन्द्रपुर नगर को निवास के लिए देता हूँ। तुम उसे जलाशय में परिवर्तित कर दो ।।1004-1005 ।।

स्थाने षाडङ्गुले रम्ये दुर्वासा मुनिसत्तमः।
उन्मत्तवेशः[5] प्रच्छन्नो नाप्तवान् सम्प्रतिश्रयम्[6] ।। 1006 ।।

मुनियों में श्रेष्ठ दुर्वासा उन्मत्त के वेश में छिपकर षडङ्गुल के सुन्दर निवास स्थान पर समुचित आश्रय प्राप्त नहीं कर सके थे।। 1006 ।।

शप्तं तेन सरोषेण भवितेदं जलाशयम्[7]।
न चापि विदितं नाग मुनिवाक्यं तु कस्यचित्।। 1007 ।।

क्रुद्ध होकर उन्होंने शाप दिया यह (स्थान) झील में परिवर्तित हो जायेगा। हे नाग! मुनि का यह कथन किसी को भी मालूम नहीं है।। 1007 ।।

---

1. *स्थानं षाडङ्गुलं रम्यं BF, इस पद्य के तृतीय चतुर्थ पाद परित्यक्त H।*
2. *यदेव E*
3. *चन्द्रपुरः सरम् ABF*
4. *यह पद्य परित्यक्त H तृतीय चतुर्थ पाद परित्यक्त A।*
5. *तत्र प्रवेशः H*
6. *मत्प्रतिश्रयम् G*
7. *जलाशयः G*

मयैव केवलं ज्ञातं तस्यैवानुग्रहान् मुनेः।
तस्मात्त्वं वसतिं तत्र[1] कुरु पन्नग मा चिरम्॥ 1008॥

हे नाग! उस मुनि की कृपा के कारण केवल मैं इसे जानता हूँ इसलिए देर मत करो। वहाँ तुम अपना निवासस्थान बनाओ॥ 1008॥

किन्तु प्रार्थय[2] भूपालं विश्वगश्वं नराधिपम्।
छद्मना याचनं तस्य त्वया कार्यं महीपतेः॥ 1009॥

भूमिपति राजा विश्वगश्व से प्रार्थना करो किन्तु तुम्हें इस राजा से छलपूर्वक याचना करने का कार्य करना चाहिए॥1009॥

स छद्मना याच्यमानो लोभाद् यो न[3] प्रदास्यति।
अवश्यकरणीयेऽर्थे पार्थिवः स्याद् विमानितः॥ 1010॥

कपटपूर्वक माँगने पर भी यदि वह लोभ के कारण नहीं देगा तो वह राजा अवश्यकरणीय न करने के कारण अपमानित होगा॥ 1010॥

बृहदश्वः
एवमुक्त[4]स्तु नीलेन महापद्मो भुजङ्गमः।
भूत्वा तु ब्राह्मणो वृद्धो ययौ चन्द्रपुरं पुरम्[5]॥ 1011॥

बृहदश्व ने कहा

नील के द्वारा ऐसा कहे जाने पर नाग महापद्म एक बूढ़े ब्राह्मण का वेश धारण कर चन्द्रपुर नगर को गया॥1011॥

---

1. *यह अन्य MSS. तस्य A*
2. *यह A, अभ्यर्थय अन्य MSS.*
3. *येन A, एनं BF, चेन्न E*
4. *यह A, एवमुक्ते अन्य MSS.*
5. *परम् B, चतुर्थ पाद परित्यक्त E*

स ददर्श महीनाथं[1] विश्वगश्वं दयापरम्[2]।
दृष्ट्वा चायाचत[3] तदा तथा विष्णुर्बलिं यथा॥ 1012॥

उसने दयालु राजा विश्वगश्व को देखा और उसे देखकर वैसे ही याचना की जैसे बलि ने विष्णु से (की थी)॥ 1012॥

ब्राह्मण:[4]
राजंश्चन्द्रपुरे शुभ्रे[5] दीयतां मे प्रतिश्रय:।
पर्याप्तं यत्[6] कुटुम्बस्य महतो मे[7] दयापर॥ 1013॥

ब्राह्मण (ने कहा)

हे दयालु राजन्! मुझे इस चमचमाते चन्द्रपुर में वह आश्रयस्थान प्रदान करो जो मेरे बड़े परिवार को पर्याप्त हो। ॥ 1013॥

विश्वगश्व:[8]
ददानि तेऽहं विप्रेन्द्र स्थानं चन्द्रपुरे[9] शुभम्।
गृहाण यावत् पर्याप्तं सकुटुम्बस्य ते द्विज॥ 1014॥

विश्वगश्व (ने कहा)

हे ब्राह्मणाधिराज ब्राह्मण! मैं चन्द्रपुर में तुम्हें मङ्गलकारी स्थान दे दूँगा। परिवारसहित तुम्हारे लिए जितनी पर्याप्त हो उतनी (जगह तुम) ले लो॥1014॥

---

1. *महीपालं G*
2. *यदा परम् A, नराधिपम् H*
3. *ययाच स E*
4. *उवाच अतिरिक्त CG*
5. *चन्द्रपुरं शुभं A*
6. *मे E*
7. *यत् E*
8. *परित्यक्त C, उवाच अतिरिक्त G*
9. *धर्मपुरे AH*

बृहदश्वः[1]
प्रतिग्रहजलं गृह्य[2] स्वस्तिवाच्य[3] भुजङ्गमः।
उवाच मन्त्रिणां मध्ये नागरूपी[4] नराधिपम्॥ 1015॥

बृहदश्व (ने कहा)

दानजल को ग्रहण कर और स्वस्तिवचन कहकर उसने नाग के रूप को धारण कर मन्त्रियों के मध्य में राजा को कहा॥ 1015॥

हस्त्यश्वरथसंयुक्तः स्वजनैः परिवारितः।
निर्याहि नगरादस्मात् सधनद्रव्यसञ्चयः[5]॥ 1016॥

(तुम) अपने सञ्चित धन और अन्य वस्तुओं सहित हाथी, घोड़े और रथों से युक्त होकर तथा अपने लोगों से चारों ओर से घिरकर इस नगर से निकल जाओ॥1016॥

सकुटुम्बस्य[6] पर्याप्तं नगरं मे जनाधिप[7]।
जलाशयः सुविस्तीर्णो भविता शीघ्रमेव तु॥ 1017॥

हे प्रजापति! यह नगर मेरे और मेरे परिवार के लिये पर्याप्त है। यह शीघ्र ही एक विस्तीर्ण झील के रूप में परिवर्तित हो जायेगा॥ 1017॥

ततः स राजा धर्मात्मा सपौरहयकुञ्जरः[8]।
सार्थमन्त्रिचयो[9] गत्वा स्वपुराद्[10] योजनद्वयम्[11]॥ 1018॥

---

1. *उवाच अतिरिक्त CG*
2. *प्रतिश्रुत्य जलं गृह्य E*
3. *स्वस्तिवाद्य A*
4. *नागरूपो E*
5. *संयुतः A*
6. *यह अन्य MSS., स्वकुटुम्बस्य A*
7. *यह A, नराधिप अन्य MSS.*
8. *सधनद्रव्यसञ्चयः H, सपौरजनकुंजरः BEF*
9. *सार्थमन्त्रिचयं E*
10. *समराद् C*
11. *चतुर्थ पाद परित्यक्त E*

पश्चिमेन तदा चक्रे[1] नगरं सुमनोहरम्।
विश्वगश्वपुरं नाम तदे[2]तद् भुवि विश्रुतम्॥ 1019॥

और उसके बाद तब वह धर्मात्मा राजा अपने नागरिकों, घोड़ों, हाथियों और मन्त्रियों के समूहसहित अपने नगर से चला गया और उस नगर के पश्चिम में दो योजन की दूरी पर एक सुन्दर नगर बसाया। वह पृथिवी पर विश्वगश्वपुर नाम से प्रसिद्ध है॥1018-19॥

तत्रोवास सुखी राजा ब्राह्मणान्[3] परिपूजयन्[4]।
नगरं प्लावयामास महापद्मो भुजङ्गमः॥ 1020॥

ब्राह्मणों की पूजा करता हुआ वह राजा सुख से वहाँ रहने लगा। महापद्मनाग ने (चन्द्रपुर) नगर को डुबो दिया॥1020॥

तत्रास्ते सपरीवारः सुखी भुजगसत्तमः।
महापद्मसरस्तच्च योजनायामविस्तृतम्[5]॥ 1021॥

सपुण्यं रमणीयं च सतां हृदयनन्दनम्[6]।
महापद्मप्रभावेण दुष्टग्राहविवर्जितम्॥ 1022॥

तत्रास्ते स सुखी नागः कुटुम्बपरिवारितः॥ 1023॥

महापद्मसरस्यैष कथितः सम्भवो मया।
किमन्यत् तव राजेन्द्र कथयामि वदस्व तत्[7]॥ 1024॥

नागों में श्रेष्ठ वह (महापद्म) अपने परिवार सहित वहाँ सुख से रहता

1. *प्रथम पाद परित्यक्त E*
2. *यद् G*
3. *ब्राह्मणं BE*
4. *परिपूजयेत् BF*
5. *-विस्तरम् G*
6. *हृदयवल्लभम् E*
7. *नीलमते महापद्मप्रवेशः अतिरिक्त BEF, इति नीलमते महापद्मप्रवेशः H, इति नीलमते महापद्मप्रवेशवर्णनम् G इति श्रीनीलमतपुराणे महापद्मप्रवेशवर्णनं नाम त्रिसप्तितमोऽध्यायः। C*

है और वह एक योजन लम्बी और चौड़ी बहुत विस्तृत झील पवित्र, सुन्दर और सज्जनों के हृदय को आनन्दित करने वाली है। महापद्म के प्रभाव से वह दुष्ट मगरमच्छों से रहित है। अपने परिवार से घिरा हुआ वह नाग वहाँ सुख से रहता है। महापद्म सरोवर के जन्म की यह कथा मैंने सुना दी है। हे राजाधिराज! इसके अतिरिक्त तुम्हें और क्या दूसरी बात सुनाऊं उसको मुझे तुम बताओ ॥1021-1024॥

गोनन्दः[1]
भगवंश्छ्रोतुमिच्छामि पुण्यान्यायतनान्यहम्।
कश्मीरेषु[2] च देशेषु दर्शनं सम्प्रकीर्त्तय[3] ॥ 1025 ॥

गोनन्द (ने कहा)

हे भगवन् ! मैं कश्मीरदेशों के अन्तर्गत पुण्यस्थानों के विषय में सुनना चाहता हूँ। उनके दर्शन (के माहात्म्य) को बताइए॥1025॥

बृहदश्वः[4]
विनायकं[5] तु गाङ्गेयं[6] निःसृतं[7] वर्धनद्रुमात्।
तं दृष्ट्वा सर्वकल्याणीं सिद्धिमाप्नोति मानवः ॥ 1026 ॥

बृहदश्व (ने कहा)

वहाँ वर्धन वृक्ष से निकला हुआ गङ्गा का बेटा विनायक है। उसे देखकर मनुष्य सब प्रकार का कल्याण करने वाली सिद्धि को प्राप्त कर लेता है॥1026॥

---

1. *उवाच अतिरिक्त CG*
2. *काश्मीरेषु A*
3. *तद् दर्शनं प्रकीर्त्तय G*
4. *उवाच अतिरिक्त CG*
5. *विनायकः G*
6. *गाङ्गेयः G, नागेशं A*
7. *यह A, निसृतः G, निसृतं अन्य MSS*

Ed. Leiden v.v. 989-990

तथाविधं काम्यवरं तस्य दक्षिणपश्चिमे।
देशे[1] तु क्रोशमात्रेण दृष्ट्वा कार्याणि साधयेत्[2] ॥ 1027 ॥

भूर्जस्वामी[3] हिडिम्बेशो लोवारः श्रीविनायकः।
उतङ्केशो गुहावासी भीमेशः[4] सौमुख[5] स्तथा ॥ 1028 ॥

भद्रेश्वरो महास्यश्च महाशनगवेषणौ[6]।
पौलस्त्यो गिरिवासी च जयेश्वरमहेश्वरौ ॥ 1029 ॥

एकैकमेभ्यो दृष्ट्वा तु गणेशं सुसमाहितः।
कार्यसिद्धिमवाप्नोति पुण्यं फलमुपाश्नुते ॥ 1030 ॥

उसके दक्षिण पश्चिम में एक कोस के फासले पर उसी प्रकार के काम्यवर नामक तीर्थ को देखने से कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है। एकाग्रचित्त से भूर्जस्वामी, हिडिम्बेश, लोवार, श्रीविनायक, उतङ्केश, गुहावासी, सौमुख, भद्रेश्वर, महास्य, महाशन और गवेषण, पौलत्स्य, गिरिवासी, जयेश्वर और महेश्वर इन सभी गणेशों में प्रत्येक को देखने से कार्यसिद्धि प्राप्त होती है और पुण्यफल मिलता है। 1028-1030 ॥

1. *दिशे A*
2. *साधय BDEF*
3. *ऊर्जस्वामी BE*
4. *भूम्यांशा: A*
5. *सुमुखः H*
6. *यह G, महाशनगवेषिणौ BCD, महाशविवेषिणौ E*

Ed. Leiden v.v. 991-994

शच्याः समीपे पौलस्त्यं दृष्ट्वा स्कन्दं नराधिप।
पात्रकुण्डे[1] नरः स्नात्वा कौमारं लोकमाप्नुयात्॥ 1031॥

हे नरों के स्वामी! मनुष्य पात्रकुण्ड में स्नान करके शचीतीर्थ के समीप पुलत्स्य के द्वारा बनाई गई स्कन्द की मूर्ति को देखकर कुमारलोक को प्राप्त करता है॥1031॥

मालीवनं[2] गौतमेशं[3] विश्वामित्रेश्वरं तथा।
सौनासिकं[4] वसिष्ठेशं माखरेशं[5] सुरेश्वरम्[6]॥ 1032॥

स्कन्देश्वरं[7] विशाखेशं पौलस्त्यममरं[8] तथा।
दृष्ट्वा कुमारमेकैकं फलं गोदानजं भवेत्[9]॥ 1033॥

मालीवन, गौतमेश, विश्वामित्रेश्वर, सौनासिक, वसिष्ठेश, माखरेश, स्कन्देश्वर तथा पुलत्स्य के द्वारा बनाई गई अमर की प्रतिमा इनमें से प्रत्येक कुमार को देखकर गोदान जैसे फल की प्राप्ति होती है॥1032-1033॥

पुलस्त्यनिर्मितं[10] शुक्रं[11] भरद्वाजकृतं तथा।
काश्यपं काण्व[12] मागस्त्यं वासिष्ठं[13] च शतक्रतुम्॥ 1034॥

---

1. *पात्रकुण्डं H*
2. *यह H, माल्वीरं A, सालीवरं DEF, सौलीवरं B*
3. *गौतमीशं H, गौरमीशं ABDF*
4. *सौनामिकं BE*
5. *सारवरं B*
6. *मखरेश्वरम् E, मे सुरेश्वरम् B*
7. *स्कन्धेश्वरम् G*
8. *अमरं A मपरं (मूलपाठ)*
9. *लभेत् G*
10. *पौलस्त्यनिर्मितं EH*
11. *शुक्रं H शक्रं (मूलपाठ)*
12. *कन्दम् E, कण्ठम् B*
13. *वसिष्ठं B*

दृष्ट्वा स्वर्गमवाप्नोति गोसहस्रफलं लभेत्।
अग्नेराङ्गीरसीं दृष्ट्वा प्रतिमां प्राप्नुयाद्[1] दिवम्॥ 1035॥

पुलत्स्य के द्वारा निर्मित तथा भारद्वाज के द्वारा परिष्कृत की गई शुक्रमूर्ति एवं कश्यप, कण्व, अगस्त्य और वसिष्ठ इनके सबके प्रयास के द्वारा रची गई सैंकड़ों यज्ञ करने वाले इन्द्र की मूर्ति को देखकर मनुष्य स्वर्ग की प्राप्ति करता है और उसे हज़ार गौओं को दान करने का फल मिलता है। अङ्गिरा के द्वारा बनाई गई अग्नि की प्रतिमा के दर्शन से स्वर्ग प्राप्त होता है॥1034-1035॥

तैजसे तु नरः स्नात्वा दृष्ट्वा प्रेताधिपं यमम्[2]।
स्वर्गलोकमवाप्नोति तिलधेनुफलं भवेत्[3]॥ 1036॥

तैजस तीर्थ में स्नान करके और प्रेतों के राजा यम के दर्शन से स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है और तिलदान तथा गोदान का फल प्राप्त होता है॥1036॥

स्नात्वा[4] तु पुष्करे तीर्थे[5] दृष्ट्वा सूर्यसुतं तथा।
सर्वपापविनिर्मुक्तः स्वर्गलोके महीयते॥ 1037॥

पुष्करतीर्थ में स्नान करके सूर्यसुत के दर्शन से सब पापों से मुक्ति मिलती है और स्वर्गलोक में महिमा की प्राप्ति होती है॥1037॥

प्रेताधिपं वसिष्ठं च सुतङ्केशं[6] तथा यमम्।
दृष्ट्वैकैकमथैतेभ्यो[7] मुच्यते सर्वकिल्विषैः॥ 1038॥

और उसके बाद प्रेताधिपति, वसिष्ठ, सुतङ्केश तथा यम इनमें से एक एक को देखकर मनुष्य को सभी पापों से मुक्ति मिल जाती है॥1038॥

---

1. *आप्नुयात् G*
2. *क 1037 और ख 1037 ख के मध्य दृष्ट्वैककमथैतेभ्यो मुच्यते सर्वकिल्विषैः H*
3. *यह A, लभेत् अन्य MSS.*
4. *स्नातः C*
5. *स्नात्वा पुष्करतीर्थे च H*
6. *यह ACEFH, उतङ्केशं D*
7. *तथैतेभ्यः H*

तारारात्र्यां[1] विशेषेण दृष्ट्वा ह्येतान् महाबलान्[2]।
दृष्ट्वा तमर्चितं देवं विरूपाक्षमिति श्रुतम्॥ 1039॥

नाप्नोति सर्वकालेषु भयं राक्षससम्भवम्[3]।
दृष्ट्वा तु वरुणं[4] देवं[5] राजंश्च बलिना कृतम्॥ 1040॥

सर्वपापविनिर्मुक्तो वारुणं लोकमाप्नुयात्[6]।
मानसस्योत्तरे कूले महापद्म[7]जलाशये॥ 1041॥

स्नात्वा दृष्ट्वैव भवनं पुलस्त्येन विनिर्मितम्।
गोदानफलमाप्नोति व्याधिभिश्च विमुच्यते[8]॥ 1042॥

तारारात्रि में विशेष रूप से इन परमशक्तिशाली प्रतिमाओं को देखकर और पूजित भगवान् विरूपाक्ष (शिव) को देखकर सभी कालों में राक्षसों से होने वाला भय नहीं रहता ऐसा सुना है और हे राजन्! बलि के द्वारा बनाई गई इस वरुणदेव की मूर्ति को देखकर सब पापों से मुक्ति मिलती है और वरुणलोक की प्राप्ति होती है। मानस झील के उत्तरी किनारे पर और महापद्म जलाशय में स्नान करके पुलत्स्य के द्वारा बनाये गये स्थान (मन्दिर) को देखने से मनुष्य को गोदान करने का फल प्राप्त होता है और उसे व्याधियों से मुक्ति मिलती है॥1039-1042॥

1. *तारारात्रिं C*
2. *संशोधित ह्येता : BF, वैते A ह्येते महाबला: (मूलपाठ)*
3. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त AH*
4. *वरुणं BE वारुणं (मूलपाठ)*
5. *तीसरा पाद परित्यक्त AH*
6. *यह A, अश्नुते अन्य MSS.*
7. *रमापद्म-A*
8. *यह पंक्ति परित्यक्त B*

दृष्ट्वा धनेश्वरं[1] देवं वितस्ताक्षसमीपतः।
कपटेश्वरपार्श्वे[2] च[3] दृष्ट्वागस्त्येन विनिर्मितम्[4] ॥ 1043 ॥

सेतारं[5] गोतमस्वामिं सौमुखं[6] सुरभीकृतम्।
दृष्ट्वैकैकमथैतेभ्यो धनवानभिजायते ॥ 1044 ॥

वितस्ताक्ष के समीप देव धनेश्वर (कुबेर) को देखकर और कपटेश्वर के पास अगस्त्य के द्वारा बनाई गई (देवप्रतिमा) सेतार, गोतमस्वामी और सुरभि के द्वारा बनाये गये सौमुख इनमें से एक एक को देखकर मनुष्य धनवान् हो जाता है ॥1043-1044 ॥

दृष्ट्वा शशाङ्कं राज्ञा तु सुचन्द्रेण विनिर्मितम्।
चन्द्रलोकमवाप्नोति नरो नास्त्यत्र संशयः ॥ 1045 ॥

मणिभद्रं तथा दृष्ट्वा धनवानभिजायते ॥ 1046 ॥

राजा सुचन्द्र द्वारा बनाये गये शशाङ्क को देखकर मनुष्य चन्द्रलोक को प्राप्त करता है इसमें कोई संशय नहीं है और मणिभद्र को देखकर धनवान् होता है। ॥ 1045-1046 ॥

कामदेवमगस्त्येन पर्वतोपरि निर्मितम्।
दृष्ट्वा सुखमवाप्नोति रूपवानभिजायते[7] ॥ 1047 ॥

पर्वत पर अगस्त्य के द्वारा बनाये गये कामदेव को देखकर सुख प्राप्त होता है तथा मनुष्य सुन्दर रूप वाला होता है ॥1047 ॥

---

1. *धरेश्वरं E, वरीश्वरं D*
2. *पार्श्वं H*
3. *वा A.*
4. *यह पद्य परित्यक्त B*
5. *सीतारि BDE, सीतागि F*
6. *सौसुखं EG*
7. *यह पद्य केवल BDEF*

Ed. Leiden v.v. 1007-1010a

पुलस्त्यनिर्मिता देवी भुवि भेडेति विश्रुता[1] ॥ 1048 ॥

पृथिवी पर पुलत्स्य के के द्वारा बनाई गई (मूर्ति) भेडादेवी इस नाम से प्रसिद्ध है ॥1048 ॥

पुलस्त्यनिर्मितां दृष्ट्वा केशवेनोपबृंहिताम्।
सर्वपापविनिर्मुक्तो विद्यामाप्नोत्यनुत्तमाम्[2] ॥ 1049 ॥

पुलत्स्य के द्वारा बनाई गई और केशव के द्वारा बढ़ाई गई (सुसज्जित, देवी की मूर्ति) को देखकर (मनुष्य) सब पापों से मुक्त होता है और सर्वश्रेष्ठ विद्या को प्राप्त करता है ॥1049 ॥

दृष्ट्वा विशोकां काश्मीरां[3] केशवेनोपबृंहिताम्।
प्रतिष्ठितां केशवेन विष्णुलोके महीयते ॥ 1050 ॥

केशव के द्वारा सजाई गई और केशव के द्वारा ही प्रतिष्ठित की गई विशोका एवं कश्मीरा को देखकर विष्णुलोक में (मानव) गौरव प्राप्त होता है ॥1050 ॥

भीमादेवीं[4] तथा दृष्ट्वा श्रियमाप्नोत्यनुत्तमाम्।
तथा कापिञ्जलीं देवीं तथा देवीं सुरेश्वरीम् ॥ 1051 ॥

भद्रेश्वरीं गौतमेशीं[5] देवीं कालशिलामपि[6]।
तथोद्योगश्रियं नाम्नीं[7] गवाक्षीं चण्डिकामपि ॥ 1052 ॥

---

1. *यह पद्य परित्यक्त D*
2. *यह पंक्ति परित्यक्त DEF*
3. *यह A, कश्मीरां F, कश्मीरं E, काश्मीर्यां C*
4. *यह अन्य MSS, भीमां देवीं A*
5. *गौतमीं B*
6. *कालाशिलामपि D*
7. *नाम्ना G*

दुर्गां गौरीं सुविजयां शकुनीं[1] ब्रह्मचारिणीम्[2]।
चक्रेश्वरीं[3] तथा दृष्ट्वा मनोरथमवाप्नुयात्॥ 1053॥

और भीमादेवी के दर्शन करके मनुष्य जिससे बढ़कर अन्य कोई नहीं है अर्थात् सर्वोकृष्ट धन को प्राप्त करता है। (इसके अतिरिक्त) और कापिञ्जलि देवी, सुरेश्वरी देवी, भद्रेश्वरी, गौतमेशी, कालशिला देवी, उद्योगश्री नामक देवी, गवाक्षी, चण्डिका, दुर्गा, गौरी, सुविजया, शकुनी, ब्रह्मचारिणी और चक्रेश्वरी को देखकर (वह) अपनी मनोवाञ्छित की पूर्ति कर लेता है॥1051-1053॥

चक्रस्वामिसमीपे च[4] दृष्ट्वा देवीं हराङ्कगाम्[5]।
सर्वपापविनिर्मुक्तो रुद्रलोकमवाप्नुयात्॥ 1054॥

और चक्रस्वामि तीर्थ के समीप शिव की गोदी में बैठी हुई (पार्वती) देवी को देखकर मानव सारे पापों से छूटकर रुद्रलोक को पा लेता है॥1054॥

कार्तवीर्यार्जुनस्वामिं[6] दृष्ट्वा तं[7] च दिवाकरम्।
मार्तण्डं कश्यपस्वामिं[8] विश्वगश्वकृतं रविम्॥ 1055॥

सुचन्द्रेशं सुचक्रेशं[9] सुरभिस्वामिनं रविम्।
दृष्ट्वैकैकमथैतेभ्यो हयदानफलं लभेत्॥ 1056॥

कार्तवीर्य अर्जुनस्वामि और उस दिवाकर को देखकर, मार्तण्ड, कश्यप स्वामि विश्वगश्व से बनाये गये रवि, सुचन्द्रेश, सुचक्रेश, सुरभिस्वामि और रवि

---

1. *यह अन्य MSS, णकुनीं A, शाक्तनीं G*
2. *नीलमते देवायतननाम। गोनन्दः। अतिरिक्त; 1053 क से लेकर 1067 परित्यक्त D.*
3. *शक्रेश्वरीं A*
4. *तु BFH*
5. *हरङ्कशाम् A*
6. *कार्तवीर्यार्जुनस्वामीं G, कार्तवीर्यार्जुनं स्वामिं B.*
7. *नामाङ्कं H.*
8. *कश्यपस्वामिमार्तण्डं G.*
9. *सुचन्द्रे च सुचन्द्रेशं E, सुचन्द्रे च सुचक्रेशं B.*

इन (देवताओं) में से एक एक को देखकर घोड़े के दान के फल को वह प्राप्त कर लेता है।॥ 1056 ॥

ब्रह्माणं वरदं दृष्ट्वा शैलरूपधरं स्वयम्।
विष्णुस्वामिं हरस्वामिं[1] कश्यपस्वामिनं तथा॥ 1057 ॥

दृष्ट्वैतान् स्वर्गमाप्नोति भूमिपाल पितामहान्।
चक्रस्वामिसमीपस्थं हरं[2] दृष्ट्वा सुदर्शनम्॥ 1058 ॥

हे पृथिवी रक्षक राजन् (अपनी इच्छा से) अपने आप पर्वत का रूप धारण करने वाले तथा वरदान देने वाले ब्रह्मा, विष्णुस्वामि, हरस्वामि और कश्यप स्वामि इन पितामहों (दादाओं) और चक्रस्वामि के समीप स्थित सुन्दर हर को देखकर स्वर्ग को प्राप्त कर लेता है॥1057–1058॥

स्वयम्भुवं वह्निकृतं तथा वै[3] पिङ्गलेश्वरम्।
बिन्दुनादेश्वरं देवं देवं भद्रेश्वरं तथा॥ 1059 ॥

चन्द्रेश्वरं सज्येष्ठेशं वालखिल्येश्वरं हरिम्।
केशवेशं समेशं च धौम्येशं वरुणेश्वरम्॥ 1060 ॥

चक्रेश्वरं सचन्द्रेशं कश्यपेशं विलोहितम्।
कामेशं सवासिष्ठेशं भूतेशं सगणेश्वरम्॥ 1061 ॥

सूर्येश्वरं महाराज भस्मेशं विमलेश्वरम्।
दृष्ट्वैकैकमथैतेभ्यो मुच्यते सर्वकिल्विषैः[4] ॥ 1062 ॥

हिमाचलेशं शङ्खेशं[5] देवं वैवट्टिटलेश्वरम्।
महानदीश्वरं शम्भुं[6] वरदं कश्यपेश्वरम्॥ 1063 ॥

---

1. *हरिं स्वामिं C, हरिस्वामिं ed. Leiden*
2. *हरिं G*
3. *तथैव B*
4. *किल्विषैः BEF*
5. *शृङ्गेशं BEF*
6. *शाम्भवं A*

राजेश्वरं नृसिंहेशं भवेशं धनदेश्वरम्।
सदा सन्निहितो राजन् देवो भूतेश्वरो हरिः[1] ॥ 1064 ॥

अग्नि के द्वारा बनाये गये स्वयंभू (ब्रह्मा) पिङ्गलेश्वर, बिन्दुनादेश्वर देव और भद्रेश्वर देव, चन्द्रेश्वर, ज्येष्ठेश, वालखिल्येश्वर, हरि, केशवेश, समेश, धौम्येश, ब्रह्मेश्वर, चक्रेश्वर, चन्द्रेश, कश्यपेश, विलोहित, कामेश, वासिष्ठेश, भूतेश, गणेश्वर, सूर्येश्वर, भस्मेश, विमलेश्वर, हिमाचलेश, शङ्खेश, वैवट्टिलेश्वर, महानदीश्वर, वरदान देने वाले शम्भु, कश्यपेश्वर, राजेश्वर, नृसिंहेश, भवेश, और धनदेश्वर इनमें से एक एक को देखकर मनुष्य सारे पापों से मुक्त हो जाता है। हे राजन्! इन सारी प्रतिमाओं में सभी प्राणियों का स्वामी भगवान् विष्णु सदैव समीप रहता है ॥1059-1064 ॥

मुच्यते किल्विषैः सर्वैस्तत्र दृष्ट्वैव नन्दिनम्[2]।
नन्दीश्वरः प्रसन्नो[3] हि सदा भूतेश्वरस्तथा[4] ॥ 1065 ॥

सान्निध्यं राजशार्दूल[5] लोकानां हितकाम्यया।
सदा[6] सन्निहितस्तत्र[7] नन्दी भक्त्या हरस्य तु[8] ॥ 1066 ॥

हे राजाओं में श्रेष्ठ! वहाँ नन्दी को देखने मात्र से ही सभी पापों से मुक्ति मिलती है और (वहां) नन्दीश्वर सदा ही प्रसन्न रहता है और भूतेश्वर भी। संसार के हित की कामना और शिव के प्रति भक्ति होने के कारण नन्दी वहाँ सदैव उपस्थित होता है ॥1065-1066 ॥

---

1. *हरः G*
2. *यह अन्य MSS., तं दिनम् A*
3. *नन्दीश्वरं प्रसन्नं AH*
4. *तदा EF*
5. *कुरुते तत्र G*
6. *सर्वा A*
7. *तस्य G*
8. *च A*

तोयमध्यगतं दृष्ट्वा सम्प्राप्तं[1] कपटेश्वरम्।
गोसहस्रमवाप्नोति सम्पूज्याभीप्सितां गतिम्[2] ॥ 1067 ॥

जल के मध्य में प्रकट होने वाले कपटेश्वर को देखकर हज़ार गौओं की प्राप्ति होती है और उसकी पूजा करके इच्छित गति मिलती है ॥ 1067 ॥

गोनन्दः
कथमाराधितो देवो[3] नन्दिना वदतां वर।
नित्यं सन्निहितो देवो[4] येन भूतेश्वरे[5] स्थितः[6] ॥ 1068 ॥

गोनन्द (ने कहा)

हे वक्ताओं में श्रेष्ठ! नन्दी ने किस प्रकार देव की आराधना की जिस कारण वें भूतेश्वर में उसके निकट प्रतिदिन उपस्थित रहते हैं ॥1068 ॥

बृहदश्वः
शृणु राजन् कथां दिव्यां सर्वकिल्विषनाशिनीम्[7]।
नन्दिनं प्रति भूपाल यथावृत्तं मनोरमम्[8] ॥ 1069 ॥

बृहदश्व (ने कहा)

हे पृथिवी का पालन करने वाले राजन्! सब पापों का नाश करने वाली उस दिव्य कथा को सुनो नन्दी के विषय में वह मनोहर वृत्तान्त जिस प्रकार घटित हुआ ॥1069 ॥

---

1. *यह अन्य MSS., सम्प्राप्य AH*
2. *नीलमते देवायतनकीर्तनम् अतिरिक्त A, -देवायतनकीतर्ननाम समाप्तम् F, इति नीलमते देवतायतनकीर्तनम् G, नीलमते देवालयातनकीर्तनं समाप्तम्। तत्पश्चात् गोनन्द उवाच H, परित्यक्त A.*
3. *देव E.*
4. *शम्भुः G*
5. *भूतेश्वरः H*
6. *यह पद्य परित्यक्त A*
7. *सर्वकल्मषनाशिनीम् CDG*
8. *मनोहरम् B, मनोरमां DEFH*

शिलादो नाम विप्रो[1]ऽभूत् पुरा पुत्रविवर्जितः।
तेन वर्षशतं भुक्त्वा शिलाचूर्णं नराधिप॥ 1070॥

नन्दिपर्वतमासाद्य महादेवः प्रसादितः।
पुत्रार्थे[2] तु तदा तस्य देवदेवोऽनुकम्पया॥ 1071॥

पुत्रत्वे[3] नन्दिनं प्रादात् स्वगणेशं महाबलम्।

दीयमानस्तु पुत्रत्वे[4] नन्दी प्रोवाच शङ्करम्॥ 1072॥

अनुग्रहाद् द्विजस्यास्य पुत्रोऽहं भविता प्रभो[5]।
किन्त्वयोनिभवो देव भवेयं तस्य[6] पुत्रकः॥ 1073॥

हे राजन्! प्राचीन समय में शिलाद नाम का एक ब्राह्मण था जिसका कोई पुत्र नहीं था। उसने नन्दी पर्वत पर जाकर पुत्रप्राप्ति के लिए एक सौ वर्ष तक शिलाचूर्ण खाकर भगवान् महादेव को प्रसन्न किया। देवों के देव ने अनुकम्पा करके अपने ही महाबली गणेश नन्दी को पुत्र रूप में उसे प्रदान किया। पुत्र के रूप में दिये जाते हुए नन्दी ने शङ्कर से कहा- इस द्विज के प्रति आपकी कृपा से मैं उसका बेटा बनूँगा परन्तु हे देव! मैं उसका अमैथुनिक पुत्र बनूँगा॥1070-1073॥

---

1. *शिलादो नाम पुत्रो EF, शिलादेन सपुत्रो B*
2. *पुत्रार्थं F*
3. *पुत्रार्थे BDF, पुत्रार्थी E, पुत्रत्वं A*
4. *पुत्रार्थे B*
5. *विभो G*
6. *यह A, त्वस्य अन्य MSS.*

चिरं च न च वत्स्येऽहं मानुष्ये त्वद्विना कृतः।
तमुवाच हरो देवः प्रहसन्ननुकम्पया॥ 1074॥

उमाविवाहे शप्तोऽसि भृगुणा त्वं गणोत्तम[1]।
अपूजितेन मानुष्ये तेनापि[2] भविता ध्रुवम्॥ 1075॥

तेनैव च[3] शरीरेण मत्समीपमुपेष्यसि[4]।
ततः[5] प्रभृति मानुष्ये वत्स्यसे त्वं गणोत्तम॥ 1076॥

तुम से बिछुड़ा हुआ मैं मनुष्यलोक में अधिक देर तक नहीं रहूँगा। तब हर (शिव) देवता ने कृपापूर्वक हँसते हुए उसे कहा – हे गणश्रेष्ठ! उमा के विवाह में तुम्हारे द्वारा (समुचित) पूजा न पाने पर भृगु ने तुम्हें शाप दिया है इसलिए तुम्हें मनुष्य के रूप में अवश्य रहना है। उस शरीर से तुम मेरे समीप आओगे। हे गणों में श्रेष्ठ! तब से लेकर तुमको मनुष्यलोक में रहना होगा ॥1074–1076॥

वत्स्यसे मत्समीपञ्च[6] प्राकाम्येण[7] यथासुखम्।
वत्स्यसे किं[8] च मानुष्ये भृगुशापबलात्कृतः[9]॥ 1077॥

तत्रापि तेऽहं वत्स्यामि प्राकाम्येण[10] गणेश्वर॥ 1078॥

(फिर) तुम मेरे साथ जी भरकर सुखपूर्वक रह सकोगे। और इसके अतिरिक्त भृगु के शाप के कारण तुम मनुष्यलोक में रहोगे। हे गणों के स्वामी वहाँ मैं भी मन भर कर तुम्हारे साथ रहूँगा ॥1077–1078॥

---

1. *गणेश्वर A, गजोत्तम G*
2. *तेनासि BH*
3. *तेन देव BDE, तेन चैव CH*
4. *अथेष्यसि BDF*
5. *इतः G*
6. *यह A, मत्समीपे च अन्य MSS*
7. *प्राकाम्येन AC*
8. *त्वं G*
9. *ततः G, भृगुणा बलात्कृतः H*
10. *प्राकाम्येन AC*

एवं[1] भूतेश्वरे नन्दी नित्यं वसति पार्थिव।
प्राकाम्येण[2] हरो देवस्तथा तदनुकम्पया[3] ॥ 1079 ॥

हे राजन्! इस प्रकार नन्दी सदैव भूतेश्वर में रहता है और उस पर अनुकम्पा करने के कारण अधिक समय तक भगवान् शिव भी सानन्द वहाँ रहते हैं ॥1079 ॥

गोनन्दः[4]
कथं जातः शिलादस्य नन्दी पुत्रत्वमागतः।
कथं च स्वशरीरेण गाणपत्यमवाप्तवान्[5] ॥ 1080 ॥

गोनन्द (ने कहा)
शिलाद के पुत्र के रूप में नन्दी कैसे उत्पन्न हुआ और उसने अपने शरीर के साथ गाणपत्य (गणपति का पद) कैसे प्राप्त किया? 1080 ॥

बृहदश्वः[6]
अयोनिजः शिलादेन शिलां चूर्णयता तदा।
सम्प्राप्तस्तु शिलामध्यात् पुत्रो नन्दी शशिप्रभः ॥ 1081 ॥

बृहदश्व (ने कहा)
तब शिला को पीसते हुए शिलाद ने शिलाओं के मध्य चन्द्रमा की कान्ति के समान कान्ति से युक्त नन्दी को अयोनिज (अमैथुनिक) पुत्र के रूप में प्राप्त किया ॥1081 ॥

---

1. *चैवं EF*
2. *प्राकाम्येन AC*
3. *तथाभूदनुकम्पया B*
4. *उवाच अतिरिक्त CE*
5. *अवाप्नुयात् BH*
6. *उवाच अतिरिक्त C*

तं प्राप्य तनयं विप्रः शिलादो हर्षमागतः।
संस्काराणि तु पुत्रस्य सर्वाणि[1] कृतवांस्तथा[2] ॥ 1082 ॥

उस पुत्र को प्राप्त करके ब्राह्मण शिलाद प्रसन्न हुआ और उसने पुत्र के सभी संस्कार सम्पन्न किये ॥1082 ॥

क्रियमाणेषु पुत्रस्य संस्कारेषु तथा द्विजः[3]।
अल्पायुषं स शुश्राव ब्राह्मणेभ्यः स्वयं[4] सुतम्॥ 1083 ॥

और पुत्र के संस्कारों को करते हुए उस ब्राह्मण ने स्वयं ब्राह्मणों से सुना कि (उसका) बेटा अल्पायु वाला है ॥1083 ॥

श्रुत्वारोदत्[5] स धर्मात्मा शिलादः पुत्रवत्सलः।
तं रुदन्तं तदा नन्दी वारयामास धर्मवित्॥ 1084 ॥

मा त्वं[6] रुदस्व[7] ताताद्य तवाहं प्रियकाम्यया।
आराध्य शङ्करं देवं दीर्घमाप्स्यामि जीवितम्॥ 1085 ॥

यह सुनकर पुत्रवत्सल वह धर्मात्मा शिलाद रोने लगा। धर्मज्ञ नन्दी ने तब उस रोते हुए को (रोने से इस प्रकार कहते हुए) रोका। हे पिता! आज मत रोओ। तुम्हारी प्रिय इच्छा (पूर्ति) के लिए मैं भगवान् शङ्कर की आराधना करके लम्बी उमर प्राप्त करूँगा ॥1084-1085 ॥

---

1. *संस्कारांश्चापि निखिलान् पुत्रस्य G, पुत्रस्य के बाद सर्वाणि C*
2. *यह A, तदा अन्य MSS.*
3. *द्विज F*
4. *तदा CG*
5. *परित्यक्त BDE,-वोचत् ACFGH*
6. *मा मा Ed. Leiden*
7. *रोदस्व C, रोधस्व H*

एवमुक्त्वा स पितरं प्राप्तानुज्ञस्ततः स्वयम्[1]।
हरमुकुटमित्याख्यातं शृङ्गं[2] हिमवतः शुभम्[3] ॥ 1086 ॥

जगाम सहसा नन्दी[4] तपसे कृतनिश्चयः ॥ 1087 ॥

इस प्रकार पिता को कहकर तथा उनसे आज्ञा लेने के पश्चात् वह स्वयं तपस्या (करने) के लिए दृढ़ निश्चय करके हरमुकुट नाम से प्रसिद्ध हिमालय की पवित्र चोटी पर एकदम चला गया ॥1086-1087 ॥

तस्य[5] शृङ्गस्य पूर्वार्धे सरोऽस्ति[6] विमलोदकम्।
कालोदकमिति ख्यातं सर्वकिल्विषनाशनम् ॥ 1088 ॥

तस्मिन्नन्दी शिलां गृह्य गुर्वीं[7] मूर्धन्यतन्द्रितः।
आराधयामास हरं रुद्रजापरतो जले ॥ 1089 ॥

उस चोटी के पूर्वार्ध में सब पापों का नाश करने वाला कालोदक नामक निर्मल जल का सरोवर है। सिर पर एक भारी शिला को रखकर नन्दी उस झील के जल में तन्द्रारहित होकर रुद्र जाप करते हुए शिव की आराधना करने लगा ॥ 1088-1089 ॥

तस्य वर्षशतं रुद्रं जपतः सलिले गतम्।
ततो वर्षशते पूर्णे देवी देवमभाषत ॥ 1090 ॥

जल में (बैठकर) रुद्र के नाम को जपते हुए उसके सौ साल बीत गये। तब सौ साल पूर्ण होने पर देवी (पार्वती) ने (महा) देव से कहा ॥1090 ॥

---

1. *परं D*
2. *शृङ्गे C*
3. *दूसरी पंक्ति परित्यक्त D*
4. *तत्र G*
5. *तस्यापि H*
6. *ऽपि।*
7. *गुर्वीं गृहीत्वा G*

पुत्रो मे भगवन् नन्दी कालोदे तप्यते तपः।
वरदानेन तं देव योजयस्वाशु मा चिरम्॥ 1091॥

हे भगवन्। मेरा बेटा नन्दी कालोद में तपस्या कर रहा है। आप शीघ्र ही उसे वरदान से युक्त करें। हे देव! देर मत करें॥1091॥

एवमुक्तस्तदा देव्या वाराणस्यां नराधिप।
देव्या सह ततो[1] देवो मार्गेण क्षितिगामिना॥ 1092॥

प्रदेशे[2] वृषभारूढो न चादृश्यत केनचित्[3]।
स प्रयागमतिक्रम्य तथा[4]योध्यां महापुरीम्॥ 1093॥

पुण्यं च नैमिषारण्यं गङ्गाद्वारमतः परम्।
स्थानेश्वरात्[5] कुरुक्षेत्रं तथा विष्णुपदं सरः[6]॥ 1094॥

हे नरधिप। वाराणसी में देवी ने (महा) देव को ऐसा कहा। तब देवी के साथ बैल पर सवार होकर पृथ्वी के रास्ते जाते हुए (वे) उस क्षेत्र में किसी को भी दिखाई नहीं दिये॥1092॥

प्रयाग और महानगरी अयोध्या को लांघने के बाद (उन्होंने) पवित्र नैमिषारण्य और उसके बाद गंगाद्वार को पार किया। स्थानेश्वर से वे कुरुक्षेत्र और विष्णुपद सरोवर को गये॥1093–94॥

---

1. *यह BCDH, तदा AEF*
2. *आययौ G*
3. *–लक्षितः परमादृतः G*
4. *तदा EF*
5. *यह अन्य MSS. A स्थाण्वेश्वरात्*
6. *यह अन्य A, शुभं अन्य MSS.*

शतद्रुं च विपाशां च पुण्यतोयामिरावतीम्।
देविकां चन्द्रभागां च तथा विष्णुपदं शुभम्[1] ॥ 1095 ॥

विशोकां विजयेशं च वितस्तासिन्धुसङ्गमम्[2] ॥
एतान्सर्वानतिक्रम्य प्रययौ भरतं गिरिम् ॥ 1096 ॥

सतलुज, व्यास, पुण्यजल वाली रावी, देविका, चनाब, पवित्र विष्णुपद, विशोका, विजयेश, वितस्ता और सिन्धु का सङ्गम पार करके वे भरतगिरि को गये ॥1095-96 ॥

तस्य मूलमथासाद्य देव्यै[3] वचनमब्रवीत्।
इहैव तिष्ठ तावत् त्वमहं यास्याम्यतः परम् ॥ 1097 ॥

वृषेण सहिता देवि[4] पर्वतेऽस्मिन् हि यः पथा।
करोत्यारोहणं तस्य महत् पुण्यफलं[5] स्मृतम् ॥ 1098 ॥

उस (पर्वत) की तलहटी में पहुँचकर शिव ने देवी से कहा- हे देवी! तुम यहाँ बैल के साथ ठहरो इससे आगे मैं जाऊँगा। जो इस मार्ग से इस पर्वत पर चढ़ता है वह महान् पुण्य का फल प्राप्त करता है ॥1097-1098 ॥

पथा त्वं न समर्थासि सुकुमारासि देवि यत्।
आरोढुं तेन[6] यास्येऽह[7]मेक एवाद्य सत्वरः[8] ॥ 1099 ॥

हे देवी! कोमल होने के कारण तुम इस रास्ते से चढ़ने में समर्थ नहीं हो इसलिए आज मैं अकेला ही जल्दी जाऊँगा ॥1099 ॥

---

1. *यह A, सरः अन्य MSS.*
2. *पद्य सं 1095 इस पंक्ति के बाद A।*
3. *देव्यै G*
4. *देवी AC*
5. *पुण्यं फलं A*
6. *तस्य BEF*
7. *याम्यहं BE*
8. *मन्थरः A*

तस्माद् देशात् प्रवृत्तस्तु गन्तुं[1] देववरः पथा।
पथेश्वराख्य[2]स्तत्रेष्टो देवस्यायतनोऽभवत्॥ 1100 ॥

उस स्थान से देवश्रेष्ठ (शिव) ने रास्ते से चलना आरम्भ किया और वहाँ भगवान् का प्रिय पथेश्वर नामक मन्दिर बन गया॥1100॥

आरुरोह पथा[3] शैलं यदा[4] देवो महेश्वरः।
तदा वृद्धिमगाच्छैलो महतीं भूरिदक्षिणः॥ 1101 ॥

वर्धमानं तु तं ज्ञात्वा श्रान्तः क्रुद्धो[5] महेश्वरः।
रूपं कृत्वा महद् घोरं पदा[6] मूर्धन्यताडयत्॥ 1102 ॥

उस मार्ग से जब भगवान् महेश्वर पर्वत पर चढ़ रहे थे तब वह अति चतुर पर्वत बहुत अधिक ऊँचा हो गया। थके हुए महेश्वर उसे ऊँचाई में बढ़ता हुआ जानकर क्रोधित हुए। उन्होंने बहुत भयानक रूप धारण कर पैर से उसकी चोटी पर प्रहार किया॥1101-1102॥

ततः प्रभृति तच्छैलं मुण्डपृष्ठं प्रकीर्तितम्[7]।
मुण्डपृष्ठं शरीरेण स्पृष्ट्वा सर्वेण मानवः[8]॥ 1103 ॥

---

1. *परित्यक्त E*
2. *महेश्वराख्यः BDEF*
3. *पथा H*
4. *यदा H, यथा A*
5. *शान्तक्रोधो A*
6. *तदा G*
7. *शैलोऽसौ मुण्डपृष्ठः प्रकीर्तितः CG*
8. *मानुषः H*

अशुभं[1] कीर्तयित्वा च[2] तस्मात् पापात् प्रमुच्यते।
देवेन ताडितश्छैलो रूपं मानुष्य[3]मास्थितः॥ 1104॥

प्राञ्जलिर्देवदेवेशमुवाच कृपणो ह्यहम्[4]।
ततः प्रसन्नो[5] देवेशः शैलमाह कृपान्वितः॥ 1105॥

तब से लेकर वह पर्वत मुण्डपृष्ठ (नाम) से प्रसिद्ध हुआ। अपने सम्पूर्ण शरीर से मुण्डपृष्ठ को स्पर्श करके मनुष्य अशुभ कथन करके भी उस पाप से मुक्त हो जाता है। देव के द्वारा ताड़ित पर्वत ने मनुष्य का रूप धारण किया और दोनों हाथों को जोड़कर देवों के देवेश (महादेव) से कहा मैं दीन हूँ। तब प्रसन्न हुए कृपापूर्वक देवों के देव (महादेव) ने पर्वत से कहा॥1103-1105॥

मम पादप्रहारेण निर्गतं यज्जलं तव।
कृपणीतीर्थमि[6]त्येतद् भुवि यास्यति[7] पर्वत[8]॥ 1106॥

हे पर्वत! मेरे पादप्रहार से जो तुम्हारा जल निकला है वह पृथिवी पर कृपणी तीर्थ इस नाम को प्राप्त करेगा॥1106॥

मुण्डपृष्ठं गिरिं कृत्वा[9] सौम्यं[10] रूपमथास्थितः।
अप्सरोभिर्युतो यत्र तीर्थमप्सरसां हि तत्[11]॥ 1107॥

पर्वत को मुण्डपृष्ठ नाम देकर उन्होंने सौम्य रूप धारण किया। अप्सराओं से युक्त होने के कारण वह तीर्थ अप्सरा तीर्थ है। ॥1107॥

1. *सुशुभं BDEF*
2. *तु C*
3. *मानुषं CF*
4. *विनयान्वित्तः G, कृपणोऽस्म्यहम् H*
5. *प्रसन्नीभूय G*
6. *कृपणीतीर्थम् DE कृपाणीतीर्थम् A*
7. *स्थास्यति G*
8. *पर्वतम् A*
9. *स्पृष्ट्वा BDEF*
10. *सौम्यरूपम् H*
11. *तम् A*

ततो ब्रह्मसरो नाम दृष्ट्वा तीर्थं मनोरमम्[1]।
हंसरूपधरः[2] शैलं पाटयामास सत्वरः ॥ 1108 ॥

तब मन को अच्छे लगाने वाले ब्रह्मसर नामक पवित्र तीर्थ को देखकर (शिव ने) हंस का रूप धारण कर पर्वत को क्षिप्रकारी होकर (शीघ्र ही) फाड़ दिया ॥1108 ॥

हंसरूपेण यच्छैले कृतं छिद्रं[3] महात्मना।
हंसद्वारमिति प्रोक्तं सर्वकिल्विषनाशनम् ॥ 1109 ॥

हंसरूपधारी महात्मा के द्वारा पर्वत के ऊपर जो छिद्र बनाया गया। सभी पापों का नाश करने वाले उस पर्वत छिद्र को हंसद्वार कहा गया है ॥ 1109 ॥

दृष्ट्वा तीर्थौ[4] महादेवस्तथा वातिकषण्डिकौ[5]।
कपिलतीर्थमासाद्य स ददर्श पितामहम् ॥ 1110 ॥

देवैर्वृतं महाभागं यजन्त[6]मृषिभिस्तदा[7] ॥ 1111 ॥

तब महादेव वातिक और षण्डिक तीर्थों को देखकर जब कपिलातीर्थ में पहुँचे तब वहाँ देवों के द्वारा घिरे हुए और ऋषियों के साथ यज्ञ करते हुए सौभाग्यशाली ब्रह्मा को देखा ॥1110-1111 ॥

---

1. *मनोहरम् F*
2. *हंसरूपधरं A*
3. *रन्ध्रं G*
4. *तीर्थं A*
5. *वातिलषण्डिकौ A*
6. *जयन्तम् BEF*
7. *सदा EFG*

हंसरूपधरं दृष्ट्वा ब्रह्मा देवं महेश्वरम्।
जानुभ्यामवनिं गत्वा ववन्दे परमेश्वरम्[1] ॥ 1112 ॥

हंस का रूप धारण किये हुए महेश्वर को देखकर ब्रह्मा ने पृथिवी पर घुटने टेककर परमेश्वर को नमस्कार किया ॥1112 ॥

दृष्ट्वा तु[2] प्रणतं देवं ब्रह्माणं जगतः प्रभुम्[3]।
प्रणम्य शक्रः प्रोवाच[4] यत्[5] तच्छृणु महीपते[6] ॥ 1113 ॥

हे पृथिवी के स्वामी! जगत् के स्वामी ब्रह्मा को झुककर नमस्कार करते हुए देखकर इन्द्र ने प्रणाम करके उनसे कहा ॥1113 ॥

शक्रः।
नमस्ते देवदेवेश[7] जगत्कारणकारण[8]।
त्रैलोक्यनाथ सर्वज्ञ सर्वेश्वर नमोस्तु ते ॥ 1114 ॥

इन्द्र (ने कहा)

हे देवों के देवश! जगत् के कारण, तीनों लोकों के स्वामी, सर्वज्ञ, सर्वेश्वर! तुम्हें नमस्कार है ॥1114 ॥

त्वत्तोऽन्यं नैव पश्यामि जगत्यस्मिन्[9] हि कारणम्।
त्वया सर्वमिदं व्याप्तं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ 1115 ॥

मैं इस जगत् में तुम्हारे अतिरिक्त कोई अन्य कारण नहीं देखता। चर और अचर सहित ये तीनों लोक तुमसे व्याप्त हैं ॥1115 ॥

---

1. *यह पंक्ति परित्यक्त BDE*
2. *च G*
3. *पतिम् G*
4. *तुष्टाव G*
5. *यथा G*
6. *भूपते G*
7. *देवदेवस्य F*
8. *जगत्करणकारण D*
9. *जगतोऽस्य G*

स्त्रष्टा त्वमस्य सर्वस्य संहर्ता[1] पालकस्तथा।
यदोन्मीलयसे नेत्रे त्रैलोक्यस्योद्‌भवस्तदा॥ 1116॥

भवतीह जगन्नाथ यदा च स्वपिषे[2] विभो।
तदै[3]तदखिलं सर्वं त्रैलोक्यं तु प्रणश्यति[4]॥ 1117॥

हे स्वामी! तुम इस सारे (जगत्) के स्रष्टा, पालक और संहारक हो।

जब तुम नेत्रों को खोल देते हो तब तीनों लोक पैदा होते हैं। हे संसार के स्वामी एवं व्यापक विभो! जब तुम सोते हो तब ये तीनों लोक नष्ट हो जाते हैं॥1116-1117॥

भूमिर्धृता[5] धारयति त्वयेदं[6] सचराचरम्[7]।
त्वया धृता धारयन्ति[8] तथैवापोऽखिलं जगत्॥ 1118॥

तुम्हारे द्वारा धारण की गई पृथिवी इस सम्पूर्ण चर और अचर जगत् को धारण करती है और उसी प्रकार तुम्हारे द्वारा धारण किये गये जल ने सम्पूर्ण जगत् को थाम रखा है॥1118॥

त्वत्तेजसा जगत् सर्वं वह्नि र्धारयति प्रभो।
त्वत्तेजसा तथा वायुर्भावयत्यखिळं जगत्[9]॥ 1119॥

हे प्रभु! आपके तेज के कारण ही अग्नि ने सारे जगत् को संभाल रखा है और तुम्हारे तेज के कारण ही वायु सारे जगत् को अनुप्राणित करती है॥ 1119॥

---

1. *महत: A*
2. *स्वपिषि वै तदा G*
3. *यह H, तदेतत् A*
4. *यह A, सम्प्रणश्यति अन्य MSS.*
5. *यह H, भूमिमेव A*
6. *यह H, त्वदीयं A*
7. *पद्य सं 1116, 1117 तथा प्रथम पंक्ति 1118 परित्यक्त BDEF*
8. *धारयति A*
9. *यह पद्य परित्यक्त BDEFGH*

Ed. Leiden v.v. 1075-1078

शब्दयोनिं तथाकाशं[1] जगद् धारयते प्रभो।
वीर्येण ते महाभाग त्वं च प्रोक्तस्तथा परः ॥ 1120 ॥

हे स्वामी! और तुम्हारी शक्ति के कारण शब्द का उत्पत्तिस्थान आकाश जगत् को धारण करता है। तुम ही पराशक्ति अर्थात् अलौकिक शक्ति हो ॥1120 ॥

त्वं बुद्धि[2]स्त्वं तथैवात्मा सर्वस्यास्य प्रकीर्तितः।
अव्यक्तः पुरुषश्चैव रजः सत्त्वं तथा तमः[3] ॥ 1121 ॥

तुम ही इस सभी संसार की बुद्धि और तुम ही सभी की आत्मा कहे गये हो। तुम ही अव्यक्त पुरुष और तुम ही सत्, रज और तम ये तीन गुण (तत्त्व) हो ॥1121 ॥

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थाश्च भूततन्मात्रसंज्ञकः[4]।
ज्ञाता ज्ञेयं तथा क्षेत्रं क्षेत्रज्ञः परमेश्वरः ॥ 1122 ॥

ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं यज्ञानि विविधानि च[5]।
सर्वमेतत्त्वमेवैकस्त्वत्तः किमपरं[6] प्रभो ॥ 1123 ॥

यन्नतोसि महाभाग[7] एत[8]न्मे संशयो महान्[9] ॥ 1124 ॥

तुम ही इन्द्रियां और इन्द्रियों के विषय हो और (तुम) पञ्चभूत हो और तन्मात्रा (सूक्ष्म इन्द्रियाँ) हो। तुम ज्ञाता, ज्ञेय, क्षेत्र (देह) क्षेत्रज्ञ (आत्मा) और परमेश्वर हो। हे प्रभो! तुम ही ध्याता, ध्येय और ध्यान हो और विभिन्न प्रकार

1. *शब्दयोनिस्तथाकाशो H*
2. *वह्निः CH*
3. *तमस्तथा BDE*
4. *भूतत्वन्नामसंज्ञका: A*
5. *यज्ञाश्च विविधास्तथा G*
6. *अपरः A*
7. *महानाग A*
8. *अत्र G*
9. *संशयं महत् DEF, इति नीलमते शक्रकृतं शिवस्तोत्रम् अतिरिक्त A, इति नीलमते शकसंशयवर्णनम् G*

के यज्ञ हो। हे स्वामी! तुम अकेले ही ये सब हो। तुमसे अतिरिक्त और क्या है! हे महाभाग! क्योंकि तुम झुककर शिव को नमस्कार कर रहे हो इसलिए तुम दोनों में कौन बड़ा है इस रूप में मुझे महान् संशय हो रहा है ॥1122-1124॥

बृहदश्वः
एवमुक्तस्तु शक्रेण ब्रह्मा वचनमब्रवीत्।
एषा तनुर्द्वितीया मे[1] शार्वी परमपावनी॥ 1125॥

तपसा महता युक्ता यन्नतोऽस्मि शतक्रतो।
त्वं च सर्वैः सुरैः साकं नमस्कृत्वा[2] प्रसादय॥ 1126॥

बृहदश्व (ने कहा)

इन्द्र के इस प्रकार कहे जाने पर ब्रह्मा ने ये वचन कहा। हे इन्द्र! मेरा दूसरा परम पवित्र तथा महान् तप से युक्त यह शार्वी (शिव का) रूप हैं इसलिए मैं नत (होकर प्रणाम करता) हूँ। तुम भी सभी देवताओं के साथ नमस्कार करके इसे प्रसन्न करो॥1125-1126॥

एवमुक्तस्ततः शक्रः सर्वैः सुरगणैर्वृतः।
तुष्टाव देवदेवेशं त्रिपुरान्तकरं हरम्॥ 1127॥

प्रसादाद् ब्रह्मणस्तस्य यथातथ्येन शङ्करम्॥ 1128॥

इस प्रकार कहे जाने पर सभी देव गणों से घिरे हुए इन्द्र ने त्रिपुर राक्षस का नाश करने वाले देवों के देवेश यथार्थ में शङ्कर (कल्याणकारी) की स्तुति ब्रह्मा की कृपा (प्रेरणा) से की॥1127-1128॥

---

1. *एषासौ परमा मूर्तिः G*
2. *प्रणम्यैनं G*

शक्रः[1]

नमस्ते देवदेवेश मायावृतजगत्त्रय।
यजमानो[2] मही खं च तोयाग्नीन्द्वर्कवायवः[3] ॥ 1129 ॥

तनवस्ते विनिर्दिष्टा याभिर्व्याप्तं[4] जगत् त्रयम्।
ब्राह्मीं तनुं तथास्थाय[5] राजसीं त्वं जगद्गुरो[6] ॥ 1130 ॥

लोकान् सृजसि[7] भूतात्मंस्तव[8] कार्यं न विद्यते।
पौरुषीं तनुमास्थाय[9] सात्त्विकीं त्वं[10] महेश्वर ॥ 1131 ॥

पालयस्यखिलं देव त्रैलोक्यं साक्षिवत् स्थितः।
कालाख्यां तामसीं कृत्वा जगत् संहरसे तथा ॥ 1132 ॥

शक्र (ने कहा)!

हे देवों के देव देवेश और तीनों लोकों को अपनी माया से आवृत करने वाले! तुमको नमस्कार है। यजमान, पृथिवी, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य और वायु तुम्हारे शरीर हैं जिनसे तीनों लोक व्याप्त हैं। हे जगद्गुरु! ब्राह्मी और राजसी शरीर धारण करके तुम सम्पूर्ण जगत् की रचना करते हो। सब प्राणियों से तुम्हारी उत्पत्ति नहीं होती है। तुम पौरुषी और सात्विकी देह को धारण कर सारे तीनों लोकों को पालते हो तथा स्वयं साक्षी (द्रष्टा) रूप से रहते हो और काल नामक तामसी देह धारण करके तुम जगत् का नाश करते हो ॥1129–1132 ॥

---

1. *उवाच अतिरिक्त CG*
2. *जयमानो BDE*
3. *तोयाग्नीन्द्रार्कवायवः Ed. Leiden.*
4. *व्यासं A*
5. *समास्थाय G*
6. *यह पाद परित्यक्त A*
7. *सृजति B*
8. *तच्च BDEF*
9. *इस पद्य के प्रथम द्वितीय और तृतीय पाद परित्यक्त A*
10. *सात्त्विकत्वे A*

वृषरूपधरो धर्मो वाहनत्वमुपागत:[1]।
वामार्धं दयिताकाय[2] ब्रह्मचारी सदा[3] भवान्॥ 1133॥

वृपरूपधारी धर्म तुम्हारा वाहन बना है। आधा बायाँ भाग नारी का है तथा आप सदैव ब्रह्मचारी हैं॥1133॥

नम: शशांकलेखांकजटाभार[4] महेश्वर।
गंगातरंगनिर्धूतजटाभार नमोऽस्तु ते॥ 1134॥

चन्द्र रेखा की शोभा से युक्त जटा समूह वाले और गङ्गा की तरङ्गों से प्रकम्पित जटाओं के बोझ वाले हे महेश्वर! तुम्हें नमस्कार हो॥1134॥

त्रिपुरारे नमस्तेऽस्तु नमस्त्वन्धकघातिने[5]।
शूलाग्रभिन्नदैत्यांशरुधिरार्द्र नमोऽस्तु ते॥ 1135॥

हे त्रिपुर राक्षस के शत्रु! तुम्हें मेरा नमस्कार है।

हे अन्धक राक्षस का नाश करने वाले शिव! तुम्हें नमस्कार हो। शूल के अग्रभाग से छिन्न किये गये अंश नामक दैत्य के रक्त से भीगे हुए तुम्हें नमस्कार हो॥1135॥

कपालमालिने तुभ्यं पार्वतीदयिताय च।
उग्रायुधाय भीमाय भीमायुधधराय च॥ 1136॥

खोपड़ियों की माला पहनने वाले, पार्वती के प्रिय, अस्त्रों (को धारण करने) वाले, भयङ्कर (रूप वाले) और भयानक शस्त्रों को धारण करने वाले! तुम्हें (नमस्कार है) ॥1136॥

---

1. तवागत: H
2. यह AEH, -कार्यं Ed. Leiden
3. यदा BDEF
4. जगद्योने A
5. -शातिने A

ऊर्ध्वलिङ्गाय शीघ्राय क्रथाय क्रथनाय[1] च।
मंगल्याय वरेण्याय महाहंसाय[2] मीढुषे॥ 1137॥

भीमाक्षाय[3] भुसुण्डाय व्यालयज्ञोपवीतिने॥ 1138॥

ऊर्ध्वलिङ्ग, शीघ्र (क्षिप्रकारी शिव), क्रथ (वध करने वाले) क्रथन (संहारक) मंगल्य (मंगलकारी शिव), वरण करने योग्य, महाहंस, मीढुष, (वर्षा करने वाले) भीमाक्ष (भयङ्कर नेत्र वाले) भुसुण्ड (शस्त्रधारी) और सर्प रूपी यज्ञोपवीत को धारण करने वाले! तुम्हें नमस्कार है॥ 1137-1138॥

क्षमस्व मम देवेश यन् मयासि न पूजितः।
तवैव मायया पूर्वं मोहितेन जगत्प्रभो॥ 1139॥

हे देवों के स्वामी! पहले तुम्हारी ही माया के कारण मोहित होने से जो मैं तुम्हारी पूजा नहीं कर सका उसके लिए हे जगत्प्रभु! मुझे क्षमा कर दो॥1139॥

प्रसन्नोऽसि ध्रुवं शम्भो येन ज्ञातोऽसि वै मया।
सुप्रसादो[4]ऽसि देवेश प्रणतोऽस्मि महेश्वर॥ 1140॥

हे शम्भु! तुम निश्चय ही प्रसन्न होओगे कि मैंने तुम्हें जान लिया है। हे देवों के स्वामी महेश्वर। तुम कृपा करने वाले हो। मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ॥1140॥

---

1. *क्रस्यनाय A*
2. *महाकामाय B, महाहासाय CEF*
3. *भीमाख्याय H*
4. *सुप्रसन्नोसि G*

बृहदश्वः[1]

एवं स्तुतस्तु[2] शक्रेण ब्रह्मणा ऋषिभिः सुरैः।
हंसरूपं तदा त्यक्त्वा स्वेन रूपेण शङ्करः॥ 1141॥

जगाम ब्रह्मणो यज्ञं देवानां दर्शनं[3] ददौ[4]।
तदा तामानयामास देवीं देवो[5] वृषं तथा[6]॥ 1142॥

बृहदश्व (ने कहा)

इस प्रकार इन्द्र, ब्रह्मा, ऋषियों और देवताओं के द्वारा स्तुति किये जाने पर शङ्कर ने हंस का रूप छोड़कर अपना रूप धारण किया और ब्रह्मा के यज्ञ में गये तथा देवताओं को दर्शन दिया। तब भगवान महादेव देवी और बैल को ले आये॥1141-1142॥

तत्रैव[7] देवदेवेशः समाप्ते ब्रह्मणः क्रतौ।
सर्वैर्देवगणैः[8] साकं[9] ययौ कालोदकं सरः[10]॥ 1143॥

वहाँ ब्रह्मा के यज्ञ की समाप्ति पर देवों के देवेश्वर सभी देवगणों के साथ कालोदक सरोवर को गये। ॥ 1143॥

ददर्श नन्दिनं तत्र शीतक्षुद्भावकर्षितम्[11]।
मृत्युनान्वीयमानेन[12] बन्धुनेव नराधिप॥ 1144॥

वहाँ उन्होंने भूख और ठंड होने से कमज़ोर हुए और सम्बन्धी के समान मृत्यु के द्वारा अनुसरण किये जाते हुए नन्दी को देखा॥1144॥

---

1. *उवाच अतिरिक्त C*
2. *स A, च F*
3. *हि वरं B*
4. *ययौ A*
5. *देवदेवो G*
6. *तदा AG*
7. *इत्थं स G*
8. *सर्वदेवगणैः BEF*
9. *यह A, सार्धं अन्य MSS.*
10. *हरः H*
11. *शीततृट्क्षुत्समाकुलम् G*
12. *मृत्युना नीयमानं च CF*

दृष्ट्वोवाच महादेवो नन्दिनं जपतां[1] वरम्।
वरं वरय भद्रं ते उत्तिष्ठोत्तिष्ठ पुत्रक॥ 1145॥

जप करने वालों में श्रेष्ठ नन्दी को देखकर महादेव ने कहा– हे प्रिय पुत्र! उठो उठो। तुम्हारा कल्याण हो। (अपने लिए) वर को माँगो॥1145॥

दृष्ट्वा देवं हरं देव्या[2] पार्वत्या सह संस्थितम्[3]।
सर्वैर्देवगणैः सार्धं तत्याज मरणाद् भयम्॥ 1146॥

देवी पार्वती के सङ्ग और सभी देवताओं के साथ खड़े हुए भगवान् शिव को देखकर (नन्दी ने) मृत्यु से भय को छोड़ दिया॥1146॥

शिलां व्यक्त्वा समुत्थाय तोयमध्यात्[4] ससंभ्रमम्।
पूजयामास देवेशं वाग्भिरद्भिस्तथैव च[5]॥ 1147॥

शिला को त्याग कर वह घबराहट से जल के बीच में से उठकर खड़ा हो गया और उसने वाणियों और जलों से देवों के स्वामी (शङ्कर) की पूजा की॥1147॥

पूजितः शंकरस्तेन[6] प्रहसन् वाक्यमब्रवीत्।
रुद्रजापेन ते तात तपसा महता तथा[7]॥ 1148॥

परितुष्टोऽस्मि[8] भद्रं ते[9] मत्समीपे निवत्स्यसि।
अनेनैव शरीरेण नास्ति ते मृत्युतो भयम्॥ 1149॥

---

1. *जगतां H*
2. *महादेव्या BEF*
3. *तं स्थितम् F*
4. *तयोर्मध्यात् B*
5. *प्रसूनकैः G*
6. *स चापि पूजितः शम्भुः G*
7. *महता तपसा तथा G*
8. *परितुष्टोऽसि A*
9. *ते भद्रं E*

उसके द्वारा पूजित शङ्कर ने हँसते हुए कहा– हे भद्र! मैं तुम्हारे द्वारा किये गये रुद्रजाप तथा महान् तप से सन्तुष्ट हो गया हूँ। तुम इसी शरीर के साथ मेरे समीप रहोगे। तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हें मृत्यु से कोई भय नहीं है ॥1148–1149॥

स्मरस्व[1] पूर्वकं जन्म प्रतीहारो भवान् मम।
शिलादेन द्विजेन्द्रेण प्राप्तः त्वं तपसा ततः[2] ॥ 1150 ॥

तुम अपना पूर्वजन्म याद करो जिसमें आप मेरे प्रतीहार (द्वारपाल) थे। इसके पश्चात् ब्राह्मणों के मुखिया शिलाद ने तुम्हें तपस्या से प्राप्त किया ॥1150॥

सत्पुत्रेण[3] त्वया पुत्र[4] शिलादस्तारितस्तथा[5]।
गणेश्वरत्वमासाद्य मया सह निवत्स्यसे ॥ 1151 ॥

और हे पुत्र (शिलाद) के सुपुत्र तुमने (अपने पिता) शिलाद को (भवसागर से) पार कर दिया। गणों के स्वामित्व को पाकर तुम मेरे साथ रहोगे ॥1151॥

अस्माद् योजनमात्रेण पूर्वे भागे[6] गणो मम।
त्वया सार्धं निवत्स्यामि भूत्वा भूतेश्वरो हरः[7] ॥ 1152 ॥

इस (स्थान) से एक योजन मात्र की दूरी पर मेरा गण (स्थान) है। मैं भूतेश्वर हर (शिव) होकर तुम्हारे साथ रहूँगा ॥1152॥

तव नन्दिन्[8] प्रतिष्ठानं वसिष्ठो भगवानृषिः।
कर्ता देशे शुभे तस्मिन् मम चाप्युत[9] भूतले ॥ 1153 ॥

हे नन्दी! भगवान् वसिष्ट ऋषि पृथिवी तल के ऊपर उस शुभ स्थान पर मेरी और तुम्हारी प्रतिमाओं के प्रतिष्ठापक होंगे ॥1153॥

---

1. *स्मरसि BEF*
2. *तदा CDEH, सदा B*
3. *सत्पुत्रेण EFGH, मत्पुत्रेण B तत्पुत्रेण A*
4. *तात B*
5. *तदा BE, त्वया A*
6. *पूर्वभागे AE*
7. *भूतेश्वराख्यया G*
8. *तावन्नन्दि-BDE*
9. *स सदाच्युत BD, मम वाच्युत A*

सन्निधानं करिष्याम[1]स्तत्र नित्यं वयं द्विज[2]।
पूर्वोत्पन्नः[3] स ज्येष्ठेश[4]स्तत्र लिङ्गो[5] मम द्विज ॥ 1154 ॥

तत्रापि सन्निधानं मे नित्यं विज्ञातुमर्हसि।
ऋषिकोटिसहस्राणि मद्भक्त्या[6] वा द्विजोत्तम ॥ 1155 ॥

तत्र संस्नापयन्ति स्म ज्येष्ठेशं ते सदैव तु[7]।
ब्रह्मन् दिव्येन तोयेन शुभेनोत्तरमानसात् ॥ 1156 ॥

तेषां तपःप्रभावेन भक्त्या[8] च[9] मम पार्षद।
सोदरस्य च[10] नागस्य स्थान[11] मुत्तरमानसः[12] ॥ 1157 ॥

स्वयं[13] प्राप्तो महाभाग[14] तत्र रंस्यसि नित्यशः[15]।
यस्माद्दे[16]शात्तथा याति दक्षिणेन महानदी ॥ 1158 ॥

---

1. *करिष्यामि A, परित्यक्त F*
2. *द्विजो वयम् A, परित्यक्त F*
3. *पूर्वोत्पन्नं G*
4. *ज्येष्ठेशाख्यं G*
5. *लिङ्गं G*
6. *मम भक्त्या CDEH*
7. *च A*
8. *शक्त्या B*
9. *परित्यक्त A*
10. *तु E.*
11. *स्नानम् GH*
12. *कृत्वा विधानतः G*
13. *सुखं G*
14. *यथाभाग A*
15. *नित्यदा BCE, सर्वदा H*
16. *तस्मात् G*

हिरण्यिनी[1] पुण्यजला नाम्ना कनकवाहिनी।
ज्येष्ठेशो वसते[2] भूतैर्वस प्राकाम्यतो द्विज॥ 1159॥

हे ब्राह्मण! हम सदैव वहाँ साथ-साथ रहेंगे। वहाँ पहले से उत्पन्न ज्येष्ठेश मेरा चिह्न होगा। हे ब्राह्मणों के श्रेष्ठ! वहाँ भी तुम मेरी नित्य उपस्थिति जानो। मुझ में भक्ति रखने के कारण हज़ारों करोड़ों की सङ्ख्या में ऋषि उत्तरमानस से लाये पवित्र दिव्य जल से उस ज्येष्ठेश को स्नान करवाते थे। हे पार्षद! उनकी तपस्या तथा मुझ में भक्ति के प्रसाद से तुम स्वयं सोदर नाग के निवास स्थान उत्तरमानस में पहुँच जाओगे और वहाँ निरन्तर रमण करोगे जिस देश के दक्षिण से होकर पवित्र जल वाली कनकवाहिनी नाम से प्रसिद्ध महानदी हिरण्यिनी बहती है। हे ब्राह्मण! ज्येष्ठेश में भूत वास करते हैं तुम भी जी भरकर वहां रहो॥1154-1159॥

मत्समीपमथाभ्येहि देहेनान्येन पुत्रक।
एवमुक्त्वा तु देवेशो नन्दिनं प्रणतं[3] स्थितम्॥ 1160॥

मृत्युं विसर्जयामास सान्त्वयित्वा सुरारिहा।
नन्दिनं च[4] समादाय दृष्ट्वा चोत्तरमानसम्॥ 1161॥

तस्यैव सरसोऽभ्याशे शृङ्गं त्रैलोक्यविश्रुतम्।
हरमुकुटमितिख्यातमारुरोह मुदान्वितः॥ 1162॥

हे प्रिय पुत्र! और दूसरे शरीर के साथ मेरे समीप आना। नम्रता से झुके हुए नन्दी को इस प्रकार कहकर देवों के शत्रु का नाश करने वाले महादेव ने सान्त्वना देकर मृत्यु को विदा कर दिया। नन्दी को साथ ले जाकर और उत्तर-मानस को देखकर उस झील के समीप हरमुकुट कही जाने वाली और तीनों लोकों में प्रसिद्ध चोटी पर वे प्रसन्नतापूर्वक चढ़ गये॥1160-1162॥

---

1. *हिरण्यानी E*
2. *वसत्व E*
3. *-तः G*
4. *स AG*

तत्र[1] सन्निहितो नित्यं देवदेवो महेश्वरः।
ज्येष्ठेश्वरसमीपे तु वसिष्ठोऽपि महायशाः ॥ 1163 ॥

सर्वैर्देवगणैः सार्धं चक्रे[2] भूतेश्वरं हरम्।
तस्यैव पश्चिमां[3] मूर्त्तिं स चकाराथ नन्दिनम् ॥ 1164 ॥

देवों के देव महेश्वर वहाँ सदैव वर्तमान रहते हैं। ज्येष्टेश्वर के समीप महायशस्वी वसिष्ठ ने सभी देवों के साथ भूतों के स्वामी हर (की प्रतिमा) को बनाया और उसी के पश्चिम में उसने नन्दी की प्रतिमा बनाई ॥1163-1164 ॥

एवं कृते ययुर्देवा यथागतमरिन्दम।
चक्रुस्तीर्थानि च तथा ऋषयश्च तपोधनाः ॥ 1165 ॥

हे शत्रुओं का दमन करने वाले (राजन्)! इस प्रकार करने के बाद देवता जहाँ से आये थे वहीं चले गये और तपोधन ऋषि भी तीर्थ यात्राओं को करने लगे ॥1165 ॥

एवं हि भृगुशापेन हरस्यानुग्रहेण च।
तत्र सन्निहितो नन्दी तत्प्रीत्या च महेश्वरः ॥ 1166 ॥

इस प्रकार भृगु के शाप के कारण और हर की कृपा से नन्दी वहाँ विद्यमान रहता है और उसकी प्रीति के कारण महेश्वर (वहाँ रहते हैं) ॥1166 ॥

नन्दीश्वरस्य या मूर्तिर्दुराचारै[5]र्न दृश्यते।
भूतेश्वरं तथा दृष्ट्वा मुच्यते सर्वकिल्विषैः ॥ 1167 ॥

नन्दीश्वर की मूर्ति बुरे आचरण वालों को दिखाई नहीं देती है तथा भूतेश्वर को देखकर (मनुष्य को) सभी पापों से मुक्ति मिलती है ॥1167 ॥

---

1. *यत्र G*
2. *दध्रे G*
3. *पञ्चमां B*
4. *चक्रुः A सस्रुः (मूलपाठ)*
5. *सुराचारैः E*

स्नात्वा च[1] सोदरे पुण्ये दृष्ट्वा भूतेश्वरं हरम्।
ज्येष्ठेश्वरं नन्दिनं च गाणपत्यम[2]वाप्नुयात्[3] ॥ 1168 ॥

(मनुष्य) पवित्र सोदर ताप में स्नान करके भूतेश्वर, हर, ज्येष्ठश्वर और नन्दी को देखकर गणपति का पद प्राप्त करता है ॥1168 ॥

गोनन्दः
कपटेश्वरमित्युक्तं[4] देवदेवस्य शूलिनः।
पुण्यमायतनं तस्य समुत्पत्तिं वदस्व मे ॥ 1169 ॥

गोनन्द (ने कहा)

देवों के देव शूली (शिव) का पवित्र स्थान जो कपटेश्वर कहा जाता है उसकी उत्पत्ति के विषय में मुझे बताइए ॥1169 ॥

संशयो[5] मे महान् ब्रह्मन् कपटेश्वरकीर्तनात्।
किमर्थं भगवान् शम्भुः प्रोच्यते[6] कपटेश्वरः ॥ 1170 ॥

हे ब्राह्मण! कपटेश्वर नाम से कहे जाने के कारण मैं महान् संशय में पड़ गया हूँ कि भगवान् शम्भु किसलिए कपटेश्वर कहे जाते हैं ॥1170 ॥

---

1. *यह A, तु अन्य MSS.*
2. *गणपत्यम् E*
3. *इति नील्मते भूतेश्वरमाहात्म्यम् अतिरिक्त BDEF, इति श्रीनील्मते –CH, इति श्रीनीलमते सोदरतीर्थभूतेश्वरमाहात्म्यम् A, इति श्री नीलमते भरतगिरिमुण्डपृष्ठकृपाणीतीर्थब्रह मसरोहं सद्वार वाष्पबिन्दु कपिलातीर्थकालोदक वसिष्ठाश्रमज्येष्ठेश्वर सोदरोत रमानसभूतेश्वरवर्णनं नन्दिचरितं च समाप्तम् G*
4. *यह ABFGH, –इत्युक्ते DE*
5. *संशयं H*
6. *उच्यते A*

बृहदश्वः
पुण्ये दृषद्वतीतीरे[1] कुरुक्षेत्रे नराधिप।
ऋषिकोट्यः समुत्तस्थुस्तपः परममास्थिताः ॥ 1171 ॥

द्रष्टुं देवेश्वरं रुद्रं तद्भक्त्या परमेश्वरः[2]।
तानाह भगवान् स्वप्ने कश्मीरां द्रुतमाशुगाः ॥ 1172 ॥

व्रजध्वं यत्र नागस्य भवनं विमलं[3] महत्।
कपटे तत्र दास्यामि दर्शनं भवता[4]महम्[5] ॥ 1173 ॥

हे राजन् ! कुरुक्षेत्र में दृषद्वती के पवित्र किनारे पर देवों के स्वामी रुद्र को देखने के लिए महातपी तपस्या में लगे हुए करोड़ों ऋषि पहुँचे। उनकी भक्ति के कारण भगवान् परमेश्वर ने स्वप्न में उनसे कहा– हे शीघ्र गतिवालो! शीघ्रता से उस कश्मीरा में जाओ जहां नाग का निर्मल निवास स्थान है–वहां मैं आपको कपट (छद्म वेश) में दर्शन दूँगा।1171–1173।।

एतत् स्वप्नं निशम्याथ कल्यमु[6]क्त्वा परस्परम्।
कश्मीरां सहिता जग्मुः शम्भुं देवं दिदृक्षवः ॥ 1174 ॥

इसके बाद स्वप्न को सुनकर प्रातः काल एक दूसरे को बताकर वे सब इकट्ठे होते हुए भगवान् शम्भु को देखने के इच्छुक होकर कश्मीरा गये ॥1174॥

---

1. *तीर्थे E*
2. *यह BCDEF, परमेश्वरः H, परमेश्वरम् A, महेशानमुमापतिम् G*
3. *निर्मलै H*
4. *महतां A*
5. *महत् AH*
6. *यह ABDG, काल्यम् H*

ते प्राप्य तस्य नागस्य भवनं[1] जलमण्वपि।
न पश्यन्ति जले[2] काष्ठैः सर्वतः परिवारिते[3] ॥ 1175 ॥

नाग के उस भवन पर पहुँच कर वे थोड़ा सा भी जल नहीं देख पाते हैं क्योंकि पानी सब ओर से लकड़ियों से ढका हुआ था॥1175॥

तत्र[4] काष्ठानि संचाल्य करैस्ते ऋषिसत्तमाः।
स्नातमात्रा ययुः सर्वे[5] स्वशरीरेण रुद्रताम्॥ 1176 ॥

अपने हाथों से लकड़ियों को हिलाकर उत्तम ऋषियों ने वहाँ स्नान करने मात्र से अपने शरीर से रुद्रत्व प्राप्त कर लिया॥1176॥

वासिष्ठो ब्राह्मणस्त्वेको नाम्ना गौरपराशरः।
न सस्नौ न च तत् काष्ठं पस्पर्श च[6] कुतूहलात्[7] ॥ 1177 ॥

तत्रस्थः शोषयामास निराहारः कलेवरम्।
तमुवाच हरः स्वप्ने किमर्थं द्विज क्लिश्यसि॥ 1178 ॥

गौरपराशर नामक एक वासिष्ठ ब्राह्मण ने न तो स्नान किया और न ही कुतूहल से उस लकड़ी के टुकड़े को स्पर्श किया। वहाँ रहकर (उसने) केवल उपवास करके ही अपने शरीर को सुखा लिया। हर ने स्वप्न में उससे कहा– हे ब्राह्मण! क्यों कष्ट पा रहे हो॥1177–1178॥

स्नात्वा संस्पृश्य काष्ठानि शीघ्रं त्वं व्रज रुद्रताम्[8] ॥ 1179 ॥

---

1. *भवने BG*
2. *जलं BE*
3. *परिवारितैः A*
4. *इति G*
5. *स्वप्ने H*
6. *यह CE, पस्पर्शाथ B, पस्पर्शाति-F*
7. *पद्य सं 1177 से 1179 तक परित्यक्त AH*
8. *इत्युक्तोऽसौ तदा स्वप्ने शम्भुना परमेष्ठिना Ed. Leidn*

तमुवाच द्विजो[1]रुद्रं प्रयतः प्राञ्जलिः स्थितः।
सत्यं रुद्रत्वमासाद्य दृश्यसे त्वं जगद्गुरो॥ 1180॥

किन्त्वदृष्टे हि देवेशे नास्ति मे मनसो धृतिः।
कपटे भवने[2] दास्ये त्वयोक्तं[3] दर्शनं प्रभो॥ 1181॥

स्नान करके और लकड़ियों को छूकर तुम शीघ्र ही रुद्र पद को प्राप्त करो। जितेन्द्रिय। ब्राह्मण ने हाथ जोड़कर रुद्र से कहा, हे जगद्गुरु! यह सत्य है कि रुद्रभाव को प्राप्त होकर ही तुम दिखाई देते हो। परन्तु देवताओं के स्वामी के दर्शन के बिना मेरे मन को सन्तोष नहीं है। हे प्रभु! आपने कहा था कि (नाग के) निवास स्थान में आप कपटपूर्वक दर्शन दोगे॥1179-1181॥

तदप्राप्य न यास्यामि न च भोक्ष्यामि शंकर।
तमुवाच ततो भूयः शङ्करः प्रहसन्निव[4]॥ 1182॥

दत्तं तु काष्ठरूपेण मया तेषां तु[5] दर्शनम्।
ते मां[6] दृष्ट्वैव संप्राप्ता रुद्रत्वं तत्[7] तथा द्विज[8]॥ 1183॥

तवाधिकेन तपसा वरं ददमि यथेप्सितम्[9]।
तत् त्वं वरय भद्रं ते रुद्रतां च तथा व्रज॥ 1184॥

हे शङ्कर! उसे प्राप्त किये बिना न मैं जाऊँगा और न खाऊँगा। तब तनिक मुसकुराते हुए से शङ्कर ने पुनः कहा, हे ब्राह्मण! मैंने तो पहिले ही उन्हें लकड़ी के रूप में दर्शन दिये हैं। इसके कारण मुझे देखकर ही उन्होंने रुद्रभाव को पा लिया है। अब तुम्हारी महान् तपस्या के कारण मैं तुम्हें तुम्हारा यथेच्छित

1. *हरो E*
2. *भुवने A*
3. *उक्तं परित्यक्त A*
4. *प्रहसन्निव शंकरः G*
5. *हि G*
6. *तेषां AH*
7. *तु BDF*
8. *द्विजोत्तम B*
9. *तवेप्सितम् H, तथेप्सितम् C*

वरदान दूँगा। तुम उस वर को मांगो तुम्हारा कल्याण हो और तुम रुद्रता प्राप्त करो ॥1182–1184॥

गौरपराशर:[1]
वरश्[2]चेद् दीयते देव मम कामाङ्गनाशन।
ऋषिभिस्त्वं यथा दृष्टः काष्ठरूपी[3] महेश्वर॥ 1185॥

तथा त्वं देहि सर्वस्य जनस्येह निदर्शनम्।
सर्वकालं जगन्नाथ लोकः क्लिश्यति[4] पाप्मना॥ 1186॥

गौरपराशर ने कहा–कामदेव के शरीर को नष्ट करने वाले हे देव! यदि मुझे वर देना चाहते हैं तो तुम जैसे ऋषियों को काष्ठ रूपधारी दिखाई दिये थे वैसे ही सब लोगों को सदा यहां दर्शन दो। हे जगन्नाथ! संसार हर समय पाप के कारण क्लेश पा रहा है ॥1185–1186॥

महेश्वर:
द्रक्ष्यन्ति ये जनाः सर्वे[5] काष्ठरूपं समास्थितम्[6]
कदाचिद् द्विजशार्दूल सर्वकालं तु नो द्विज॥ 1187॥

महेश्वर (ने कहा)

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! जो सब लोग लकड़ी के रूप में (भगवान्) को देखेंगे वे उसे कभी-कभी देखेंगे (किन्तु) हर समय नहीं देख पायेंगे ॥1187॥

---

1. *उवाच अतिरिक्त CE पद्य सं. 1185 से 1266 तक परित्यक्त D*
2. *वरं E*
3. *काष्ठरूपे BF*
4. *लोकाः क्लिश्यन्ति B*
5. *नाम G*
6. *काष्ठरूपसमास्थितम् BF*

Ed. Leiden v.v. 1141-1143

अयं च सततं नन्दी काष्ठरूपी गणो मम।
दर्शनं दास्यते नृणां[1] तदनुग्रहकाम्यया॥ 1188॥

उन पर कृपा करने की इच्छा से लकड़ी के रूप में यह मेरा गण नन्दी हमेशा लोगों को दर्शन देगा॥1188॥

तं च[2] दृष्ट्वा नु[3] यास्यन्ति स्वशरीरेण रुद्रताम्।
कपटेन च दास्यामि नराणां दर्शनं यदा॥ 1189॥

तदा संज्ञामवाप्स्यामि कपटेश्वर इत्युत।
तोयस्य बहुलीभावो[4] देशेऽस्मिन् ब्राह्मणोत्तम॥ 1190॥

और उसे देखकर वे पुनः अपने शरीर से रुद्रता प्राप्त करेंगे। और जब मैं कपटपूर्वक मनुष्यों को दर्शन दूँगा तो मैं कपटेश्वर इस नाम को प्राप्त करूँगा। हे ब्राह्मणोत्तम! इस देश में जल की बहुलता है॥1189-90॥

दर्शनस्य मदीयस्य[5] पूर्वरूपं भविष्यति।
इत्येतत् कथितं तुभ्यं कपटेश्वरसम्भवम्[6]॥ 1191॥

मेरे दर्शन का पूर्व रूप (शङ्कर) रहेगा। इस प्रकार मैंने तुम्हें यह कपटेश्वर की उत्पत्ति (की कथा) कह दी है॥1191॥

---

1. *नूनं A*
2. *मां च CEFG तं च H तेन (मूलपाठ)*
3. *नु CEFGH न (मूलपाठ)*
4. *बहुलीभावे H*
5. *मदीनस्य EF*
6. *कपटेश्वरसमुद्भवम् B, कपटेश्वरसङ्गतम् G, कमटेश्वरसम्भवः C अतिरिक्त इति नीलमते कपटेश्वरसम्भवम् अतिरिक्त H*

Ed. Leiden v.v. 1144-1147

गोनन्दः[1]

भगवन् श्रोतुमिच्छामि विष्णोरायतनान्यहम्।
कश्मीरायां[2] फलं तेषां येषां[3] सन्निहितो हरिः[4] ॥ 1192 ॥

गोनन्द (ने बृहदश्व से कहा)

हे भगवान्! मैं कश्मीर में विष्णु के निवास स्थानों के बारे में सुनना चाहता हूँ जिनके भीतर हरि (विष्णु) उपस्थित हैं उन (स्थानों) के फल के विषय में भी (सुनने की इच्छा है) ॥1192॥

बृहदश्वः[5]

नित्यं सन्निहितो देवो राजंश्चक्रधरो हरिः।
तं दृष्ट्वा पुण्डरीकाक्षं दशधेनुफलं लभेत्[6] ॥ 1193 ॥

बृहदश्व (ने कहा)

हे राजन्! भगवान् चक्रधर हरि (विष्णु) देव के रूप में सदैव उपस्थित रहते हैं। कमल के समान (सुन्दर) आँखों वाले इनके दर्शन करने से दस गायों (के दान) का फल प्राप्त होता है ॥1193॥

नित्यं सन्निहितो देवो नरसिंहो जनार्दनः।
तं दृष्ट्वा देवदेवेशमश्वमेधफलं लभेत्[7] ॥ 1194 ॥

भगवान् जनार्दन (विष्णु) देव के अवतार नरसिंह के रूप में सदैव उपस्थित रहते हैं। देवों के देवेश उनको देखकर अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है ॥1194॥

देवः सन्निहितो राजन् नित्यं बहुसरस्तथा[8]।
स तु[9] सन्निहितो राजन् पुण्ये देवसरे[10] शुभे ॥ 1195 ॥

---

1. *उवाच अतिरिक्त C*
2. *कश्मीरेषु G*
3. *यत्र A*
4. *येषां सन्निधानाद् धरेःपरम् G*
5. *उवाच अतिरिक्त CE*
6. *भवेत् GH, यह पद्य छूटा B, इस पद्य का अन्तिम पाद तथा अगले पद्य के छूटे प्रथम तीन पाद A*
7. *अश्वमेधफलोदयः G*
8. *स तु बहुपुरे तथा C*
9. *तथा CH*
10. *यह BF, देवसुरेश्वरे H, देवसरः अन्य MSS.*

Ed. Leiden v.v. 1148-1151

हे राजन्! वह विष्णु देव बहुसर एवं पवित्र और शुभ देवसर में सदैव उपस्थित रहते हैं ॥1195॥

वासिष्ठायामथैवात्र कद्र्वार्चायां तथैव च।
विनतार्चायां[1] सन्निहितो[2] गौतम्यां पार्थिवोत्तम ॥ 1196 ॥

एता[3] दृष्ट्वा केशवार्चा[4] अग्निष्टोमफलं[5] लभेत् ॥ 1197 ॥

हे राजाओं में श्रेष्ठ! (विष्णु देव) वसिष्ठ, कद्रू, विनता और गौतम द्वारा बनाई गई मूर्तियों में रहते हैं। इन केशवमूर्तियों को देखकर अग्निष्टोम (यज्ञ) का फल मिलता ॥1196-1197॥

महापद्मस्य सरसः पुण्ये कूले तथोत्तरे।
नृसिंहमपरं दृष्ट्वा ह्यग्निष्टोमफलं[6] लभेत् ॥ 1198 ॥

महापद्म सरोवर के पवित्र उत्तरी किनारे पर दूसरे नृसिंह को देखकर (मनुष्य को) अग्निष्टोम यज्ञ का फल मिलता है ॥1198॥

देवं शक्रकृतं[7] दृष्ट्वा वरुणेन तथा कृतम्।
ब्रह्मणा च धनेशेन यमेन च हरेण च ॥1199॥

दिवाकरेण सोमेन वह्निना पवनेन च।
कश्यपेनाथ भृगुणा पुलस्त्येन[8] तथात्रिणा ॥ 1200 ॥

---

1. *विनतायां BEF, वैनतायां C.*
2. *सन्निहितं H*
3. *एतां FH*
4. *केशवार्चां FH*
5. *त्वग्निष्टोमफलं G*
6. *ज्योतिष्टोमफलं G, यह पद्य परित्यक्त AC*
7. *देवेशं चक्रं तं B*
8. *पुलम्बेन BE*

भूर्जस्वामिं[1] महास्वामिं शतशृङ्गं[2]गदाधरम्[3]।
मनोर्भवनपार्श्वे[4] च भृगुस्वामिं जनार्दनम्॥ 1201॥

तैत्तिरीयेश्वरं देवं दण्डकस्वामिनं[5] तथा।
भवस्य च तथा पार्श्वे रामस्वामिं जनार्दनम्॥ 1202॥

देवं नारायणं स्थानं[6] पश्चिमे तु वरप्रदम्।
गजेन्द्रमोक्षणं देवं वाराहस्य[7] समीपगम्:[8]॥ 1203॥

वराहं[9] च नृसिंहं च बहुरूपं वरप्रदम्।
सप्तर्षीणां तथैवार्चाः सुमुखस्य समीपगाः[10]॥ 1204॥

तुङ्गवासं[11] च वरदं वरदं च स्वयम्भुवम्।
गुहावासं च[12] योगीश[14] मनन्तं कपिलं मुनिम्[14]॥ 1205॥

अश्वशीर्षं तथा मत्स्यं हंसं कूर्मं तथैव च।
उतङ्कस्वामिनं[15] देवं वालखिल्यकृतं तथा॥ 1206॥

---

1. *भूत्वा स्वामिं BE, भूतस्वामिं G*
2. *शतशृङ्ग B*
3. *गदाधरान् G*
4. *मनोर्भवनपार्श्वे BC मेरो र्भवनपार्श्वे (मूलपाठ)*
5. *यह पद्य परित्यक्त E, वरेकस्वामिनं BC, वेरकस्वामिनं F देनुकस्वामिनं A, देवका-G*
6. *नारायणस्थाने CG*
7. *वाराहस्य B वराहस्य (मूलपाठ)*
8. *यह पंक्ति परित्यक्त A*
9. *वाराहं G*
10. *यह पंक्ति परिव्यक्त A*
11. *तुङ्गोवासं BEF*
12. *स G*
13. *यह A, योगेशम् अन्य MSS.*
14. *कपिलेश्वरम् C*
15. *ततुङ्कस्वामिनं C*

Ed. Leiden v.v. 1156-1161

गरुडं[1] जलवासं च देवं भोगमयं तथा।
दृष्ट्वैकैकमथैतेभ्यो दशधेनुफलं लभेत्॥ 1207॥*

शक्र के द्वारा और वरुण, ब्रह्मा, धनेश (कुबेर), यम, हर, दिवाकर, सोम, अग्नि, पवन तथा कश्यप, भृगु, पुलत्स्य एवं अत्रि के द्वारा बनाये गये (केशव) देव की मूर्तियों को देखकर और भूर्जस्वामि, महास्वामि, शतशृंङ्ग, गदाधर, मनु के भवन के समीप जनार्दन भृगुस्वामि, तैत्तिरीयेश्वर देव और दण्डक स्वामी और भव के पास जनार्दन रामस्वामि, पश्चिम की ओर वर देने वाले देव नारायणस्थान, वाराह के समीप गजेन्द्रमोक्षण देव, वाराह, नृसिंह, वर देने वाले बहुरूप, सुमुख के समीप सात ऋषियों की प्रतिमाओं, वर देने वाले तुङ्गवास, वर देने वाले स्वयम्भू, गुहावास, योगीश, अनन्त, कपिल मुनि, अश्वशीर्ष, मत्स्य, हंस, कूर्म, वालखिल्य द्वारा बनाये गये उतङ्कस्वामि, देव गरुड़, जलवास और फनों से युक्त वासुकि नाग देव – इनमें से एक एक को देखकर मनुष्य को दस गौओं (के दान) का पुण्य मिलता है॥1199–1207॥

वैन्येन पृथुना पूर्वं मगधेषु प्रतिष्ठितम्।
दृष्ट्वैवाप्नोति च[2] फलं पुण्डरीकस्य[3] मानवः॥ 1208॥

पूर्वकाल में वेन के पुत्र पृथु के द्वारा मगध में प्रतिष्ठित की गई (प्रतिमा) को देखकर ही मानव पुण्डरीक यज्ञ के फल को प्राप्त करता है॥1208॥

गृध्रकूटे[4] तथैवार्चां तथा[5] भृगुकृतां शुभाम्[6]।
आश्रमस्वामि इत्युक्तां[7] पर्वतादवतारिताम्॥ 1209॥

---

1. *गारुडं C*
2. *यह A, हि अन्य MSS.*
3. *पौण्डरीकस्य F*
4. *गृद्धयुद्धे BEF*
5. *शुभां E*
6. *तथा EF*
7. *यह H, आश्रमस्वामिनोक्तां G, आश्रमस्वामिनाम्नोत्थां C, आश्रमस्वामिनाभ्युक्तां BE, आश्रमस्वामिनेत्युक्तां F. आश्रमस्वामिन उक्तां A*

* Ed. Leiden v.v. 1162-1164

स्वदेशपाश्र्वे रामेण भार्गवेण महात्मना।
दृष्ट्वैव[1] सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः॥ 1210॥

गृध्रकूट (पर्वत) पर भृगु के द्वारा बनाई गई आश्रमस्वामि नाम की शुभ प्रतिमा (पूजा की मूर्ति) जो भृगु के बेटे (परशु) राम के द्वारा पर्वत से उतारकर अपने स्थान के पास लाई गई है। उसके दर्शनमात्र से (मनुष्य) सभी पापों से छूट जाता है इसमें कोई संशय नहीं है॥1209-1210॥

गोनन्दः[2]

गृध्रकूटाद् गिरिश्रेष्ठात् किमर्थं भृगुनिर्मिता।
अर्चावतारिता ब्रह्मन् स्वाश्रमस्य समीपतः॥ 1211॥

गोनन्द (ने कहा)

भृगु के द्वारा बनाई गई (वह पूजा की) मूर्ति पर्वतों में श्रेष्ठ गृध्रकूट पर्वत से उसके अपने आश्रम के समीप क्यों उतारकर लाई गई?॥1211॥

बृहदश्वः

कृत्वार्चां पितृवधाद् रामः क्षत्रियमर्दनः[4]।
त्रिःसप्तकृत्वः पृथिवीं कृतवान्[5] निःक्षत्रियां तथा[6]॥ 1212॥

बृहदश्व (ने कहा)

और मूर्ति की पूजा करके पिता के वध के कारण क्षत्रियों का नाश करने वाले उस (परशुराम) ने इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रियों से रहित किया॥1212॥

एकविंशतमे[7] घाते प्राप्ते केचित्तु क्षत्रियाः।
गिरिदुर्ग मनुप्राप्ताः कश्मीरायां[9] नृपोत्तम॥ 1213॥

---

1. *दृष्टैवं BE*
2. *उवाच अभिव्यक्त D*
3. *संशोधित, पुरा पितृवधादर्चां (मूलपाठ)*
4. *क्षत्रियवर्धनः B*
5. *संशोधित, कृत्वा (मूलपाठ)*
6. *पुरा (मूलपाठ) तथा AG*
7. *यह H, एकविंशत्तमे AC, एकविंशे तथा G एकविंशतिमे (मूलपाठ)*
8. *शरदुर्गम् E, शिरदुर्गम् F*
9. *कश्मीरेषु G*

रामोऽनुपदमागत्य[1] ताञ्जघानातिरोषण:[2]।
तेभ्योऽपि क्षत्रिया: केचिद्धतशेषा[3] महीतले[4] ॥ 1214 ॥

तद्भयेन गता[5] त्यक्त्वा कश्मीरां राजसत्तम।
नदी मधुमती[6] यत्र तथान्या[7] रजनिर्मला[8] ॥ 1215 ॥

तत्रापि[9] रामस्तान् गत्वा[10] पातयामास[11] रोषत:[12] ॥ 1216 ॥

हे श्रेष्ठ राजन्! इक्कीसवीं बार के प्रहार के प्राप्त करने पर कुछ क्षत्रिय कश्मीरा में पहाड़ी दुर्ग पर पहुँचे। (परशु) राम ने अत्यधिक क्रोधित होकर इनका पीछा करके उन्हें मार दिया। इनमें से भी कुछ क्षत्रिय भूतल में मृत्यु से बच गये। हे नृप श्रेष्ठ! उसके भय से निकले हुए कश्मीरा को छोड़कर मधुमती नदी और रजनिर्मला नदी तक पहुँचे। वहां पर भी परशुराम ने जाकर क्रोध के कारण उनको मार गिराया ॥1214-1216 ॥

नि:शेषान् क्षत्रियान् हत्वा[13] रुधिराक्तकर[14]स्तथा[15]।
प्रतिष्ठामकरोद् राजन् केशवस्य महात्मन: ॥ 1217 ॥

---

1. *यह A, आगम्य अन्य MSS.*
2. *अतिरोषिति: A*
3. *क्षतशेषा: G*
4. *महीपते (मूलपाठ) महीतले B*
5. *तद्भयान्निर्गतास्त्यक्त्वा B*
6. *मधुमती नदी H*
7. *तत्रान्या B*
8. *राजनिर्मला H, राजनिर्मिता BCF, नृपनिर्मल:*
9. *तत्रापि G तथापि (मूलपाठ)*
10. *नत्वा A*
11. *घातयामास BEFH*
12. *रोषित: A*
13. *कृत्वा G*
14. *रुधिराक्तहर: BC*
15. *तत: H*

Ed. Leiden v.v. 1169-1171

राजावासमिति प्रोक्तं सर्वलोकेषु[1] विश्रुतम्।
तद् दृष्ट्वा शीघ्रमाप्नोति कार्यसिद्धिं नरोत्तम[2] ॥ 1218 ॥

और सभी क्षत्रियों को (मारकर) उनके रक्त से रंगे हाथों वाले उसने परमात्मा (भगवान्) केशव की (एक मूर्ति की) स्थापना की। सम्पूर्ण संसार में वह राजावास नाम से प्रसिद्ध कही जाती है। हे पुरुषोत्तम! उसके दर्शन करने से शीघ्र ही कार्य सिद्धि प्राप्त होती है ॥1217-18 ॥

रौद्रभावेन रामेण यदा चार्चा विनिर्मिता।
रौद्रभावमथास्थाय तस्यां[3] सन्निहितो हरिः[4] ॥ 1219 ॥

जब रौद्रभाव में स्थित परशुराम के द्वारा वह (पूजा की) मूर्ति बनाई गई तो उसमें हरि सदा रौद्रभाव में उपस्थित रहते हैं ॥1219 ॥

अर्चयन्ति च रौद्रेण तं[5] च भावेन मानवाः।
रौद्रभावान् महीनाथ नित्यं पशुवधादिना ॥1220 ॥

हे राजन्! मनुष्य भी रौद्रभाव से युक्त होकर उसकी पूजा रौद्रभाव से करते हैं। इसी रौद्रभाव से वह नित्य पशुवध आदि के साथ (उसका)पूजन करते हैं ॥1220 ॥

ततो[6] रामोऽपि[7] धर्मात्मा पूर्व क्षत्रियशोणितैः।
कृत्वा कुण्डञ्जगामाथ[8] कुरुक्षेत्रे[9] महीपते ॥ 1221 ॥

हे पृथिवीपति। पहले (खाली) कुण्डों को क्षत्रियों के खूनों से भरकर फिर वह धर्मात्मा (परशु) राम कुरुक्षेत्र चला गया ॥1221 ॥

1. *राजलोकेषु*
2. *नरोत्तमः H*
3. *नित्यं H*
4. *यह ACG, हरः अन्य MSS.*
5. *यह H, तां ABE*
6. *तत्र H, इति G*
7. *स G*
8. *यह ABCEH, जगामाशु A*
9. *कुरुक्षेत्रं F, कुण्डक्षेत्रं B*

पितृन् स तेष्वथाभ्यर्च्य मुदं लेभे वरारिहा[1]।
तमूचुः पितरः प्रीता राम राम महाभुज॥ 1222॥

कर्मणोऽस्मान् निवर्तस्व[2] तीर्थयात्रां तथा कुरु।
पलायमानान् भीतांश्च हतवानसि पार्थिवान्[3]॥ 1223॥

तेन पापेन ते पुत्र[4] शरीरं कल्मषं[5] स्थितम्[6]।
तस्माद् व्रजस्व तीर्थानि पावनार्थमिहात्मनः॥ 1224॥

इसके बाद प्रतापी शत्रुओं का नाश करने वाले उस (परशुराम) ने उन कुण्डों में पितरों की पूजा करके प्रसन्नता प्राप्त की। प्रसन्न हुए पितरों ने उसे कहा– हे बड़ी भुजाओं वाले राम! इस दुष्कर्म से हटो और तीर्थों की यात्रा पर जाओ। क्योंकि तुमने डरे हुए तथा भागते हुए राजाओं को मारा है इसलिए हे पुत्र! तुम्हारा शरीर उस पाप से पापयुक्त होकर अवस्थित है। उसके लिए अपने को पवित्र करने के हेतु तीर्थों में जाओ॥1222–1224॥

भविष्यसि न यावत् त्वं शुद्धदेहश्च पुत्रक।
नापैष्यति[7] हि ते तावत् करेभ्यो[8] रुधिरं दृढम्॥ 1225॥

यदा[9] करौ विरुधिरौ पुत्र तव भविष्यतः।
तदा त्वं निर्मलीभूतस्तपः कुरु यथासुखम्॥ 1226॥

हे प्रियपुत्र! जब तक तुम्हारा शरीर पवित्र नहीं हो जाता तब तक पूरी तरह से तुम्हारे हाथों में लगा हुआ रक्त दूर नहीं होगा। हे पुत्र जब तुम्हारे दोनों हाथ रक्त रहित हो जायेंगे तब तुम शुद्ध होकर अपनी सुख सुविधा के अनुसार तपस्या करो॥1225–1226॥

---

1. *यह BEFGH, सुरारिहा AC*
2. *यह G, कर्मणोग्रेण निवर्त्य A कर्मणोग्रान् अन्य MSS.*
3. *पुत्रक G*
4. *तत्र E*
5. *कलुषं EE*
6. *यदि E, शरीरे कलुषं स्थितम् G यदा (मूलपाठ)*
7. *न चापैति G*
8. *कराभ्यां G*
9. *यथा A*

एवमुक्तस्तदा[1] रामः पितृभिः पूजितस्ततः।
चकार तीर्थयात्रां वै सर्वदेशेषु[2] पार्थिव॥ 1227॥

हे राजन्! पितरों के द्वारा इस प्रकार कहे गये और सम्मानित किये गये (परशु) राम तभी सभी देशों में तीर्थयात्रा को गये।॥1227॥

कृत्वा जगाम कश्मीरां[3] तथा च स[4] महीपते।
आप्लुत्य[5] तीर्थेषु तदा गृध्रकूटमुपागमत्[6]॥ 1228॥

हे राजन्! जब वह (परशु) राम कश्मीरा गये और तीर्थों में डुबकी के साथ स्नान करके गृध्रकूट के पास पहुँचे॥1228॥

शुद्धा[7] सरस्वती चैव संयोगं यत्र[8] गच्छतः।
तत्र स्नातस्य रामस्य करौ शुद्धिमुपागतौ॥ 1229॥

जहां शुद्धा और सरस्वती का सङ्गम है वहाँ स्नान करके परशुराम के हाथ पवित्र हो गये॥1229॥

---

1. *तथा A*
2. *यह ABEF, सर्वतीर्थेषु H*
3. *काश्मीरां BE, कश्मीरान् G*
4. *तथैवासौ G, तथापि स H*
5. *आप्लाव्य BE*
6. *यह H, उपागतम् AF*
7. *यह अन्य MSS, नदी A*
8. *तत्र B*

तस्य तीर्थस्य[1] रामोऽपि वरं प्रादान्महायशाः।
अस्मिन् तीर्थे नरः स्नात्वा सर्वं मोक्ष्यति किल्विषम्[2] ॥ 1230 ॥

शुद्धदेहस्तदा गन्ता भृगूणां समलोकताम्।
एवं तु निर्मलीभूतो रामः परबलार्दनः ॥ 1231 ॥

महायशस्वी (परशु) राम ने भी उस तीर्थ को यह वरदान दिया कि इस तीर्थ पर स्नान करके मानव सभी पापों से मुक्त हो जायेगा और तब शुद्ध शरीर होकर भृगुओं की लोकता अर्थात् उनके प्राप्तव्य लोकों को पा लेगा। इस प्रकार शत्रुओं की सेना का मर्दन करने वाला (परशु) राम पवित्र हो गया ॥1230-31 ॥

पथेश्वरमथास्थाय[3] तपस्तेपे सुदारुणम्।
नदीं सम्प्राप्य पुण्योदां तदा ब्रह्मसरोद्भवाम्[4] ॥ 1232 ॥

उसके बाद पथेश्वर पहुँचकर उसने अत्यधिक कठोर तपस्या की और तब ब्रह्मसर से उत्पन्न पुण्योदा नदी पर पहुँचा ॥1232 ॥

यदा तस्यां तु रामेण तपस्तप्तं महात्मना।
तदा रामह्रदेत्येवं नदी सा भुवि विश्रुता ॥ 1233 ॥

जब महात्मा (परशु) राम ने (उस) नदी में कठोर तपस्या की तब वह नदी इस पृथिवी पर रामह्रदा नाम से विख्यात हुई ॥1233 ॥

तत्र संवत्सरं कृत्वा रामोऽपि परमं तपः।
तपोऽर्थं गृध्रकूटस्य तदा मूलं जगाम सः ॥ 1234 ॥

एक साल पर्यन्त वहाँ भी परम तपस्या करके (परशु) राम तप करने के लिए गृध्रकूट पर्वत की तलहटी में गया ॥1234 ॥

---

1. *तीर्थं स A*
2. *किल्बिषम् DE*
3. *अथास्थाय BC*
4. *ब्रह्मसरोद्भवम् E*

यत्रास्य चागतो शुद्धिं करौ पूर्वं महीपते।
तस्माददूरे पुण्योदामनन्तस्य महात्मनः ॥ 1235 ॥

भवनं नागराजस्य तपस्तेपे महात्मनः[1]।
प्रतिष्ठानं तथा चक्रे[2] तस्य देवस्य[3] शार्ङ्गिण ॥ 1236 ॥

हे राजन्! पहले जहाँ इसके हाथ पवित्र हुए थे उस स्थान तथा पुण्योदा के समीप ही महात्मा नागराज अनन्त का निवास स्थान (मन्दिर) है। (परशु राम ने) वहाँ कठोर तपस्या की और शार्ङ्गधनुर्धारी भगवान् विष्णु की प्रतिमा बनाई ॥1235-1236 ॥

तत्रासतस्तत[4]स्तस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः[5]।
आश्रमस्वामिनं द्रष्टुं प्रययौ ब्राह्मणोत्तमः ॥ 1237 ॥

उसके बाद जब बिना थके काम करने वाला (परशु) राम वहाँ रह रहा था तब उसके पास उत्तम ब्राह्मण आश्रमस्वामि के दर्शन करने के लिए पहुँच गया ॥1237 ॥

दातुं गां देवदेवस्य[6] तामादाय तु[7] सत्वरः[8]।
तत्रासावपथि[9] प्राणांस्तस्मिस्तत्याज पर्वते ॥ 1238 ॥

देवों के देव (विष्णु) को भेंट देने के लिए (जिस) गाय को साथ ले गया था उस गाय ने उस पर्वत के बुरे (कठिन) रास्ते पर प्राण त्याग दिये ॥1238 ॥

---

1. *यह BEFH, प्रतिष्ठितम् A, स तत्र हि G*
2. *चक्रे तस्य प्रतिष्ठानं तथा A*
3. *देवदेवस्य G*
4. *तदा B*
5. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त E*
6. *तस्य देवस्य BCH*
7. *च A*
8. *तत्रादृष्ट्वा च तं मुनिम् अतिरिक्त G जगाम तं मृगयितुं तामादाय तु सत्वरः G*
9. *अपथे A*

त्यक्त्वा च गां[1] महीनाथ[2] ब्रह्मणोऽपि निवर्तितः।
प्रायश्चित्तीयतां प्राप्य दुःखशोकसमन्वितः॥ 1239॥

हे पृथिवीनाथ राजन्! ब्राह्मण भी प्रायश्चित्त की भावना को प्राप्त हुआ दुःख और शोक से भरे मन के साथ गाय को छोड़कर वापिस आ गया॥1239॥

स रामाश्रममागत्य[3] वासिष्ठो[4] धर्मनिश्चलः।
यथावृत्तमथाचख्यौ रामाय सुमहात्मने॥ 1240॥

तमुवाच ततो रामः पश्यन् दिव्येन चक्षुषा॥ 1241॥

धर्म में निश्चल गुरु वासिष्ठ (ब्राह्मण) ने राम के आश्रम में जैसा घटित हुआ था वैसा वह सारा वृत्तान्त उस महात्मा (परशु) राम को सुनाया तब (परशु) राम ने दिव्य चक्षु से देखते हुए कहा॥1240-1241॥

दिव्योत्पन्ना द्विजश्रेष्ठ दिव्यनारी[5] मनोरमा।
देवर्षिं वञ्चयामास गोरूपेणाथ नारदम्॥ 1242॥

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! स्वर्ग में उत्पन्न हुई इस सुन्दर दिव्य नारी ने गाय के रूप में देवर्षि नारद को धोखा दिया था॥1242॥

तेन विज्ञाय सा शप्ता तव गोत्वमुपागता[6]।
तेनैव तस्य शापान्तः कृतो ब्राह्मणसत्तम॥ 1243॥

गोस्वामिना नीयमाना गृध्रकूटे शिलोच्चये।
तनुं त्यक्त्वा ततो भूयो भविष्यसि वराप्सराः॥ 1244॥

हे ब्राह्मणोत्तम! यह बात जानकर उन्होंने उसे शाप दिया और वह तुम्हारी गाय बन गई। उन्होंने ही पुनः उस शाप का अन्त इस प्रकार किया (अपने)

---

1. *गां च G*
2. *महीपाल G*
3. *आसाद्य H*
4. *ब्राह्मणो H*
5. *देवनारी BEF*
6. *उपागतम् E*

गोस्वामी के द्वारा ले जाती हुई तुम गृध्रकूट पर्वत पर शरीर को त्याग कर पुनः सुन्दर अप्सरा बन जाओगी ॥1243-1244 ॥

मोक्षिता सा त्वया शापान्न तेऽस्ति द्विज पातकम्।
गोदानफलसंयुक्तो मत्प्रसादाद् भविष्यसि ॥ 1245 ॥

हे ब्राह्मण! तुमने उसे शाप से मुक्त कर दिया है इस प्रकार तुम्हें कोई पाप नहीं लगा है। मेरी कृपा से तुम गोदान के फल से युक्त हो जाओगे॥ 1245 ॥

गच्छ पश्य स्वदेवेशं तथाश्रमनिवासिनम्।
तं दृष्ट्वा सर्वपापेभ्यो विनिर्मुक्तो भविष्यसि[1] ॥ 1246 ॥

जाओ और अपने देवेश तथा आश्रमनिवासी को देखो। उनको देखकर सब पापों से मुक्त हो जाओगे ॥1246 ॥

अहं हि देवप्रवरमाराध्य[2] मधुसूदनम्।
इहानयिष्ये तामर्चां लोकस्य हितकाम्यया[3] ॥ 1247 ॥

मैं भी संसार के हित की कामना से देवों में उत्तम मधुसूदन की आराधना करके उस मूर्ति को यहाँ लाऊँगा ॥1247 ॥

प्रायशो[4] धेनुदानेन लोकोऽर्चयति तं हरिम्।
पर्वतारोहणे[6] क्लेशो महान् विप्र गवां तथा[6] ॥ 1248 ॥

हे ब्राह्मण! लोग प्रायः गाय के दान के द्वारा उस हरि की पूजा करते है और पर्वत पर चढ़ने में गौओं को बहुत क्लेश होता है ॥1248 ॥

---

1. *यह पद्य परित्यक्त EH*
2. *चाराध्य A.*
3. *चतुर्थ पाद परित्यक्त AH*
4. *यह पद्य तथा अगले पद्य का प्रथम पाद परित्यक्त AH*
5. *पर्वतारोहिणी E*
6. *यथा BEF*

Ed. Leiden v.v. 1998-1201

आनीतायामिहार्चायां द्विजेन्द्र न[1] भविष्यति।
तस्मिन्नेव तदा स्थाने तपस्तेपे स भार्गवः ॥ 1249 ॥

हे ब्राह्मणधिराज! मूर्ति के यहाँ लाये जाने पर वह (कष्ट) नहीं होगा। तब उस भृगुवंशज (परशुराम) ने उस स्थान पर तपस्या की ॥1249 ॥

ततः संवत्सरस्यान्ते[2] ददर्श मधुसूदनम्।
दिव्येन चक्षुषा राजन् प्रसन्नमग्रतः[3] स्थितम् ॥ 1250 ॥

तुषारचयसंकाशं श्वेताम्बरविभूषितम्।
मुकुटेनार्कवर्णेन कुण्डलैश्च[4] विराजितम् ॥ 1251 ॥

चतुर्मुखं चतुर्बाहुं चतुर्वेदाश्रयान्वितम्।
शरीरधारिभिः शस्त्रै[5]रुदीरितजयस्वनम्[6] ॥ 1252 ॥

तं दृष्ट्वा प्रणतो राजंस्तुष्टाव मधुसूदनम्।

हे राजन! तब संवत्सर के अन्त में अपनी दिव्य दृष्टि से उसने अपने सामने प्रसन्न होकर खड़े हुए, सफेद वस्त्र पहिनने से श्वेत हिम समूह के समान (शुभ्र), सूर्य के वर्ण वाले मुकुट और कुण्डलों से सज्जित, चतुर्मुख, चतुर्भुज, चारों वेदों के आश्रय, शरीरधारी शस्त्रों के मुख से बोले गये जय शब्दों से युक्त मधुसूदन (भगवान् विष्णु) को देखा। हे राजन! उनको देखकर झुकते हुए परशुराम ने मधुसूदन की इस प्रकार प्रशंसा की ॥1250-1252 ॥

---

1. *यह G, द्विजेन्द्रेण अन्य MSS.*
2. *संवत्सरास्यान्तं CF*
3. *पुरतः BCEF*
4. *कुण्डलाभ्यां A*
5. *यह C, शास्त्रैर् AH, चास्त्रैर् G, वस्त्रैर् Ed. Leiden*
6. *द्वितीय पंक्ति परित्यक्त E*

परशुरामः[1]

नमस्ते देवदेवेश प्रणतार्तिविनाशन॥ 1253॥

परशुराम (ने कहा)

हे देवों के देवों के स्वामी! और भक्तों की विपत्तियों को दूर करने वाले! तुम को नमस्कार॥1253॥

चतुर्मूर्ते महामूर्ते चतुर्वेद महाभुज।
गोविन्द पुण्डरीकाक्ष वराहाद्य नमोस्तु ते॥ 1254॥

हे चारमूर्तियों वाले, महती मूर्ति वाले, चार वेदों के आश्रय, बड़ी भुजाओं वाले, पृथिवी को ढूँढने वाले, कमलों के सदृश नेत्रों वाले और वराहादि अवतार वाले! तुम्हें आज मेरा नमस्कार हो॥1254॥

दंष्ट्राग्रोद्धृतभूभाग[2] संचूर्णितशिलोच्चय[3]।
त्वं सदैव वराहोऽसि येनेदं धार्यते जगत्॥ 1255॥

अपनी दाढ़ों के अग्रभाग से पृथिवीभाग को उठाने वाले, (पर्वतों के) शिलासमूह को चूर चूर करने वाले (हे देव)! तुम सदा ही उस वराह (रूप को धारण करते) हो जिसके द्वारा यह जगत् धारण किया जा रहा है॥ 1255॥

करजाग्रविनिर्भिन्नहिरण्यकशिपूरसे[4]।
नमस्तुभ्यं नृसिंहाय ज्वालामालाकुलात्मने॥ 1256॥

नाखूनों के अग्रभागों से हिरण्यकशिपु के वक्षः स्थल को विदीर्ण करने वाले और (क्रोध रूपी) अग्नि की ज्वाला (रूपी) मालाओं से भरी हुई देह वाले नृसिंह रूपधारी! तुम्हें (मेरा) नमस्कार है॥1256॥

---

1. *श्रीरामः B, राम उवाच C, रामः H*
2. *दंष्ट्राग्रोद्यत–B*
3. *संशूर्णितशिलोच्चय C, संचलितशिलोच्चय G*
4. *हिरण्यकशिपोरसे AH, हिरण्यकश्यपूरसे CF*

त्रिविक्रमाय देवाय नमस्ते विजगीषवे।
सोमभूषितवक्त्राय नमोऽश्वशिरसे[1] प्रभो[2] ॥ 1257 ॥

विजय की अभिलाषा करने वाले (अतएव) तीन (आकाश, मर्त्यलोक और पाताल में) पैरों को रखने वाले (वामनावतार रूपधारी)! तुम्हारे लिए नमस्कार है। सोमरस से विभूषित मुख वाले और हयग्रीव रूप (अवतार लेने वाले) हे प्रभु! (तुम्हारे लिए मेरा) नमस्कार है ॥1257॥

त्वं देव[3] सर्वदेवानां दुःखितानां परा गतिः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थाश्च महाभूतानि यानि च॥ 1258 ॥

मनो बुद्धिस्तथैवात्मा अव्यक्तं[4] पुरुषोद्भवम्।
सत्त्वं रजस्तमश्चैव ब्रह्मा विष्णुर्महेश्वरः[5] ॥ 1259 ॥

त्वया सर्वमिदं व्याप्तं त्रैलोक्यं सचराचरम्
त्वया विना न पश्यामि किंचिदेव जगत्त्रये॥ 1260 ॥

हे (भगवान् विष्णु) देव! तुम दुःखी रहने वाले सारे देवताओं के अन्तिम आश्रय हो। इन्द्रियों, इन्द्रियों के विषय, और जो महापञ्चभूत हैं वे, मन, बुद्धि, आत्मा, परम पुरुष से उत्पन्न अव्यक्त, सत्व, रज, तम, ब्रह्मा, विष्णु महेश्वर ये सब तथा चलायमान एवं स्थावर प्राणियों और पदार्थों से युक्त ये तीन लोक यह सब का सब तुम्हारे द्वारा व्याप्त है। इन तीनों लोकों में तुम्हारे बिना मैं कुछ भी नहीं देखता हूँ ॥1258-1260॥

त्वत्तेजसा मया[6] देव निहताः क्षत्रिया भुवि।
कोटिसंख्याश्च निहताः सैंहिकेया महाबलाः॥ 1261 ॥

हे देव! तुम्हारे ही तेज के कारण मैंने इस पृथिवीलोक में क्षत्रिय मारे हैं तथा करोड़ों की संख्या वाले महापराक्रमी सिंहिका (राहु की माता) के पुत्र मारे हैं ॥1261॥

1. *यह GH, स्वशिरसे अन्य MSS.*
2. *विभो G*
3. *देवः H*
4. *यत् अतिरिक्त G*
5. *महेश्वराः G*
6. *यदा GH*

सूक्ष्मातिसूक्ष्म देवेश महद्भ्योऽपि[1] महत्तर[2]।
क्षीरोदकन्यादयित कामरूप नमोस्तु ते॥ 1262॥

हे सूक्ष्म से भी अतिसूक्ष्म, बड़े से भी अधिक बड़े, लक्ष्मी के पति और अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण करने वाले देवेश्वर! तुम्हें (मेरा) नमस्कार हो ॥1262॥

कामकामद कामारिपूजिताघविनाशन।
चतुर्भिः सततं वक्त्रैः पद्मजन्माभिसंस्तुत[3]॥ 1263॥

कां स्तुतिं[4] ते करिष्यामि जगत्कारणकारण।
स्तुत त्रैलोक्यनाथेश सर्वथैव नमोऽस्तु ते॥ 1264॥

हे इच्छित कामना को पूर्ण कर देने वाले, कामदेव के शत्रु (शिव) के द्वारा पूजित, पापों का नाश करने वाले, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा द्वारा चारों मुखों के द्वारा प्रशंसित, जगत् के कारण मैं किस प्रकार की तुम्हारी प्रशंसा करूं? हे प्रशंसित और तीनों लोकों के स्वामियों के स्वामी! सब प्रकार से तुम्हें नमस्कार हो ॥1263-1264॥

नमः पार्श्वेषु ते देव नमस्ते सर्वतः प्रभो।
पर्वतेषु समुद्रेषु लोकेषु गगने तथा॥ 1265॥

नमस्तेऽस्तु नमस्तेऽस्तु सर्वत्रैव नमोऽस्तु ते॥ 1266॥

हे देव सभी (वाम दक्षिणादि दिशाओं) की ओर से तुम्हें नमस्कार। हे प्रभु! सभी तरफ पर्वतों, समुद्रों, लोकों और आकाश में सर्वत्र ही तुम्हें नमस्कार होवे, तुम्हें नमस्कार होवे और तुम्हें नमस्कार होवे ॥1265-1266॥

---

1. *असि G*
2. *महत्तमः G*
3. *यह संस्तुतः A*
4. *कां स्तुतिं G कमोहं (मूलपाठ)*

एवं स्तुतस्तु[1] रामेण राममाह जनार्दनः।
राम राम महाबाहो वरं वरय सुव्रत॥ 1267॥

इस प्रकार (परशु) राम के द्वारा स्तुति किये गये जनार्दन (विष्णु) ने (उस) परशुराम को कहा। हे अच्छे व्रत को धारण करने वाले और बड़ी-बड़ी भुजाओं वाले (परशु) राम! हे (परशु) राम! तुम वर मांगो॥1267॥

वीर्येण तपसा देव स्तोत्रेणानेन सुव्रत[2]।
परितुष्टोऽस्मि ते वत्स यथा नान्यस्य कस्यचित्[3]॥ 1268॥

हे सुन्दर व्रत वाले एवं प्रिय (ब्राह्मण) देवता! तुम्हारे पराक्रम, तपस्या और इस स्तोत्र से जितना (तुम से) प्रसन्न हूँ उतना मैं अन्य किसी के कर्म से नहीं॥ 1268॥

परशुरामः
भृगुणा निर्मितामर्चां गृध्रकूटाग्रतः प्रभो।
इहानयितुमिच्छामि तन्मेऽनुज्ञातुमर्हसि॥ 1269॥

परशुराम (ने कहा)

हे स्वामी! भृगु के द्वारा बनाई गई (पूजा की) मूर्ति को गृध्रकूट की चोटी से यहाँ लाना चाहता हूँ मुझे इसके लिए आज्ञा प्रदान करने का अनुग्रह करें॥1269॥

भगवान् उवाच[4]
एवं कुरु यथेष्टं ते जनो मुच्यते किल्विषात्।
क्लेशं विना भृगुश्रेष्ठ कृतस्तेऽनुग्रहो मया॥ 1270॥

भगवान् ने कहा

हे भृगवंश में श्रेष्ठ! मैंने तुम्हारे ऊपर कृपा की है। तुम जैसा चाहो वैसा करो जिससे मनुष्य किसी कष्ट के बिना पापों से मुक्त हो जायें॥1270॥

---

1. *श्च E, स G.*
2. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त B*
3. *श्रीरामः B, रामः H, श्रीराम उवाच G*
4. *उवाच परित्यक्त BH*

बृहदश्वः

एवमुक्त्वा ययौ विष्णुस्तदान्तर्धानमीश्वरः।
रामोऽपि[1] गृध्रकूटात्तां तदार्चामवतारयत्॥ 1271॥

बृहदश्व (ने कहा)

इस प्रकार कहकर तब परमेश्वर भगवान् विष्णु अन्तर्धान हो गये। (परशु) राम भी गृध्रकूट पर्वत से प्राप्त उस मूर्ति को तब नीचे ले आये॥1271॥

मध्ये चकार तां भक्त्या स्वार्चामनन्तकूटयोः।
तां दृष्ट्वा फलमाप्नोति पुण्डरीकस्य मानवः॥ 1272॥

उन्होंने अपनी उस मूर्ति को भक्तिपर्वूक अनन्त और कूट बीच में स्थापित किया। उसके दर्शन करने से मनुष्य पुण्डरीक यज्ञ के फल को प्राप्त करता है॥1272॥

रामोऽपि तपसा दीप्तो वाजिमेधमहाक्रतौ।
दत्त्वा महीं कश्यपाय महेन्द्रपर्वतं[2] गतः[3]॥ 1273॥

तप से दीप्त (परशु) राम भी महान् वाजिमेध यज्ञ में कश्यप को पृथिवी देकर महेन्द्र पर्वत को चले गये॥1273॥

एवं रामेण धर्मज्ञ गृध्रकूटान्नगोत्तमात्।
स्वाश्रमस्य समीपे तु आनीता[4] प्रतिमा शुभा[5]॥ 1274॥

हे धर्मज्ञ! इस प्रकार वह शुभ मूर्ति (परशु) राम के द्वारा पर्वतों में श्रेष्ठ गृध्रकूट पर्वत से अपने आश्रम के समीप लाई गई है॥1274॥

---

1. *अपि परित्यक्त E*
2. *माहेन्द्रपर्वतं H, महेन्द्रगिरिं G, महेन्द्रं पर्वतं BE*
3. *ततः BDE, आययौ G*
4. *सानीता B*
5. *इति नीलमते आश्रमस्वामिवर्णनम् अतिरिक्त AG, नीलमते आश्रमस्वामि-माहात्म्यम् BDF, इति श्रीनीलमतपुराणे आश्रमस्वामिमाहात्म्यम् C*

गोनन्द[1]:
देशस्यास्य समीपे तु तीर्थानि वदतां वर।
कथयस्वामितप्राज्ञ तस्मिंस्तीर्थे फलं च किम्॥ 1275॥

गोनन्द (ने कहा)

हे वक्ताओं में श्रेष्ठ तथा असीम ज्ञान वाले! मुझे इस देश के समीप स्थित तीर्थस्थानों को विषय में बतायें और उस तीर्थ का क्या फल है ? यह बताओ॥1275॥

बृहदश्वः
आरुह्य गृध्रकूटं[2] तु गोसहस्त्रफलं लभेत्।
वितस्तामधुमत्योश्च सङ्गमे त्रिदिवं व्रजेत्॥ 1276॥

इन्द्रकीलमथारुह्य गोसहस्त्रफलं लभेत्।
कुमुनारीं नदीं प्राप्य स्नातो मुच्येत किल्विषैः[3]॥ 1277॥

बृहदश्व (ने कहा)

गृध्रकूट पर्वत पर आरोहण करके एक हज़ार गौओं (के दान) का फल मिलता है और वितस्ता और मधुमती के सङ्गम में स्नान करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है और इन्द्रकील पर्वत पर चढ़कर हज़ार गौओं (के दान) का फल मिलता है। कुमुनारी नदी पर पहुँचकर स्नान करने से सभी पापों से मुक्ति मिलती है॥1276-177॥

कृष्णावितस्तासंयोगे गोसहस्त्रफलं लभेत्।
तथा मधुमतीतीरे शाण्डिल्येन निवेशितम्[4]॥ 1278॥

दृष्ट्वा चक्रेशमाप्नोति वह्निष्टोमफलं नरः[5]।
दृष्ट्वा दुर्गामवाप्नोति काममेव यथेप्सितम्॥ 1279॥

कृष्णा और वितस्ता के सङ्गम में (स्नान करने से) एक हज़ार गौओं (के

1. *उवाच अतिरिक्त C*
2. *गृध्रकूटे E*
3. *पद्य सं 1277 का द्वितीय तथा 1278 की प्रथम पंक्ति परित्यक्त AH*
4. *यह C निवेद्यताम् A, निवेशिताम् H*
5. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त H*

Ed. Leiden v.v. 1227-1231

दान करने) का फल मिलता है और मधुमती के किनारे शाण्डिल्य के द्वारा स्थापित चक्रेश तीर्थ के दर्शन करके बह्निष्टोम यज्ञ का फल मिलता है। दुर्गा के दर्शन से अभीप्सित कामना की पूर्ति होती है ॥1278-1279॥

तत्रैव शाण्डिली नाम नदी पापनिषूदनी[1]।
तस्यां स्नातो दिवं याति पुरुषो गतकल्मषः॥ 1280॥

वहाँ पर ही पापों का नाश करने वाली शाण्डिली नामक नदी (बहती) है। उसमें स्नान करके मनुष्य पापों से रहित हो स्वर्ग को जाता है ॥1280॥

शाण्डिली[2]मधुमत्योश्च स्नातो[3] यः सङ्गमे नरः।
सर्वपापविनिर्मुक्तः स्वर्गलोकं स गच्छति॥ 1281॥

जो मनुष्य शाण्डिली और मधुमती के सङ्गम में स्नान करता है वह सभी पापों से मुक्त होकर स्वर्ग लोक को जाता है ॥1281॥

राजवासं हरिं दृष्ट्वा कामम[4]प्नोत्यभीप्सितम्।
रजोविनिर्मलं प्राप्य स्नात्वा मुच्येत किल्विषैः॥ 1282॥

राजवास हरि (विष्णु) को देखकर (मनुष्य को) अभिलषित कामना की प्राप्ति होती है। रजोविनिर्मल तीर्थ में पहुँचकर और स्नान करके (सब) पापों से मुक्ति हो जाती है ॥1282॥

तस्यां[5] देवी उमा स्नाता प्रथमं तु रजोवती।
दृष्ट्वा तु गौरीशिखरं चन्द्रलोकमवाप्नुयात्॥ 1283॥

प्रथम बार रजस्वला होने पर उमादेवी ने उस तीर्थ की नदी में स्नान किया था। गौरीशिखर को देखकर मनुष्य चन्द्रलोक को प्राप्त करता है ॥1283॥

---

1. पापनिसूदनी *H*
2. शाण्डिल्योः *A*
3. स्नाति *H*
4. कार्यम् *BCDEFG*
5. तस्मिन् *CE*

पूर्वमासीदुमा राजन्[1] नीलोत्पलसमप्रभा।
सा तत्र तपसा लेभे गौरं वर्णं मनोहरम्॥ 1284 ॥

हे राजन्! पहले उमा नीलकमल के समान (काली नीली) कान्ति वाली थी (परन्तु) वहाँ तपस्या करके उसने मनोहर गौरवर्ण को प्राप्त किया ॥1284 ॥

कृष्णपक्षेऽपि तं शैलं सज्योत्स्नमिव मानद।
पश्यन्ति मानवा नित्यं तत्र वै[2] महदद्भुतम्॥ 1285 ॥

हे मान देने वाले! यह महान् आश्चर्य है कि मनुष्यों को यहाँ कृष्णयक्ष में भी हमेशा वह पर्वत चाँदनी से युक्त दिखाई देता है ॥1285 ॥

तेलल्लां भूर्जल्लां पुण्यामवागाह्य पृथक् पृथक्।
तुल्यं फलमवाप्नोति गोशतस्य महीपते[3] ॥ 1286 ॥

हे पृथिवीपति! पवित्र तेलला और भूर्जला में अलग अलग स्नान करने से सौ गायों के दान का फल प्राप्त होता है ॥1286 ॥

तयोस्तु[4] सङ्गमे स्नात्वा वाजपेयफलं[5] लभेत्।
मधुमत्यास्तयोश्चैव स्नातस्य नृप सङ्गमे॥ 1287 ॥

कथितं मुनिभिः पुण्यं गजदानस्य यत् फलम्[6]।
तथा प्रभवा[7]मासाद्य मधुमत्या मनोहरम्।॥ 1288 ॥

इन दोनों के सङ्गम पर स्नान करने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है। हे राजन्! मुनियों के द्वारा कहा गया है कि जो इन दोनों के सङ्गम तथा मधुमती में स्नान करता है उसे हाथी के दान करने का पुण्य फल प्राप्त होता है ॥ 1287-88 ॥

---

1. *यह ABCG, महाराजन् DEH*
2. *तत् तत्र BDEF*
3. *पृथक् पृथक् C, फलं लभेत् B, स मानवः H*
4. *श्च A*
5. *वाजिपेयफलं AH*
6. *अश्वदानफलस्य यत् BDF*
7. *यह H, प्रवाहम् A, प्रभावम् BE*

सर्वपापविनिर्मुक्तोरुद्रलोके महीयते।
उत्तरे मानसे स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्॥ 1289॥

पितरस्तर्पिता स्तत्र कामान् यच्छन्त्यभीप्सितान्।
हरमुण्डे[1]नरः स्नात्वा[2] दशगोदफलं लभेत्॥ 1290॥

हे राजन् मधुमती के सुन्दर उद्गम स्थान पर पहुँचकर (मनुष्य) सब पापों से मुक्त होकर रुद्रलोक में आदर प्राप्त करता है। उत्तरमानस में स्नान करके वह एक हज़ार गौओं के दान का फल पाता है।

उस स्थान पर तर्पित किये गये पितर सभी अभिलषित कामनाओं को प्रदान करते हैं। हरमुण्ड की (झील) में स्नान करके दस गौओं के प्रदान (समान दान का) फल मिलता है॥1289-1290॥

आरुह्य तदवाप्नोति राजसूयफलं नरः[3]।
तत्र गङ्गा सरिच्छ्रेष्ठा चन्द्रभ्रष्टा प्रतिष्ठिता॥ 1291॥

यस्यां स्नातस्य पूयन्ते सर्वपापान्यसंशयम्।
राजसूयमवाप्नोति[4] गङ्गामानससङ्गमे[5]॥ 1292॥

उस (हरमुण्ड पर्वत) पर चढ़कर मनुष्य राजसूय यज्ञ का फल पाता है। नदियों में श्रेष्ठ और चन्द्रमा से निकली हुई गङ्गा नदी वहाँ प्रतिष्ठित है जिसमें स्नान करके निश्चय ही सभी पाप (धुलकर) पवित्र हो जाते हैं। गङ्गा और मानस के सङ्गम में (स्नान करके मनुष्य को) राजसूय यज्ञ का फल मिलता है॥1291-1292॥

---

1. *यह H, हरमुण्डं ABFG, हरिमुण्डं E, हरपुण्यं D*
2. *गत्वा BDEFG*
3. *इस पद्य के अन्तिम तीन पाद परित्यक्त A*
4. *इस पद्य के प्रथम तीन पाद परित्यक्त A*
5. *गङ्गामानसमङ्गमम् A, गङ्गासागरसङ्गमे BDEF*

देवतीर्थे नरः स्नात्वा भवत्युत्तरमानसे[1]।
बालखिल्यकृतेऽगस्त्ये तुल्यतेजा महर्षिभिः ॥ 1293 ॥

मनुष्य देवतीर्थ में स्नान कर उत्तरमानस पहुँच जाता है। वालखिल्यों के द्वारा बनाये गये अगस्त्य तीर्थ में (स्नान करने से वह) महर्षियों के समान तेज वाला हो जाता है ॥1293 ॥

कालोदकं नन्दिकुण्डं शंखचक्रौ गदां तथा।
पद्मं सकपिलातीर्थं तीर्थौ वातिकषण्डिकौ ॥ 1294 ॥

तीर्थमप्सरसां पुण्यं ब्रह्मणः परमेष्ठिनः।
कृपणीतीर्थमा[2]साद्य प्रत्येकं गोशतं लभेत्[3] ॥ 1295 ॥

कालोदक, नन्दिकुण्ड, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, कपिलातीर्थ, वातिक और षण्डिक दो तीर्थ, अप्सराओं के तीर्थ, परमेष्ठी (परमेश्वर) ब्रह्मा के पवित्र स्थान और कृपणी तीर्थ में पहुँचकर इन सबमें से प्रत्येक में स्नान करने से सौ गायों का फल मिलता है ॥1294-1295 ॥

कालोदकं यत्र याति नदी मानससम्भवा।
तत्र[4] स्नातस्य पूयन्ते[5] सर्वपापान्यशेषतः ॥ 1296 ॥

जहाँ मानस से उत्पन्न हुई नदी कालोदक से मिलती है वहाँ स्नान करने से सभी पाप पूरी तरह धुलकर पवित्र हो जाते हैं ॥1296 ॥

---

1. *भवत्यमरपूजितः G*
2. *कृपणीतीर्थम् BE कृपाणीतीर्थ (मूलपाठ)*
3. *फलम् A*
4. *ततः G*
5. *पूजन्ते A*

देववध्वस्तथा पुण्याः पुण्यं सूर्यसरः स्मृतम्।
तारासरः चन्द्रसरः पुण्यं कालुषकं महत्॥ 1297॥

देवपत्नियाँ पवित्र हैं और सूर्यसर पवित्र कहा गया है। तारासर, चन्द्रसर और महान् कालुषक पवित्र है॥1297॥

ब्रह्मणो यागभूमिश्च[1] तत्र पुण्या[2] महीपते।
शक्रतीर्थं[3] देवतीर्थं तीर्थं ब्राह्मणकुण्डिका[4]॥ 1298॥

दृष्ट्वैकैकम[5]थैतेभ्यो गोशतस्य फलं लभेत्।
हंसद्वारं च संगम्य स्वर्गमाप्नोत्यसंशयम्॥ 1299॥

हे पृथिवीपति! और वहां ब्रह्मा की पवित्र यज्ञ भूमि है। शक्रतीर्थ, देवतीर्थ और ब्राह्मणकुण्डिका तीर्थ इनमें से एक एक को देखकर सौ गौओं के दान का फल मिलता है। हंसद्वार पर पहुँचकर निश्चित रूप से स्वर्ग की प्राप्ति होती है॥1298-1299॥

सिन्धोः प्रभवमासाद्य राजसूयफलं लभेत्[6]।
पौण्डरीकमवाप्नोति स्नात्वा बिन्दुसरस्यपि[7]॥ 1300॥

सिन्धु के उद्गम स्थान पर पहुँचकर राजसूय यज्ञ का फल मिलता है और बिन्दुसर में भी स्नान करने से पुण्डरीक यज्ञ करने का फल मिलता है॥1300॥

---

1. *गायभूमिश्च BE, यागभूमिं च H*
2. *पुण्यं BE पुण्यां, H*
3. *चक्रतीर्थं C, चन्द्रतीर्थं D*
4. *ब्राह्मणकुण्डकम् B, पद्य सं 1299-1319b परित्यक्त H*
5. *दृष्ट्वैकैक्यम् ed. Leiden*
6. *भवेत् G*
7. *योऽत्राभ्येति धृतव्रतः G*

मडवायां[1] नरः स्नात्वा गोसहस्त्रं फलं[2] लभेत्।
सन्ध्यां नाम नदीं दृष्ट्वा मुच्यते सर्वकिल्विषैः ॥ 1301 ॥

मडवा में स्नान करके हज़ार गौओं के दान का फल मिलता है। सन्ध्या नामक नदी को देखकर सब पापों से मुक्ति मिलती है ॥1301 ॥

अश्रद्दधानं[3] नातीत्य[4] साध्वभ्येति[5] दृढव्रतम्[6]।
तत्राग्नितीर्थं दृष्ट्वैव वह्निलोके महीयते ॥ 1302 ॥

श्रद्धालु व्यक्ति ही उसमें स्नान करता है इसलिए श्रद्धा रहित के पास न जाकर वह (सन्ध्या नदी) दृढ़व्रती के पास पहुँचती है। वहाँ अग्नितीर्थ को देखने से ही (मनुष्य को) अग्निलोक में मान प्राप्त होता है ॥1302 ॥

नदी चित्रपथा पुण्या[7] मृगनन्दा तथा मृगा[8]।
गोदावरी वैतरणी तथा मन्दाकिनी शुभा ॥ 1303 ॥

चन्द्रभागा गोमती च सर्वपापभयापहा।
पृथगेतास्वाप्नोति[9] गोशतस्य फलं नरः ॥ 1304 ॥

चित्रपथा नदी पवित्र है तथा मृगनन्दा और मृगा (पवित्र हैं)। गोदावरी, वैतरणी, शुभकारिणी मन्दाकिनी, चन्द्रभागा और गोमती सभी पापों और भयों को नष्ट करने वाली है। इनमें से प्रत्येक (में स्नान करने) से मनुष्य सौ गायों के (दान के) फल को पाता है ॥1303-1304 ॥

---

1. *मनुवायां BE*
2. *गोसहस्त्रफलं A*
3. *अश्रद्धानं ed. Leiden*
4. *नदीं यः ed. Leiden*
5. *नाभ्येति साध्वभीत्य BEF, साधुभीत्या C*
6. *यह AC, दृढव्रतः अन्य MSS. पद्य सं 1302b-1319 परित्यक्त A*
7. *मृगचित्रमथोपुण्यं E*
8. *मृगा तथा G*
9. *स्नात्वा सुविधनाप्नोति G, पृथगेता अवाप्नोति ed. Leiden*

यत्र चित्रपथा पुण्या मडवा[1] च महानदी।
एकीभवन्ति स्नातस्य तत्र नश्यति किल्विषम्॥ 1305॥

स्वर्गलोकमवाप्नोति पुनाति स्वकुलं नरः।
तथा चैता महानद्यः कथितास्ते महीपते॥ 1306॥

जहाँ पवित्र चित्रपथा और महानदी मडवा (मिलकर) एक हो जाती है वहाँ स्नान करने वाले (नर) का पाप नष्ट हो जाता है और (वह मनुष्य) स्वर्ग लोक को प्राप्त करता है तथा अपने कुल को पवित्र करता है। हे राजन्! उस (उक्त) रूप में ये महानदियाँ तुम्हें बतला दी हैं॥1305-1306॥

तासां तु सङ्गमाः पुण्याः सर्वे स्वर्लोकदर्शनाः[2]।
चित्रकूटो गिरिः पुण्य उमा[3] यत्र विवाहिता॥ 1307॥

उन (नदियों) के सङ्गम पवित्र हैं ये सारे स्वर्गलोक के दर्शन (को कराने) वाले हैं। वहां चित्रकूट नामक पवित्र पर्वत है जहाँ उमा विवाहित हुई थी॥1307॥

तत्रानुलेपनं दिव्यं येन लिप्ततनुर्नरः[4]।
सुरूपभागी[5] भवति सुभगश्चैव जायते॥ 1308॥

वहाँ एक दिव्य अनुलेप है जिससे लीपे गये शरीर वाला मनुष्य सुन्दर रूप का भागी हो जाता है और सौभाग्यशाली हो जाता है॥1308॥

---

1. *मनुवा BDE*
2. *सर्वे स्वर्लोकदर्शिनः C, स्वर्गलोकफलप्रदाः ed. Leiden*
3. *गौरी G, पुण्यतमा C*
4. *यदालिप्ततनुर्नरः ed. Leiden*
5. *रूपभागेव BD*

पद[1]गव्यसरस्तत्र[2] पञ्चगव्यसरः पृथक्।
तत्रान्ये[3] पञ्च भूपाल पुण्यं तैलसरस्तथा[4] ॥ 1309 ॥

उद्वर्तनसरः[5] पुण्यं पुण्यं चाप्यतसीसरः[6]।
सिद्धार्थकसरस्तत्र तथामलकवारिणः ॥ 1310 ॥

मधुपर्कसरः पुण्यं पुण्यमुष्णोदकं तथा।
एकमेकमथैतेभ्यो दृष्ट्वा स्वर्लोकमाप्नुयात् ॥ 1311 ॥

वहाँ पदगव्यसर और (उससे) अलग पञ्चगव्यसर है। हे राजन्! वहाँ और अन्य पाँच सरोवर ये हैं–पवित्र तैलसर पवित्र उद्वर्तन सर, पवित्र अतसीसर, सिद्धार्थसर तथा आमलकवारि का सर और वहाँ पवित्र मधुपर्कसर और पवित्र उष्णोदकसर है। और इनमें से प्रत्येक का दर्शन करके मनुष्य स्वर्गलोक को प्राप्त करता है ॥1309–1311 ॥

चित्रकूटमथारुह्य स्वर्गलोके महीयते।
तीर्थं सप्तऋषिं[7] नाम सर्वकामफलप्रदम् ॥ 1312 ॥

और इसके बाद चित्रकूट पर्वत पर चढ़कर स्वर्गलोक में (मनुष्य) आदर को प्राप्त होता है। वह सब कामनाओं (की पूर्ति रूप) फल देने वाला सप्त ऋषि नामक तीर्थ है ॥1312 ॥

---

1. *यह BCDEF, तत्रादिमं G*
2. *परित्यक्त G*
3. *तथान्ये G*
4. *परम् G*
5. *तद्वर्तनसरः C*
6. *च सरसीसरः C, समसीसरः BEF, सममीसरः D*
7. *सप्तऋचं BF, सप्तदशं G*

अश्वमेधसहस्त्रस्य राजसूयशतस्य च।
गवां शतसहस्त्रस्य[1] श्रेयान् सप्तऋषेश्चरुः॥ 1313॥

सप्त ऋषि को दिया गया यह चरु (भात) हज़ार अश्वमेध यज्ञों, सौ राजसूय यज्ञों और एक लाख गायों (के दान) से अधिक श्रेयस्कर होता है॥1313॥

श्राद्धं दानं तथा जप्यं स्नानं होमं[2] तथार्चनम्।
सर्वमक्षयतां याति यत् कृतं तत्र पार्थिव॥ 1314॥

हे राजन्! उस स्थान पर किये गये श्राद्ध, दान, जप, स्नान होम तथा अर्चना ये सब अक्षयता को प्राप्त हो जाते हैं॥1314॥

वस्त्रापदमथासाद्य रुद्रलोके महीयते।
छागलेश्वरमासाद्य काममाप्नोत्यभीप्सितम्॥ 1315॥

वस्त्रापद पहुँचने पर (मनुष्य) रुद्रलोक में आदर पाता है और उसके पश्चात् छागलेश्वर पहुँचकर (पुरुष) अभीष्ट कामना की पूर्ति को पा लेता है॥1315॥

रुद्रस्यानुचरो भूत्वा तेनैव सह मोदते।
परोष्णीप्रभवं प्राप्य गोसहस्त्रफलं लभेत्॥ 1316॥

रुद्र का अनुचर होकर मनुष्य उसके साथ ही आनन्द उठाता है। परोष्णी के उद्गम स्थान पर पहुँचकर एक हज़ार गायों के दान के फल को प्राप्त करता है॥1316॥

उष्णोदकमथासाद्य गोसहस्त्रफलं लभेत्[3]।
सहस्त्रधारमासाद्य विष्णुलोके महीयते[4]॥ 1317॥

उष्णोदक में पहुँचकर एक हज़ार गायों के दान का फल मिलता है और सहस्त्रधार पहुँचकर विष्णुलोक में आदर मिलता है॥1317॥

---

1. *द्वितीय तृतीय पाद परित्यक्त G*
2. *होमस्तथा G*
3. *...तु नरः स्नात्वा दशगोदफलं लभेत् ed. Leiden*
4. *पद्य सं 1317-1322 परित्यक्त D*

क्रमता विष्णुना लोकान् कृतं पादेन तत् सरः
क्रमसारमिदं प्रोक्तं यथा[1] विष्णुपदं च तत्॥ 1318॥

इष्टवान् क्रतुभिस्तत्र यदा देवः पितामहः।
क्रमसारस्तदा प्रोक्तः सर्वकल्मषनाशनः[2]॥ 1319॥

वसतिस्तत्र नागस्य कौण्डिन्यस्य यदा तदा[3]।
कौण्डिन्यसर इत्येव तस्य नाम प्रकीर्तितम्॥ 1320॥

(तीनों) लोकों को पैर से लाँघते हुए विष्णु ने पैर से वह सरोवर बनाया (इसी कारण ही) इसे क्रमसार कहा गया है जैसे (विष्णु का पैर पड़ने से) विष्णुपद (तीर्थ बोला गया है।) जब देवता ब्रह्मा ने वहाँ वैदिक यज्ञ किये तब से ही वह (क्रमसार तीर्थ) सभी पापों को नष्ट करने वाला कहा जाता है। जब कौण्डिन्य नाग ने वहाँ निवास किया तब उसका नाम कौण्डिन्यसर प्रसिद्ध हुआ है॥1318-1320॥

तत्र स्नात्वा समभ्यर्च्य देवताः पितरस्तथा[4]।
दृष्ट्वा तु शिखरान् रम्यान् ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वरान्॥ 1321॥

लोकत्रयमवाप्नोति तेषामेव न संशयः।

---

1. तदा G

2. सर्वकिल्विषनाशनः E

3. द्वितीय पाद परित्यक्त E

4. देवताश्च पितॄंस्तथा G

ब्रह्मणो यागभूमिं तु[1] दृष्ट्वा तत्र महीयते॥ 1322॥

स्वर्गलोकमवाप्नोति कुलमुद्धरते स्वकम्।
तत्र क्षीरसरो रम्यं दृष्ट्वा मुच्यते[2] किल्विषैः[3]॥ 1323॥

वहाँ स्नान करके तथा देवताओं और पितरों की पूजा करके एवं ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर नामक सुन्दर शिखरों का दर्शनकर उन (तीनों देवों) के तीनों लोकों की प्राप्ति होती है इसमें कोई संशय नहीं है। वहाँ पर ब्रह्मा की यागभूमि के दर्शन को करके मनुष्य को आदर मिलता है, स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है और वह अपने कुल का उद्धार करता है। वहाँ सुन्दर क्षीरसर को देखकर पापों से मुक्ति मिलती है॥1321–1323॥

समाराप्रभवं[4] प्राप्य स्नात्वा कृष्णचतुर्दशीम्।
सर्वपापविनिर्मुक्तो रुद्रलोके महीयते॥ 1324॥

समारा के उद्गम स्थान पर पहुँचकर कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को स्नान करके (मनुष्य) सब पापों से छूटकर रुद्रलोक में आदर पाता है॥1324॥

सन्निकृष्टानि तीर्थानि कथितानि मया तव।
सर्वेषां पापहर्तृणि किं भूयः कथयामि ते॥ 1325॥

मैंने तुम्हें सभी के पापों को नष्ट करने वाले नज़दीक के तीर्थ स्थानों के विषय में बता दिया है। इसके अतिरिक्त तुम्हें और क्या बताऊँ॥1325॥

गोनन्दः[5]

तीर्थानि द्विज मुख्यानि कश्मीरायां[6] वदस्व मे।
तेषां स्नाने च यत् पुण्यं तपसादग्धकिल्विष॥ 1326॥

---

1. *च AH*
2. *मुच्येत DE*
3. *किल्विषात् BEFH*
4. *यह H, सरामा–A, ससार–D, सुमारा–G*
5. *उवाच अतिरिक्त FH*
6. *कश्मीरेषु G*

Ed. Leiden v.v. 1273b-1277

गोनन्द (ने कहा)

(अपनी) तपस्या से नष्ट हुए पापों वाले हे ब्राह्मण! मुझे कश्मीरा में (विद्यमान) प्रमुख तीर्थों और उनेक भीतर स्नान करने से होने वाले पुण्य के विषय में बताइए॥1326॥

बृहदश्वः

निःसृता सरसः पुण्या[1] क्रमसारा[2]न्महानदी।
कौण्डिन्या नाम[3] या स्नाने पुण्डरीकफलप्रदा॥ 1327॥

तथा क्षीरनदी पुण्या गोशतस्य फलप्रदा
तयोः समागमे स्नात्वा गोसहस्त्रफलं लभेत्॥ 1328॥

बृहदश्व (ने कहा)

क्रमसार (नामक) सरोवर से निकली हुई (वह) पवित्र महानदी कौण्डिन्या है। जिस में स्नान करने पर पुण्डरीक यज्ञ का फल मिलता है और पवित्र क्षीर-नदी (स्नान के द्वारा) सौ गौओं के दान के फल को देने वाली है। दोनों के सङ्गम में स्नान करके एक हज़ार गायों के दान का फल मिलता है॥1327-1328॥

विशोकायां नरः स्नात्वा[4] विशोकः श्रीसमन्वितः[5]।
फलं पुण्यम[6]वाप्नोति देवसत्रस्य मानवः॥ 1329॥

मनुष्य विशोका (नदी) में स्नान करके शोकरहित होकर लक्ष्मी से युक्त होता है और वह मानव देवसत्र यज्ञ करने का पवित्र फल प्राप्त करता है॥1329॥

कौण्डिनी सह संयोगं यत्र याति विशोकया।
तत्र स्नातस्य राजेन्द्र वाजपेयफलं भवेत्[7]॥ 1330॥

---

1. *पुण्यात् B*
2. *क्रमसारा H*
3. *कौण्डिन्यनाम्नी G*
4. *प्रथम पाद् परित्यक्त BDEF*
5. *द्वितीय पाद परित्यक्त BD*
6. *पुण्यं फलं BEFG*
7. *लभेत् ABDE*

हे राजेश्वर! जहाँ पर कौण्डिनी का विशोका के साथ सङ्गम होता है वहाँ स्नान करने वाले को वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है॥1330॥

वृद्धतीर्थे नरः स्नात्वा यज्ञमाप्नोति गोसवम्।
तत्र संनिहितो नित्यं[1] वासुकिर्भुजगाधिपः॥ 1331॥

मनुष्य वृद्धतीर्थ में स्नान करके गोसव यज्ञ (के फल) को प्राप्त करता है। वहाँ भुजङ्गों का स्वामी वासुकि सदैव उपस्थित रहता है॥1331॥

देवलोकमवाप्नोति स्नात्वा देवसरस्यपि[2]।
अग्नितीर्थे नरः स्नात्वा वह्निलोकमवाप्नुयात्[3]॥ 1332॥

देवसर में भी स्नान करके मनुष्य देवलोक को प्राप्त करता है। अग्नितीर्थ में स्नान करके अग्निलोक को पा लेता है॥1332॥

नदी सरस्वती नाम यस्यां स्नातो दिवं व्रजेत्।
पूर्वदक्षिणभागे तु[4] स्थिता[5] देवसरस्यपि॥ 1333॥

देवसर के पूर्व दक्षिण भाग में सरस्वती नामक नदी है जिसमें स्नान करने से (मनुष्य) स्वर्ग को जाता है॥1333॥

विनतास्वामिपुरतः कद्रू[6]स्वामिसमीपतः।
तीर्थयोस्तु[7]नरः स्नात्वा गोशतस्य फलं लभेत्॥ 1334॥

विनतास्वामि के सम्मुख (तथा) कद्रूस्वामि के समीप दोनों तीर्थों में स्नान करके सौ गायों के दान का फल मिलता है॥1334॥

---

1. *संनिहितो नित्यं परिव्यक्त G*
2. *अथ BCDEFG*
3. *प्रपद्यते H, स गच्छति CE*
4. *ऽपि A*
5. *अथ G, तु BDEF*
6. *द्रू परित्यक्त तथा एक अक्षर का स्थान छोड़ा A*
7. *श्च H*

सन्ध्या देवी नदी पुण्या यस्यां स्नातस्य मानद।
व्यपैति कल्मषं देहात् स्वर्गलोकं च गच्छति॥ 1335॥

हे मान देने वाले! वहाँ पर सन्ध्या देवी पवित्र नदी है जिसमें स्नान करने से देह से पाप छूट जाता है और (मनुष्य) स्वर्ग लोक को जाता है॥1335॥

सन्ध्या पुष्करिणी त्वन्या पूर्वतुल्यफलप्रदा।
अवग्राह्य नरो भक्त्या पुण्यां ब्राह्मणकुण्डिकाम्[1]॥ 1336॥

नीलकुण्डं[2] वितस्ताख्यं[3] शूलघातं तथैव च।
तीर्थं त्रिनामकं[4] दृष्ट्वा[5] स्वर्गलोके महीयते॥ 1337॥

सन्ध्या पुष्करिणी तो अन्य (नदी) है जो पहली (सन्ध्या) नदी के समान फल देने वाली है। मनुष्य पवित्र ब्राह्मणकुण्डिका में भक्तिपूर्वक अवगाहन करके और नीलकुण्ड, वितस्ताख्य और शूलघात इन तीन नामों वाले तीर्थों को देखकर स्वर्ग लोक में आदर पाता है।॥1336–1337॥

तथा विनशनं[6] प्राप्य वाजपेयफलं[7] लभेत्।
ब्राह्मणकुण्डिकायां च नीलकुण्डे च पार्थिव॥ 1338॥

अक्षयं सर्वमुद्दिष्टं दानं श्राद्धं तथा तपः[8]।
वितस्तोन्मज्जने[9] स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्॥ 1339॥

और हे राजन! विनशन पहुँचकर वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है ब्राह्मणकुण्डिका और नीलकुण्ड में किया जाने वाला दान, श्राद्ध तथा तप ये सब अविनश्वर कहा गया है। वितस्तोन्मज्जन में स्नान करके एक हज़ार गौओं

---

1. *यह अन्य MSS, पुण्या ब्राह्मणकुण्डिका AH*
2. *यह G, नीलकुण्डो BCEF, नीलकुण्ड AH*
3. *यह BG, वितस्ताख्य: EF, वितस्ताख्या ACH*
4. *त्रिनामिकं E*
5. *स्नात्वा A*
6. *विनयनं H, विनाशनं E*
7. *यह अन्य MSS., वाजिपेयफलं AH*
8. *श्राद्धं दानं तपस्तथा A*
9. *वितस्ताया जले B*

का फल मिलता है ॥1338-1339॥

पञ्चयज्ञानवाप्नोति स्नात्वा वै[1] पञ्चहस्तके[2]।
प्रत्यहं ये विनिर्दिष्टा गृहस्थस्य महीपते॥ 1340॥

हे पृथिवीपति! पञ्चहस्तक में स्नान करने से निश्चय ही उन पाँच यज्ञों का फल मिलता है जो गृहस्थ के लिए प्रतिदिन करने के लिए विहित कर्म बताये हैं ॥1340॥

लोकपुण्यं[3] हि तन्नाम सर्वपापहरं परम्[4]।
कापोतके[5] नरः स्नात्वा गोप्रदानफलं लभेत्॥ 1341॥

लोकपुण्य नामक तीर्थ सभी पापों का हरण करने वाला है। मनुष्य कापोतक में स्नान करके गौ के दान के फल को पाता है ॥1341॥

विष्ण्वाश्रमे नृसिंहस्य पुरतः[6] पार्थिवोत्तम।
वितस्तोन्मज्जनं पुण्यं[7] विष्णुलोके महीयते॥ 1342॥

हे श्रेष्ठ राजन्! नृसिंह के सामने विष्णु के आश्रम में वितस्तोन्मज्जन पवित्र (तीर्थ) है। उसमें स्नान करने से मनुष्य को विष्णुलोक में आदर मिलता है ॥1342॥

---

1. *स्नात्वैव G*
2. *पद्य सं 1336-1340 क परित्यक्त D*
3. *लोकं पुण्यं हि ABC, लोकं हि पुण्यं H*
4. *शुभम् E, पुण्यलोकोऽस्त्यसौ नाम सर्वपापहरः परः G*
5. *कामोतके E*
6. *परतः F*
7. *तत्र स्नात्वा च भक्तितः G*

स्नातस्य ध्यानधारिण्यां गोसहस्रफलं भवेत्[1]।
वितस्ताध्यानधारिण्योः संगमे पापनाशने॥ 1343॥

पुण्यं फलमवाप्नोति वाजपेयस्य[2] मानवः।
वितस्तान्तर्हिता तत्र प्रविश्य ध्यानधारिणीम्॥ 1344॥

ध्यानधारिणी में स्नान करने से हज़ार गायों के दान का फल मिलता है। पापों का नाश करने वाले वितस्ता और ध्यानधारिणी के सङ्गम में स्नान करने से मनुष्य वाजपेय यज्ञ के फल को प्राप्त करता है। वहाँ ध्यानधारिणी में प्रवेश करके वितस्ता छिप जाती है॥1343-1344॥

अन्तर्हिता गता शीघ्रं विशोका यत्र निम्नगा।
धौम्याश्रमे तयोर्योगे[3] राजसूयफलं स्मृतम्[4]॥ 1345॥

जिस स्थान पर पहुँच कर विशोका नदी शीघ्र ही छिपजाती है उस धौम्य आश्रम में उन दोनों के सङ्गम (में स्नान करके) राजसूय यज्ञ का फल कहा गया है॥1345॥

चतुर्वेदीं नरो[5] दृष्ट्वा कन्यादानफलं लभेत्।
प्राप्य हर्षपथां[6] जन्तुर्लभेद् बहु सुवर्णकम्॥ 1346॥

मनुष्य चतुर्वेदी को देखकर कन्यादान का फल प्राप्त करता है। हर्षपथा पर पहुँच कर प्राणी बहुत अधिक स्वर्ण पाता है॥1346॥

---

1. *यह ed. Leiden, लभेत् ABCDEFGH*
2. *वाजिपेयस्य H*
3. *योगं BCE*
4. *यह DEFH, भवेत् G, लभेत् अन्य MSS.*
5. *नदीं G*
6. *हर्षपदां B*

त्रिकोटीप्रभवं प्राप्य मुच्यते सर्वकिल्विषैः।
प्राप्य चन्द्रवतीजन्म चन्द्रलोके महीयते॥ 1347॥

त्रिकोटी के उद्‌गम स्थान पर पहुँचकर (मनुष्य को) सभी पापों से मुक्ति मिलती है। चन्द्रवती के निकास के स्थान पर पहुँचने से चन्द्रलोक में आदर मिलता है॥1347॥

देवतीर्थे नरः स्नात्वा देवः[1] पुत्रोऽपि जायते[2]।
त्रिकोट्यां तु नरः स्नात्वा देवलोके महीयते[3]॥ 1348॥

मनुष्य देवतीर्थ में स्नान करके देव हो जाता है और उसके (घर). पुत्र पैदा होता है। मनुष्य त्रिकोटी में स्नान करके देवलोक में आदर पाता है॥1348॥

स्नात्वा हर्षपथायां[4] च शक्रलोके महीयते।
चन्द्रवत्यां नरः स्नात्वा दशगोदफलं लभेत्॥ 1349॥

हर्षपथा में स्नान करके मनुष्य इन्द्रलोक में आदर पाता है और चन्द्रवती में स्नान करके दस गौओं के स्नान का फल पाता है॥1349॥

नदी हर्षपथा पुण्या तथा चन्द्रवती च या।
सङ्गमं[5] यत्र तत्रोक्तं, राजसूयं मनीषिभिः[6]॥ 1350॥

हर्षपथा नदी पवित्र है और चन्द्रवती भी (पवित्र है)। मनीषियों ने कहा है कि जहाँ जहाँ इनका सङ्गम है वहाँ राजसूय है अर्थात् राजसूय यज्ञ का फल मिलता है॥1350॥

---

1. *यह ed Leiden, देव्याः पुत्रोऽपि ABEH, देव्याः पित्रोपि FD*
2. *1348 क परित्यक्त C*
3. *पद्य सं 1348 तथा 1349 क परित्यक्त*
4. *देवनागरी लिपि में F*
5. *यह ACFH, सङ्गमः D, सङ्गमे ed. Leiden*
6. *सङ्गमे चानयोः प्रोक्तं राजसूयफलं बुधैः G*

त्रिकोटीसङ्गमाद् गृह्य[1] यावद् रौप्येश्वरं हरम्[2]।
तावत् क्षेत्रं समं ज्ञेयं[3] वाराणस्याथवाधिकम्[4] ॥ 1351 ॥

त्रिकोटी के सङ्गम से लेकर रौप्येश्वर हर तक का जितना क्षेत्र है वह वाराणसी के समान या उससे भी अधिक (पवित्र) जानना चाहिए॥1351॥

रुद्रलोकमवाप्नोति स्नात्वा तु कपटेश्वरे[5]।
विषलिङ्गह्रदे पुण्ये रुद्रलोके महीयते॥ 1352॥

(मनुष्य) कपटेश्वर में स्नान करके रुद्रलोक को प्राप्त करता है। पवित्र विषलिङ्ग ह्रद में (जाकर भी स्नान करने से) रुद्रलोक में आदर मिलता है॥1352॥

विजयेशाग्रतः स्नात्वा वितस्तायां महीपते।
रुद्रलोकमवाप्नोति कुलमुद्धरते स्वकम्[6] ॥ 1353 ॥

हे पृथिवीनाथ! विजयेश के सम्मुख वितस्ता में स्नान करके (मनुष्य) रुद्रलोक को प्राप्त करता है तथा अपने कुल का उद्धार करता है॥1353॥

पिङ्गलेशाग्रतः स्नात्वा विष्णुलोके महीयते।
खण्डपुच्छाश्रमे स्नात्वा फलमेतदुदाहृतम्[7] ॥ 1354 ॥

पिङ्गलेश के सामने स्नान करके विष्णु लोक में आदर मिलता है। खण्डपुच्छ आश्रम में स्नान करके भी यही फल (मिलता है यह) कहा गया है॥1354॥

---

1. *चापि G*
2. *हरिम् G*
3. *विजानीयात् A*
4. *वाराणस्यां महीपते BDEFG*
5. *कपटेश्वरीम् H*
6. *पद्यं सं 1252-53 परित्यक्त A, B*
7. *पुण्डरीकफलं लभेत् A*

पुण्डरीके[1] नरः स्नात्वा पुण्डरीकफलं लभेत्[2]।
शूर्पारके[3] नरः स्नात्वा गोप्रदानफलं लभेत्॥ 1355॥

पुण्डरीक में स्नान करके मनुष्य पुण्डरीक यज्ञ के फल को प्राप्त करता है और शूर्पारक में नहाकर मनुष्य गायों के दान का फल पाता है॥1355॥

वितस्ताध्यानधारिण्योः सङ्गमेऽन्नप्रदो[4] नरः।
अक्षयं फलमाप्नोति यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥ 1356॥

वितस्ता और ध्यानधारिणी के सङ्गम में अन्नदान देने वाला मनुष्य चौदह इन्द्रों (की अवधि) तक अक्षय फल पाता है॥1356॥

सर्वे सन्निहितास्तीर्था नरसिंहाश्रमे तदा।
वितस्ताध्यानधारिण्योः सङ्गमाद् गृह्य पार्थिव[5]॥ 1357॥

कल्पषोडशनागस्य[6] यावद् भवनमुत्तमम्।
तावत् क्षेत्रं समं पुण्यं प्रयागेण नराधिप॥ 1358॥

हे राजन्! उस समय सभी तीर्थ नरसिंह आश्रम में उपस्थित होते हैं वितस्ता और ध्यानधारिणी के सङ्गम से लेकर कल्पषोडश नाग के उत्तम निवास स्थान तक का क्षेत्र प्रयाग के समान पवित्र है॥1357-1358॥

---

1. *पौण्डरीके BDE, पुण्डरीकं H*
2. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त A*
3. *शौर्पारके DEF, शौर्पारके B*
4. *गोप्रदो A*
5. *सङ्गमाश्चैव भूपते G, पर्वते E, पार्वति B*
6. *कल्पशोडशनागश्च E, कल्पश्वोण्डशनागस्य A*

गङ्गोद्भेदे[1] नरः स्नात्वा भेडादेवी[2]समीपतः।
गङ्गास्नानफलं प्राप्य स्वर्गलोके महीयते॥ 1359॥

भेडादेवी के समीप गङ्गोद्भेद में स्नान करके मनुष्य गङ्गास्नान के फल को पाकर स्वर्ग में सम्मान पाता है॥1359॥

अवगाह्य कथां पुण्यां दशगोदफलं लभेत्[3]॥ 1360॥
औजसे धर्मराजस्य स्नात्वा तु पुरतो नरः।
न दुर्गतिमवाप्नोति वाजपेयफलं[4] लभेत्॥ 1361॥

पवित्र कथा (नदी) में डुबकी लगाकर दस गौओं के दाता जैसा फल (उसको) मिलता है। धर्मराज के सामने औजस (तीर्थ) में स्नान करके मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं होता है और वाजपेय यज्ञ के फल को पाता है॥1360-1361॥

तस्मिंस्तीर्थवरे राजन् श्राद्धमानन्त्यमश्नुते।
मासि चाश्वयुजे कृष्ण[5]पञ्चदश्यां विशेषतः॥ 1362॥

हे राजन्! आश्वयुज् (आश्विन) मास के कृष्णपक्ष की पञ्चदशी को उस उत्तम तीर्थ पर श्राद्ध करके (मनुष्य) अनन्त काल तक (भोजन) खाता है॥1362॥

स्नात्वा नारायणस्थाने[6] विष्णुलोके महीयते।
रामतीर्थे भवोत्से[7] च फलमेतत् प्रकीर्तितम्॥ 1363॥

नारायण स्थान में स्नान करके (मनुष्य को) विष्णु लोक में आदर मिलता है। रामतीर्थ और भवोत्स में भी (स्नान करने का) यही फल है॥1363॥

---

1. *सङ्गोद्भेदे B*
2. *भीडादेवी H*
3. *दशगोदानजं फलम् A*
4. *वाजिपेयफलं H*
5. *कृष्णे A*
6. *नारायणं स्थानं D*
7. *भवेत् स B*

शैलपृष्ठे नरः स्नात्वा तीर्थे वैश्रवणस्य च[1]।
धनस्य भागी भवति यत्र यत्राभिजायते॥ 1364॥

शैलपृष्ठ तथा वैश्रवण तीर्थ में स्नान करके मनुष्य जहाँ जहाँ पैदा होता है वहाँ वहाँ धन का भागी होता है॥1364॥

कामतीर्थे नरः स्नात्वा कामभागभिजायते।
तीर्थे चा[2]प्सरसां स्नात्वा श्रीभागी भवते नरः[3]॥ 1365॥

कामतीर्थ में स्नान करके मनुष्य कामनाओं को पूर्ण करता है और अप्सरा तीर्थ में स्नान करके सौन्दर्य और धन को पा लेता है॥1365॥

ऋषितीर्थे नरः स्नात्वा निर्मलो मुनिवद् भवेत्।
वैतरण्यां नरः स्नात्वा न दुर्गतिमवाप्नुयात्[4]॥ 1366॥

ऋषितीर्थ में स्नान करके मनुष्य मुनि की तरह निर्मल हो जाता है और वैतरणी में स्नान करके मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं होता॥ 1366॥

ऋषिकुल्यामथासाद्य देवकुल्यां तथैव च।
अश्वतीर्थं प्रभासं च वारुणं तीर्थमेव च॥ 1367॥

वह्नितीर्थं चन्द्रतीर्थं नागतीर्थं तथैव च।
चक्रतीर्थं[5] वामनं च गोप्रदानफलं लभेत्॥ 1368॥

इसके बाद ऋषिकुल्या, देवकुल्या, अश्वतीर्थ, प्रभास, वारुणतीर्थ, वह्नितीर्थ, चन्द्रतीर्थ, नागतीर्थ, चक्रतीर्थ तथा वामन (तीर्थ) में पहुँचकर (मनुष्य) गोदान के फल को प्राप्त करता है॥1367-1368॥

---

1. *तु BEFG*
2. *वा A*
3. *श्रीभाग् नरोत्तमः G, श्रीभागी भविता नरः A*
4. *आप्नुयात् A*
5. *शक्रतीर्थं G*

स्नात्वा तु मदतीर्थे[1] च[2] स्कन्दतीर्थे[3] च मानवः।
तथा सुरेश्वरीतीर्थे स्वर्गलोके महीयते॥ 1369॥

मनुष्य मदतीर्थ, स्कन्दतीर्थ तथा सुरेश्वरी तीर्थ में स्नान करके स्वर्गलोक में आदर पाता है॥1369॥

माहुरीं तु समासाद्य तिलप्रस्थफलं लभेत्।
तत्सङ्गमे वितस्तायां स्नात्वा[4] मुच्यते किल्विषैः॥ 1370॥

माहुरी में पहुँचकर एकप्रस्थ (तोलने का भारविशेष) तिलों के दान का फल मिलता है। उसके और वितस्ता के सङ्गम में नहाकर सभी पापों से मुक्ति मिलती है॥1370॥

त्रिपुरेशाग्रतः पुण्यामवगाह्य तु[5] माहुरीम्।
महादेवगिरिं दृष्ट्वा रुद्रलोके महीयते॥ 1371॥

त्रिपुरेश के सामने पवित्र माहुरी में डुबकी लगाकर महादेव पर्वत का दर्शन करके रुद्रलोक में सम्मान प्राप्त होता है॥1371॥

अमरेशे नरः स्नात्वा गोशतस्य फलं लभेत्।
मालिन्यां तु नरः स्नात्वा दशगोदफलं लभेत्[6]॥ 1372॥

मनुष्य अमरेश (वर्तमान काल में प्रसिद्ध बाबा अमरनाथ तीर्थ) में स्नान करके सौ गायों के दान का फल प्राप्त करता है और मालिनी में स्नान करके दस गौओं के दाता (के बराबर मिलने वाले पुण्य) के फल को प्राप्त करता है॥1372॥

---

1. *नर्मदातीर्थे B, मरुतीर्थे G, भृवते तीर्थे A*
2. *परित्यक्त A*
3. *स्वान्दतीर्थे A*
4. *स्नातो BEG*
5. *च A*
6. *दशगोदानजं फलम् A*

स्नात्वा पाण्डवतीर्थे च पञ्चयज्ञानुपाश्नुते।
उच्चेशं तीर्थ[1]मासाद्य रुद्रलोके महीयते॥ 1373॥

पाण्डवतीर्थ में स्नान करके पाँच यज्ञों (के फल) को प्राप्त करता है और उच्चेशतीर्थ पहुँचकर रुद्रलोक में महिमा को पा लेता है॥1373॥

स्नात्वा रामह्रदातोये[2] लभेद् बहु सुवर्णकम्[3]।
मालिनीसङ्गमं पुण्यं[4] सिन्धुना सह पार्थिव॥ 1374॥

तथा रामह्रदा यत्र युज्यते सह सिन्धुना।
तयोः फलमथोद्दिष्टं राजसूयाश्वमेधयोः॥ 1375॥

हे राजन्! रामह्रदा (नदी) के जल में स्नान करके मनुष्य बहुत सोना पा लेता है और (जहाँ) सिन्धु के साथ मालिनी नदी का पवित्र सङ्गम है तथा जहाँ रामह्रदा सिन्धु के साथ मिलती है उन दोनों (सङ्गमों) का फल वही बताया गया है जो राजसूय और अश्वमेध यज्ञों का होता है॥1374-1375॥

संयोगं सिन्धुना यत्र गता कनकवाहिनी।
गोसहस्रमवाप्नोति धनवानभिजायते[5]॥ 1376॥

जहाँ सिन्धु के साथ कनकवाहिनी संयोग को प्राप्त करती है वहाँ (मनुष्य नहाकर) एक हज़ार गौओं को प्राप्त करता है और धनवान् हो जाता है॥ 1376॥

---

1. *उच्चेशतीर्थे B, उच्चीशतीर्थं E*
2. *रामह्रदे तीर्थे A, रामह्रदे तोये H*
3. *भवेद् बहु सुवर्णभाग् G*
4. *-सङ्गमः पुण्यः G*
5. *अपि जायते G*

पावना च नदी पुण्या रजोबिन्दुर्विनिर्मला[1]।
यस्यां[2] स्नात[3]स्त्ववाप्नोति[4] पुण्डरीकफलं नरः ॥ 1377 ॥

पावना नदी पवित्र है। वह रजोबिन्दु विशेष रूप से निर्मल नदी है जिसमें स्नान करने वाला मनुष्य पुण्डरीक तीर्थ के फल को पा लेता है ॥1377 ॥

तयोः समागमे पुण्ये राजसूयफलं स्मृतम्।
तस्माद् देशादथारभ्य यावच्चीरप्रमोचनम्[5] ॥ 1378 ॥

तावत् क्षेत्रं समं पुण्यं वाराणस्याः प्रकीर्तितम्[5] ॥ 1379 ॥

इन दोनों (नदियों) के पवित्र सङ्गम (में स्नान करने) से राजसूय यज्ञ का फल बताया गया है। इसके बाद उस स्थान से लेकर चीरप्रमोचन तक का जितना क्षेत्र है उतना भाग वाराणसी के क्षेत्र के समान पवित्र है ॥1378-1379 ॥

तन्मध्ये सर्वतीर्थानां सान्निध्यं कथितं मया।
स्वर्गमार्गप्रदं प्रोक्तं तीर्थं चीरप्रमोचनम्[7] ॥ 1380 ॥

मैंने उस (क्षेत्र) के मध्य सारे तीर्थों की उपस्थिति बताई है। चीरप्रमोचन नामक यह तीर्थ स्वर्ग के मार्ग को प्रदान करने वाला है ॥1380 ॥

---

1. *राजबिन्दुविनिर्मिता B*
2. *तस्यां G*
3. *स्नात्वा A*
4. *तमाप्नोति B*
5. *क्षीरमोदनम् A स्याच्चीरमोचनम् (मूलपाठ)*
6. *समं स्मृतम् A, यवाधिकम् H*
7. *वीरप्रमोदनम् A*

दिव[1]मुत्सृज्य चीराणि[2] तत्र सप्तर्षयो गता:।
स्नात्वा तत्र दिवं यान्ति येऽपि पापकृतो[3]नरा: ॥ 1381 ॥

वहाँ सात ऋषि (अपने) वस्त्रों को उतारकर स्वर्ग को चले गये थे और जो भी पाप करने वाले लोग हैं वे वहां स्नान करके द्युलोक में चले जाते हैं ॥1381 ॥

सोदरे[4] तु नर: स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्।
तथा कनकवाहिन्या: सङ्गमं याति यो नर: ॥ 1382 ॥

तथा कालोदका[5] पुण्या नदी यत्रैव सङ्गता।
तयो:[6] फलं विनिर्दिष्टं राजसूयाश्वमेधयो: ॥ 1383 ॥

सोदर में मनुष्य स्नान करके एक हज़ार गायों (के दान) का फल प्राप्त करता है और जो आदमी कनकवाहिनी के सङ्गम में जाता है और जहाँ कालोदका पवित्र नदी भी उसमें सङ्गम को प्राप्त होती है उन दोनों (सङ्गमों) का फल राजसूय और अश्वमेध (के फल) के समान बताया है ॥1382-1383 ॥

स्नात्वाश्वमेधमाप्नोति वितस्तासिन्धुसङ्गमे।
प्रौष्ठपद्यां[7] विशेषेण एवमाहुर्मनीषिण: ॥ 1384 ॥

विद्वानों ने इस प्रकार कहा है कि वितस्ता और सिन्धु के सङ्गम में स्नान करके मनुष्य को अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है। विशेष रूप से भाद्रपद की पौर्णमासी में (तो मिलता ही मिलता है) ॥1384 ॥

---

1. *दिव्यम् ABF*
2. *वीराणि A*
3. *पापयुता B*
4. *सोदरं CEF, मोदते A*
5. *कालोदके H*
6. *तयो: F के पश्चात् शेष पंक्ति परित्यक्त*
7. *यह C, प्रोष्ठपद्यां अन्य MSS.*

पात्रतीर्थे नरः स्नात्वा पुण्डरीक[1]मुपाश्नुते।
आपगायां नरः स्नात्वा[2] कुलमुद्धरते स्वकम्॥ 1385॥

पात्रतीर्थ में स्नान करके मनुष्य पुण्डरीक यज्ञ का फल प्राप्त करता है तथा आपगा नदी में स्नान करके वह अपने कुल का उद्धार करता है॥1385॥

अग्निष्टोम[3]मवाप्नोति स्नात्वा सरसि मानसे।
आषाढ्यां तु विशेषेण नात्र कार्य विचारणा॥ 1386॥

मानस झील में स्नान करके विशेष रूप से आषाढ़ मास की पूर्णिमा में (नहाकर) अग्निष्टोम यज्ञ का फल मिलता है इसमें किसी प्रकार का सोच विचार नहीं करना चाहिए॥1386॥

वाजपेयमवाप्नोति महापद्मसरस्यपि॥ 1387॥

हिरण्या वै नदी पुण्या हरमुण्डाद्विनिःसृता[4]।
स्नातस्तस्यामवाप्नोति ह्यग्निष्टोमफलं नरः॥ 1388॥

महापद्म सरोवर में भी (स्नान करके) वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है।

हरमुण्ड से निकली हुई हिरण्या नदी निश्चित रूप से पवित्र है उसमें स्नान करके मनुष्य अग्निष्टोम यज्ञ का फल पाता है॥1387-1388॥

महापद्मसरः पुण्यं हिरण्या[5] यत्र गच्छति।
अश्वमेधफलं तत्र पौर्णमास्यां विशेषतः॥ 1389॥

जहाँ पर हिरण्या नदी पवित्र महापद्म सरोवर में मिलती है वहाँ विशेष रूप से पौर्णमासी को (स्नान करने से) अश्वमेध यज्ञ का फल होता है॥1389॥

---

1. *पौण्डरीकम् BEFG*
2. *द्वितीय पंक्ति परित्यक्त A*
3. *यज्ञ AC, वह्निष्टोमम् अन्य MSS.*
4. *विनिर्गता G*
5. *हेरण्या A*

बहुरूपे नरः स्नात्वा विष्णुलोके महीयते।
बहुरूपे च कथितं फलमेतन् नरोत्तम॥ 1390॥

हे नरश्रेष्ठ! बहुरूप में स्नान करके, मानव को विष्णुलोक में सम्मान मिलता है। यह बहुरूप में (स्नान करने से) मिलने वाला फल कहा गया है॥1390॥

शतशृङ्गे सुतीर्थे वै[1] वैश्रवणस्य च।
तीर्थे पुण्ये तथा राजन् भूर्जस्वामि[2]समीपतः॥ 1391॥

वसूनामथ रुद्राणां साध्यानां मरुतामपि।
विश्वेषां चैव देवानां[3] भृगूणां च नराधिप॥ 1392॥

तथैवाङ्गिरसां राजं[4]स्तीर्थे तीर्थे पृथक् पृथक्[5]।
दशगोदफलं प्रोक्तं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः॥ 1393॥

हे मनुष्यों के स्वामी राजन्! उत्तम तीर्थ स्थान शतशृङ्ग तीर्थ, वैश्रवण तीर्थ, भूर्जस्वामि के समीप पवित्र तीर्थ, वसुओं, रुद्रों, साध्यों, मरुतों, सभी देवों, भृगुओं और आङ्गिरसों के पवित्र स्थान इन सब तीर्थों में पृथक् पृथक् किया गया (स्नान) तत्त्वदर्शी मुनियों के द्वारा दस गौओं को देने वाले व्यक्ति के पुण्य के बराबर कहा गया है॥1391–1393॥

पालाशा[6] च शिलामा[7] च वितस्तां यत्र गच्छतः[8]।
गोसवस्य फलं[9] तत्र प्रत्येकं कथितं पुरा॥ 1394॥

पालाशा और शिलामा जहाँ वितस्ता से मिलती हैं वहाँ (इन दो सङ्गमों में से) एक (में स्नान) का गोमेध यज्ञ करने के बराबर फल होता है ऐसा

1. *यह A, च अन्य MSS.*
2. *भीमस्वामि–A*
3. *नां से पूर्व दो अक्षरों का स्थान छोड़ा A*
4. *चैव A*
5. *नराधिप A*
6. *पालासा EGH, पलासा C, पाल्मा D, पालामा B*
7. *शमाला BDFG, शमला E, शिलासा H*
8. *यह A, गच्छति अन्य MSS.*
9. *यह AH, गोसहस्रफलं G, गोशतस्य–अन्य MSS.*

Ed. Leiden v.v. 1337-1341

पहले बताया गया है ॥1394॥

नदी कूलारणी यत्र संयुज्यते[1] वितस्तया।
तत्र स्नात्वा[2] कुलं शीघ्रं पुनीते मानवोत्तमः॥ 1395॥

जहाँ कूलारणी नदी वितस्ता के साथ मिलती है। वहाँ स्नान करके उत्तम मानव शीघ्र (अपने) कुल को पुण्य प्राप्त कराता है ॥1395॥

विगाह्य पुष्करं तीर्थमतिरात्रफलं[3] लभेत्।
सप्तर्षीणां तु तीर्थे वै अग्निष्टोमफलं[4] लभेत्[5] ॥ 1396॥

पुष्कर तीर्थ में डुबकी लगाकर (स्नान करने से मनुष्य) अतिरात्रयज्ञ का फल प्राप्त करता है और सप्तर्षियों के तीर्थ में स्नान करके वह अग्निष्टोम यज्ञ का फल पा लेता है ॥1396॥

तीर्थं वाराह[6]मासाद्य वितस्ताम्भसि मानवः।
विष्णुलोकमवाप्नोति कुलमुद्धरते स्वकम्[7] ॥ 1397॥

मानव वाराह तीर्थ में पहुँचकर वितस्ता के जल में स्नानकर विष्णुलोक को प्राप्त करता है और अपने कुल का उद्धार करता है ॥1397॥

स्नात्वा नारायणस्थाने वितस्ताम्भसि पार्थिव[8]।
विष्णुलोकमवाप्नोति नरो नास्त्यत्र संशयः॥ 1398॥

हे राजन्! मनुष्य नारायणस्थान में वितस्ता के जल में स्नान करके विष्णु-लोक को प्राप्त कर लेता है इसमें (किसी प्रकार का कोई) संशय नहीं है ॥1398॥

---

1. *यह A, संयुज्येत अन्य MSS.*
2. *स्नातः G*
3. *मुनिदानफलं D, मतिदानफलं BEF, अतिदान-C*
4. *वह्निष्टोमफलं C*
5. *द्वितीय पंक्ति परित्यक्त BEFGH, पद्य संख्या 1396ख-1403 परित्यक्त D*
6. *वाराह्यम् AE*
7. *द्वितीय पंक्ति परित्यक्त A*
8. *प्रथम पंक्ति परित्यक्त A*

नदी गोत्रनदी[1] यत्र वितस्तां प्रतिपद्यते।
तयोः स्नातस्य[2] कथितं गोसहस्त्रस्य यत् फलम्[3] ॥ 1399 ॥

जहाँ गोत्रनदी वितस्ता तक पहुँचकर इसमें मिलती है। उन दोनों (नदियों) में स्नान करने वाले को एक हज़ार गौओं (के दान) का जो फल है वह मिलता है यह बताया गया है ॥1399 ॥

माहुरी तु नदी पुण्या मथुरेव विशेषतः।
शतनीला[4] शमाला च नदी च विमलोदका[5] ॥ 1400 ॥

राहुला[6] च नदी पुण्या श्रीमाद्‌या[7] च महानदी।
द्वितीया च तथा शुद्धा समूला सुरसा[8] तथा ॥ 1401 ॥

आसां प्रत्येकशः[9] स्नात्वा लभेद् गोदानजं फलम्।
आसामेव तु सर्वासां सङ्गमाश्च पृथक् पृथक् ॥ 1402 ॥

अवगाह्य नरः शुद्धो[10] दशगोदफलं लभेत्[11]।
अनन्ततीर्थे[12] स्नातस्य नागलोके महीयते[13] ॥ 1403 ॥

माहुरी नदी विशेष रूप से मथुरा के समान पवित्र है। शतनीला, शमाला, विमलोदका नदी, पवित्र नदी राहुला, महानदी श्रीमाद्‌या, द्वितीया शुद्धा, समूला और सुरसा इनमें से प्रत्येक में स्नान करके मनुष्य एक गाय के दान का फल

1. *गोत्रवती G, सोत्रनदी A*
2. *स्नानस्य G*
3. *यह A, गोसहस्त्रफलं पृथक् अन्य MSS.*
4. *यह ABEF, शतलीला GH, शतशीला ed. Leiden*
5. *परित्यक्त E*
6. *लाहुला ABF, संशोधित राहुला H*
7. *श्रीमाख्या A*
8. *सरसा*
9. *यह शब्द देवनागरी में F*
10. *याति A*
11. *दशगोदानजं फलम् A*
12. *अनन्ततीर्थ AB*
13. *-विधीयते EF, नागलोकं भविष्यति A*

प्राप्त करता है। इन सबके पृथक पृथक् सङ्गम में प्रवेश करके (डुबकी लगाकर) शुद्ध हुए मानव को दस गायों को दान करने वाले दानी के समान फल मिलता है। अनन्ततीर्थ में स्नान करने से नागलोक में आदर मिलता है ॥1400-1403॥

बिन्दुनादेश्वरं तीर्थं सोमतीर्थं पृथूदकम्।
तुङ्गेश[1]तीर्थक्षेत्रं तु[2] उतङ्कस्वामिनं तथा[3] ॥ 1404 ॥

रामतीर्थं भृगोस्तीर्थं[4] तीर्थमाङ्गिरसां तथा।
दृष्ट्वैकैकमथैतेभ्यो दशगोदफलं लभेत् ॥ 1405 ॥

बिन्दुनादेश्वर तीर्थ, सोमतीर्थ, पृथूदक, तुङ्गेश तीर्थ क्षेत्र, उत्तङ्कस्वामि तीर्थ, रामतीर्थ, भृगु का तीर्थ और आङ्गिरसों का तीर्थ इनमें से एक एक को देखकर दस गायों के दान करने वाले का फल मिलता है ॥1404-1405॥

सर्वाः सरिद्वराः पुण्याः सर्वे[5] प्रस्रवणास्तथा।
इमे च राजेन्द्र तथा सर्वे पुण्याः शिलोच्चयाः ॥ 1406 ॥

हे राजेश्वर! सभी उत्तम नदियाँ तथा सभी स्रोत पवित्र हैं और ये सभी पर्वत भी पवित्र हैं ॥1406॥

सर्वा ऋषिकृताश्चार्चाः सरांसि विपुलानि च।
सर्वत्रैव महीनाथ[6] कश्मीरेषु[7] विशेषतः ॥ 1407 ॥

हे पृथिवीपति! (वैसे तो) मुनियों के द्वारा बनाई गई सभी (पूजा की) मूर्तियाँ और सभी बड़ी-बड़ी झीलें सभी जगह (पवित्र हैं) परन्तु कश्मीर में ये विशेष रूप से (पवित्र) हैं ॥1407॥

---

1. *तुङ्गेशं A*
2. *च A*
3. *तथा ed. Leiden. जलम् (मूलपाठ)*
4. *भृगुतीर्थं F*
5. *सर्वाः BE*
6. *महीपाल E*
7. *काश्मीरेषु E*

सर्वे च सङ्गमाः पुण्या नागानां ये जलाशयाः।
सुवर्णशतदानस्य फलं प्राप्नोत्यसंशयम्[1] ॥ 1408 ॥

सभी सङ्गम पवित्र हैं और नागों के जो सरोवर हैं (वे भी पवित्र हैं और उनमें स्नान करने से) सौ सुवर्ण (मुद्रा के) दान करने का फल मिलता है॥ 1408 ॥

इति तीर्थानि पुण्यानि वितस्ता च विशेषतः।
सर्वत्र पावनी देवी वितस्ता कथिता नृप॥ 1409 ॥

इस प्रकार हे राजन्! सभी तीर्थ स्थान पवित्र हैं और विशेषतः सब जगह पवित्र करने वाली वितस्ता नदी (पार्वती) देवी कही गई है॥1409॥

तस्यां स्नात्वा दिवं यान्ति येऽपि पापकृतो[2] नराः।
वह्निष्टोममवाप्नोति स्नातस्तस्यां नराधिप॥ 1410 ॥

उसमें स्नान करके जो भी पाप करने वाले मनुष्य हैं वे भी स्वर्ग को जाते हैं। हे नरपति! उसमें स्नान करने वाला व्यक्ति वह्निष्टोम के फल को पाता है॥1410॥

दृष्ट्वाश्रमे वितस्ताख्ये[3] धौम्येशे[4] सिन्धुसङ्गमे।
वराहतीर्थे पापघ्ने राजसूयफलप्रदे[5] ॥ 1411 ॥

सदैव पुण्यशुक्ले[6] च त्रयोदश्यां विशेषतः।
यत्र तत्र वितस्तायां गोरजोधूतमस्तकः[7] ॥ 1412 ॥

स्नात्वा त्रयोदशीं शुक्लां मुच्यते सर्वकिल्विषैः ॥ 1413 ॥

वितस्ताख्याश्रम, धौम्येश (वितस्ता) और सिन्धु के सङ्गम स्थान, पापों के नाश करने वाले तथा राजसूय यज्ञ के फल को देने वाले वराह तीर्थ में (मूर्तियों,

1. *असंशयः ed. Leiden*
2. *पापकृताः A*
3. *वितस्तेयं G*
4. *धौम्येश-AF*
5. *-प्रदा G*
6. *पुण्यतीर्थे E, पुण्यशुक्ले AB*
7. *गोगजाधूतमस्तका BEFH, द्वितीय पंक्ति परित्यक्त A*

Ed. Leiden v.v. 1355-1359

सङ्गमों और सरिताओं को) देखकर सदैव पवित्र शुक्लपक्ष की त्रयोदशी में विशेष रूप से वितस्ता नदी (के जल) में जहाँ तहाँ स्नान करके गोधूलि से लिप्त मस्तक वाला मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है ॥1411-1413 ॥

अदृश्यं मानवः[1] कृत्वा पातकं मुक्तपञ्चकम्।
स्नानेनैकेन सलिलशिशिरेण[2] व्यपोहति ॥ 1414 ॥

मनुष्य पाँच महापापों को छोड़कर उनके अतिरिक्त कोई अन्य अदृश्य पाप करके उसके ठंडे जल से एक ही स्नान करके उस (पाप) को दूर कर लेता है ॥1414 ॥

अनर्काभ्युदिते[3] काले[4] सकलं शिशिरं यदि।
तत्र[5] स्नातो[6]नरो राजन् कामानाप्नोत्यभीप्सितान् ॥ 1415 ॥

हे राजन्! यदि सम्पूर्ण शिशिर ऋतु में मनुष्य सूर्योदय से पूर्व उसमें स्नान करता है तो वह (अपनी) अभीष्ट कामनाओं को पा लेता है ॥1415 ॥

स्नात्वा यथावद् विधिना समभ्यर्च्य हुताशनम्।
ब्राह्मणेभ्यस्तदा[7] दत्वा कृसरं घृतसंयुतम् ॥ 1416 ॥

स्वर्गलोकमवाप्नोति यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ 1417 ॥

स्नान करके

ब्राह्मणों को घी से युक्त खिचड़ी देकर अग्नि की विधिपूर्वक पूजा करके मनुष्य चौदह इन्द्रों की अवधि तक स्वर्ग लोक को प्राप्त करता है ॥ 1416-1417 ॥

---

1. *मानवैः B*
2. *सलिले शैशिरेण A, सलिलं शिशिरेण B*
3. *अनर्काभ्युदये BEF*
4. *काले तु A*
5. *अत्र G*
6. *स्नाति G*
7. *तथा H*

एवं संवत्सरं पूर्णं नित्यस्नायी नराधिप[1]।
मोक्षोपायमथासाद्य ततो मोक्षमवाप्स्यति[2] ॥ 1418 ॥

हे नराधिराज! सम्पूर्ण वर्ष तक इस प्रकार प्रतिदिन स्नान करने वाला व्यक्ति इस मोक्ष के उपाय को पाकर मोक्ष पा लेगा ॥1418 ॥

काश्मीरकाणां[3] तीर्थानां फलं ते कथितं मया।
सकलं नीलवाक्यं च गमिष्यामि सुखी भव ॥ 1419 ॥

मैंने तुम्हें कश्मीर प्रदेश के तीर्थों के फल और नील के सभी वचन को बता दिया है। मैं जा रहा हूँ तुम सुखी रहो ॥1419 ॥

इदं धार्यं प्रयत्नेन यन्मयाभिहितं तव।
श्रुत्वैतत् फलमाप्नोति दशगोदानजं नरः ॥ 1420 ॥

मेरे द्वारा जो भी तुम्हें बताया गया है इसे प्रयत्न पूर्वक ध्यान करना (स्मरण रखना)। यह सुनकर मनुष्य दस गौओं के दान के फल को प्राप्त करता है ॥1420 ॥

वैशम्पायनः[4]

एवमुक्त्वा स गोनन्दं बृहदश्वो महीपतिम्[5]।
धर्मात्मा[6] तीर्थयात्रार्थं[7] जगामाभीप्सितां गतिम् ॥ 1421 ॥

वैशम्पायन (ने कहा)

इस प्रकार राजा गोनन्द से कहकर वह धर्मात्मा बृहदश्व तीर्थयात्रा के लिए इच्छित मार्ग (गन्तव्य स्थान) पर चल पड़ा ॥1421 ॥

---

1. *नरः शुचिः G*
2. *यह CDE अवाप्यते ABF, अवाप्नुयात् H*
3. *काश्मीरिकाणां G*
4. *उवाच अतिरिक्त CE*
5. *नराधिपम् C*
6. *धर्मार्थी F*
7. *–यात्रार्थी B, –यात्रार्थे EF*

बहु मेने तथा[1]त्मानं गोनन्दः समरप्रियः।
स प्रशशास[2] वसुधां राजा[3] शास्त्रानुसारतः[4] ॥ 1422 ॥

युद्धप्रिय गोनन्द ने अपने को बहुत माना और उस राजा ने शास्त्रों के अनुसार पृथिवी पर शासन किया ॥1422 ॥

जनमेजयः[5]

भूयो वितस्तामाहात्म्यं कथयस्व द्विजोत्तम।
तच्छ्रुत्वैव[6] भविष्यामि द्विजेन्द्र गतकल्मषः[8] ॥ 1423 ॥

जनमेजय (ने कहा)

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ एवं ब्राह्मणाधिराज! वितस्ता के माहात्म्य को पुनः बताओ। उसको सुनकर ही मैं पाप रहित हो जाऊँगा ॥1423 ॥

वैशम्पायनः

हरस्य दयिता भार्या सती दाक्षायणी[9] शुभा।
सैवोमा कथिता राजन् प्राप्ते वैवस्वतेऽन्तरे ॥ 1424 ॥

वैशम्पायन (ने कहा)

हे राजन् ! शिव की प्रिय पत्नी और दक्ष की बेटी सुन्दर सती थी जो वैवस्वत मन्वन्तर के आ जाने पर उमा कही गई ॥1424 ॥

---

1. *स च–G*
2. *सम्यक् प्रशास A, समं प्रशास DFH समं शशास C*
3. *धरां सम्यक् G*
4. *राजशास्त्रानुसारतः F, राजा शास्त्रानुसारतः C, धर्मानुशास्त्रतः ed. Leiden*
5. *उवाच अतिरिक्त CDEG*
6. *श्रुत्वैतत् E*
7. *भविष्यामि BF गमिष्यामि (मूलपाठ)*
8. *गतकिल्विषः H*
9. *यह अन्य MSS., दाक्षायिणी A, दाक्षायिनी H*

Ed. Leiden v.v. 1367-1369

हिमाद्रितनया सैव यमुना पापनाशिनी[1]।
मन्वन्तरान्ते सैवोक्ता नौर्गरिष्ठा जगत्त्रये॥ 1425 ॥

हिमालय की वही बेटी पापों का नाश करने वाली यमुना है। मन्वन्तर के अन्त में तीनों लोकों में वही महती (पार लगाने वाली) नौका कही गई है ॥1425 ॥

कश्मीरा कथिता देवी वितस्ता सैव[2] निम्नगा।
पातालादुत्थिता देवी शूलघातात्[3] तरङ्गिणी[4]॥ 1426 ॥

वही (सती) कश्मीरा देवी और वितस्ता नदी कही गई है। वह नदी (रूपिणी) देवी त्रिशूल के आघात से पाताल से उठकर बाहर निकली है॥ 1426 ॥

स्नातस्य तोये वैतस्ते स्वयमात्मानमात्मना।
विजानाति गताशेषकल्मषाल्लघुभागिनम्॥ 1427 ॥

वितस्ता के जल में स्नान करने वाला व्यक्ति अपने सभी पापों के नष्ट हो जाने के कारण स्वयं अपने आपको हलका समझने लगता है अर्थात् वह अपने जीवन को बोझ नहीं समझता॥1427 ॥

वितस्तातो महीनाथ न गङ्गा व्यतिरिच्यते॥ 1428 ॥

केवलं जाह्नवीतोये पुरुषस्यास्थिसम्भवः।
वितस्तातोऽधिको[5] राजन् स्नानाद्यं तुल्यमेव च॥ 1429 ॥

हे पृथिवीपति राजन् ! वितस्ता से गङ्गा बढ़कर नहीं है। गङ्गा के जल में तो केवल मनुष्यों की हड्डियों की उपस्थिति वितस्ता से अधिक है। इनमें स्नानादि (अन्य सभी पुण्य) समान हैं॥1428-1429 ॥

---

1. *पापनाशनी A*
2. *येव A*
3. *शूलखातात् BEFG*
4. *यह C तरङ्गिनी H, अनन्तरम् A*
5. *अधिकं ABE*

भगीरथेन गंगा या पुरा राज्ञावतारिता।
अस्थिप्लावनकामेन सगराणां[1] महात्मनाम्॥ 1430॥

तेनेयं कथिता राजन् प्रशस्ता तत्र कर्मणि।
वितस्ता वै नदी पुण्या सर्वपापहरा शुभा॥ 1431॥

हे राजन्! यह गङ्गा जो पूर्वकाल में राजा भगीरथ के द्वारा महात्मा सगरों (सगर के पुत्रों) की अस्थियों को डुबोने की कामना से नीचे लाई गई थी। इसलिए यह अस्थि भस्म को पवित्र करने के लिए प्रशंसनीय है किन्तु पवित्र वितस्ता नदी निश्चय ही शुभ है और यह सब पापों का हरण करने वाली है॥1430-1431॥

वैतस्तेन तु तोयेन जठरस्थेन[2] ये मृता।
सर्वे स्वर्गमनुप्राप्ता यथा[3] ते सोमपायिनः॥ 1432॥

वितस्ता के जल से भरे हुए उदर वाले जो लोग मृत्यु को प्राप्त होते हैं वे सभी सोमरस का पान करने वालों के समान स्वर्ग को प्राप्त करते हैं॥1432॥

न यज्ञैर्दक्षिणावद्‌भिस्तर्पिता देवतास्तथा।
तृप्तिं समधिगच्छन्ति[4] यथा च सलिलैश्च तैः[5]॥ 1433॥

देवता दक्षिणायुक्त यज्ञों से उतने तृप्त नहीं होते जितने वे (वितस्ता) के उन जलों से तृप्त होते हैं॥1433॥

---

1. *सागरानां AH*
2. *जठरस्थे तु E*
3. *तथा A*
4. *समधिगच्छन्ति BCG*
5. *यथा तत्सलिलैः शुभैः DEFG, यथैतत्सलिलैः शुभैः H*

पात्रे तीर्थे यथा काले[1] मिष्टान्नै[2]र्विविधैः कृतैः।
तथा[3] तृप्यन्ति पितरः[4] श्राद्धैः[5] शुद्धैश्च[6] तैर्जलैः[7] ॥ 1434 ॥

जैसे वे (पितृगण उचित) व्यक्ति, तीर्थ और (उचित) समय में नाना प्रकार के बनाये हुए मिष्ठान्नों से तृप्त हो जाते हैं वैसे ही वे पितर श्राद्धों और उन (वितस्ता के) शुद्ध जलों से सन्तुष्ट होते हैं ॥1434 ॥

नागैर्बहुविधाकारैः सरिद्भिः सततं गतम्[8]।
तीर्थैर्देवैश्च ऋषिभिर्गन्धर्वैर्यक्षराक्षसैः ॥ 1435 ॥

अभिगच्छेत् मेधावी जन्मसाफल्यकारणात् ॥ 1436 ॥

अनेक प्रकार की आकृति वाले नाग, सरितायें, तीर्थ, देवता गण, ऋषि, गन्धर्व, यक्ष और राक्षस ये सभी (वहाँ वितस्ता नदी के पास) सदैव पहुँचते हैं। बुद्धिमान् पुरुष (अपने) जन्म की सफलता के हेतु (वितस्ता नदी पर) पहुँचे ॥1435-1436 ॥

स्नातमात्रं[9] वितस्तायां जानाति वरुणो नरम्।
जलाधिपेन ज्ञातस्य नरके पतनं कुतः ॥ 1437 ॥

वितस्ता में केवल स्नान भर करने वाले पुरुष को वरुण पहिचान लेता है। जलों के स्वामी वरुण के द्वारा जाने गये (मनुष्य) का नरक में गिरना कैसे हो सकता है ? ॥1437 ॥

---

1. *यथा काले BEFH, तथा काले (मूलपाठ)*
2. *सृष्टान्नैः E, मृष्टान्नैः ed. Leiden*
3. *तथा A यथा (मूलपाठ)*
4. *तृप्यन्त पितरैः E*
5. *श्राद्धे EH*
6. *तद्वच्च G*
7. *शीतैर्जलैः H*
8. *संगतिं गताम् G*
9. *यह CDE, स्नानमात्रे A, स्नातमात्रो GH*

Ed. Leiden v.v. 1378b-1381

पापानां[1] नरके घोरे पततां[2] दुष्कृतात्मनाम्।
हस्तत्राणप्रदा[3] देवी वितस्ताघनिसूदनी[4] ॥ 1438 ॥

दुष्कर्म करने के स्वभाव वाले और भयङ्कर नरक में गिरे हुए पापी जनों के लिए पापनाशिनी वितस्ता देवी अपने हाथ से रक्षा प्रदान करने वाली हैं ॥ 1438 ॥

स्वर्गारोहणनिःश्रेणीं[5] मनोरथफलप्रदाम्[6]।
वितस्तां ये गमिष्यन्ति ते यास्यन्त्यमरावतीम् ॥ 1439 ॥

हंससारसयुक्तेन चक्रवाकोपशोभिना[7]।
विमानेनार्कवर्णेन किंकिणीजालमालिना ॥ 1440 ॥

देवरामागणाढ्येन[8] वीणामुरजनादिना[9]।
पुलिनैर्विविधैर्युक्तां पद्मोत्पलभूषिताम् ॥ 1441 ॥

1. *पापिनां GH*
2. *पातनाद् A*
3. *हस्तमात्रप्रदा BEF*
4. *वितस्ताघविनाशिनी CE, वितस्ता च निसूदनी A*
5. *निःश्रेणी B*
6. *प्रदा B*
7. *चक्रवाकोपशोभितां ABEF, चक्रवाकोपशोभितं C*
8. *देवासुरगणाढ्येन CE*
9. *वीणामुरजवादिना ABCEH*

गोकुलारावबहुलां हम्भारावनिनादिताम्[1]।
मत्स्यकच्छपसंबाधां सुतीर्थां कामदायिनीम्॥ 1442॥

अमृतस्वादुसलिलां नृणां दृष्टिमनोहराम्॥ 1443॥

मातेव वरदां[2] देवीमभिगच्छन्ति[3] ये नराः[4]।
तेऽभिगच्छन्ति राजेन्द्र प्रतिष्ठां भुवि मानवाः[5]॥ 1444॥

स्वर्ग (में जाने) की सीढ़ी तथा मनोवाञ्छित फल को प्रदान करने वाली वितस्ता नदी के पास जो लोग पहुँचेंगे वे हंसों और सारसों से युक्त, चक्रवाकों से शोभित, छोटी छोटी घण्टियों के समूह की माला से युक्त देवाङ्गना गणों से भरे हुए, वीणा और मुरज के नाद से नादित और सूर्य के समान रंग वाले विमान द्वारा अमरावती पहुँच जायेंगे। हे राजाधिराज! जो मनुष्य विविध फूलों से युक्त नील कमलों से सुशोभित, गायों के झुंडों की आवाज़ों से परिपूर्ण उनके रंभाने की ध्वनि से निनादित, मछलियों और कछुओं से व्याप्त, सुन्दर घाटों वाली, कामनाओं को प्रदान करने वाली, अमृत के समान स्वादु जल वाली, लोगों की आँखों को लुभाने वाली और माँ के समान वर देने वाली देवी वितस्ता के पास जाते हैं वे पृथिवी पर प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं॥1439-1444॥

समुद्ररूपस्य हरस्य भार्यां हिमालयस्याद्रिपतेस्तनूजाम्।
सुस्वादु[6]तोयामृषिवर्यजुष्टां[7] तां त्वं पवित्रां प्रणमस्व[8] राजन्॥ 1445॥

हे राजन्! पवित्र और श्रेष्ठ ऋषियों से प्रशंसित, सुस्वादु जल वाली पर्वतराज हिमालय की बेटी और समुद्र रूपी हर (शिव) की पवित्र पत्नी उस (वितस्ता) को तुम नमस्कार करो॥1445॥

---

1. *यह ed. Leiden, हस्ताराव-MSS.*
2. *वरदा H*
3. *अभिगाहन्ति A*
4. *येऽभिगच्छन्ति वरदां मातरं वा सुखप्रदाम् G*
5. *सर्वशः BCE*
6. *सुखाहु-A*
7. *ऋषिवर्गतुष्टां A*
8. *प्रणमामि A*

सिन्धुस्त्रिकोटी च तथा विशोका पुण्या नदी[1] हर्षपथा शिवा[2]च।
पुण्या सुखा चन्द्रवती सुगन्धा पुण्योदका किल्विषनाशिनी च॥ 1446॥

कूलारणिःपापहरा च कृष्णा नदी सुपुण्या[3] मधुमत्यथापि।
नदी परोष्णी च तथात्र पुण्या प्रयान्ति दिव्यां[4] वरदां वितस्ताम्॥ 1447॥

सिन्धु, त्रिकोटी, विशोका, पवित्र और शुभ नदी हर्षपथा, पवित्र सुखा, चन्द्रवती, सुगन्धा, पापों का नाश करने वाली पुण्योदका पापों का हरण करने वाली कूलारणि सत्पुण्यदायिनी कृष्णा नदी, मधुमती और पवित्र परोष्णी नदी (ये सभी नदियाँ) यहाँ दिव्य और वरदान देने वाली वितस्ता में जाकर मिलती हैं ॥1446-1447॥

गङ्गा नदी शम्भुजटाकलापे चन्द्रेण देवेन तथा विभिन्ना।
प्रोक्ता नृलोके नृप चन्द्रभागा आयाति पुण्यां विततां[5] वितस्ताम्[6]॥ 1448॥

हे राजन्! शिव के जटासमूह पर स्थित गङ्गानदी और भगवान् चन्द्रमा के द्वारा विभक्त की गई और नर लोक में चन्द्रभागा नाम से कही गई नदी (भी) पवित्र तथा विशाल वितस्ता के पास आती है ॥1448॥

तीर्थानि पुण्यानि सरांसि राजन् नद्यस्तडाका विविधाश्च कूपाः।
आयान्ति सर्वे वरदां वितस्तां त्रयोदशीं भाद्रपदस्य शुक्लाम्॥ 1449॥

हे राजन! भाद्रपद के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी को सभी पवित्र तीर्थ, सरोवर, नदियाँ, तालाब, विभिन्न प्रकार के कुएँ ये सब वर देने वाली वितस्ता के पास आते हैं ॥1419॥

---

1. *तथा E*
2. *शिपा A*
3. *सुपुष्पा A*
4. *पुण्यां G*
5. *सततं BCEF*
6. *यह पद्य परित्यक्त, G*

कस्यास्ति शक्तिर्नृप तेऽत्र वक्तुं देवीगुणान्वर्षशतैरनेकैः।
भक्त्या मयोक्तां च निशम्य कांचिद भंक्ति कुरुष्वात्र सदा नृवीर॥ 1450॥

हे राजन्! यहाँ किसका सामर्थ्य है जो अनेक सौ वर्षों में भी देवी (वितस्ता) के गुणों को तुम्हें बता सके? हे नरवीर! मेरे द्वारा भक्तिपूर्वक थोड़ा सा कहा गया है उसे सुनकर तुम सदैव इस (वितस्ता) में भक्ति करो॥1450॥

श्रुत्वा वितस्तामाहात्म्यं मुच्यते सर्वकिल्विषैः।
श्रुत्वा नीलमतं सर्वं दशधेनुफलं[1] लभेत्॥ 1451॥

वितस्ता के महात्म्य को सुनकर (मनुष्य को) सब पापों से मुक्ति मिलती है और सम्पूर्ण नीलमत (पुराण) को सुनकर दस गायों के दान का फल मिलता है॥1451॥

इत्येवमुक्तं जनमेजयस्य व्यासस्य शिष्येण[2] महाव्रतेन।
क्षिप्तं[3]न यद् ग्रन्थगुरुत्वभीत्या[4] समग्रशास्त्रैःखलु भारते वै[5]॥ 1452॥

सर्वत्र नैतद् विषयोपयोग्यं[6] तदा न चक्रे भगवान् महात्मा।
अतीव हृद्ये बहुविस्तरेऽपि जनप्रिये[7] भारतपूर्णचन्द्रे[8]॥ 1453॥

(ग्रन्थ को सुनाने के) महाव्रत को धारण करने वाले व्यास के शिष्य वैशम्पायन के द्वारा जनमेजय को इस रूप में इस (नीलमत) को सुनाया गया। (जिसमें सम्मिलित सारे शास्त्रों के कारण) जिसे ग्रन्थ के बहुत विशाल हो जाने के डर से महाभारत में समाविष्ट नहीं किया गया। यह (ग्रन्थ) सब जगह विपय की दृष्टि से उपयोगी नहीं है इसलिए तब (प्राचीन काल में महात्मा भगवान् (व्यास) ने पूर्ण चन्द्र के समान बहुत सुन्दर, बहुत विस्तार वाले और

1. *शतधेनुफलं A*
2. *श्रीव्यासशिष्येण H*
3. *ख्यातं H*
4. *यह CEF, बहुत्वभीत्या अन्य MSS.*
5. *सूचितं यत् G*
6. *ह्युपयोगमेति G*
7. *जनप्रिय A*
8. *भारचन्द्रपूर्णे B*

Ed. Leiden v.v. 1393-1396

लोकप्रिय महाभारत में (इसका समावेश) नहीं किया ॥1452-1453 ॥

इति वितस्तामाहात्म्यम्। समाप्तमिदम् नीलमतम्। शुभमस्तु[1]।

इस प्रकार यह वितस्ता का माहात्म्य है। यह नीलमत (पुराण) समाप्त हुआ। शुभ हो।

1. *यह H, इति नीलमते वितस्तामाहात्म्यम्। समाप्तमिदं नीलमतं नाम। यादृशं पुस्तकं दृष्टं तादृशं लिखितं मया। यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न विद्यते।॥ सं 99 आ. पं. बृ: A, नीलमते वितस्तामाहात्म्यम् B, इति श्रीनीलमतपुराणे वितस्तामाहात्म्यं सम्पूर्णम्। इति श्रीनीलमतपुराणं सम्पूर्णम् शुभमस्तु सर्वजगताम् C, इति श्रीनीलमाहात्म्ये वितस्तामाहात्म्यं सम्पूर्णम् समाप्तम्॥ F, इति श्रीनीलमते वितस्तामाहात्म्यम्। समाप्तं चेदं नीलमतं नाम पुराणमिति शुभायास्तु लेखकश्रावकाणाम्। G, इति नीलमते वितस्तामाहात्म्यम्। इति नीलमतपुराणं सम्पूर्णं समाप्तम् E.*

श्लोकानुक्रमणिका

ह

Published by the Secretary on behalf of
J&K Academy of Art, Culture and Languages, Jammu
and Printed at Classic Printers, Bari Brahamana, Jammu